सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

६६

(१ अगस्त, १९३७ से ३१ मार्च, १९३८)

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मन्त्रालय
भारत सरकार

भूमिका

इस खण्डमें १ अगस्त, १९३७ से ३१ मार्च, १९३८ तककी सामग्री दी गई है। इस अवधिमें गांधीजी का स्वास्थ्य खराब रहा। उनका रक्तचाप बराबर ऊँचा रहता था, जिससे "लम्बा मानसिक आराम" उनके लिए जरूरी बन गया। नवम्बरमें वे सीमा-प्रान्त जानेवाले थे और उन्हें आशा थी कि इस प्रवासमें उन्हें यह आवश्यक विश्राम मिल सकेगा (पृ० २३०), लेकिन अक्तूबरके अन्तिम सप्ताहमें कलकत्तामें उनकी तबीयत अचानक बहुत बिगड़ गई, और फलतः १७ नवम्बर तक उन्हें वहीं रुकना पड़ा। ६ दिसम्बर, १९३७ से ७ जनवरी, १९३८ तक उन्होंने बम्बईमें जुहू-तटपर विश्राम किया। ९ जनवरीको अमृतकौरको पत्र लिखते हुए उन्होंने सूचना दी, "रक्तचाप गिरते-गिरते बिलकुल सामान्य हो जाता है, लेकिन फिर जरा-सी वजहसे ही चढ़ जाता है। मैं बातचीत नहीं कर सकता, गम्भीर बातचीत सुन भी नहीं सकता" (पृ० ३७०)। सेगाँवमें उनके स्वास्थ्यमें सुधार आया और फरवरीमें कांग्रेसके वार्षिक अधिवेशनमें भी वे भाग ले सके। लेकिन जब मार्चके अन्तिम सप्ताहमें उड़ीसाके डेलांग नामक स्थानमें गांधी सेवा संघकी बैठकमें भाग लेते हुए उन्होंने सुना कि कस्तूरबा तथा आश्रमकी दो अन्य महिलाएँ पुरी मन्दिरमें, जिसके द्वार हरिजनोंके लिए बन्द थे, दर्शनार्थ गईं तो वे इतने उत्तेजित हो उठे कि उनका रक्तचाप चिन्ताजनक रूपसे बढ़ गया।

अपने रक्तचापका कारण गांधीजी ने यह बताया कि वे 'गीता' की शिक्षाको अपने जीवनमें आचरित कर पानेमें असमर्थ रहे। उन्होंने रामदास गांधीको समझाया, "'गीता' की अनासक्ति का जो अर्थ है, उससे मेरी अनासक्ति कम है,—मैं भावनाओंसे भरा हुआ हूँ। मुझे हर किसीके दुःखसे दुःख होता है।" हरएकके दुःखसे दुःखी होना वे एक स्पृहणीय गुण मानते थे, किन्तु उनका विचार था कि इस तरह दुःखी होकर भी मनुष्यको अलिप्त रहना चाहिए, किन्तु उन्होंने पाया कि "मैं इस कलामें अभी पारंगत नहीं हुआ हूँ" (पृ० ३६१)। जब राजगोपालाचारीने उनसे पूछा कि "आप बोलते-बोलते इतने आवेशमें क्यों आ जाते हैं" तो उन्होंने उत्तर दिया, "क्योंकि 'गीता' का वीतराग होनेका पाठ सीखना अभी शेष है" (पृ० ३६९)। उन्हें मालूम था कि "मेरा प्रेम . . . बहुत-सी परीक्षाओंको झेल सकता है" (पृ० ६९) लेकिन कभी-कभी वह उन्हें बहुत दुःख भी देता था। ऐसा ही एक प्रसंग तब उपस्थित हुआ जब एक आश्रमवासिनी, जो उनके लिए पुत्रीके समान बन गई थी, आवेशमें आश्रम छोड़कर चली गई। उसके व्यवहार पर जब उन्हें अपनी प्रतिक्रियाका ध्यान आया तो उन्हें स्वयं "अपनी अहिंसाकी वास्तविकतामें सन्देह" होने लगा और वे सोचने लगे कि "मैं अपने क्रोधका स्थायी

रूपसे दमन क्यों नहीं कर पाता हूँ?" (पृ० १२८) दादाभाई नौरोजीकी पौत्रीको, जो वर्षोंतक उनकी सुयोग्य सहकर्मिणी रही थीं, उत्तर देते हुए उन्होंने लिखा: "तुम मुझे भूल जाओ, अस्वीकार कर दो, किन्तु मेरे लिए तुमको भूलना बिलकुल असम्भव है, भला मैं क्या करूँ?" (पृ० २३२) जब उनके विश्वस्त निजी सहायक प्यारेलाल क्षणिक आवेशमें आकर उन्हें छोड़कर चले गये और महादेव देसाईने भी छोड़ देनेकी धमकी दी तब भी उनके हृदयसे ऐसे ही व्यथा-भरे शब्द फूट पड़े: "मैं हजारों भूलोंको सहन करूँगा; लेकिन तुम्हें त्याग तो सकता नहीं। भक्तके हाथों मरना श्रेयस्कर है और अभक्तके हाथों तरना भी डूबने के समान है" (पृ० ४९८)।

अपनी रुग्णता और मानसिक तनावके बावजूद गांधीजी कांग्रेस और देशका मार्गदर्शन करते रहे। ब्रिटिश संसद् द्वारा भारतके शासनके लिए बनाये गये १९३५ के अधिनियमके अन्तर्गत कांग्रेसका पद-ग्रहण ब्रिटेनके साथ सहयोग करने का एक प्रयोग था। एक मुलाकातीको समझाते हुए गांधीजी ने बताया, "बहुत-से लोग ऐसा महसूस करते हैं कि किसी भी प्रकारका सहयोग एक भूल है। अन्य लोग इससे सहमत नहीं हैं। उन्हें लगता है कि अपने उद्देश्योंकी प्राप्तिके लिए शायद यह उचित है कि हम कभी-कभी अपने प्रतिपक्षीकी बात मान लें" (पृ० १४१)। यद्यपि १९३५ का अधिनियम "अंग्रेजी हुकूमतको चिरस्थायी बनाने की इच्छा" से तैयार किया गया था, किन्तु साथ ही गांधीजी की रायमें "इसके निर्माताओंने जनताको अंग्रेजोंके पक्षमें लानेके लिए एक साहसपूर्ण प्रयोग किया" था और "इसमें इस बातकी गुंजाइश रखी गई" थी कि "अगर सफल न हुए तो जनता की ब्रिटिश प्रभुत्वकी समाप्तिकी इच्छाको दार्शनिक भावसे स्वीकार कर लेंगे।" कांग्रेस अपनी सरकारी और सार्वजनिक कार्रवाइयों द्वारा १९२० में अपनाये अपने रचनात्मक कार्यक्रमको लागू करके ब्रिटेनके इरादोंको नाकाम कर सकती थी। इस कार्यक्रमका आधार "राष्ट्रकी सुसंगठित अहिंसा थी" और गांधीजी मानते थे कि इस कार्यक्रमके सफल कार्यान्वयनके फलस्वरूप कांग्रेसकी शक्ति "ऐसी दुर्निवार हो जायेगी कि उसके मार्गमें कोई खड़ा नहीं हो सकेगा" (पृ० ११३-१५)।

लोकतान्त्रिक पद्धतिसे नैतिक और सामाजिक क्रान्ति सम्पन्न करने के इस कार्यक्रमके लिए आवश्यक था जन-मानसका शिक्षण और गांधीजी 'हरिजन' में लिखे अपने लेखोंके माध्यमसे लोकशिक्षणके कार्यमें जुट गये। उन्होंने कहा कि "मन्त्रिपद कोई पुरस्कार नहीं", बल्कि "सेवाके द्वार हैं" और इसलिए उनसे "हमें चिपट नहीं जाना है, बल्कि उन्हें हलके हाथों पकड़ना चाहिए" (पृ० १७-१८)। गांधीजी कांग्रेससे "पुलिसके जरिये, जिसकी पीठ पर सेना है, . . . नहीं . . . बल्कि उस नैतिक अधिकारके जरिये शासन" करने की अपेक्षा रखते थे "जो जनसाधारणके ज्यादासे-ज्यादा सद्भावपर आधारित है"—सद्भाव, जो उस "जनताकी सेवाके बलपर" प्राप्त होता है "जिसका कि वह अपने सभी कार्योंमें प्रतिनिधित्व करने की कोशिश करती है" (पृ० ६८)। मन्त्रियोंके आलोचकोंसे भी वे इसी तरहकी सच्ची सार्वजनिक भावनाकी अपेक्षा रखते थे। वे मानते थे कि "किसी भी कांग्रेसीको न केवल यह अधिकार है,

बल्कि यह उसका कर्त्तव्य है कि वह बड़ेसे-बड़े कांग्रेसी पदाधिकारियोंके कार्योंकी खुले आम आलोचना करे", लेकिन साथ ही उनका यह भी आग्रह था कि "आलोचना शिष्ट और पूर्ण तथ्योंपर आधारित होनी चाहिए" (पृ० १७३)। "पूरी जानकारी पर आधारित स्वस्थ और सन्तुलित आलोचना" को वे "सार्वजनिक जीवनका प्राण" मानते थे (पृ० ३२७-२८)। मन्त्रियोंको उन्होंने पुलिसके जरिये शासन नहीं करने की सलाह दी थी, किन्तु इसका मतलब यह नहीं था कि उन्हें हिंसाको बरदाश्त करना चाहिए। उन्होंने स्पष्ट शब्दोंमें कहा कि "नागरिक स्वतन्त्रताका अर्थ अपराध करने की आजादी नहीं है।" यह चेतावनी देना आवश्यक हो गया था, क्योंकि जान पड़ता था, नागरिक स्वतन्त्रताका अर्थ कुछ लोगोंने यह लगा लिया था कि कांग्रेस-शासित "प्रान्तोंमें तो आदमी जो चाहे सो कह और कर सकता है।" उन्होंने बताया कि "राजनीतिके क्षेत्रमें अहिंसा एक नया अस्त्र है, जिसका अभी विकास हो रहा है।" गांधीजी चाहते थे कि कांग्रेसी मन्त्रियोंको अहिंसाकी सम्भावनाओंके "अन्वेषण-कार्यको आगे बढ़कर अपने हाथोंमें" ले लेना चाहिए, लेकिन यदि आवश्यकता आ पड़े तो उन्हें हिंसात्मक कार्रवाइयोंके खिलाफ पुलिसका प्रयोग करने में भी संकोच नहीं करना चाहिए, यद्यपि ऐसा वे प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी या कांग्रेस कार्य-समितिकी सलाह लेकर ही करें (पृ० ३००-१)।

कानून बनाकर सुधार और पुनर्निर्माणका कार्य सम्पन्न करने के कार्यक्रममें गांधीजी ने सर्वोच्च प्राथमिकता शिक्षा तथा मद्य-निषेधको दी। ये दोनों चीजें एक-दूसरेसे जुड़ी हुई थीं, क्योंकि आबकारी करसे प्राप्त होनेवाले राजस्वसे शिक्षाका खर्च चलाया जाता था। गांधीजी को यह सोचना "लज्जास्पद और अपमानजनक" लगता था कि "शराबसे प्राप्त होनेवाले राजस्वके बिना हमारे बच्चे शिक्षासे वंचित रह जायेंगे।" लेकिन शिक्षाकी "इस जटिल समस्या" का समाधान गांधीजी के सामने "एकाएक बिजलीकी तरह कौंध" गया। इसका समाधान बच्चोंको एक विदेशी भाषाके माध्यमसे सारे विषय पढ़ाने के दुर्वह भारसे मुक्त करने और उन्हें अपने हाथ-पैरोंके लाभदायक उपयोगका प्रशिक्षण देनेमें निहित था। उनकी राय थी कि जहाँ शिक्षाके माध्यम-सम्बन्धी सुधारके फलस्वरूप बच्चे मैट्रिकुलेशन तकका पाठ्यक्रम ग्यारहके बदले सात वर्षोंमें पूरा कर सकेंगे, दूसरे सुधारके परिणामस्वरूप वे कोई उत्पादक दस्तकारी सीख लेंगे, जिससे शिक्षा बहुत हदतक स्वावलम्बी बन जायेगी (पृ० ६४, १३०, और २१४)।

गांधीजी का कहना था कि चौदह सालका बच्चा जब सात सालकी शिक्षा समाप्त करके शालासे निकले तबतक उसे अपने परिवारका एक कमाऊ सदस्य बन चुकना चाहिए। सम्भव था, यह योजना आरम्भके कुछ वर्षोंमें पूर्ण स्वावलम्बी न हो पाये, किन्तु गांधीजी का विश्वास था कि सात सालके अन्तमें कुल व्यय और आयके बीच शायद सन्तुलन कायम हो जाये (पृ० १५२ और १६८)। स्वावलम्बी शिक्षा भारतीय गाँवोंके लिए केवल एक आर्थिक आवश्कता ही नहीं थी, बल्कि वह शहरों और गाँवोंको एक-दूसरेके निकट लाकर भुखमरी और अमीरीके बीचकी खाई पाटकर

बिना किसी विग्रह तथा खून-खराबीके मूक सामाजिक क्रान्ति सम्पन्न करने का साधन भी थी (पृ० १८८)। शिक्षासे शारीरिक प्रशिक्षणका सम्बन्ध विच्छिन्न हो जानेका परिणाम यह हुआ था कि लोग शारीरिक श्रमको निम्न कोटिका कार्य मानने लगे थे। गांधीजी को आशा थी कि नयी शिक्षा-पद्धति विद्यार्थियोंमें शोध-बुद्धिका विकास कर तथा कारीगरोंको एक स्वतन्त्र दर्जा प्रदान कर इस दोषको दूर करेगी (पृ० १५४)।

गांधीजी की इस शिक्षा-योजनाके पीछे इस तरहकी व्यावहारिक चीजोंकी प्रेरणा तो थी ही, लेकिन उसका मुख्य आधार उनकी यह मान्यता थी कि विभिन्न शारीरिक क्षमताओंके सही प्रयोगसे बच्चेके व्यक्तित्वका सर्वतोमुखी विकास किया जा सकता है। उनका दावा था कि "पूरा प्रशिक्षण बहुत स्वाभाविक रीतिसे और विद्यार्थीकी ग्रहणशीलताके आधारपर दिया जायेगा और इसलिए वह देश-भरमें सबसे सस्ती और सबसे कम समयमें मिलनेवाली शिक्षा-पद्धति होगी" (पृ० ८८)। दस्तकारीके प्रशिक्षणका मतलब बच्चोंको यन्त्रवत् एक उद्योगमें लगा देना नहीं था, बल्कि गांधीजी की कल्पना थी कि "उसकी शिक्षा इस तरह दी जानी चाहिए" जिससे "ज्ञानकी तमाम शाखाओंमें लड़के-लड़कियोंका आवश्यक मानसिक विकास हो सके" (पृ० २१४), उनकी बुद्धिको प्रशिक्षण मिल सके, उनका शरीर सुगठित हो सके, उनकी लिखावट सुन्दर हो सके, उनकी कलाकी भावना जाग्रत हो सके (पृ० १५३)।

गांधीजी ने लोगोंके सम्भावित भ्रमका निवारण करते हुए समझाया कि "मैंने जो लिखा है वह इस विषयकी चर्चामें मेरा निजी योगदान है" और कांग्रेसको अधिकृत तौरपर उससे अभी कोई सरोकार नहीं है। लेकिन साथ ही उन्होंने यह भी स्पष्ट कहा कि "वर्तमान शिक्षा-प्रणालीने देशके युवावर्गको और भारतकी भाषाओं तथा सामान्य संस्कृतिको जो भयंकर क्षति पहुँचाई है उसके बारेमें सोचकर मेरा मन बहुत क्षुब्ध होता है" (पृ० ८८)। उनकी नयी पद्धतिका उद्देश्य विद्यार्थियोंको "अपनी संस्कृति, अपनी सभ्यता और अपने देशकी सच्ची प्रतिभाका प्रतिनिधि बनाना" था (पृ० २९७)।

कांग्रेस-शासित प्रान्तोंमें तीन सालके अन्दर पूर्ण मद्य-निषेध लागू करने का सुझाव देते हुए कांग्रेस कार्य-समितिने जो प्रस्ताव पास किया उसका स्वागत गांधीजी ने कांग्रेसके "सबसे बड़े काम" के रूपमें किया और इस महान् कार्यमें "न केवल भारत-स्थित यूरोपीयों-सहित सभी पक्षों और दलोंसे, बल्कि समस्त संसारके विचारशील लोगोंसे सहानुभूति और सहयोग" देनेका अनुरोध किया (पृ० ९०)। लेकिन उन्होंने यह स्वीकार किया कि यह कार्य केवल राज्यके प्रयत्नोंसे सम्पन्न नहीं हो सकता। इसके लिए कानून बनाना आवश्यक था, लेकिन यह भी इस दिशामें प्रारम्भ-मात्र होता। कानूनके साथ-साथ लोगोंको इस विषयमें शिक्षित करना, जगाना जरूरी था। गांधीजी ने शिक्षकों, डाक्टरों तथा अन्य लोगोंसे इस लोकशिक्षणके कार्यमें सहयोग देनेका अनुरोध किया। कानून बनाकर मद्य-निषेध लागू करने को अव्यावहारिक बतानेवालों की यही चिरपरिचित दलील थी कि "लोग निश्चय ही गैर-कानूनी ढंगसे शराब बनायेंगे और छिपकर पियेंगे भी।" इसका उत्तर देते हुए गांधीजी ने कहा,

"चोरी अनन्त कालतक चलती रहेगी। तो क्या इसलिए उसे हम कानून द्वारा मंजूरी दे दें?" उनकी दलील यह थी कि "जबतक राज्य शराबीको शराब पीनेकी इजाजत ही नहीं, बल्कि सुविधाएँ भी देता रहेगा, तबतक सुधारकोंको सफलता मिलना लगभग असम्भव है" (पृ० १७९-९०)।

राजनीति के प्रति गांधीजी के रचनात्मक रवैयेको विभिन्न प्रकारके आन्दोलनोंकी उस "तूफानी हवा" (पृ० २३५) का भी मुकाबला करना पड़ा जो प्रान्तीय स्वायत्तताके आरम्भ से ही बहने लगी थी। कांग्रेस संसदीय दलके नेताके चुनावके प्रश्नको लेकर बम्बईमें एक अत्यन्त विषाक्त और कटुतापूर्ण विवाद उठ खड़ा हुआ था और यद्यपि गांधीजी ने कहा कि वे वल्लभभाई पटेल पर के० एफ० नरीमान द्वारा लगाये आरोपोंकी जाँच करेंगे और नरीमानको यह आश्वासन भी दिया कि "यदि मुझे इस बातका विश्वास हो गया कि सरदारने आपके साथ अन्याय किया है, तो मैं निःसंकोच ऐसा कहूँगा और उस दुष्कृत्यके प्रतिकारके लिए जो भी सम्भव है, करूँगा" (पृ० १), तथापि यह विवाद निर्बाध रूपसे चलता रहा, जिससे उन्हें "गहरी व्यथा पहुँची" (पृ० ४२)। जब गांधीजी और डी० एन० बहादुरजी ने आरोपोंकी जाँच करने पर सरदार पटेलको निर्दोष पाया तब गांधीजी की सलाहपर नरीमानने निर्णयको स्वीकार करते हुए एक वक्तव्य जारी किया, जिसमें उन्होंने खेद प्रकट किया। गांधीजी ने यह आशा व्यक्त की कि बम्बईके समाचार-पत्र और लोग "उस अप्रिय और अशोभनीय विवादको भूल जायेंगे जिसने बम्बईकी सार्वजनिक प्रवृत्तियोंको, सामान्यतया उनमें जो उत्साह और आनन्द देखने को मिलता है, उससे रिक्त कर दिया था" (पृ० २७६)। लेकिन बादमें नरीमानने अपनी ही स्वीकारोक्तिका खण्डन करते हुए एक दूसरा वक्तव्य जारी किया (पृ० ३१९), और इस प्रकार जिस समझौते और मेलजोलके लिए गांधीजी चार महीने तक श्रम करते रहे, वह सम्पन्न नहीं हो पाया।

जब कांग्रेसी मन्त्रिमण्डल पदारूढ़ होकर काम करने लगे तब उनपर — विशेषकर च० राजगोपालाचारीके नेतृत्वमें काम करनेवाले मद्रास-मन्त्रिमण्डलपर — कुछ कांग्रेसियोंने तीव्र प्रहार किये। अ० भा० कां० कमेटीकी जिस बैठकमें मन्त्रिमण्डलोंकी आलोचना की गई थी उसपर टिप्पणी करते हुए गांधीजी ने लिखा, "प्रस्ताव . . . और उससे भी अधिक उसपर दिये गये भाषण सीमासे बाहर थे। . . . आलोचकोंने अपनी आलोचनाओंमें सत्य और अहिंसाका त्याग कर दिया था।" मैसूर राज्यकी कथित दमनात्मक कार्रवाइयोंके खिलाफ पास किये गये एक अन्य प्रस्तावको गांधीजी ने और भी दोषपूर्ण बताकर उसकी आलोचना की (पृ० ३२८)। ऐसे प्रश्नोंपर होनेवाले मतभेदोंके परिणामस्वरूप कांग्रेस कार्य-समितिमें संकटकी स्थिति उत्पन्न हो गई, और गांधीजी ने वल्लभभाई पटेल तथा कार्य-समितिके अन्य सदस्योंको त्यागपत्र देनेकी सलाह दी, ताकि कांग्रेस-अध्यक्ष जवाहरलाल नेहरू अपनी पसन्दकी समिति चुन सकें। इस स्थितिको लेकर होनेवाली चर्चाएँ इतनी थकानेवाली थीं कि गांधीजी को लग रहा था, मैं "मुश्किलसे टिका हुआ हूँ," और उसी दिन उनका

रक्तचाप चिन्ताजनक रूपसे बढ़ गया (पृ० ३२१-२२)। वातावरणमें हिंसाके तत्त्व विद्यमान थे, इसके अन्य लक्षण भी प्रकट हो रहे थे। शोलापुरके निकट तथाकथित 'जरायमपेशा' कबीलोंकी एक बस्तीमें उपद्रव हुआ और अहमदाबाद तथा कानपुरके श्रमिकोंके बीच भी अशान्ति फैली। गांधीजी ने इन घटनाओंको "तूफानके आसार" कहा, और उनके मनमें इस तरहके प्रश्न उठने लगे कि कहीं ये परिस्थितिपर कांग्रेसकी पकड़की कमजोरीके लक्षण तो नहीं हैं। कांग्रेसको कमजोर क्यों होना चाहिए था? गांधीजी के विचारमें अगर कांग्रेसमें ऐसी कमजोरी सचमुच थी तो उसका कारण "सत्य और अहिंसामें, सतत कार्य और अनुशासनमें और चतुर्विध रचनात्मक कार्यक्रमकी शक्तिमें" विश्वासका अभाव ही हो सकता था। स्वभावतः उन्होंने कांग्रेसियोंको चेतावनी देते हुए कहा कि अगर उनमें "साधनके सम्बन्धमें यह राजनीतिक श्रद्धा नहीं है, तो सम्भव है कि पदग्रहण एक जाल साबित हो" (पृ० ३३७-३८)।

इधर कांग्रेस अपने आन्तरिक अनुशासनकी समस्यासे जूझ रही थी और उधर क्षितिजपर एक दूसरे प्रकारके संकटके बादल मँडराने लगे थे, जो पहलेसे कहीं अधिक खतरनाक थे। लखनऊमें मुस्लिम लीगके वार्षिक अधिवेशनकी अध्यक्षता करते हुए १५ अक्तूबरको मुहम्मद अली जिन्नाने एक भाषण दिया, जो गांधीजी को "युद्धकी घोषणा" जैसा लगा। जो पत्र गांधीजी ने परम व्यथित मनसे लिखा (पृ० २८६) उसका उत्तर देते हुए जिन्नाने लिखा कि मैंने जो-कुछ कहा, आत्मरक्षामें कहा (देखिए परिशिष्ट ७)। लेकिन गांधीजी के मनमें जो शंका उठी थी वह जिन्नाकी बादकी उक्तियोंसे विश्वासमें परिणत हो गई। उन्होंने जिन्नाको लिखा, "आपके भाषणोंमें मैं उस पुराने राष्ट्रवादीका अभाव महसूस करता हूँ। . . . मैं घुटने टेककर आपसे यही विनती करूँगा कि मैं आपको जैसा समझता था, आप वैसे ही बन जायें" (पृ० ३९१-९२)। जिन्नाके हृदयको छूनेके लिए की गई इस अपीलके उत्तरमें उन्होंने गांधीजी को लिखा कि जाहिर है, कांग्रेसी अखबारोंमें क्या-कुछ हो रहा है, मुझे कितना बदनाम किया जा रहा है, मुझे कितने गलत रूपमें पेश किया जा रहा है, इस सबका इल्म आपको नहीं है (देखिए परिशिष्ट १२)। हिंसाकी इस बढ़ती हुई भावना और पारस्परिक अविश्वासका विस्फोट मार्च महीनेमें इलाहाबादके साम्प्रदायिक दंगोंके रूपमें हुआ। दंगोंको शान्त करने के लिए सरकारको सेनाकी सहायता लेनी पड़ी। गांधीजी के लिए "यह शर्मकी बात" थी कि "कांग्रेसी मन्त्रियोंको पुलिस और सेनाकी सहायता लेनी पड़ी।" अपने साथी कार्यकर्त्ताओंसे उन्होंने कहा, "मुझे ऐसा लगता है मानों कांग्रेसकी हार और ब्रिटेनकी जीत हो गई है" (पृ० ४५५)। 'हरिजन' में "हमारी असफलता" शीर्षक लेखमें उन्होंने कांग्रेसियोंसे इस "नग्न सत्य" को स्वीकार करने को कहा कि "कांग्रेस अभी इस योग्य नहीं हुई है कि ब्रिटिश सत्ताका स्थान ले सके।" उनके विचारमें, कांग्रेस अबतक सबलकी अहिंसा विकसित नहीं कर पाई थी और इसीलिए वह अपने इस दावेको सही सिद्ध नहीं कर पाई थी कि वह सम्पूर्ण भारतका

प्रतिनिधित्व करती है। गांधीजी ने कांग्रेसको "कुछ हजार नहीं, बल्कि लाखों ऐसे स्वयंसेवकोंकी अहिंसक सेना खड़ी" करने की सलाह दी जो अपने "प्राणोंकी बलि" देकर भी "हर प्रकारकी आपात् स्थितिका सामना" करनेको तैयार रहेंगे और जो शान्ति-कालमें "बराबर ऐसी रचनात्मक प्रवृत्तियोंमें लगे रहेंगे जो ऐसे दंगोंकी सम्भावना सहज ही समाप्त कर देती है" (पृ० ४५०-५१)। फिर मार्चके अन्तिम सप्ताहमें गांधी सेवा संघकी बैठकमें इसपर अपने हृदयकी व्यथाको उँडेलते हुए उन्होंने साथी कार्यकर्त्ताओंसे यह सोचने का अनुरोध किया कि किस प्रकार अहिंसाके द्वारा साम्प्रदायिक शान्तिकी रक्षा की जा सकती है।

एक और प्रश्न भी इस अवधिमें गांधीजी की चिन्ताका कारण बना रहा। वह था हिंसात्मक कार्रवाईके कारण जेलोंमें भेजे गये राजनीतिक कैदियों या नजरबन्दोंकी रिहाईका प्रश्न। गांधीजी ने विश्वासका ऐसा वातावरण तैयार करने का प्रयत्न किया जिससे सभी कैदियोंकी रिहाईका मार्ग प्रशस्त हो सके। इसी उद्देश्यसे उन्होंने अण्डमान के कैदियोंसे, जो २४ जुलाईसे भूख-हड़ताल कर रहे थे, हड़ताल तोड़ने का अनुरोध किया और यह आश्वासन देनेको कहा कि अब आतंकवादी तरीकोंमें उनका विश्वास नहीं रह गया है। उन्होंने जनतासे भी अनुरोध किया कि इन कैदियोंकी रिहाईपर वह कोई प्रदर्शन आदि न करे (पृ० ८१-८२, ११०-११ और ३४०-४१)। कैदियों द्वारा आश्वासन दिये जानेपर (पृ० ९९) गांधीजी ने उनके कल्याणको अपना एक मुख्य उद्देश्य बना लिया और जब वे अलीपुर जेलके कैदियोंसे मिलने गये तो उन्होंने उन्हें वचन दिया कि मैं आपको अपनी मृत्युके पूर्व मुक्त देखना चाहता हूँ (पृ० ३१५)। बंगाल सरकारके साथ उनकी लम्बी वार्ता चली, जो उनके बुरे स्वास्थ्यको देखते हुए उनके लिए बहुत कठिन साबित हो रही थी, किन्तु अन्तमें उन्होंने मन्त्रियोंको इस आशयकी घोषणा करने पर राजी कर लिया कि क्रमिक रूपसे सभी कैदियोंको रिहा कर दिया जायेगा (पृ० ३४०-४२)। बिहार और संयुक्त प्रान्तमें कैदियोंकी रिहाईके प्रश्नपर जब राजनीतिक संकट उपस्थित हुआ और मन्त्रियोंने त्यागपत्र दे दिये तब भी गांधीजी ने अपनी सुलह-समझौतेको भावनासे काम लेते हुए इस समस्याका समाधान ढूँढ़ निकाला (पृ० ४२७-२८)।

गांधीजी को सृष्टिके मानवेतर प्राणियोंसे भी उतना ही प्रेम था जितना मानवसे। जानवरोंकी चीर-फाड़ करनेवाली कुछ पश्चिमी संस्थाओंके समर्थनमें 'हरिजन' के एक लेखमें उन्होंने लिखा, "मनुष्य-मात्रके दुःखको कम करने का ध्येय कोई ऐसा ध्येय नहीं है जिसके लिए मनुष्येतर प्राणियोंकी चीर-फाड़में निहित अमानुषिकताको उचित कहा जा सके।" गांधीजी का विचार था कि मनुष्यको कोमलता और दयाका भाव कभी नहीं छोड़ना चाहिए। कारण, "दूसरे मनुष्यों अथवा मनुष्येतर प्राणियोंके प्रति दयाधर्म रखने से हमारा दुःख और पीड़ा कम होती है क्योंकि इससे हमें उस पीड़ाको सहने की शक्ति मिलती है" (पृ० १५५)।

गांधीजी को स्वयं अपने जीने-मरने की भी कोई चिन्ता नहीं थी। वे जीवन-मृत्युको सिरजनहारके हाथकी बात मानते थे। कलकत्तामें बीमार पड़ने के बाद

उन्होंने निर्मला गांधी को लिखा: "मेरी नैया किधर जा रही है, इसकी मुझे खबर नहीं है। . . . खेवनहार भगवान् है, तब वह किधर जाती है, भला इसकी चिन्ता मैं क्यों करूँ? किसी-न-किसी दिन तो नावको डूबना ही है। उस दिनका हिसाब रखकर क्या करना है?" (पृ० ३३४)

सहिष्णुता गांधीजी के समग्र चिन्तन और व्यवहारकी आधारशिला थी। एक पत्र-लेखकने जब यह जिज्ञासा की कि किसीके दोषोंको स्पष्ट देखते हुए उसके प्रति सहिष्णुता कैसे बरती जाये तो गांधीजी ने उत्तरमें अत्यन्त तर्कयुक्त ढंगसे लिखा: "मैं अपने ढेरों दोष रोज देखता हूँ, लेकिन अपने प्रति मेरी सहिष्णुताका तो कोई अन्त ही नहीं है।" इसीसे "मैंने दूसरोंके दोष देखकर भी उनके प्रति सहिष्णु रहने की शिक्षा ली है" (पृ० १९८)। यह स्वाभाविक आत्म-प्रेमसे उत्सृत होकर मातृ-पितृ-प्रेमके माध्यमसे विकसित होते हुए परिवार और फिर मनुष्य-मात्र और अन्तमें सृष्टि-मात्रको अपनी परिधिमें समेट लेनेवाली सहिष्णुता थी। ऐसे ही स्वरमें गांधीजी ने अमृतकौरको लिखा: "जैसे हम यह चाहते हैं कि हमारे पड़ोसी हमसे प्रेम करें वैसे ही अगर हम भी उनसे प्रेम करना चाहते हैं तो हमें उनके व्यवहार की विचित्रताओंको सहना पड़ेगा। भला ऐसी कौन-सी स्त्री या पुरुष है जिसके व्यवहारमें विचित्रता न हो? जो इनसे मुक्त हो वही दूसरोंसे कुछ कहे। क्या तुम हो या ऐसे किसीको जानती हो? मैं तो नहीं जानता; और मैं छोटा या बड़ा जैसा भी हूँ, अपनेको भी इसका अपवाद नहीं मानता" (पृ० १९२-९३)।

आभार

इस खण्डकी सामग्रीके लिए हम निम्नलिखित संस्थाओं, व्यक्तियों, पुस्तकोंके प्रकाशकों तथा पत्र-पत्रिकाओंके आभारी हैं:

संथाएँ: साबरमती आश्रम संरक्षक तथा स्मारक न्यास और संग्रहालय, नवजीवन न्यास तथा गुजरात विद्यापीठ पुस्तकालय, अहमदाबाद; गांधी स्मारक निधि तथा संग्रहालय, राष्ट्रीय अभिलेखागार, नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय, नई दिल्ली एवं कर्नाटक सरकार।

व्यक्ति: श्रीमती अमृतकौर; श्री आनन्द तो० हिंगोरानी, इलाहाबाद; श्री ए० के० सेन, कलकत्ता; श्री कान्तिलाल ह० गांधी, बम्बई; श्रीमती गोमतीबहन कि० मशरूवाला, बारडोली; श्री घनश्यामदास बिड़ला, कलकत्ता; श्रीमती तहमीना खम्भाता, बम्बई; श्री नारणदास गांधी; श्री नारायण एम० देसाई, बनारस; श्री नारायण जे० सम्पत, अहमदाबाद; श्री प्यारेलाल, नई दिल्ली; श्रीमती प्रेमाबहन कंटक, सासवड; श्री मंगलदास पकवासा; श्री महेश पट्टणी, भावनगर; श्रीमती मीराबहन, गॉडेन, आस्ट्रिया; श्री मुन्नालाल जी० शाह, सेवाग्राम; श्री मूलशंकर नौतमलाल; श्रीमती मेडेलिन रोलाँ; डॉ० राजेन्द्रप्रसाद; श्रीमती लीलावती आसर, बम्बई; श्रीमती विजयाबहन एम० पंचोली, आमला; डॉ० विलियम एच० टैंडी, ग्लुसेस्टरशायर; श्रीमती शारदा जी० चोखावाला, अहमदाबाद; श्री शिवाभाई जी० पटेल, बोचासण तथा श्री सतीश द० कालेलकर, नई दिल्ली।

पुस्तकें: 'आचार्य कृपालानीना लेखो'; 'पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद'; 'ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स'; 'बापुना पत्रो-२: सरदार वल्लभभाईने; 'बापुना पत्रो-४: मणिबहेन पटेलने'; 'बापुना पत्रो-६: गं० स्व० गंगाबहेनने'; 'बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष'; 'महात्मा: लाइफ ऑफ मोहनदास करमचन्द गांधी', खण्ड-४'; 'मोटाना मान'; 'द लाइफ ऑफ महात्मा गांधी'; 'सरदार वल्लभभाई पटेल', खण्ड-२ एवं 'द सेइंग्स ऑफ मुहम्मद'।

पत्र-पत्रिकाएँ: 'अमृतबाजार पत्रिका', 'गांधी सेवा संघके चतुर्थ वार्षिक अधिवेशन (डेलांग, उड़ीसा) का विवरण', 'बॉम्बे क्रॉनिकल', 'स्टेट्समैन', 'हरिजन', 'हरिजनबन्धु', 'हरिजनसेवक', 'हितवाद', 'हिन्दुस्तान टाइम्स' और 'हिन्दू'।

अनुसंधान और सन्दर्भ-सम्बन्धी सुविधाओंके लिए अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी पुस्तकालय, द इंडियन काउन्सिल ऑफ वर्ल्ड अफेयर्स पुस्तकालय, सूचना और प्रसारण मन्त्रालयका अनुसन्धान और सन्दर्भ-विभाग तथा श्री प्यारेलाल नैयर, नई दिल्ली; एवं कागज-पत्रोंकी फोटो-नकल तैयार करने में सहायता देनेके लिए हम सूचना और प्रसारण-मन्त्रालय, नई दिल्लीके फोटो-विभागके आभारी हैं।

पाठकोंको सूचना

हिन्दीकी जो सामग्री हमें गांधीजी के स्वाक्षरोंमें मिली है, उसे अविकल रूपमें दिया गया है। किन्तु दूसरों द्वारा सम्पादित उनके भाषण अथवा लेख आदिमें हिज्जों की स्पष्ट भूलोंको सुधारकर दिया गया है।

अंग्रेजी और गुजरातीसे अनुवाद करने में अनुवादको मूलके समीप रखने का पूरा प्रयत्न किया गया है, किन्तु साथ ही भाषाको सुपाठ्य बनाने का भी पूरा ध्यान रखा गया है। छापेकी स्पष्ट भूलें सुधारने के बाद अनुवाद किया गया है। और मूलमें प्रयुक्त शब्दोंके संक्षिप्त रूप यथासम्भव पूरे करके दिये गये हैं। नामोंको सामान्य उच्चारणके अनुसार ही लिखने की नीतिका पालन किया गया है। जिन नामोंके उच्चारणमें संशय था उनको वैसा ही लिखा गया है जैसा गांधीजी ने अपने गुजराती लेखोंमें लिखा है।

मूल सामग्रीके बीच चौकोर कोष्ठकोंमें दी गई सामग्री सम्पादकीय है। गांधीजी ने किसी लेख, भाषण आदिका जो अंश मूल रूपमें उद्धृत किया है, वह हाशिया छोड़कर गहरी स्याहीमें छापा गया है, लेकिन यदि कोई ऐसा अंश उन्होंने अनूदित करके दिया है तो उसका हिन्दी अनुवाद हाशिया छोड़कर साधारण टाइपमें छापा गया है। भाषणकी परोक्ष रिपोर्ट तथा वे शब्द जो गांधीजी के कहे हुए नहीं हैं, बिना हाशिया छोड़े गहरी स्याहीमें छापे गये हैं। भाषण और भेंटकी रिपोर्टके उन अंशोंमें, जो गांधीजी के नहीं हैं, कुछ परिवर्तन किया गया है और कहीं-कहीं कुछ छोड़ दिया गया है।

शीर्षककी लेखन-तिथि जहाँ उपलब्ध है, वहाँ दायें कोनेमें ऊपर दे दी गई है। परन्तु जहाँ वह उपलब्ध नहीं है वहाँ उसकी पूर्ति अनुमानसे चौकोर कोष्ठकोंमें की गई है, और आवश्यक होनेपर उसका कारण स्पष्ट कर दिया गया है। जिन पत्रोंमें केवल मास या वर्षका उल्लेख है, उन्हें आवश्यकतानुसार मास या वर्षके अन्तमें रखा गया है। शीर्षकके अन्तमें साधन-सूत्रके साथ दी गई तिथि प्रकाशन की है। गांधीजी की सम्पादकीय टिप्पणियाँ और लेख, जहाँ उनकी लेखन-तिथि उपलब्ध है अथवा जहाँ किसी दृढ़ आधारपर उसका अनुमान लगाया जा सका है, वहाँ लेखन-तिथिके अनुसार और जहाँ ऐसा सम्भव नहीं हुआ, वहाँ उनकी प्रकाशन-तिथिके अनुसार दिये गये हैं।

इस ग्रंथमालामें प्रकाशित प्रथम खण्डका जहाँ-जहाँ उल्लेख किया गया है, वह जून १९७० का संस्करण है।

साधन-सूत्रोंमें 'एस० एन०' संकेत साबरमती संग्रहालय, अहमदाबादमें उपलब्ध सामग्रीका, 'जी० एन०' गांधी स्मारक निधि और संग्रहालय, नई दिल्लीमें उपलब्ध कागज-पत्रोंका, 'एम० एम० यू०' मोबाइल माइक्रोफिल्म यूनिटका, 'एस० जी०' सेवाग्राममें सुरक्षित सामग्रीका और 'सी० डब्ल्यू०' सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय (कलेक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गांधी) द्वारा संगृहीत पत्रोंका सूचक है।

अन्तमें साधन-सूत्रोंकी सूची और इस खण्डसे सम्बन्धित कालकी तारीखवार घटनाएँ दी गई हैं।

विषय-सूची

१. तार : अमृतकौरको

वर्धा
१ अगस्त, १९३७

राजकुमारी अमृतकौर
शिमला वेस्ट

यदि गोली चलाने के लिए खेद प्रकट कर दिया गया है और तुम्हारे द्वारा उल्लिखित अन्य राहत दे दी गई है, तो किसी जाँचकी जरूरत नहीं है।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७९८) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६९५४ से भी।

२. पत्र : के० एफ० नरीमानको

१ अगस्त, १९३७

आपका रुख बिलकुल समझमें नहीं आता। अपना वक्तव्य जारी करने से पहले मैं आपके आगे यह प्रस्ताव रखता हूँ। आपके सभी आरोपोंपर मैं विचार करने को तैयार हूँ और यदि मुझे इस बातका विश्वास हो गया कि सरदारने आपके साथ अन्याय किया है, तो मैं निःसंकोच ऐसा कहूँगा और उस दुष्कृत्यके प्रतिकारके लिए जो भी सम्भव है, करूँगा। किन्तु दूसरी ओर यदि कोई बात आपके विरुद्ध मिली और आप मेरे निष्कर्षोंसे सन्तुष्ट नहीं हुए, तो मैं बहादुरजी या सर गोविन्दराव माडगाँवकरसे प्रार्थना करूँगा कि वे अभिलिखित साक्ष्यकी जाँच करें और मेरे निष्कर्षों पर पुनः विचार करें। जहाँतक मेरा सवाल है, मैं नहीं चाहता कि ये सब कार्यवाहियाँ जनताके सामने आयें। यदि निष्कर्ष आपके विरुद्ध निकले तो आपको क्षमा माँगने का और अपनी कमजोरीको तथा जनता, सरदार और अन्य सहयोगियोंके प्रति किये गये अन्यायको पूरी तरह और निःसंकोच स्वीकार करने का अवसर मिलना चाहिए। परन्तु यदि आप चाहते हैं कि ये कार्यवाहियाँ जनताके सामने आयें, तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है। आपको यह जानने की भी कोई जरूरत नहीं है कि इस सिलसिलेमें क्या किया जा रहा है। मैं इस मामलेमें कतई आना नहीं चाहता था। पर आप चाहते थे कि मैं हस्तक्षेप करूँ। और बहुत-से मित्र, जिनमें श्री भरूचा

भी हैं, ऐसा करने के लिए मुझ पर जोर डाल रहे हैं। अब मेरे लिए चुप बैठना शायद ठीक न होगा। आशा है, आप यह समझ जायेंगे कि मुझे इस बातकी बड़ी चिन्ता है कि आपके साथ पूरी तरह न्याय हो और जिससे आपको अकारण हानि पहुँच सकती हो, ऐसी हर चीज टाली जाये। यदि आप चाहते हैं कि मैं जाँच करूँ तो कृपया मुझे अपने आरोप और अपने साक्ष्यका सार भेज दें। मैं उसे सरदार और उन अन्य सहयोगियोंके पास भेज दूंगा जिनसे आपको शिकायत है, और उनका उत्तर मिलने पर मैं आवश्यक साक्ष्यकी, यदि वह आवश्यक हुआ तो, माँग करूँगा। इन कार्यवाहियोंमें एक सप्ताहसे अधिक समय नहीं लगना चाहिए।

आपको इस बातकी कोई चिन्ता करने की जरूरत नहीं है कि कार्य-समिति या आपके मित्र इस सम्बन्धमें क्या सोचेंगे। उन्हें इस कार्यवाहीकी जानकारी देने की जरूरत नहीं है।

यहाँ आपको इतना और बता दूं कि अबतक जो जानकारी मुझे मिली है उससे आपकी बात सही सिद्ध नहीं होती।[1]

[अंग्रेजीसे]

सरदार वल्लभभाई पटेल, खण्ड २, पृ० २४०, और **हिन्दू,** १४-८-१९३७

१. यह पत्र मिलने पर नरीमानने गांधीजी को एक तार भेजा, जिसमें कहा गया था: "एकपक्षीय धारणाके प्रकाशनपर मुझे तीव्र आपत्ति है। दूसरा पक्ष रखना चाहता हूँ। पत्र भेज रहा हूँ।" इसके बाद जो पत्र आया उसमें उन्हों ने कहा था: "मैं देख रहा हूँ कि पिछले कुछ पत्रोंमें आप मुझे बराबर अपने निष्कर्षोंको प्रकाशित करने की धमकी दे रहे हैं। इससे पहले कि आप उसे जनताके सामने रखें, क्या मुझे यह जाननेका अधिकार नहीं है कि आपका विचार क्या है? . . . मुझे विश्वास है कि यदि मुझे मौका दिया जाये तो मैं आपको सभी मुद्दों पर सन्तुष्ट कर सकूँगा और यदि कोई गलतफहमी हुई तो उसे भी दूर कर सकूँगा। मेरी इस प्रार्थनाके बाद भी यदि आप इस काण्डके बारेमें अपने विचारोंको प्रकाशित करने का फैसला करते हैं तो मैं भी अपना स्पष्टीकरण जनताके सामने रखने के लिए अपनेको स्वतन्त्र समझूँगा। . . ." इस पत्रके मिलने से पहले ही गांधीजी ने २ तारीखको नरीमानको सूचना दी थी कि मैं और बहादुरजी १९३४ के चुनाव और १९३७ में बम्बई विधानमण्डलके कांग्रेस दलके नेताके चुनावसे सम्बन्धित दोनों मसलोंपर पंच-निर्णय देने को तैयार हैं, और कहा कि यदि यह प्रस्ताव आपको स्वीकार हो तो आप तारसे मुझे सूचित करें। इसके उत्तरमें ४ अगस्तको नरीमानसे यह तार दिया: "दोनों मसलोंपर आपका और बहादुरजीका निर्णय स्वीकार है।" परन्तु ६ अगस्तको नरीमानने गांधीजी से कुछ मुद्दोंपर सहायता माँगी। उन्होंने यह सुझाव रखा कि कार्य-समितिके फैसलेके खिलाफ इस पंच-न्यायाधिकरणपर नरीमानकी स्वीकृतिका अर्थ कहीं यह न लगाया जाये कि वे उसके प्रति वफादार नहीं हैं, इसलिए गांधीजी को प्रस्तावित कार्यवाहीके लिए कांग्रेस-अध्यक्षकी स्वीकृति ले लेनी चाहिए। उन्होंने यह भी माँग की कि मेरे सभी साक्षियोंको किसी भी तरह परेशान न किया जाये; क्योंकि इस तरहके आश्वासनके बिना स्वतन्त्र जाँच और सचाई मालूम करने का काम असम्भव होगा।

गांधीजी के उत्तरके लिए देखिए "पत्र: के० एफ० नरीमानको", पृ० २७ तथा "वक्तव्य: समाचारपत्रों को", पृ० ४२-३।

३. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

सेगाँव
१ अगस्त, १९३७

भाई वल्लभभाई,

अब तार तो तुमको कल ही किया जा सकता है न? हो सकेगा तो महादेव करेंगे। मेरा बयान[१] एकदम तो नहीं निकल सकता। उचित समयपर ही निकलेगा। मेरा कलका पत्र देख लो। सारा पत्रव्यवहार प्रकाशित किया जाये या नहीं, इसका निर्णय मुझसे नहीं हो सकता। इजाजतका सवाल नहीं; सवाल यह है कि हमारी दृष्टिसे यह शोभनीय होगा या नहीं।

बापूके आशीर्वाद

सरदार वल्लभभाई पटेल
डॉ० कानूगाका बँगला
एलिसब्रिज, अहमदाबाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० २०९

४. पत्र : महादेव देसाईको

१ अगस्त, १९३७

चि० महादेव,

तुमने और शिमला-निवासिनीने फाउण्टेन पेन और टाइपराइटरका उपयोग करके सरकंडेकी कलमकी तारीफ की है! मैंने तुम्हारे लेखमें एक अनुच्छेद और जोड़ दिया है।

यदि शान्ता[२] स्वयंको हमारे ढाँचेके अनुकूल बना ले और तुम छोटेलालसे भी काम ले सको तो मुझे नहीं लगता कि हमें देवराजकी जरूरत होगी। लेकिन इस सबके बारेमें तो हम मंगलवारको गाड़ीमें ही विचार-विमर्श कर लेंगे न?

अब कनु आज वहाँ नहीं आयेगा। कल आयेगा।

बापूके आशीर्वाद

१. नरीमान-विवादके विषयमें; देखिए "वक्तव्य : समाचारपत्रोंको", पृ० ४२-३।
२. एक अंग्रेज महिला।

पुनश्च :

वल्लभभाईको इस तरहका तार भेज सकते हो : "वक्तव्य अभी नहीं, पत्र-व्यवहारको प्रकाशित करने के औचित्यके बारेमें विचार कर रहा हूँ।"[१]

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५४२)से।

५. पत्र : चक्रवर्ती राजगोपालाचारीको

सेगाँव
२ अगस्त, १९३७

प्रिय सी० आर०,[२]

साथमें आपके लिए एक दिलचस्प कतरन है।

'हरिजन' कांग्रेसी मन्त्रियोंके लिए एक साप्ताहिक चिट्ठीका रूप लेता जा रहा है। इसलिए आपको रामनाथनसे[३] कहना चाहिए कि वह आपके सामने वे चीजें रखें जो आपको पढ़नी चाहिए। आपको अपने-आपको थका नहीं डालना चाहिए।

मैं आशा करता हूँ कि आप सदस्योंको बारहों महीने कोई भत्ता नहीं देंगे। जब विधान-सभाका अधिवेशन चल रहा हो, उस समय २ रुपये रोज और तीसरे दर्जेका किराया तथा कुली और तांगा आदिका वास्तविक खर्च, जो दो रुपये से अधिक न हो, इतना मैं ठीक समझता हूँ। लेकिन इस विषयमें क्या होना चाहिए, यह तो सबसे ज्यादा आप ही जानते हैं।

इस सप्ताहके 'हरिजन'का अग्रलेख[४] जरूर पढ़िए।

लक्ष्मीको[५] आप अपनी ओरसे लिखने दीजिए। मैं यह आशा नहीं करता कि आप स्वयं मुझे लिखें।

वाइसरायके निमन्त्रणपर उनसे मिलने जा रहा हूँ। काम सिर्फ मिलना है।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २०६५) से।

१. यह प्रारूप अंग्रेजीमें है।

२. चक्रवर्ती राजगोपालाचारी उन दिनों मद्रास प्रान्तके प्रधान मंत्री थे।

३. मद्रास सरकारमें सार्वजनिक सूचना-मंत्री।

४. देखिए खण्ड ६५, पृ० ४८४-९०।

५. राजगोपालाचारीकी बेटी और देवदास गांधीकी पत्नी।

६. पत्र : महादेव देसाईको

२ अगस्त, १९३७

चि० महादेव,

आज तो तुम आ जाओ, यही ठीक होगा। दास्ताने[1] तो मोटरसे आयेगा न? और राजकुमारी भी आयेगी। डाक आते ही शान्ता इनमें से किसीके भी साथ तुरन्त भेज दे। साथमें तार है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

क्या शम्भुदयालसे, उसके खर्चकी जिम्मेदारी किसपर है, आदि बातोंकी चर्चा की?

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५४३) से।

७. पत्र : महादेव देसाईको

२ अगस्त, १९३७

चि० महादेव,

आजकल तो थोड़े-बहुत पत्र लिखने में ही अपना सारा समय लगाता हूँ। एक लेख भेज रहा हूँ। दूसरा शुरू किया है, वह शायद कल मिले। अगर शामको कोई वहाँ जायेगा, तो उसके साथ भेजूँगा नहीं तो सवेरे अपने साथ लाऊँगा। कोई शामकी डाक लाये और आज ही लौटे, तो लेख ले जाये। डॉक्टर तो वहाँ हैं, वे शामको वापस आयेंगे। वे डाक ला सकते हैं। वे मोटरसे आयेंगे। गाड़ीके साथ ही लेख भेज दूँगा।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

इस पत्रके साथ नरीमानको लिखे मेरे पत्र [पत्रोंकी प्रतिलिपियाँ] हैं। एक प्रतिलिपि जवाहरलालको भेजना।

१. वासुदेव विट्ठल दास्ताने।

यह एक तार करना है:

"बेगम रास मसूद, भोपाल। आपकी अपूरणीय क्षतिमें[1] मेरी हार्दिक सहानुभूति। गांधी।"

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५४४)से।

८. पत्र: नरहरि द्वा० परीखको

२ अगस्त, १९३७

चि० नरहरि,

स्वामीके साथ बातचीत हुई थी। वेणीलालके मामलेमें हिसाबके खाते देखकर तथा वेणीलाल उसके अतिरिक्त जो प्रमाण दे उसकी जाँच करके, तुम जो निर्णय दोगे, क्या उसे वह मंजूर होगा? विचारार्थ विषयोंका मसौदा तैयार करके दोनोंकी सही ले लेना। फिर अर्जी-दावा और गवाही लिखित रूपमें लेना, और फिर यदि सुनवाई आवश्यक जान पड़े तो करना। इस प्रकार समय बचेगा और न्याय करनेमें आसानी होगी।

शिक्षाके सम्बन्धमें मेरा लेख[2] पढ़कर जो विचार मनमें आयें, लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९१०८)से।

९. पत्र: अमतुस्सलामको

२ अगस्त, १९३७

प्यारी बेटी अमतुल सलाम,[3]

अभी अखबार में पढ़ा कि रास मसूद भोपालमें मर गये। मैंने तार दिया है।[4] वही रास मसूद न? तुमारे हाल कैसे होंगे मैं समज सकता हूँ। खुदापर भरोसा करो, हिम्मत रखो। वही मौत हमारे सामने भी है। कोई आज कोई कल। सब गये, सब जायंगे।

१. रास मसूदका देहान्त हो गया था; देखिए "पत्र: अमतुस्सलामको", २-८-१९३७।

२. देखिए खण्ड ६५, पृ० ४८४-९० ।

३. मूलमें सम्बोधन उर्दूमें है।

४. देखिए पिछले शीर्षक से पहले आनेवाला शीर्षक

सरस्वती[1] पपारम्माको[2] आशीर्वाद।

बापुकी दुआ, आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८९) से।

१०. प्राक्कथन : 'द क्वेश्चन ऑफ लैंग्वेजेज़' के लिए

३ अगस्त, १९३७

हिन्दी-उर्दूके प्रश्नपर जवाहरलाल नेहरूका निबन्ध[3] मैंने बहुत गौरसे पढ़ा है। पिछले कुछ दिनोंसे यह प्रश्न एक दुर्भाग्यपूर्ण विवादका विषय बन गया है। आजकल उसने जो अशोभन रूप ले लिया है उसके लिए कोई तर्कसंगत कारण नहीं है। जो भी हो, जवाहरलाल नेहरूका लेख इस विषयके उचित स्पष्टीकरणमें मूल्यवान योगदान है। उन्होंने उसपर राष्ट्रीय और विशुद्ध शैक्षणिक दृष्टिसे विचार किया है। उनके रचनात्मक सुझाव यदि सम्बन्धित व्यक्तियों द्वारा व्यापक रूपसे स्वीकार कर लिये जायें तो यह बहस, जिसने अब साम्प्रदायिक रूप ले लिया है, समाप्त हो सकती है। सुझाव सांगोपांग तथा अत्यन्त तर्कसम्मत हैं।[4]

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३७; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय। **ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स,** पृ० २३९-४० से भी।

१. जी० रामचन्द्रनकी भानजी, कान्ति गांधीकी मंगेतर।

२. जी० रामचन्द्रनकी बहन।

३. निबन्धके सम्बन्धमें दिये गये सुझावोंके लिए देखिए परिशिष्ट १; "हिन्दी-उर्दू", २१-९-१९३७।

४. देखिए अगला शीर्षक।

११. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

रेलगाड़ीमें
३ अगस्त, १९३७

प्रिय जवाहरलाल,

यह मैं दिल्ली ले जानेवाली रेलगाड़ीमें लिख रहा हूँ। मेरा प्राक्कथन, या जो-कुछ भी इसे कहो, साथमें है। मैं तुम्हें कोई लम्बी-चौड़ी चीज नहीं दे सका।

तुमने पश्तो और पंजाबीके पहले 'शायद'[1] रखा है। मेरा सुझाव है कि तुम यह क्रिया-विशेषण हटा दो। मिसालके लिए, खानसाहब पश्तोको कभी नहीं छोड़ेंगे। मेरा खयाल है वह किसी लिपिमें लिखी जाती है; किसमें लिखी जाती है, यह मैं भूल गया हूँ। और पंजाबी? गुरुमुखीमें लिखी हुई पंजाबीके लिए सिख तो मर मिटेंगे। उस लिपिमें कोई सुन्दरता नहीं है। लेकिन मुझे बताया गया है कि सिन्धीकी तरह वह भी सिखोंको हिन्दुओंसे अलग करने के लिए खास तौर पर ईजाद की गई थी। यह बात हो या न हो, फिलहाल तो सिखोंको गुरुमुखी छोड़ने को राजी करना मुझे असम्भव लगता है।

तुमने चारों दक्षिणी भाषाओंमें से कोई एक सामान्य लिपि तैयार करने का सुझाव दिया है। मुझे उनके लिए देवनागरी भी उतनी ही आसान मालूम होती है जितनी कि चारोंको मिला-जुलाकर तैयार की गई लिपि। व्यावहारिक दृष्टिसे देखें तो उन चारोंमें से मिली-जुली लिपिका आविष्कार नहीं हो सकता। इसलिए मेरा सुझाव है कि तुम सिर्फ इतनी ही सामान्य सिफारिश करो कि जहाँ-कहीं सम्भव हो उन भाषाओंको, जो यदि संस्कृतकी शाखाएँ नहीं हैं तो कमसे-कम जिनका संस्कृतसे महत्त्वपूर्ण सम्बन्ध तो है ही, संशोधित देवनागरी अपना लेनी चाहिए। तुम्हें मालूम होगा कि इस सम्बन्धमें प्रचार हो रहा है।

और, अगर तुम मेरी तरह सोचते हो तो तुम्हें यह आशा प्रकट करने में संकोच नहीं होना चाहिए कि चूँकि किसी-न-किसी दिन हिन्दुओं और मुसलमानोंको दिलसे एक होना ही है, इसलिए हिन्दुस्तानी बोलनेवाले हिन्दू और मुसलमान दोनों एक दिन एक ही लिपि भी अपना लेंगे, और यह लिपि होगी देवनागरी, क्योंकि वह अधिक वैज्ञानिक है और संस्कृतसे निकली हुई भाषाओंकी महान् प्रान्तीय लिपियोंके निकट है।

अगर तुम मेरे सुझाव आंशिक या पूर्ण रूपसे स्वीकार कर लेते हो तो तुम्हें उन स्थानोंको खोज निकालने में कोई कठिनाई नहीं होगी जहाँ परिवर्तन करना

१. इसे बदलकर "कुछ हद तक" कर दिया गया था; देखिए परिशिष्ट-१, अनुच्छेद १।

आवश्यक है। तुम्हारा समय बचाने की खातिर मैंने स्वयं ही ऐसा करने का इरादा किया था, परन्तु अभी मुझे अपने पर इतना भार नहीं डालना चाहिए।

मैं यह मान लेता हूँ कि तुम्हारे सुझावोंपर मेरी सहमतिका यह अर्थ नहीं है कि मैं हिन्दी सम्मेलनवालों से हिन्दी शब्दका प्रयोग छोड़ देनेको कहूँ। मुझे विश्वास है कि तुम्हारा यह मतलब नहीं हो सकता। मेरा खयाल है कि मैं इस मामलेमें जहाँतक जा सकता था वहाँतक जा चुका हूँ।

अगर तुम मेरे सुझावोंको स्वीकार नहीं कर सकते तो ठीक-ठीक बात बताने की खातिर 'प्राक्कथन'में यह वाक्य जोड़ देना बेहतर होगा: "बहरलाल, मुझे उनका सामान्य ढंगपर समर्थन करने में कोई संकोच नहीं है।"

आशा है, इन्दुका[1] ऑपरेशन सकुशल हो जायेगा।

स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३७; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय। **ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स,** पृ० २३८-३९ से भी।

१२. पत्र : अतुलानन्द चक्रवर्तीको

३ अगस्त, १९३७

प्रिय अतुलानन्द,

मैं आशा करता हूँ कि अब आपकी बेटी ठीक होगी और पूरी तरहसे खतरेके बाहर होगी। मैंने आपके लेखोंको ध्यानसे पढ़ा है। अब भी मुझे कोई स्पष्ट मार्ग नहीं दिखाई दे रहा है। मुझे ऐसा लगता है कि जो उद्देश्य आपके और मेरे मनमें है, उसकी पूर्ति कोई भी सांस्कृतिक संघ नहीं करेगा।[2] यह कार्य उन व्यक्तियोंको करना पड़ेगा जिनका इस आदर्शमें जीता-जागता विश्वास हो और जो उसकी प्राप्तिके लिए धार्मिक निष्ठासे काम करेंगे। आप अपने प्रस्तावमें जो देखते हैं, यदि उसे मैं नहीं देख पाया हूँ तो [मुझे समझाने]की फिरसे कोशिश करें। मैं आपकी बात

१. जवाहरलाल नेहरू की कन्या।

२. अतुलानन्द चक्रवर्ती ने "हिन्दुओं और मुसलमानों में घनिष्ठता स्थापित करने के लिए" एक सांस्कृतिक संघ स्थापित करने का सुझाव दिया था।

धैर्यपूर्वक और ध्यानसे सुनूँगा। मैं सहायता तो करना चाहता हूँ, बशर्ते कि मुझे अपना रास्ता साफ-साफ सूझ पड़े।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
द लाइफ ऑफ महात्मा गांधी, पृष्ठ ३६६

१३. पत्र : गंगाबहन वैद्यको

रेलगाड़ीमें
३ अगस्त, १९३७

चि० गंगाबहन,

मैं वाइसरायके निमन्त्रणपर दिल्ली जा रहा हूँ। यह पत्र रेलगाड़ीमें लिख रहा हूँ। तुम लिखती हो कि मंजुको दूसरी जातिमें देने को तैयार हो। क्या मंजु तैयार है? क्या हिन्दुस्तानके किसी भी अंचलका योग्य पति मिले तो सम्बन्ध कर लोगी? ऐसा करने की जरूरत तो है ही। दीवारें टूटनी चाहिए। जब पूरा देश हमारा है, तो एक जातिमें, एक प्रान्तमें अथवा एक अंचलमें ही क्यों पड़े रहें। विवाहमें स्वच्छन्दता नहीं होनी चाहिए; पवित्रता होनी चाहिए और वह धर्म समझकर किया जाना चाहिए। दूसरे सभी प्रतिबन्ध गलत माने जाने चाहिए।

कुसुम तो व्यवस्थित हो जाये, तब जानूँ। विचार तो अनेक करती है, किन्तु उनपर तत्परतासे अमल नहीं कर पाती। तुमसे जितना मार्गदर्शन करते बने, करना। अपने पास खींच सको, तो जरूर खींचना।

मंजुसे मुझे लिखने को कहना। बचुका[1] तो, कहना चाहिए, नया जन्म ही हुआ है।

मैं तो अधिकाधिक गायें जुटाता जा रहा हूँ।

कभी खास तौरपर आनेका मन हो तो खुशीसे आ जाना। बरसातके बादका मौसम अच्छा होता है।

तुम्हारा काम तो निखर ही रहा होगा।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ६ : गं० स्व० गंगाबहेनने, पृ० ९६

१. बचुभाई भीमजी रामदास, गंगाबहन वैद्यका भतीजा।

१४. पत्र : नारणदास गांधीको

रेलगाड़ीमें
३ अगस्त, १९३७

चि० नारणदास,

जिसे कपासकी बुवाईसे लगाकर बुनाई तककी सारी प्रक्रियाओंका ज्ञान है, वह 'खादीशास्त्र-प्रवेशिका'[1] दो दिनमें या अधिकसे-अधिक सात दिनमें लिख दे सकता है।

१. कपासको बोना, उसके प्रकार, कहाँ-कहाँ कितनी उत्पन्न होती और उसके सभी प्रकारके अलग-अलग उपयोग

२. कपासकी सफाई, चुनाई, ओटाई

३. पींजना, पूनी बनाना

४. कताई

५. बुनाई

उस पुस्तिकामें यन्त्रोंका वर्णन होगा; यन्त्रोंके चित्र होंगे, गणितकी विभिन्न गणनाएँ होंगी तथा आजतक के सुधारों आदिका विवरण होगा। तुम जो नाम सुझा रहे हो, उनमें से महादेव अथवा मीराबहन यह काम कर सकते हैं। लेकिन रामेश्वरी देवीको[2] कोई नहीं पा सकता। रामश्वेरीदेवी प्रभावशाली महिला हैं। हिन्दी अच्छी जानती हैं। हमारी सारी प्रवृत्तियोंको समझनेवाली हैं। पतिपक्ष और पितापक्ष, दोनों ओरसे श्रेष्ठ घरकी हैं। राजकोटमें उनका उपयोग कर लो, फिर उन्हें काठियावाड़में थोड़ा घुमा देना। खादी तथा हरिजन-सम्बन्धी काम वे बहुत अच्छा कर देंगी। इससे अच्छा व्यक्ति मैं नहीं भेज सकता। ऐसा होते हुए भी अगर तुम्हारी इच्छा कुछ और हो, तो मैं वैसा करूँगा। जिसमें तुम्हें श्रद्धा न हो, उसे तो कदापि नहीं भेजूँगा। वे हाल ही में मेरे साथ एक महीना रहीं और अभी मेरे साथ ही तीसरे दर्जेमें यात्रा कर रही हैं। घर दिल्लीमें है, लाहौरमें भी है। आज दिल्ली जा रही हैं, जहाँ मैं भी एक दिनके लिए जा रहा हूँ। वहाँ वाइसरायसे यों ही मिलना है, उनके आमन्त्रणपर। मैंने हरिजन-कार्यके लिए इन्हींको त्रावणकोर भेजा था। 'हरिजन' में शिक्षाके विषयमें मेरा लेख पढ़ा होगा। तुम्हें उसे कार्यान्वित करके दिखाना है।

यदि तुम्हें लगता है कि तुम्हारा अच्छेसे-अच्छा उपयोग प्राथमिक विभागमें ही हो सकता है तो तुम्हें वहाँसे नहीं हटाया जायेगा। काठियावाड़में खादीको व्यापक

१. देखिए खण्ड ६५, पृ० ४४७।

२. रामेश्वरी नेहरू।

बना दो और वहाँसे अस्पृश्यताको निकाल बाहर करो, तो मैं समझूँगा, बड़ा काम हो गया। इतना तुम वहाँ कर सको, तो सारे हिन्दुस्तानके सामने एक उदाहरण प्रस्तुत करोगे। तुम्हारे लिए [काठियावाड़से] बाहर कोई काम सोचकर नहीं रखा है। लेकिन जरूरत आ पड़े तो तुम्हें बुलाया जा सकता है या नहीं, इतना ही जानने के लिए पूछा था।

मैं ठीक हूँ। जरा आराम चाहिए, सो ले रहा हूँ। कनुकी[1] देखरेख कर रहा हूँ। यह उसका विषम काल चल रहा है। इस उम्रमें हमें भी ऐसा ही हुआ होगा। लेकिन वह आज्ञाकारी है, इसलिए स्थिर हो जायेगा। बहुत सम्भव है, मेरे ही पास सेगाँवमें व्यवस्थित हो जायेगा। जितना बनता है, उसके अनुकूल बने रहने का प्रयत्न करता हूँ।

लीलावतीने तुम्हारा पत्र मुझे पढ़ने को दिया था। मैंने तो उसे अनुमति दे दी है, लेकिन मुझे नहीं लगता कि वह जायेगी। वह मेरे पाससे खिसकना नहीं चाहती। फिर भी कभी-कभी बेचैन हो उठती है। उसकी स्थिति भी कुछ-कुछ कन्हैयासे मिलती-जुलती है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

५ या ६ को वर्धा पहुँच जाऊँगा।

कमलाने अपनी माँके लिए ५ रुपयेकी जो माँग की है, वह तुमने देखी होगी। तुम क्या कहते हो?

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८५३३ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

१५. पत्र : मीराबहनको

रेलगाड़ीमें
४ अगस्त, १९३७

चि० मीरा,

मैं दिल्लीके पास पहुँच रहा हूँ। महादेव और प्यारेलाल मेरे साथ हैं। उम्मीद है कि मैं आज ही वापसी गाड़ी पकड़ूँगा और यदि आज ऐसा न हो सका तो कल तो निश्चित ही है।

आशा है, आकाश तुम्हारे लिए उतना ही ठीक रहेगा।

मुझे बिलकुल मालूम नहीं था कि दोनों धर्मवीर कताई करते हैं।

१. नारणदास गांधीके पुत्र।

क्या मैंने तुम्हें बताया था कि शान्ता इंग्लैंड नहीं गई क्योंकि उसकी माताने उसे एक तरहसे मना कर दिया। वह महादेवके साथ बहुत प्रसन्न है और उसके लिए बहुत उपयोगी भी है।

बलवन्तसिंह दो गायें और लाया है। हमें अभी और चाहिए।

बालकृष्ण[1] सेगाँवमें फल-फूल रहा है। डॉक्टर बत्रा के समझाने पर वह निस्संकोच होकर खाता है। उसे केप्लरका माल्ट कॉड-लिवर आइल[2] दिया जा रहा है। मैंने सोचा कि मछलीके तेलके बारेमें नियममें ढील दे दूँ, क्योंकि यहाँ और बहुत-से प्रतिबन्ध हैं। उसका जो इतना ज्यादा वजन गिर गया था, उसकी वह शीघ्रतासे पूर्ति कर रहा है।

रामेश्वरी देवी मेरे साथ ही तीसरे दर्जेमें दिल्ली लौट रही हैं। मुझे आशा है कि तुमपर मलेरियाका असर नहीं होगा और तुम बिलकुल ठीक-ठाक वापस लौटोगी। जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, यदि तुम स्वस्थ रहो और अपने शरीरमें नई ताजगी भरो तो मुझे इस बातकी कोई चिन्ता नहीं कि तुम वहाँ कबतक रहती हो।

सुभाषके बारेमें मुझे खेद है। संलग्न पत्र उसके लिए है।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३९५) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९३६१ से भी।

१६. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

रेलगाड़ीमें
४ अगस्त, १९३७

प्रिय जवाहरलाल,

मैं मूर्ख हूँ। तुम्हारा पत्र मिलने पर मैंने अपनी फाइल देखी, तो मेहरअलीके भाषणवाली कतरन मिल गई। मैंने मसानी के भाषणका नहीं, उसीके भाषणका हवाला दिया था।[3]

यह पत्र मैं वर्धा वापस जाते हुए गाड़ीमें लिख रहा हूँ और गाड़ी बहुत ज्यादा हिल रही है। अब रातके १०.३० बज गये हैं। मैं नींद से जाग उठा, भाषणका खयाल आया और ढूँढ़ने लगा। कलवाला डिब्बा ज्यादा अच्छा था।

१. बालकृष्ण भावे।
२. एक प्रकारकी मछलीका तेल।
३. देखिए खण्ड ६५, पृ० ४८२।

मैं वाइसरायसे मिला। तुमने सरकारी विज्ञप्ति[1] देखी होगी। उसमें मुलाकातका सही-सही सार दिया गया है। कुछ और प्रासंगिक बातें भी थीं, जिनका जिक्र कृपलानी तुमसे मिलने पर करेंगे। एक बातका उल्लेख यहाँ कर दूँ। जैसे मुझे बुलाया वैसे शायद वे तुम्हें भी बुलायें। मैंने उनसे कहा कि अगर निमन्त्रण भेजा जायेगा तो शायद तुम इनकार नहीं करोगे। क्या मैंने ठीक कहा?

मुझे अफसोस है कि मैंने रायके भाषण तुमपर थोपे।[2] लेकिन मैं समझता हूँ, तुम उन्हें पढ़ते तो जरूर ही; लेकिन मुझे उनके बारेमें तुम्हारी राय जानने की जल्दी नहीं है। अगर अबतक पढ़ नहीं चुके हो तो सुविधासे पढ़ लेना।

तुम इन्दुका ऑपरेशन बम्बईमें करा रहे हो, समझ गया।

स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३७; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय। **ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स,** पृ० २४० से भी।

१७. पत्र: चक्रवर्ती राजगोपालाचारीको

६ अगस्त, १९३७

प्रिय सी० आर०,

कैसी मूर्खताकी बात है! वेतनके सम्बन्धमें मेरे अपने कुछ विचार हैं[3], इसलिए आपको दुःखी तथा निराश क्यों होना चाहिए? आप उनपर अमल नहीं कर रहे हैं, इसका मैं कतई बुरा नहीं मानता। मैंने कहा ही है कि यदि ऐसा महसूस हो कि मेरे विचार अमलमें लाने लायक नहीं हैं, तो उन्हें स्वीकार करने की कोई आवश्यकता नहीं है। आप वहाँ समस्याओंसे जिस तरह निपट रहे हैं, उससे हम सब चकित हैं। अपना काम आपने आस्था तथा धार्मिक उत्साहके साथ करना शुरू किया है। आपको थोड़ी भी निराशा नहीं होनी चाहिए। मेरी हृदयगत भावनाओंको तो आप जानते ही हैं। फिर आपको चिन्ता क्यों होनी चाहिए? मैं आशा करता हूँ कि

१. ४ अगस्तकी मुलाकातके बाद विज्ञप्ति जारी की गई थी। उसमें कहा गया था: "... वाइसरायने सम्बद्ध सवालोंके बारेमें गांधीजी की बात ध्यानपूर्वक सुनी और कहा कि वे उनके विचार सीमान्त प्रदेशके गवर्नर तक पहुँचा देंगे। बातचीत सर्वथा सामान्य और व्यक्तिगत प्रकार की थी, और चर्चाका मुख्य विषय गाँवोंका उत्थान तथा किसानोंकी दशामें सुधार था।"

२. देखिए खण्ड ६५, पृ० ४८१-८२।

३. देखिए खण्ड ६५, पृ० ४३८-४१।

१७को[1] आप वहाँ अपने कामसे छुट्टी ले सकेंगे। मेरी दुआएँ तथा शुभकामनाएँ सदा आपके साथ हैं।

वाइसरायके साथ हुई बातचीत मैत्रीपूर्ण तो थी, पर थी औपचारिक ही।

देवदास अच्छा दिखता था।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २०६६) से।

१८. पत्र : अमतुस्सलामको

६ अगस्त, १९३७

चि० अमतुल सलाम,

तुमारा खत मिला। अमतुलको[2] मैंने तुर्त भोपाल तार भेजा था। कांतिके[3] बारेमें म लिख चुका हूँ। तुमारा महिना खतम हूआ है इसलिये यहाँ आ जाना ही शायद अच्छा होगा। रामचंद्रनका खत है वे नहिं चाहते कि सरस्वति तीन बरस तक कहीं भी जाय, वे चाहते हैं वह अपना अभ्यास पूरा करे। ऐसी हालतमें सरस्वतीको वहीं छोड़ना अच्छा होगा। बारी या बकीके कोई खत मुझे नहीं मिले हैं।

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

मेरी तबीयत अच्छी है। कल ही दिल्लीसे आ गया।

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९०) से।

१. कांग्रेस कार्यसमितिकी बैठकके लिए, जो वर्धामें १४ अगस्तसे १७ तक होनेवाली थी।

२. अमतुस्सलामकी भतीजी, रास मसूदकी विधवा पत्नी।

३. हरिलाल गांधीके पुत्र।

१९. खादीका और भी गहरा अर्थ

जबसे खादीका लक्ष्य उसे सस्तेसे-सस्ते दामोंपर सुलभ कराने के बजाय उसके उत्पादनमें लगे हुए कारीगरोंकी स्थितिमें उत्तरोत्तर सुधार करना निश्चित हुआ है तबसे खादी-सेवकोंके विचार-जगत्में एक क्रान्ति हो गई है। मजदूरीकी दरमें की गई वृद्धिका खरीदारोंपर कोई असर पड़ा भी है तो वह कोई ज्यादा नहीं है, इस तथ्यने खादी-सेवकोंके मनमें आत्म-विश्वास पैदा किया है। खादी-नीतिमें जब परिवर्तन किया गया तब उनमें यह श्रद्धा नहीं थी। अब वे सेवक यह समझने लगे हैं कि उन्हें कारीगरोंके जीवनके हरएक अंगका स्पर्श करना है और उनकी स्थितिमें चारों ओरसे सुधार करने का प्रयत्न करना है। अतः 'महाराष्ट्र खादी-पत्रिकामें'—जिसके सम्बन्धमें इस पत्रमें कुछ दिन पहले एक टिप्पणी दी गई थी[1]—नीचे लिखा विवरण पढ़ते हुए हर्ष होता है:

> कोरूतला गाँवके कार्यकर्त्ता स्थानीय लोगों द्वारा हाथसे बनाये कागजका उपयोग कर रहे हैं और स्थानीय कारीगरोंको सन की सुतली बनानेकी भी प्रेरणा दे रहे हैं। इसमें उसी क्षेत्रमें पैदा किये गये सनका उपयोग किया जाता है।
>
> बहुत-से कारीगरों को जहाँ वे बैठते हैं बहुधा वहीं थूकते रहने की गन्दी आदत है। बयासी कारीगरों को मिट्टी के छोटे-छोटे पीकदान इस प्रयोजन के लिए दिये गये हैं।
>
> मेटपल्ली-जागीरके प्रबन्धकको समझा-बुझाकर बेगार न लेने के लिए राजी कर लिया गया है।
>
> तांडूरमें बुनकरोंको ऐसे उपाय करने को प्रेरित किया गया है जिससे वे कर्ज लेना बन्द कर सकें। अब वे शादी-विवाह पर तीस रुपयेसे अधिक खर्च नहीं करते; मुंडनके अवसरपर भोज आदि देना बन्द कर दिया है और अब वे त्योहारों पर न तो शराब पीते हैं और न श्राद्ध-भोज ही करते हैं। स्त्रियोंको खादीकी साड़ियाँ पहनने के लिए प्रेरित करने के लिए भी उपाय किये गये हैं (इस प्रयोजन के लिए सस्ते किस्मकी साड़ियाँ निकाली गई हैं), ताकि कारीगरोंकी आयमें जो वृद्धि हो उसे वे मुश्किलके दिनों के लिए बचाकर रख सकें।

१. देखिए खण्ड ६५, पृ० ४६८-६९।

सावलीमें यह निश्चय किया गया है कि जो लोग कर्ज न लेंगे तथा महीनेमें ८० प्रतिशत मजबूतीका समान और २० या उससे ऊपरके नम्बरका कमसे-कम १ सेर सूत कातेंगे उन्हें बढ़े भावोंसे मजदूरी दी जायेगी निम्नलिखित आँकड़ों से स्वतः स्थिति का पता चल जाता है :

नम्बर	चालू दरें	बढ़ी हुई दरें
	रु० आ० पा०	रु० आ० पा०
२२	२ – ८ – ०	३ – ४ – ०
२४	२ – १४ – ०	३ – १२ – ०
२६	३ – ४ – ०	४ – ४ – ०
२८	३ – १० – ०	४ – १२ – ०
३०	४ – ० – ०	५ – ४ – ०
३२	४ – ८ – ०	६ – ० – ०

हिसाब करके यह देख लिया गया है कि रोज औसतन ८ घंटे कातनेवाला इस दरसे ४ आने कमा लेगा।

सिंदेवाहीमें वे एक सहकारी भण्डार खोलने पर राजी हो गये हैं।

यह तो मैंने मूल हिन्दीका संक्षिप्त सार ही दिया है। जो यह जानना चाहते हों कि इस नये ध्येयपर अमल किस तरह हो रहा है, उन उद्यमी अध्येताओंसे तो मैं पत्रिकामें से पूरा अंश पढ़ने की सिफारिश करूँगा।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ७-८-१९३७

२०. मन्त्रिपद कोई पुरस्कार नहीं है

विभिन्न प्रान्तोंसे मेरे पास कई ऐसे पत्र आ रहे हैं, जिनमें खुदका या अपने किसी मित्रको मन्त्रिपद न देनेकी शिकायतके साथ-साथ इस सम्बन्धमें मुझसे बीचमें पड़ने के लिए कहा जाता है। मेरे खयालमें ऐसा एक भी प्रान्त न होगा जहाँसे मेरे पास ऐसी शिकायतें न आई हों। इनमें से कई पत्रोंमें तो यह भय भी व्यक्त किया गया है कि अगर अमुक व्यक्तिके दावोंपर ध्यान नहीं दिया गया, तो साम्प्रदायिक दंगे आदि भयंकर परिणाम उपस्थित होंगे।

इस सम्बन्धमें पहली बात तो मैं यह कहूँगा कि मन्त्रियोंके चुनावके किसी भी मामलेमें मैंने कोई दखल नहीं दिया है। अव्वल तो मेरी ऐसी कोई इच्छा ही नहीं है; फिर अगर इच्छा भी हो तो कांग्रेससे बिलकुल अलग हो जाने के कारण मुझे ऐसे मामलोंमें दखल देने का कोई हक नहीं है। कांग्रेसके मामलोंमें मैं इसी हदतक पड़ता हूँ कि पद-ग्रहणके सिलसिलेमें खड़े होनेवाले प्रश्नोंके बारेमें या पूर्ण

स्वाधीनताके अपने लक्ष्यको पाने के लिए अख्तियार की जानेवाली नीतियोंके बारेमें जब भी मेरी सलाहकी जरूरत होती है, मैं देता हूँ।

लेकिन मुझे ऐसा लगता है कि मेरे पास जो लोग लम्बे पत्र भेज रहे हैं, उनके खयालमें मन्त्रिपद मानों पुरानी सेवाओंके बदलेमें मिलनेवाले पुरस्कार हैं, जिनके लिए कुछ कांग्रेसी अपने दावे पेश कर सकते हैं। मैं उन्हें यह सुझाने का साहस करता हूँ कि मन्त्रिपद तो सेवाके द्वार हैं; जिन लोगोंको वे सुपुर्द किये जायें, उन्हें प्रसन्नता और पूरी योग्यताके साथ सेवा करनी चाहिए। इसलिए इन पदोंके लिए आपसमें छीना-झपटी होनी ही नहीं चाहिए। विभिन्न हितोंको सन्तुष्ट करने के लिए मन्त्रिपदोंका निर्माण करना निश्चय ही गलत होगा। अगर मैं किसी प्रान्तका मुख्य मन्त्री होता और मेरे सामने ऐसे दावे पेश किये जाते, तो मैं अपने निर्वाचकोंसे कह देता कि वे किसी और आदमीको अपना नेता चुन लें। इन पदोंसे हमें चिपट नहीं जाना है, बल्कि उन्हें हलके हाथों पकड़ना चाहिए। ये तो काँटोंके ताज हैं या होने चाहिए। ये प्रसिद्धिके लिए थोड़े ही हैं। पद तो यह देखने के लिए ग्रहण किये गये हैं कि अपने लक्ष्यकी ओर हम जिस गतिसे बढ़ रहे हैं, उसमें इनसे कुछ तेजी आती है या नहीं। ऐसी सूरतमें अगर स्वार्थी या गुमराह लोगोंको मुख्य मन्त्रियों पर हावी होकर प्रगतिमें बाधा डालने दी गई, तो यह बड़ी दुःखद बात होगी। जिन लोगोंसे अन्तमें जाकर मन्त्रियोंको सत्ता हासिल होती है, उनका आश्वासन पाना यदि जरूरी था, तो यह आश्वासन तो और भी ज्यादा जरूरी है कि नेतागण आपसम एक-दूसरेको समझेंगे, असन्दिग्ध वफादारीका परिचय देंगे और अनुशासनका स्वेच्छापूर्वक पालन करेंगे। कांग्रेस-जनोंने अगर अपने व्यवहारमें काफी निःस्वार्थता, अनुशासन और लक्ष्य-प्राप्तिके लिए कांग्रेस द्वारा प्रतिपादित साधनोंमें अपना विश्वास जाहिर नहीं किया, तो जिस विकट लड़ाईमें हमारा देश जुटा हुआ है, उसमें हमें विजय नहीं मिल सकती।

भला हो क़राचीके प्रस्तावका[१], जिसके कारण कांग्रेसके मातहत ग्रहण किये जानेवाले मन्त्रिपदोंके लिए आर्थिक आकर्षण नहीं हो सकता। यहाँ मैं यह जरूर कहूँगा कि ५०० रु० तनख्वाह को ज्यादासे-ज्यादा समझने के बजाय कमसे-कम समझना गलती है। ५०० रु० तो आखिरी हद है। हमारे देशपर बहुत भारी तनख्वाहोंका जो बोझ लदा हुआ है, उसके हम अगर आदी न हो गये होते तो ५०० रु० को हमने बहुत ज्यादा समझा होता। कांग्रेसमें तो कमसे-कम पिछले १७ सालोंसे आम तौरपर तनख्वाहकी दर ७५ रु० रही है। राष्ट्रीय शिक्षा, खादी और ग्रामोद्योग, उसके जो तीन बड़े-बड़े रचनात्मक अखिल भारतीय विभाग हैं, उनमें तनख्वाहकी स्वीकृत दर ७५ रु० माहवार रही है। और इन विभागोंमें ऐसे व्यक्ति मौजूद हैं जो, जहाँतक योग्यताका सम्बन्ध है, इतने योग्य हैं कि वे किसी भी दिन मन्त्रिपदकी जिम्मेदारी सँभाल सकते हैं। उनमें ख्यातिप्राप्त शिक्षाशास्त्री, वकील, रसायनशास्त्री और व्यापारी

१. देखिए खण्ड ४५५, पृ० ३९२-९३।

हैं, जो अगर चाहें तो आसानीसे ५०० रु० माहवारसे ज्यादा कमा सकते हैं। भला मन्त्री बनने पर ऐसा फर्क क्यों आ जाना चाहिए जैसा कि हम देख रहे हैं? लेकिन अब तो शायद जो-कुछ होना था वह हो चुका है। मैंने जो बातें कहीं उनसे तो मेरी व्यक्तिगत राय ही प्रकट होती है। मुख्य मन्त्रियोंके लिए मेरे मनमें इतना ज्यादा आदर है कि उनके निर्णय और उनकी बुद्धिमत्तापर मैं शंका कर ही नहीं सकता। उनके सामने जो परिस्थिति उपस्थित थी, उसमें उनके खयालसे निःसन्देह वही सर्वोत्तम था जो उन्होंने किया। पत्र भेजनेवालों को जवाबमें जो बात मैं बताना चाहता हूँ, वह यह है कि इन पदोंको इनमें मिलनेवाली तनख्वाह और भत्तेकी रकमकी खातिर ग्रहण नहीं किया गया है।

और फिर दलमें से उन्हीं लोगोंको ये पद दिये जाने हैं जो इनपर आसीन होकर अपेक्षित कर्त्तव्यका पालन करने के लिए सबसे अधिक योग्य हों।

और अन्तमें असली कसौटी तो यह है कि इन पदोंके लिए जिनका चुनाव किया जाये वे उस दलके सदस्योंको भी तो पसन्द आने चाहिए, जिसकी वजहसे मुख्यमन्त्रियोंको अपना पद प्राप्त हुआ है। कोई भी मुख्य मन्त्री अपने दलके ऊपर अपनी मर्जीके किसी पुरुष या स्त्रीको एक क्षणके लिए भी नहीं थोप सकता। वह तो इसीलिए प्रमुख है कि उसकी योग्यता, व्यक्तियोंकी पहचान तथा नेतृत्वके लिए आवश्यक अन्य गुणोंपर उसके दलको पूरा विश्वास है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ७-८-१९३७

२१. अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघ बुलेटिन

अ० भा० ग्रामोद्योग संघने अपना पहला बुलेटिन जारी किया है। संघके वर्धा-स्थित मुख्यालय, मगनवाड़ीमें चलनेवाली विविध गतिविधियोंका विवरण देने के बाद अन्तमें कहा गया है:[1]

> **सदस्य और एजेंट अपनी रिपोर्टें भेजने में बहुत ढील कर रहे हैं। सदस्योंको हम याद दिला दें कि हमारे नियमोंके अनुसार यदि किसी सदस्यसे लगातार तीन तिमाहियों तक रिपोर्ट न मिले तो उसकी सदस्यता खत्म हो जायेगी। हमें खेदके साथ कहना पड़ता है कि इस नियमके अनुसार कई सदस्योंकी सदस्यता खत्म हो गई है। इस ढीलका कारण शायद यह है कि सदस्य यह सोचते हैं कि जबतक कोई उल्लेखनीय चीज न हो, रिपोर्ट भेजने से कोई फायदा नहीं है। . . . उनका कार्य बँधे-बँधाये ढंगका है और एक बार रिपोर्ट दे देने के बाद वे यह समझते हैं कि जबतक वे कोई नया काम न करें, रिपोर्ट देना**

१. यहाँ इसके कुछ अंश ही दिये जा रहे हैं।

जरूरी नहीं है। यह भी गलत है। संघको ठीक तरह चलाने और इस बुलेटिनके माध्यमसे अनुभवोंका आदान-प्रदान करने के लिए यह बहुत ही जरूरी है कि सदस्य और एजेंट केन्द्रीय कार्यालयसे घनिष्ठ सम्पर्क रखते हुए अपना कार्य करें और पूर्ण व नियमित रिपोर्टों द्वारा उसे अपनी गतिविधियोंकी ठीक तरह सूचना देते रहें। . . .

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ७-८-१९३७

२२. मन्दिर-प्रवेश

ऐसा दीखता है मानों अस्पृश्यताका गढ़ सारा का-सारा मलाबार मन्दिर-प्रवेशके सम्बन्धमें त्रावणकोरकी ही तरह देशको रास्ता दिखाने जा रहा है। नीचे दिये गये दो संक्षिप्त वक्तव्योंकी[1] ओर मैं पाठकोंका ध्यान आकर्षित करता हूँ। एक तो कोचीनकी मन्दिर-प्रवेश समितिका और दूसरा मलाबार हरिजन सेवक संघका है। दोनोंमें तमाम सार्वजनिक मन्दिरोंको, जिन शर्तोंपर वे तथाकथित सवर्णोंके लिए खुले हुए हैं, ठीक-ठीक उन्हीं शर्तोंपर तथाकथित अवर्णोंके लिए भी खुलवा देनेके पक्षमें सवर्णों और अवर्णोंका लोकमत संगठित करने के लिए जबर्दस्त प्रचार-कार्य करने का निश्चय किया गया है। अगर मन्दिर-प्रवेशके पक्षमें जनता ऐसा निर्दोष मत जाहिर कर दे तो फिर कोई भी राज्य या कोई भी ट्रस्टी इस प्रकारके लोकमतकी अधिक दिन अवहेलना नहीं कर सकता। मलाबारकी इस समितिने ऐसे कानूनकी आवश्यकतापर ठीक ही जोर दिया है जिससे अवर्णोंके लिए अपने प्रबन्धाधीन मन्दिरोंको खोल देने के ट्रस्टियोंके अधिकारके सम्बन्धमें हर प्रकारके सन्देहको दूर किया जा सके, खासकर तब जबकि यह साबित किया जा सके कि इस तरह मन्दिरोंको खोलने के पक्षमें सवर्णोंका काफी बड़ा बहुमत है। हम आशा करते हैं कि समिति तथा संघको जनताकी तरफसे इस महान् कार्यके लिए सोत्साह समर्थन मिलेगा। कहने की आवश्यकता नहीं कि यह कार्य ऐसे समर्थनका मुस्तहक है और वह उसकी माँग कर रहा है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ७-८-१९३७

१. वक्तव्य यहाँ नहीं दिये जा रहे हैं।

२३. तार : अमतुस्सलामको

वर्धागंज
७ अगस्त, १९३७

अमतुस्सलाम
हरिजन सेवक संघ
त्रिवेन्द्रम

बेहतर है अब यहाँ आ जाओ। रामचन्द्रन् सरस्वतीको उसकी पढ़ाई पूरी होने से पहले भेजने को राजी नहीं।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०४) से।

२४. पत्र : जे० सी० कुमारप्पाको

सेगांव
७ अगस्त, १९३७

प्रिय कुमारप्पा,

सीताके ही हितकी दृष्टिसे मेरा खयाल है कि अभी इतनी जल्दी सम्पादकके रूपमें हम उसे न रखें। हमारे अपने लोगोंके बीच उसे, अभी जितनी है, उससे ज्यादा परिचित हो जाने दो। केवल साहित्यिक योग्यता हमारे उद्देश्यके लिए काफी नहीं है। हमारे पाठकोंको उसे सह-कार्यकर्त्ताके रूपमें जानना चाहिए। मेरे इस विचारसे क्या तुम सहमत नहीं हो?

मंगलवारको मध्य प्रदेशके शिक्षा-मन्त्री[1] आ रहे हैं और ढाई बजे मुझसे मिलेंगे, तथा आबकारी-विभागके मन्त्री[2] पाँच बजे मिलेंगे। मेरा खयाल है कि तुम्हें, भारतन्, सीता — यदि अच्छी हो तो — जाजूजी,[3] नायकम्[4] और काकाको उपस्थित रहना चाहिए। क्या तुम सबको सूचित कर दोगे?

१. रविशंकर शुक्ल।
२. पी० बी० गोले।
३. श्रीकृष्णदास जाजू।
४. ई० डब्ल्यू० आर्यनायकम्।

तुम तीनोंको स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०१२७) से।

२५. पत्र : कंचन एम० शाहको

सेगाँव
७ अगस्त, १९३७

चि० कंचन,

तू कल (रविवारको) सवेरे जरूर आना और यहीं भोजन करना। जल्दी न आ सके, तो दोपहरको एक बजेके बाद आना। लेकिन आना जरूर।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८२९३) से। सी० डब्ल्यू० ७०२० से भी; सौजन्य : मुन्नालाल जी० शाह

२६. पत्र : जमुभाई दाणीको

[८ अगस्त, १९३७ के पूर्व]

श्री दाणी,

तुम्हारा पत्र मिला। भंगियोंसे सम्बन्धित रिपोर्ट मेरे पास नहीं आई। किन्तु अगर मिली तो मैं उसे पढ़ जाऊँगा, और कुछ लिखने लायक हुआ तो लिखूँगा।[1]

जब मैं कहता हूँ कि काठियावाड़का सार्वजनिक जीवन छिन्न-भिन्न हो गया है, तो उसका अर्थ केवल इतना ही होता है कि लोग तो जैसे थे वैसे ही हैं, किन्तु लोकसेवक अथवा लोकनायक निकम्मे अथवा स्वार्थी हैं अथवा चारित्र्यशून्य हैं, या उनमें एक साथ ये सब बातें हैं। कहीं-कहीं ऐसा भी देखने में आया है कि जीवनका प्रवाह विभिन्न क्षेत्रोंमें प्रवाहित तो होता रहता है, किन्तु कुछ मूक सेवक अलक्षित ढंगसे अपना काम किये जाते हैं। क्या काठियावाड़में ऐसे कुछ सेवक हैं? इस सबकी ईमानदारी तथा सेवाकी दृष्टिसे खोज करो। ऐसा तुम चाहे संघके [सदस्यके] रूपमें करो, चाहे व्यक्तिगत रूपसे, लेकिन इस तरह करो कि वह तुम्हें शोभा दे।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, ८-८-१९३७

१. देखिए अगला शीर्षक।

२७. काठियावाड़के कार्यकर्त्ता

कुछ दिन पहले भावनगरमें काठियावाड़के कुछ कार्यकर्त्ताओंका सम्मेलन हुआ था। उसमें काफी विचार-विमर्शके बाद श्री नानाभाईकी प्रेरणासे ऐसा प्रस्ताव पारित हुआ था कि उन्हें मेरी सलाहके अनुसार सेवा-कार्य करना चाहिए और जो मर्यादाएँ मैं निर्धारित करूँ, वे उनका पालन करें। इनमें से कुछ भाई मेरे पास इस सम्बन्धमें चर्चा करने के लिए आनेवाले थे। उनका पत्र पाने के बाद मैंने उन्हें यह लिखकर रोकने का प्रयत्न किया कि जिसे मैं रचनात्मक कार्यक्रम मानता हूँ, उसीके बारेमें उन्हें सुनने को मिलेगा, इसलिए सम्भव है कि उनका आना व्यर्थ हो जाये। लेकिन यह बात उन लोगोंके गले नहीं उतरी, और श्री जगजीवनदास, बलवन्तराय,[1] फूलचन्द,[2] ढेबरभाई[3] और वजुभाई[4] आये। दो घंटेकी चर्चाके बाद यह तय हुआ कि मैंने जो सलाह दी है उसका सारांश मुझे 'हरिजनबन्धु' में देना चाहिए। मैंने उनकी यह माँग स्वीकार कर ली।

पहली चर्चा, मैंने श्री दाणीको जो पत्र[5] लिखा था, उसपर हुई। मुझे ऐसा बताया गया था कि उस पत्रमें मैंने काठियावाड़ी कार्यकर्त्ताओंको निकम्मा, स्वार्थी, अथवा सिद्धान्तहीन अथवा यह सब कहकर उनकी निन्दा की थी, और इस प्रकार मैंने घोर अन्याय किया था। मैंने जवाबमें लिखा कि ऐसे भौंड़े पत्र लिखना मेरे स्वभावमें नहीं है, और मैंने उस पत्रकी नकल माँगी। उस पत्रके जवाबमें तो उपर्युक्त भाई ही आ गये और मेरा मूल पत्र लेते आये, जो इस प्रकार है:[6]

मैंने कहा कि जो इस पत्रको निन्दात्मक मानते हैं, उनके बारेमें ऐसा कहा जा सकता है कि वे गुजराती नहीं जानते। इस पत्रका अर्थ तो स्पष्ट है, और वह यह है कि श्री दाणीके लिखे अनुसार यदि काठियावाड़का सार्वजनिक जीवन सचमुच ही छिन्न-भिन्न हो गया हो, तो वहाँके कार्यकर्त्ताओंमें इनमें से एक अथवा तीनों दोष होने चाहिए। इन भाइयोंने स्वीकार किया कि इसके सिवा और कोई अर्थ मेरे पत्रका किया ही नहीं जा सकता।

इसपर उन्होंने यह जानना चाहा कि क्या किसीने मेरे पास ऐसा आचरण करनेवालों के नाम भेजे हैं जो काठियावाड़के निवासियोंको शोभा न दें। मैंने जवाब

१. बलवन्तराय मेहता।

२. फूलचन्द कस्तूरचन्द शाह।

३. उ० न० ढेबर।

४. वजुभाई शुक्ल।

५ और ६. पत्रके पाठके लिए देखिए पिछला शीर्षक।

दिया कि जिनके नाम मेरे पास आये थे, उनमें से जिन लोगोंके प्रति लगाये गये आरोपोंको मैंने सच माना था उनके नाम मैंने प्रकाशित कर दिये थे।

इसके बाद निम्न प्रश्नोंपर चर्चा हुई:

१. गांधीजी मार्गदर्शन करें
२. [काठियावाड़] राजनीतिक परिषद्
३. प्रजामण्डल और परिषद्
४. रियासतोंमें लगाये गये प्रतिबन्ध और अन्याय
५. मजदूरोंकी स्थिति सुधारने के लिए उनका संगठन
६. रचनात्मक कार्य, जैसे खादी, हरिजन-सेवा आदि।
७. ये सब काम स्वतन्त्र रूपमें किये जायें अथवा एक संस्थाकी देखरेखमें।

अपने मार्गदर्शनके बारेमें मैंने मत व्यक्त किया कि मैं यह बोझ नहीं उठा सकूँगा। दूर बैठकर किसीका मार्गदर्शन करने की न तो मुझमें इच्छा है, न शक्ति, इसलिए मेरा नाम उन लोगोंको अपने मनसे निकाल ही देना चाहिए। किसी विषयमें यदि मेरी राय पूछी जाये, तो ऐसी राय तो मैं देता ही आया हूँ, क्योंकि ऐसा करना मैं अपना कर्त्तव्य मानता हूँ। मेरी सलाह है कि काठियावाड़ियोंको काठियावाड़के निवासी किसी भाईको ही अपना नेता नियुक्त करना चाहिए, और उन्हें प्रतिवर्ष नया नेता नियुक्त करते ही रहना चाहिए। इस प्रकार आत्मविश्वास उत्पन्न होगा और स्वावलम्बी भी बना जा सकेगा। काठियावाड़ी अपनेमें से किसीको नेताके रूपमें स्वीकार नहीं कर सकते, यह मान्यता भी — चाहे वह सच हो या झूठ — बदल जायेगी।

अन्य प्रवृत्तियोंकी चर्चा करते हुए मैंने यह राय जाहिर की कि मेरा बस चले तो मैं सबको खादी, हरिजन-सेवा, ग्रामोद्योग आदि कार्योंमें ही लगा दूँ। इस प्रकार सबको काममें लगा देने के बावजूद और भी बहुत-से कार्यकर्त्ताओंकी आवश्यकता होगी। लेकिन जिन्हें इस प्रकारकी सेवा न रुचे, वे अपनी पसन्दका क्षेत्र चुन लें, और उसमें जी-जानसे जुट जायें। लेकिन एक क्षेत्र चुन लेने के बाद, फिर उसे छोड़कर दूसरेमें और दूसरा छोड़कर तीसरेमें जाना, यह नहीं होना चाहिए। राजनीतिक परिषद् बुलाई ही जाये, तो वह भावनगरमें बुलाई जाये, और मेरे द्वारा निर्धारित प्रतिबन्धोंकी सीमामें, तथा पोरबन्दरमें जो परम्परा बन गई है, उसके अनुसार बुलाई जाये। उसका अधिवेशन देशी रियासतोंकी सीमाके बाहर नहीं होना चाहिए। यदि किसी एक ही रियासतमें अनुमति मिले तो वह प्रतिवर्ष वहीं होनी चाहिए। अमरेलीमें हो सकती है, लेकिन यदि काठियावाड़की ही कोई रियासत हो, तो ज्यादा अच्छा होगा।

प्रजामण्डल तो प्रत्येक रियासतमें होना चाहिए। प्रत्येक व्यक्तिसे यथाशक्ति उसमें जो सेवा करते बने, सो करते रहना चाहिए।

मैंने जो मर्यादा निर्धारित की है उसके अनुसार राजनीतिक परिषद् तो भिन्न-भिन्न रियासतोंके अन्याय इत्यादिके प्रश्नोंकी चर्चा स्वतन्त्रतापूर्वक नहीं कर सकती। इसका अर्थ यह नहीं है कि उनकी चर्चा कहीं भी नहीं की जा सकती। भिन्न-भिन्न रियासतोंकी जनता अपने-अपने प्रश्नोंकी चर्चा अवश्य करे, और उनके सम्बन्धमें न्याय

प्राप्त करने का प्रयत्न करे और ऐसा करना उसका कर्त्तव्य है। अतः जिन रियासतोंमें निषेधात्मक आज्ञाएँ जारी की गई हों अथवा अन्याय हो रहे हों, वहाँ उनकी चर्चा आजादीसे की जा सकती है। इसमें मर्यादा केवल सत्य और अहिंसाकी होती है। जो भी कहा जाये, वह शत-प्रति-शत सत्य हो, अतिशयोक्ति तथा अविनयसे रहित हो। हममें जो करने की सामर्थ्य न हो, वैसा करने की धमकी कभी न दी जाये। इस संसारमें अनेक बातें हमें असमर्थताके कारण सहन करनी पड़ती हैं।

मजदूरोंकी स्थिति सुधारने के लिए उनका संगठन अवश्य करना चाहिए। सब जानते हैं कि अहमदाबादमें श्रीमती अनसूयाबहनने[1] जो नीति अपनाई है, वही मुझे पसन्द है। राजनीतिके लिए मजदूरोंको संगठित करने का सिद्धान्त मैंने स्वीकार नहीं किया है। राजनीतिमें तो सभी नागरिक रुचि रखते हैं, और उन्हें रखनी भी चाहिए। लेकिन संगठन बनाने के मूलमें किसीका हेतु राजनीतिक नहीं होना चाहिए। मनुष्योंका संगठन उनके व्यवसायके हितमें, उनकी विशेष स्थितिके हितमें होना चाहिए। संस्थाके रूपमें राजनीतिक समस्याओंको हल करने तथा इस कामके लिए लोगोंको तैयार करने के लिए कांग्रेस तो है ही। उसे मजदूरोंके राजनीतिक अधिकारों और अन्य लोगोंके अधिकारोंकी रक्षा समान रूपसे करनी ही है। सचमुच देखा जाये तो मजदूरोंके राजनीतिक अधिकार दूसरोंके अधिकारोंके विरोधमें नहीं होते और न होने ही चाहिए। अतः कांग्रेसके कार्य-क्षेत्रमें सबकी रक्षा और सबका समावेश हो जाता है। मेरा अनुभव है कि मजदूरोंके संगठनोंमें राजनीतिक उद्देश्यका समावेश कर देने से कार्यकर्त्ताओंके बीच झूठी प्रतियोगिताकी भावना उत्पन्न हो जाती है और मजदूर उनके हाथके मोहरे बन जाते हैं, जिससे मजदूरोंका नुकसान होता है और संगठनका नाम बदनाम होता है। मजदूर भी शायद मित्रताका दावा करके आनेवालों को सन्देहकी दृष्टिसे देखते हैं। जो मजदूरोंकी स्थिति सुधारने के लिए उनका संगठन करते हैं, उन्हें इसकी कला भी आनी चाहिए। बिना योग्यताके, इच्छा-मात्रके बल-पर यदि कोई व्यक्ति संगठन करने चले, तो वह हो ही नहीं सकता।

इन सारी प्रवृत्तियोंमें मैं तो खादी, अस्पृश्यता-निवारण, हरिजन-सेवा, ग्रामोद्योग तथा मद्यपान-निषेधको पहला स्थान दूँगा। मैं ऐसा मानता हूँ कि यदि ये न हों, तो दूसरी प्रवृत्तियाँ बेकार हैं। इस मान्यताको मैं अज्ञानजन्य मानता हूँ कि रचनात्मक कार्य अन्य प्रवृत्तियोंके आश्रयमें ही चल सकते हैं। मेरा मत है कि रचनात्मक कार्यमें दृढ़ता तथा धैर्यपूर्वक जुटे रहने से, उसमें से जो शक्ति उत्पन्न हो सकती है, उसकी बराबरी कोई दूसरी प्रवृत्ति नहीं कर सकती। मैं जानता हूँ कि आम तौरपर इन रचनात्मक कार्योंमें कोई रुचि नहीं लेता। इसके मुझे दो कारण प्रतीत हुए हैं। एक तो यह कि इन कामोंमें गाँवोंसे सम्पर्क करना होता है। हमारे कार्यकर्त्ता शहरोंमें पले-बढ़े होते हैं, अंग्रेजी स्कूलों-कॉलेजोंमें शिक्षा पाये हुए होते हैं, अतः उन्हें गाँव-वालों के जीवनमें कम ही रुचि होती है, वे अपनेको गाँवमें रहने लायक नहीं समझते,

१. अनसूयाबहन साराभाई।

तथा उन्हें गाँववालों के सम्पर्कमें आने की कला नहीं आती। दूसरा कारण है — हमारा आलस्य, और उससे उत्पन्न अज्ञान। खादी आदि रचनात्मक कार्य सतत जागृति, परिश्रम, अध्ययन तथा उद्यम माँगते हैं। इतना देने की हमारी तैयारी नहीं होती; और जब इन महान् कार्योंके प्रति हममें रुचि उत्पन्न नहीं होती, तब अपना दोष देखनेके बदले हम यह मान बैठते हैं कि ये काम ही नीरस हैं। इसको मैं बड़ा भारी दोष मानता हूँ, और इसलिए मेरी यह धारणा बन गई है कि जबतक हम इन कामोंको उचित महत्त्व नहीं देंगे, तबतक हमारे दूसरे काम पूरी तरह कदापि सफल नहीं होंगे। और इसीलिए मैं इतने बरसोंके बाद भी इन कार्योंको ही सर्वाधिक महत्त्व देता हूँ।

अब अन्तिम प्रश्न: यदि सारे काम एक ही संस्थाके अधीन चल रहे हों, तो चलते रहें। सारे काम स्वतन्त्र रीतिसे किये जायें, इसमें भी मुझे कोई हानि नजर नहीं आती। यदि सारे काम एक ही संस्थाके अधीन रहकर किये जायें तो भी प्रत्येक को स्वावलम्बी बनाना चाहिए; और जो कार्यकर्त्ता जिस क्षेत्रको पसन्द करें, उन्हें उस क्षेत्रमें जुटे रहने देना चाहिए।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, ८-८-१९३७

२८. पत्र: जवाहरलाल नेहरूको

सेगाँव, वर्धा
८ अगस्त, १९३७

प्रिय जवाहरलाल,

मेहरअलीके भाषण-सम्बन्धी तुम्हारे पत्रके एक मुद्देपर लिखना मैं भूल गया था। मेरा मतलब ग्रीष्म-विद्यालयके कैदियोंकी रिहाईसे सम्बन्धित राजाजी की विज्ञप्ति से है। तुम्हारा पत्र प्राप्त होनेसे पहले मैं उसे पढ़ चुका था, परन्तु उसमें ऐसा कुछ नहीं था जो मुझे बुरा लगे। मैं मानता हूँ कि चूँकि तुमने तो ग्रीष्म-विद्यालयके छात्रोंकी कार्रवाईको पसन्द किया था और मैं किसी भी तरहसे उसका समर्थन नहीं कर सकता था,[1] इसलिए मेरे विचारसे इस बातकी ओर ध्यान दिलाना आवश्यक था कि रिहाईका अर्थ इस कानून-भंगका समर्थन करना नहीं है, और कानून-भंग तो वह था ही। मुझे लगता है कि जब कांग्रेस सत्तामें होगी तब वह भी अक्सर वही भाषा काममें लायेगी जो उसके पहलेके शासक लाया करते थे, फिर भी उसका हेतु दूसरा ही होगा।

१. कोट्टापटम ग्रीष्म-विद्यालय के बारे में जवाहरलाल नेहरूके वक्तव्यके लिए देखिए परिशिष्ट २।

आशा है, बम्बईमें ऑपरेशनके सिलसिलेमें तुम्हारी अच्छी गुजर रही होगी। जब वह हो जाये तो तार देना।

स्नेह।

बापू

[पुनश्च :]

यदि नरीमान तुम्हारे पास आयें तो उन्हें जाँच करने की आज्ञा दे देना। मुझे खेद है कि बम्बईमें तुम्हें इस मामलेकी झंझट रहेगी। महादेव तुम्हें बतायेगा कि मैं क्या करता रहा हूँ।

बापू

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३७; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय।

२९. पत्र : के० एफ० नरीमानको

वर्धा
८ अगस्त, १९३७

प्रिय नरीमान,

आपका पत्र आज ही मिला। जबतक आपका पूरा साक्ष्य मुझे प्राप्त नहीं हो जाता, मैं श्री ब०[1] को कष्ट नहीं दूंगा। उनसे परामर्श मैं तभी करूँगा जब मेरा निष्कर्ष आपके विरुद्ध होगा और आप उसे स्वीकार नहीं करेंगे। इसमें देर नहीं होनी चाहिए। निश्चय ही आपका पूरा साक्ष्य तैयार ही होगा। १९३४ के चुनावके बारेमें आपके विरुद्ध जो आरोप हैं, उनकी मैं निस्सन्देह जाँच करूँगा। क्या यह बात मैंने स्पष्ट नहीं की थी? जहाँतक गवाहोंके नाम गुप्त रखने का सवाल है, वह आपको मुझपर छोड़ देना चाहिए।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० कां० क० फाइल सं० ७४७–ए, १९३७; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. डो० एन० बहादुरजी।

३०. पत्र : जे० सी० कुमारप्पाको

८ अगस्त, १९३७

प्रिय कुमारप्पा,

सभी बीमारियाँ आचरणकी ऐसी गलती मानी जानी चाहिए जो भारतीय दण्ड संहिताके अनुसार दण्डनीय हो! आशा है, तुम जल्दी ही ठीक हो जाओगे। यदि तुम नहीं आ सकते तो मैं बहसमें तुम्हारे विपुल योगदानके अभावके लिए अपना मन तैयार कर लूंगा।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०१२८)से।

३१. पत्र : कान्तिलाल गांधीको

सेगाँव
८ अगस्त, १९३७

चि० कान्ति,

मैंने तुझे जालिम कहा सो कुछ गलत नहीं कहा। एक दिन तू अमतुस्सलामकी पूजा करता था, तब भी यह उसपर जुल्म करना ही था। अब पूजाका भाव नहीं है और एक प्रकारका तिरस्कार मनमें उत्पन्न हो गया है, तो यह भी जुल्म है। रामचन्द्रनके विशेष आग्रहके कारण उसने तार किया था; पपारम्मा और सरस्वतीका भी आग्रह था, इसीलिए तो वह वहाँ गई है। वहाँ उसे कुछ शान्ति मिल रही है। और अब तू चाहता है कि मैं उसे वहाँसे बुला लूँ। इसलिए मैंने उसे आ जानेके लिए पत्र[1] और तार[2] भी दिया है। इसका कारण तू है, यह मैंने उसे नहीं बताया। मैंने कोई कारण ही नहीं बताया। उसके यहाँ लौट आने पर यदि आवश्यकता महसूस हुई तो कह दूंगा। मैंने यह उलाहनेके रूपमें नहीं लिखा, बल्कि तेरा ध्यान तेरी ज्यादतीकी ओर आकर्षित करनेके लिए लिखा है। मैंने तो उसे प्रसन्न होकर बुला लिया है। सरस्वतीका क्या हाल है? वह यहाँ आनेके लिए व्याकुल हो रही है। रामचन्द्रनकी इच्छा है कि वह तीन वर्षतक न आये। खुद तेरी क्या इच्छा है?

१. देखिए पृ० १५।
२. देखिए पृ० २१।

हिसाबका कागज वापस भेज रहा हूँ; अच्छा है। लोभमें पड़कर अपने स्वास्थ्यको खतरेमें बिलकुल मत डालना।

मैं एक दिनके लिए दिल्ली हो आया। जिस दिन गया, उसी दिन वापस लौट आया। वाइसरायको विशेष बात नहीं करनी थी। केवल परिचय कर लेना चाहते थे। मुझे तो खान साहेबके बारेमें बात करनी थी, और वह मैंने की।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

मेरी तबीयत अच्छी है। तू पास होकर प्रवीण हो जाये, और शादी कर ले, तबतक जीने की इच्छा तो करता हूँ, लेकिन जीवन-मरणकी डोरी अपने हाथमें है ही कहाँ?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७३२९)से; सौजन्य : कान्तिलाल गांधी

३२. पत्र : महादेव देसाईको

८ अगस्त, १९३७

चि० महादेव,

मुझे लगता है कि तुम्हें एक दिनके लिए धूलिया भेजना पड़ेगा। झटपट तैयार हो जाना। इस पत्रके साथ मैं तुम्हारा लेख भेज रहा हूँ। खादी-सम्बन्धी अनुच्छेद निकाल दिया है। कारण तुम समझ लोगे। न समझ पाओ तो फुरसतके वक्त पूछ लेना।

पत्रोंके जवाब तो न जाने कब लिखे जायेंगे। नरीमान-सम्बन्धी पत्र-व्यवहार जवाहरको भेज देना। या फिर संक्षेपमें सार लिख देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५४५)से।

३३. पत्र : मीराबहनको

सेगाँव, वर्धा
९ अगस्त, १९३७

चि० मीरा,

तुम्हारा चिन्ताजनक पत्र मिला। अगर तुम्हारा मन वहाँ नहीं लग रहा है तो २४ तारीख तक भी तुम्हें वहाँ रुकने की जरूरत नहीं है। अगर वहाँ सुखी न रहने पर भी सिर्फ इसलिए वहाँ रुकी रहती हो कि यह दूसरोंके द्वारा थोपा गया तुम्हारा कर्त्तव्य है तो यह चीज निश्चित रूपसे तुम्हारे लिए नुकसानदेह है। तुमने बार-बार कोशिश करके देख ली है और हर बार नाकामयाब रही हो। इसलिए तुम्हारी मर्जी तुम्हें चाहे जहाँ ले जाये, तुम्हें तो उसीके मुताबिक ही चलना है। और अगर तुम्हारे अपनी मर्जीके मुताबिक चलने से गलतियाँ होनी ही हैं तो तुम ऐसी गलतियाँ करके ही कुछ सीखोगी। मद्यपानसे सम्बन्धित एक कहावतमें कुछ फेर-बदल करके कहूँ तो कहूँगा कि तुम सिर्फ मजबूरीमें ही सही काम करो, इसके बजाय मैं यह चाहूँगा कि तुम हमेशा गलती ही करती रहो। गलतियाँ करके तो अपना विकास कर सकती हो, लेकिन मजबूरीमें रहकर कभी नहीं। इसलिए तुम चाहो तो अपनी तय की हुई तारीख (२४ अगस्त) से पहले भी आ सकती हो। और मेरी ओरसे तो तुम्हें यह पत्र पाते ही आ जाने की भी छूट है। मुझे खराब नहीं लगेगा। बल्कि यह सोचकर मुझे अच्छा ही लगेगा कि तुमने पूरी स्वतन्त्रताके साथ फैसला किया।[१]

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३९६) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९८६२ से भी।

१. **बापूज लेटर्स टु मीरा** में मीराबहनने स्थिति को स्पष्ट करते हुए कहा है : "मैं फिर उसी अन्तर्द्वन्द्वसे ग्रस्त हो गई थी, फलतः सेवाग्राम लौट आई।"

३४. पत्र : महादेव देसाईको

९ अगस्त, १९३७

चि० महादेव,

इस पत्रके साथ किशोरलालके लेख[1] को संक्षिप्त करवाकर भेज रहा हूँ। इसे राजकुमारीने संक्षिप्त किया है। लगता है, ठीक किया है। फिर भी तुम एक नजर डाल लेना। यदि ऐसा लगे कि महत्त्वकी कोई बात छूट गई है तो जोड़ देना। मैं समझता हूँ, मूल लेख किशोरलालको भेज देना अच्छा होगा। मूल लेखमें से एक उद्धरणकी नकल उतारना रह गया है, सो देख लेना। यानी इसके लिए भी वहाँ मूलकी जरूरत होगी। मैं अपना लेख जानबाके साथ या जो आयेगा, उसके साथ भेजूंगा। मैं दो बजे तैयार हो जाऊँगा।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

आशा है, फोड़ा अब बेहतर होगा।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५४६) से।

३५. पत्र : महादेव देसाईको

सेगाँव

९ अगस्त, १९३७

चि० महादेव,

यह रहा मेरा लेख। इसकी एक साफ नकल साथमें है, और मूल तो है ही। साफ नकल तुम आज ही पूना भेज सकते हो। और तो शायद अब तुम्हें कुछ नहीं चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५४७) से।

१. "द प्रॉब्लेम ऑफ नेशनल फण्ड्स" (राष्ट्रीय निधिकी समस्या), जो **हरिजन**, १४-८-१९३७ के अंक में प्रकाशित हुआ था।

३६. पत्र : जयन्ती एन० पारेखको

सेगाँव, वर्धा
९ अगस्त, १९३७

चि० जयन्ती,

तेरा पत्र मिला। यदि दिनकर अच्छा हो तो उसे साथका पत्र[1] दे देना। जन-सेवकोंको बीमार पड़ना ही नहीं चाहिए।

प्रान्तीय समितिके सुधारके बारेमें तू क्या कहना चाहता है, मेरी समझमें नहीं आया। मुझे नियमोंकी एक प्रति तो भेज देना। यों मैं पूछताछ तो कर ही रहा हूँ।

तुम तीनों भाई[2] मिल गये हो, यह मुझे बहुत अच्छा लगा।

इन्दु किसी काममें लग जाये तो कितना अच्छा हो?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६२६४) से।

३७. पत्र : छगनलाल जोशीको

सेगाँव, वर्धा
१० अगस्त, १९३७

चि० छगनलाल,

तुम्हारा लम्बा पत्र मिला। देखूँगा कि समस्या कैसे सुलझाई जा सकती है। जब समयका अभाव हो, स्थानका अभाव हो, ऐसी स्थितिमें कुछ बातोंको महत्त्वकी होते हुए भी, एक ओर छोड़ देना पड़ता है।

विमुसे[3] कहना कि मुझे लिखे अपने पत्रमें उसने सूत्र-यज्ञमें २५,००० तार सूतका वचन देनेमें आगा-पीछा किया था और मेरी सलाह पूछी थी। किन्तु मेरे पास छपे हुए नामोंकी सूची है। उसमें मैं ५१,००० तार उसके नामके आगे लिखा देखता हूँ। कहीं १५ का ५१ तो नहीं छप गया? यदि ऐसा नहीं है, तो २५ हजारका दूना कर देने की हिम्मत उसमें कहाँसे आ गई? अथवा खुद अपने तय किये हुए १७ हजारका तिगुन करने की हिम्मत कैसे हुई? और अगर इतनी हिम्मत आई तो

१. यह उपलब्ध नहीं है।
२. जयन्ती पारेख, इन्दु और कान्ति।
३. विमला; छगनलाल जोशीकी पुत्री।

१७ का चौगुना करके ६८ हजार तक क्यों नहीं पहुँची ? यदि ऐसा करने पर भी निन्दक बाबा-गण उसे मूर्तिपूजक मानें, तो भले माना करें। उसे तो इसे आशीर्वादके रूपमें स्वीकार करना चाहिए। ६८ दिनमें ६८,००० तार कातना विमु-जैसी लड़कीके लिए कोई बड़ी कठिन चीज नहीं है। हमारे यहाँके हिसाबसे रोज १,००० तार कातनेमें ३ घंटेसे कम लगेंगे, क्योंकि प्रति घंटा ४०० तारकी गति यहाँ सामान्य मानी गई है। लेकिन मान लो कि ४ घंटे लगें, तो भी मैं उसे कोई बड़ी मेहनतका काम नहीं मानूँगा। फिर, यदि कोई यह काम उल्लासपूर्वक करे, तो उसमें अपने काममें तन्मय हो जाने की शक्ति और अनेक काम निबटाने की योग्यता अपने-आप आ जायेगी।

[खादी-शास्त्र] प्रवेशिकाका काम हाथमें लेते हुए नारणदासको संकोच हो रहा है; मुझे इस संकोचका कोई कारण नहीं मालूम होता। फिर भी मैं सोचता हूँ कि यदि तुम इस काममें उसके साथ हो जाओ, तो यह काम जल्दी ही हो जायेगा। जिसका अधिकतर प्रक्रियाओंपर अधिकार हो उसके लिए प्रक्रियाओंका तथा उनमें प्रयुक्त होनेवाले आवश्यक औजारोंका यथारीति वर्णन करना आसान है। यदि तुमने विषयका ऐतिहासिक पहलू न पढ़ा हो, तो पढ़ लेना चाहिए। सभी पहलुओंका समावेश करके यदि विधिवत् एक भी पुस्तिका लिख जाये, तो उसके आधारपर भविष्यमें आगेका और काम भी सहज ही हो सकेगा। देखना . . .[१]।

तुम, थोड़े दिनोंके लिए ही सही, यहाँ रह गये, यह अच्छा हुआ। रामेश्वरी-देवीका कार्यक्रम दससे पन्द्रह दिनतक का बनाया जा सकेगा। जिस तारीखको वे वहाँ पहुचे, उस तारीखसे गिना जाये तो इतना काफी होगा। उनसे हरिजन-सम्बन्धी तथा खादी-सम्बन्धी बहुत काम लिया जा सकेगा। वह बड़ी कुशल, गम्भीर, विचार-शील तथा अनुभवी महिला है। फिर, शुभ भावनाओंसे भरी हुई है। तुमने तो उसे यहाँ देखा ही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५५४३) से।

१. साधन-सूत्रके अनुसार।

३८. पत्र : नारणदास गांधीको

सेगाँव, वर्धा
१० अगस्त, १९३७

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला। कन्हैयाके बारेमें चिन्ताका तो कोई कारण हो ही नहीं सकता। जरूरी यह है कि उसकी देखभाल की जाये, उसका मार्गदर्शन किया जाये, तथा उसके मनमें उठनेवाली हजारों विचार-तरंगोंको समझकर उसे शान्त किया जाये। इसके सिवा इस सम्बन्धमें और कुछ करने की जरूरत नहीं है, क्योंकि उसका मन टेढ़ा-मेढ़ा नहीं चलता। उसके मनमें चोर नहीं है, कुछ छिपाने की इच्छा बिलकुल नहीं है। साथ ही जिन्हें वह बड़ा मानता है, उनके प्रति वह श्रद्धा रखता है, इसलिए उसका मार्गदर्शन करने में भी कोई अड़चन नहीं होती। हाँ, यह सच है कि यदि उसे ऐसा काम दिया जाये जो उसकी समझमें न आता हो, और कोई उसकी परवाह न करे तो जरूर वह खोया-खोया-सा हो जाता है। लेकिन इस समय तो मेरे पास ढेरों काम पड़ा हुआ है। टाइप और नकल करने का इतना अधिक काम करने को पड़ा है कि वह टाइप करते-करते ही थक जाता है, नकल करते-करते उसकी उँगलियाँ अकड़ जाती हैं। फिर कताईका काम तो है ही। मैंने उससे हिन्दी और अंग्रेजीका अध्ययन करने को कहा है। सिखाने के लिए प्यारेलाल-जैसे उस्ताद हैं। नानावटीका मधुर संगीत जी-भरकर सुनता ही रहता है, और ऐसा करते हुए जितना कुछ ग्रहण कर सकता है उतना करता है। इसके अतिरिक्त मेरे पास अनेक लोग आते रहते हैं। उनकी बातें सुनकर भी जितना ज्ञान वह प्राप्त कर सकता है, करता है। इसलिए वह बिना कामके जंग खा रहा है, अथवा कोई उसकी परवाह नहीं करता, ऐसा तो उसे कभी नहीं लग सकता। इसलिए तुम निश्चिन्त रहना और जबतक उसकी खुदकी इच्छा न हो, तबतक तुम या जमना[1] उसे यहाँसे मत बुलाना। इतना हुआ तो फिर कोई अड़चन नहीं होगी।

लीलावती अपनी ही लापरवाहीके कारण पसलियोंका दर्द भोग रही है। उसका तकिया बनाकर मैं यह पत्र लिखा रहा हूँ। वह सुन रही है और कह रही है कि राजकोट अथवा कहीं भी जाने की न तो उसकी इच्छा होती है और न हिम्मत है। इसलिए फिलहाल तो उसे भूल ही जाओ। जब उसकी खुद की इच्छा वहाँ आने की होगी तब मैं उसे रोकूँगा नहीं। नरोत्तमकी[2] मृत्यु जितनी दुःखद है, उतनी ही आनन्द-

१. नारणदास गांधीकी पत्नी।

२. राष्ट्रीय शालाका एक छात्र, जिसका मोतीझरा से देहान्त हो गया था। उसने एक लाख तार कातने का संकल्प किया था।

प्रद भी है। ऐसी मृत्यु तो किसी भी नवयुवकको शोभान्वित कर सकती है। क्योंकि इतनी नन्हीं उम्रमें भी अनेक शुभ संकल्पोंके साथ जो मृत्युके मुखमें प्रवेश करते हैं, उनकी सद्‌गति ही होती है और वे मरकर भी अपने उदाहरणके माध्यमसे जीवित ही रहते हैं। उसके पिताको मेरी ओरसे सहानुभूति जताना और उन्हें यह पत्र पढ़ने को भी दे देना। साथ ही ऐसा पुत्र पाने के लिए उन्हें मेरी ओरसे बधाई भी देना।

तुम्हारा भेजा हुआ लेख[1] थोड़ा परिवर्तन करके 'हरिजनबन्धु' के लिए भिजवाया है।

छगनलालका पत्र पढ़कर उसे दे देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८५३५ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

३९. पत्र : नारणदास गांधीको

१० अगस्त, १९३७

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला।

यदि तुम्हारे लिए 'खादी-शास्त्र प्रवेशिका' लिखना सम्भव न हो, तो उसका विचार छोड़ देना। किन्तु इस काममें यदि तुम्हारा दिमाग न चलता हो तो हो सकता है, यह तद्विषयक किसी कमी का सूचक हो।

जयन्तीलालने जो दो लकीरें लिखकर भेजी हैं, वे मुझे सन्तोषजनक नहीं लगीं। मेरे मनपर कुछ ऐसी छाप पड़ी है कि शायद वह उसने बाध्य होकर लिखी है। तुम्हारे साथ उसका जो विचार-विमर्श हुआ था, उससे उसकी बुद्धिको प्रकाश मिला हो, ऐसा नहीं लगता। यानी, वह समझता है कि वहाँ हो रहे कताई आदि कामोंका उपयोग, बौद्धिक विकासके साधनके रूपमें नहीं किया जाता; बल्कि बौद्धिक प्रशिक्षण के साथ-साथ औद्योगिक प्रशिक्षणके रूपमें किया जाता है। इन दो में जो भेद है, आशा है, उसे तुम समझते हो। एक बढ़ई मुझे बढ़ईका काम सिखाये और मैं वह काम यन्त्रवत् सीख लूँ तो उससे मेरा हाथ बढ़ईगिरीके औजारोंपर बैठ जायेगा; लेकिन उससे मेरा बौद्धिक विकास नहींके बराबर होगा। लेकिन यदि बढ़ईगिरीका कोई विशेषज्ञ मुझे वह काम सिखाये, तो उसके द्वारा मेरी बुद्धिका पूरा-पूरा विकास होगा। यानी मैं उम्दा बढ़ई तो हो ही जाऊँगा, साथ ही सामान्य यन्त्र-शास्त्र भी समझने लगूँगा; क्योंकि बढ़ईका काम सिखाते हुए वह मेरी भाषाका परिष्कार भी करेगा, उसे सजायेगा-सँवारेगा। मुझे लकड़ीका इतिहास बतायेगा। मुझे इस बातकी

१. **हरिजनबन्धु**, १५-८-१९३७ में प्रकाशित "राजकोट राष्ट्रीय शालामां रेंटिया बारस"।

जानकारी देगा कि लकड़ी कहाँ पैदा होती है और किस प्रकार पैदा होती है। और यह बताते हुए वह मुझे भूगोलका ज्ञान भी दे पायेगा। थोड़ा-बहुत खेतीका ज्ञान भी करा देगा। मुझे अपने औजारोंके चित्र बनाना सिखायेगा। और बढ़ईगिरीका अर्थशास्त्र सिखाते हुए अंकगणित तथा ज्यामितिका ज्ञान भी करायेगा। यह सब तो एक वर्षसे लगाकर सात वर्षतक का अभ्यास-क्रम बन सकता है। यह सम्भव है कि तुम जो कताई आदि का काम सिखाते हो, उसका सम्बन्ध बौद्धिक विकासके साथ नहीं जोड़ते। तुम शायद अक्षर-ज्ञान, वाचन आदिको ही बौद्धिक विकासका साधन मानते हो। यदि ऐसा न होता तो 'प्रवेशिका'-जैसी पुस्तिका लिखना तुम्हारे लिए बायें हाथका खेल होना चाहिए। ये सारे विचार जो मैं इस पत्रमें व्यक्त कर रहा हूँ, इस रूपमें मैंने पहले के पत्रोंमें व्यक्त नहीं किये, यह मैं जानता हूँ। लेकिन आजकल जो विचार मेरे मनमें उठ रहे हैं, उन्हें मैं 'हरिजन'के द्वारा व्यक्त कर रहा हूँ, और उनमें इस विचार का स्थान पहला है। मैंने स्वयं भी अभीतक यही कहा था कि बौद्धिक शिक्षणके साथ औद्योगिक शिक्षण भी होना चाहिए, तथा राष्ट्रीय शिक्षणमें इसका प्रमुख स्थान होना चाहिए; जबकि अब मैं यह कह रहा हूँ कि औद्योगिक शिक्षणको बौद्धिक विकासका जबर्दस्त साधन बनाना चाहिए। बुद्धिका अपव्यय हो रहा है, और इस कारण स्कूलोंसे निकलनेवाले हजारों नवयुवक मुंशीगिरीके सिवा और कुछ नहीं कर पाते। मेरे विचारसे यह बुद्धिके विकासका सूचक नहीं, बल्कि बुद्धिके अपव्ययका सूचक हैं। सच्ची शिक्षा वही होती है जो आध्यात्मिक, बौद्धिक तथा आर्थिक तीनों शक्तियों का एक साथ विकास करे। स्कूलसे निकलनेवाले युवककी 'अब मैं क्या करूँ,' ऐसी स्थिति नहीं होनी चाहिए। उसकी शिक्षा तो उसकी जीविकाका एक प्रकारका बीमा होना चाहिए। यह सब तुम्हारे विचार करने के लिए लिखा गया है। यदि मेरी बात तुम्हारी समझमें आ गई हो, तो अब तुम्हें कातने की कलाकी परीक्षा एक नये दृष्टिकोणसे करनी पड़ेगी, और उसे सिखाने के लिए भी नई पद्धतिका आविष्कार करना होगा। अभी-अभी 'हरिजन'में मैंने जो-कुछ लिखा है,[1] उसे इस दृष्टिसे फिर पढ़ जाना।

शंकरनका किस्सा दुःखद है। मैं उसे पत्र तो लिख ही रहा हूँ। तुम्हें तो फिलहाल कुछ नहीं करना है।

कमलाकी माँके लिए मैं यहाँसे प्रबन्ध करूँगा।

कुमीका कामकाज कैसा चल रहा है?

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

इसके किसी भी अंशको मैं फिरसे देख नहीं पाया हूँ।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८५३४ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

१. देखिए खण्ड ६५, पृ० ३७४-७५ और ४८४-९०।

४०. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

सेगाँव, वर्धा
१० अगस्त, १९३७

भाई वल्लभभाई,

यह पुर्जा 'सियासत'वाले सैयद साहब तुमको देंगे। इनके पास डॉ० सत्यपालकी[1] चार चिट्ठियाँ थीं। उनमें से एक तुम्हारे लिए है। मैंने उनसे कह दिया कि मुझसे तो कुछ हो नहीं सकेगा, आप सरदारके पास जाइए, वे आपकी बात ध्यानसे सुनेंगे; और उनको बात जँच गई तो शायद मदद भी दिला सकें। सबकुछ सुनकर जो उचित हो सो करना।

बापूके आशीर्वाद

सरदार वल्लभभाई पटेल
पुरुषोत्तम बिल्डिंग
ऑपेरा हाउसके सामने
बम्बई ४

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० २०९

४१. पत्र : महादेव देसाईको

[१० अगस्त, १९३७ के आसपास][2]

चि० महादेव,

उस जर्मन को कड़ा पत्र लिखना। उससे सार्वजनिक रूपसे माफीकी माँग की जानी चाहिए। वह अपना कथन दुरुस्त कर ले तो काफी होगा।

तुम्हें धूलिया बुधवार तक तो नहीं ही भेजना है, और भेजूँगा तभी जब तुम राजी हो जाओगे। कल मिलेंगे, तब दो मिनट इसकी भी चर्चा कर लेंगे।

भरूचाको तार करना :

१. पंजाब के प्रसिद्ध नेता।
२. एस० एन० रजिस्टर से।

"भरूचा, महेन्द्र मैन्शन, फोर्ट, बम्बई। बुधवारको सवेरे नौ बजे आधे घंटेके लिए आओ। बाकी पूरे दिन अन्यथा व्यस्त। गांधी।"

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

आज 'हरिजन' के लिए अभी तो जो सामग्री तैयार है, वही भेज सकता हूँ। दो-एक कालमकी सामग्री कल भेज सकता हूँ न?

गुजराती की फोटो-नकल (एस० एन० ११५४८) से।

४२. तार : अमतुस्सलामको

वर्धागंज
११ अगस्त, १९३७

अमतुस्सलाम
मार्फत 'हरिजन'
त्रिवेन्द्रम

जबतक अच्छा लगे और इलाज कराती रहो, वहीं रहो।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०५) से।

४३. पत्र : महादेव देसाईको

[११ अगस्त, १९३७][1]

चि० महादेव,

जानबा अभी नहीं आया। लेकिन जो तैयार है, सो भेज रहा हूँ। साथ में मोहनलालका चेक भी है। यह पैसा हरिजन-कार्यके खातेमें जमा करना।

भणसाली[2] वहाँ पहुँचे होंगे। उनके साथ भी सामग्री भेजी है।

[साथका कागज] अ[मतुस]स [लाम]को भेज देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५४९) से।

१. अमतुस्सलाम को भेजे जानेवाले उस तार के उल्लेखसे जो इस पत्र के साथ नत्थी था; देखिए पिछला शीर्षक।

२. जयकृष्णदास प्रभुदास भणसाली ।

४४. पत्र : ग० वा० मावलंकरको

सेगाँव, वर्धा
११ अगस्त, १९३७

भाईश्री मावलंकर,

आपका पत्र मिला। आपके ऊपर सचमुच बड़ी जिम्मेदारी[1] आ गई है। लेकिन मुझे विश्वास है कि आप उसे ठीक निबाह सकेंगे और अपने पदकी शोभा बढ़ायेंगे।

अभी तो हरिजन आश्रमके ट्रस्टी बने ही रहिए। इससे शायद भिक्षा माँगने की आपकी शक्ति बढ़ेगी। मुझे जो ठीक लगे, वह मैं लिखता रहूँ, यही ठीक माना जायेगा न? लेकिन उसमें से जितना आप सब ग्रहण कर सकें, करें; इससे अधिककी आशा मैं क्यों करूँ?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १२४७) से।

४५. बातचीत : डी० के० मेहता[2] और पी० बी० गोलेसे

सेगाँव
११/१२ अगस्त, १९३७

ऐसा समझा जाता है कि बातचीतका विषय भूमिकर और आबकारी-सम्बन्धी नीतियाँ थीं। गांधीजी को बताया गया कि भूमिकरमें एक-सी कमी करने की नीति अवांछनीय है, क्योंकि कुछ ऐसे क्षेत्र हैं जहाँ बहुत कड़ा लगान लगाया गया है और स्वभावतः इन्हें तत्काल राहतकी जरूरत है, लेकिन कुछ ऐसे इलाके हैं जहाँ लगान इतना कम है कि और कमी करना उचित नहीं होगा।

समझा जाता है, आबकारी-नीतिके सम्बन्धमें गांधीजी ने मन्त्रियोंको यह समझाया कि कांग्रेस-शासित छहों प्रान्तोंमें इस विषयमें एक-सी नीति होनी चाहिए और सम्पूर्ण मद्य-निषेध कांग्रेस मन्त्रिमण्डलोंका लक्ष्य होना चाहिए। यह लक्ष्य वर्त्तमान मन्त्रि-मण्डलोंके कार्यकालमें ही प्राप्त किया जाना चाहिए। इससे राजस्वमें जो कमी हो सकती है वह खर्चेमें भारी किफायत करके पूरी की जा सकती है और अगर जरूरत

१. आशय बम्बई विधान सभा की अध्यक्षता से है।
२. मध्यप्रान्त के वित्त-मन्त्री।

पड़े तो कांग्रेसी मन्त्रियोंको नये कर लगाने की स्थितिका सामना करने के लिए भी तैयार रहना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

हितवाद, १३-८-१९३७

४६. वक्तव्य : वाइसरायसे भेंटके[1] बारेमें

१२ अगस्त, १९३७

मैंने 'बॉम्बे सेंटिनल' में[2] प्रकाशित वह विवरण पढ़ लिया है जिसे दिल्लीवाली भेंटके चौंकानेवाले तथ्योंका उद्घाटन कहा गया है। वह शुरूसे आखिर तक विशुद्ध मनगढ़न्त चीज है।

जैसाकि वाइसरायके पत्रमें बताया गया है, भेंटका उद्देश्य इसके सिवा और कुछ नहीं था कि वे मेरे साथ सज्जनोचित सम्पर्क स्थापित करना चाहते थे। इसलिए खान साहबके अपने ही प्रान्तमें प्रवेश करने पर लगे हुए प्रतिबन्धके उठाये जाने का जिक्र करने और उस प्रान्तका दौरा करने की अपनी इच्छाके विषयमें सरकारके मंशाको समझने की कोशिश करने के अतिरिक्त और किसी मामले की चर्चा करने से मैं प्रयत्नपूर्वक बचता रहा।

बाकी सारी बातचीत लगभग सामान्य किस्मकी थी। 'संघ' शब्दका तो भेंटमें उल्लेख तक नहीं हुआ।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १३-८-१९३७

४७. पत्र : नारणदास गांधीको

सेगाँव, वर्धा

१२ अगस्त, १९३७

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला। परसों ही मैंने तुम्हें पत्र लिखा है, इसलिए यह पत्र लिखने का कोई विशेष प्रयोजन तो नहीं है। हाँ, एक बात है : तुम कमलाबाईके लिए पाँच-दस रुपये भेजने की बात लिखते हो, लेकिन उसकी माँग पाँच रुपयेकी ही है। इसलिए हमें उसे पाँच रुपये ही भेजने हैं। ये रुपये कैसे भेजे जायेंगे, इसका विचार तुम कर लेना। पैसे भेजने में खर्च नहीं होना चाहिए। जीवनलालकी पेढ़ी तो

१. गांधीजी वाइसरायसे ४ अगस्त को मिले थे; देखिए पृ० १४।

२. तारीख १०-८-१९३७ का।

मद्रासमें है ही। उसके साथ व्यवस्था करके तुम पैसा राजकोटमें जमा कर सकते हो। यदि ऐसी कोई व्यवस्था न कर सको तो मुझे लिखना। पैसे कहाँ देने हैं, यह कमलाबाईसे पूछना।

कन्हैया तो मेरे पास ही सुव्यवस्थित हो गया है। वह कहता है, "अब मैं निश्चिन्त हूँ।" इसलिए उसके बारेमें चिन्ता करने की कोई जरूरत नहीं है।

लीलावती की तबीयत तो ऐसी ही चलेगी, धीरे-धीरे रास्तेपर आयेगी।

मीराबहनका आखिरी पैसा कब आया था? अब शायद नियमसे नहीं आता।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८५३६ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

४८. पत्र : भगवानजी अनूपचन्द मेहताको

सेगाँव, वर्धा
१२ अगस्त, १९३७

भाई भगवानजी,

तुमने अपने कुटुम्बकी स्थितिका कितना दुःखद वर्णन किया है? बावजूद इसके तुम अगर खुद अकेले ही पूर्ण त्यागके आचरणका उदाहरण प्रस्तुत कर सको, तो मुझे विश्वास है कि इस टूटती हुई नावको जोड़ सकोगे।

मुझसे माफी माँगने की कोई जरूरत ही नहीं है। मेरी सदा यही इच्छा रहेगी कि तुम्हारा यानी करसनजीके पूरे कुटुम्बका कल्याण हो; और इस परिवारका नाम फिरसे पहलेके समान उज्ज्वल हो जाये और तुम इसमें निमित्त बनो।

मो० क० गांधीके वन्देमातरम्

भगवानजी अनूपचन्द, वकील, बी० ए०, एल-एल० बी०
राजकोट सदर
काठियावाड़

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५८३६) से। सी० डब्ल्यू० ३०५९ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

४९. पत्र : आर० एस० निम्बकरको[1]

[१३ अगस्त, १९३७ के पूर्व][2]

जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, मैं गतिरोध पैदा नहीं करूँगा, बल्कि जब वे मुझपर लादे जायेंगे तब उत्साहके साथ उनका सामना करूँगा। यदि मैं अधिनियमको समाप्त करने की कोशिश करूँ तो यह नहीं कहा जा सकता कि मैं उसे कार्यान्वित कर रहा हूँ। विधान-सभामें जाकर उससे जो भी लाभ उठा सकता हूँ वह यदि न उठाऊँ और अपनी स्थितिकी जड़ें जमाकर उसे मजबूत न करूँ तो यह मेरी मूर्खता होगी।

श्री गांधीने श्री निम्बकरको सूचित किया है कि उनके द्वारा उठाये मुद्दोंका निपटारा कार्य-समितिका काम है; और उनका [श्री गांधीका] खयाल है कि ये मुद्दे समितिके समक्ष विचारके लिए जा चुके हैं।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १३-८-१९३७

५०. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको

वर्धा
१३ अगस्त, १९३७

नरीमान-काण्डमें अपनी भूमिकाका मैंने एक ऐसा विवरण देखा है जो तोड़-मरोड़कर पेश किया गया लगता है। इसको लेकर जो विषैला आन्दोलन चल रहा है उससे मुझे गहरी व्यथा पहुँची है। मेरे लिए सबसे अच्छा यही है कि मैं यहाँ श्री नरीमानके नाम अपने १ अगस्तके पत्रके कुछ उद्धरण रखूँ:[3]

तबसे उनके और मेरे बीच कुछ और पत्र-व्यवहार हुआ है। आज ही मिले उनके एक तारमें बताया गया है कि दोनों मामलोंमें वे अपना साक्ष्य पाँच दिनमें तैयार कर रखेंगे। जो कार्य मैंने अपने जिम्मे लिया है, उसमें अपनेको लगाने में मैं

१. एक मजदूर नेता, जिन्होंने गांधीजी को एक पत्र लिखा था, जिसमें उन्होंने उनका ध्यान "राजनीतिक कैदियों के रिहा न किये जाने की ओर तथा श्रमिकोंसे सम्बन्धित कानून बनाने और कुछ समय बाद गतिरोध पैदा करने की आवश्यकता की ओर" खींचा था।

२. यह पत्र "बम्बई, १३ अगस्त" की तिथि-पंक्तिके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

३. उद्धरण यहाँ नहीं दिये जा रहे हैं; पाठके लिए देखिए पृ० १-२।

जरा भी देर नहीं करूँगा। इस मामलेमें मैंने बहादुरजीको अभीतक कोई कष्ट नहीं दिया है। परन्तु यदि मेरे निष्कर्ष श्री नरीमानके विरुद्ध रहे और वे उससे सन्तुष्ट नहीं हुए, तो मैं तुरन्त ही बहादुरजीसे प्रार्थना करूँगा कि वे मेरे सामने रखे गये साक्ष्य और मेरे निष्कर्षोंपर पुनर्विचार करें।

यह सुझाया गया है कि जो-कुछ मैंने अब किया है, वह तभी किया जा सकता था जब यह दुर्भाग्यपूर्ण विवाद खड़ा हुआ था। उनके और मेरे बीच जो पत्र-व्यवहार हुआ है, उस सबको प्रकाशित करने को तो मैं अभी स्वतन्त्र नहीं हूँ। पर इतना मैं कह सकता हूँ और इसे उन्होंने खुद स्वीकार किया है कि मैं सदा इस बातके लिए तैयार था कि यदि उनकी वैसी इच्छा हो तो इसकी स्वतन्त्र रूपसे जाँच होनी चाहिए। इसलिए जो-कुछ हुआ उसका कारण यह नहीं था कि मैं उदासीन था या सहायता करने को तैयार नहीं था। यदि मैं अभीतक चुप रहा हूँ, तो मेरी चुप्पी केवल श्री नरीमानके ही हितको ध्यानमें रखते हुए थी। यह बात उस पत्र-व्यवहारसे अच्छी तरह सिद्ध हो सकती है जिसका ऊपर जिक्र किया गया है।

बम्बईके समाचार-पत्रोंसे मेरी यह अपील है कि वे इस आन्दोलनको बिलकुल बन्द कर दें और सर्वसाधारणसे यह अनुरोध है कि जबतक उनके सामने निष्कर्ष न आ जायें, वे इस सम्बन्धमें अपनी कोई धारणा न बनायें।[1]

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १४-८-१९३७

५१. पत्र : विट्ठलदास वी० जेराजाणीको

सेगाँव, वर्धा
१३ अगस्त, १९३७

भाई विट्ठलदास,

तुम्हारे तीन पत्र मिले। लेसके बारेमें जैसी तुम लिख रहे हो, वैसी आलोचना राजकुमारीने मुझसे की हो, इस बातकी मुझे याद नहीं है। अभी तो सवेरेके चार बजे हैं। वह सो रही है। बादमें उससे पूछूँगा। वह तो हमेशा मुझसे पंजाबके

१. **सरदार वल्लभभाई पटेल**, खण्ड–२, पृ० २४२-४३ पर नरहरि परीख इसके स्पष्टीकरण में लिखते हैं: "१४ अगस्तको श्री नरीमानने तार भेजकर गांधीजी से प्रार्थना की कि मुझे इसके जवाबमें वक्तव्य देने की अनुमति दी जाये। गांधीजी को निश्चय ही इसमें कोई आपत्ति नहीं थी, पर नरीमानके ही हितको ध्यान में रखते हुए उन्होंने उन्हें [नरीमानको] ऐसा न करने की सलाह दी। नरीमानने गांधीजी के नाम १५ अगस्तके अपने लम्बे पत्रमें लिखा कि यह आश्चर्यकी बात है कि आपने मुझसे सरदार और जनता आदिसे क्षमा माँगने की माँग की है, क्योंकि वह मुझे असंगत और अनावश्यक लगती है। उन्होंने कहा, मैं जानता हूँ कि मेरे क्षमा माँगने और अपराध स्वीकार करने का कोई कारण नहीं है।"

खादी-विभागकी शिकायत करती है। यानी उसने तुम्हारे विभागकी शिकायत मुझसे नहीं की है।

गोसीबहनको[1] मैंने छूट दे दी है, और यह मुझे अब भी ठीक ही लगता है। कशीदेके कामकी बात कपड़े सीनेके लिए विदेशी धागा काममें लाने-जैसी ही है। जब वह आठ आनेकी खादीका, उसपर काम करने के बाद, ढाई रुपया लेती है, तब वे अतिरिक्त दो रुपये विदेशी धागेके नहीं दिये जाते, बल्कि बहनोंकी कलाके दिये जाते हैं, और इसीलिए मैंने गोसीबहनको छूट दी है। जो प्रतिबन्ध हमने निश्चित किये हैं, उनमें कहीं भी इस मुक्तिके कारण हर्ज नहीं होता; क्योंकि यह तो तुम भी स्वीकार करते हो कि जो धागा ये बहनें काममें लाती हैं, ठीक वैसा धागा हम उन्हें नहीं दे सकते। इसलिए मुझे तो लगता है कि यह छूट न दें तो हम खादीको नुकसान पहुँचाते हैं। जिन विदेशी वस्तुओंका उपयोग करके हम किसीको नुकसान नहीं पहुँचाते तथा जिनके उपयोगसे देशका लाभ ही होता है, ऐसी वस्तुओंका विरोध तो हमें करना ही नहीं चाहिए।

तुम्हें स्वदेशी स्टोर्सका काम स्वीकार नहीं करना चाहिए; हाँ, बाहर रहकर उसकी जो मदद कर सको, सो कर सकते हो। यदि उन्हें तुम्हारी योग्यतापर विश्वास हो, तो तुम्हारी बात मानकर उन्हें कपड़ोंमें केवल खादी ही रखनी चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९७९४) से।

५२. पत्र : फ्रिट्स माइकेलिसको

सेगाँव, वर्धा
१३ अगस्त, १९३७

प्रिय मित्र,

पत्रके लिए धन्यवाद। आपके प्रश्नोंके उत्तर ये रहे। प्रश्नोंकी नकल तो, मैं समझता हूँ, आपने कर ही रखी होगी।

दस्तकारी विशेषज्ञोंसे हमारे साथ हमारी ही तरह रहने और हमारे साथ-साथ काम करते हुए हमें अपने श्रम और अनुभवका लाभ देने की अपेक्षा की जायेगी।

हम अपनी गरीबीका खयाल रखते हुए ऐसे यूरोपीय तरीकों और औजारोंका भी इस्तेमाल करेंगे जिनकी हमें जरूरत होगी।

स्वतन्त्र रूपसे कारखाना खोलने का प्रश्न ही नहीं उठता। हमलोग ग्रामवासी हैं — ऐसे ग्रामके निवासी जिसमें कुल मिलाकर हजारसे ज्यादा लोग नहीं हैं।

जो पूँजीके बिना काम नहीं कर सकते ऐसे विशेषज्ञोंकी कोई जरूरत नहीं है।

१. गोसीबहन कैप्टेन, दादाभाई नौरोजी की पोती।

भारतके गाँवोंमें पुनर्जीवनके संचारकी जरूरत है। जमीन छोटी-छोटी जोतोंमें —अकसर एक एकड़से भी छोटी जोतोंमें—बँटी हुई है। अतः विचार, जो-कुछ बेकार पड़ा हुआ है, उसे सम्पत्तिका रूप देने का है। इसलिए जो प्रतिमाएँ व्यय-साध्य हैं या जिनका निखार विशालताके दायरेमें ही हो सकता है उनसे हमारा काम नहीं चल सकता। मैं ऐसी प्रतिमाका उपयोग करना चाहता हूँ जो परमाणुमें ब्रह्माण्डको देख सके और इसलिए जो इस मिट्टीसे सम्बन्धित है और जिसकी जड़ें उस मिट्टीमें जमी हुई हैं जिससे हम सब पैदा हुए हैं, जिसपर हम रह रहे हैं और जिस मिट्टीमें अन्तमें हमें मिल जाना है। इसलिए पश्चिमसे आनेवाले हर व्यक्तिको गरीबकी जिन्दगी बिताने लायक होना चाहिए। अतएव उसे शरीरसे सक्षम होना चाहिए और इस देशके गरीबसे-गरीब आदमीकी जिन्दगी जीने के लिए तैयार रहना चाहिए।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

डॉ० फ्रिट्स माइकेलिस
पो० ऑ० बॉक्स नं० १३४५
हैफा

अंग्रेजीकी नकलसे। प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

५३. पत्र : ई० के० पलियाको

सेगाँव, वर्धा
१३ अगस्त, १९३७

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिल गया है। जमीनके सौदेके बारेमें मैं कुछ भी नहीं जानता, इसलिए आपकी योजनामें मेरी कोई रुचि नहीं हो सकती।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्री ई० के० पलिया
६/७ कबन रोड
बंगलोर

अंग्रेजीकी नकलसे। प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

५४. पत्र : एम० मार्गराइट वाईको

सेगाँव, वर्धा
१३ अगस्त, १९३७

प्रिय मार्गराइट,

तुम्हारा पत्र पाकर खुशी हुई। साथमें मारिया सेवेनिखके लिए एक पत्र भेज रहा हूँ। यह उसे भेज देना।

स्नेह।

बापू

एम० मार्गराइट वाई
लैजर ओश्खिनेन्सी बी०
स्विट्जरलैंड

अंग्रेजी की नकल से। प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

५५. पत्र : मारिया सेवेनिखको

सेगाँव, वर्धा
[१३ अगस्त, १९३७][1]

प्रिय मित्र,

तुम्हारे पत्रका मार्गराइट द्वारा किया हुआ अनुवाद मिला। तुमने बहुत खुले मनसे लिखा है, यह मुझे अच्छा लगा। तुम्हारी एक रायको मैं सुधारना चाहूँगा। तुमने लिखा है कि मुझे सफल न होने का अनुभव हो चुका है और मैं कुछ समयके लिए राजनीतिक कार्यसे अलग हो गया हूँ। सत्य-शोधकके शब्दकोशमें "सफल न होने"-जैसा कोई शब्द नहीं होता। वह तो अदम्य आशावादी होता है या उसे ऐसा होना चाहिए, क्योंकि सत्य — जो ईश्वरका ही दूसरा नाम है — की विजयमें उसकी अडिग आस्था होती है। और मैं राजनीतिक कार्यसे स्थायी अथवा अस्थायी रूपसे अलग नहीं हो गया हूँ, क्योंकि मैं जीवनकी विभिन्न प्रवृत्तियोंको एक-दूसरेसे बिलकुल अलग खानोंम बँटा हुआ नहीं मानता। सच तो यह है कि मैं कांग्रेस और कांग्रेसकी राजनीतिसे अलग हो गया हूँ। ऐसा मैंने कांग्रेस और देशकी राजनीतिकी पहलेसे अधिक सेवा

१. यह पत्र और मार्गराइट वाईको लिखा पत्र एक ही कागज पर हैं; देखिए पिछला शीर्षक।

करने के खयालसे किया है। बाकी बातोंके बारेमें तो तुमने जो पत्र भेजने का वादा किया है वह मिलने के बाद।

स्नेह।

बापू
मो० क० गांधी

अंग्रेजी की नकलसे। प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

५६. पत्र : जे० सी० कुमारप्पाको

सेगाँव, वर्धा
[१३ अगस्त, १९३७][1]

प्रिय कुमारप्पा,

तुम्हारी राय[2] तुम्हारी कीर्तिमें एक नई वृद्धि है। इसका मतलब यह नहीं है कि मैं, तुमने उसके पक्षमें जो तर्क दिये हैं, उन्हें भी स्वीकार करता हूँ। लेकिन तबतक तो तुम्हारी राय मान्य होगी ही जबतक किसी वरिष्ठ व्यक्तिसे कोई दूसरी राय नहीं मिलती। मेरे लिए तो यह अनावश्यक है। मैं मंगलदासकी व्याख्याको स्वीकार करता हूँ। राय सदस्योंके बीच जरूर प्रचारित कर दी जाये [और तुम्हें कहना चाहिए][3] कि वह मेरे ही कहने पर प्राप्त की गई और मेरे ही कहने से सदस्योंके बीच प्रचारित की जा रही है।

मुझे खुशी है कि तुम ज्वरसे मुक्त हो गये हो। कार्य-समितिकी बैठकके सिलसिलेमें कल मैं वर्धामें रहूँगा। यह पत्र तुम्हें कल मिल जायेगा। इसलिए 'कल' तुम्हारे लिए 'आज' हो जायेगा।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०१२९) से।

१. मूलमें तारीख कुछ धुँधली पड़ गई है, लेकिन "कार्य-समिति" के उल्लेखसे इस तारीखकी पुष्टि होती है, क्योंकि कार्य-समितिकी बैठक वर्धामें १४ से १७ अगस्त तक हुई थी।

२. अध्यक्षका प्रावधान करनेकी दृष्टिसे अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघके संविधानमें संशोधन करने के लिए।

३. साधनसूत्रमें यहाँ कुछ शब्द धुँधले पड़ गये हैं।

५७. पत्र : गोकुलदासको

वर्धा
१३ अगस्त, १९३७

भाई गोकुलदास,

कच्छमें चीतों और बनैले सूअरोंके कारण जो आतंक दिखाई पड़ता है उसके विरुद्ध रियासतसे यथारीति शिकायत करने का जनताको अधिकार है और यह उसका कर्त्तव्य भी है। जो-कुछ भी किया जाये, उसमें विनय और विवेक अवश्य होना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकलसे। प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

५८. पत्र : सरलाको

१३ अगस्त, १९३७

चि० सरला,

तेरा पत्र मिला। तू बड़ी सयानी लड़की है। समझ गई है कि मैं तुझे अपने पास क्यों नहीं बुलाता। धीरज रखकर नयी तालीम पूरी कर लेना, और उसमें खूब प्रवीण हो जाना। यहाँके समाचार तो अखबारमें पढ़ती होगी। इस समय बड़ी व्यस्ततामें इतना लिख सका हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८७६९) से। सी० डब्ल्यू० १०४२ से भी; सौजन्य : चम्पाबहन आर० मेहता

५९. पत्र : मणिबहन पटेलको

सेगाँव
१३ अगस्त, १९३७

चि० मणि,

कल सवेरे साढ़े सात बजे रेलवे क्रॉसिंगके पास गाड़ी खड़ी मिल जाये। मैं उस समयके आसपास वहाँ पहुँचने की आशा करता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

साथ की चिट्ठी[1] छोटेलालको अभी या सवेरे भेज देना। महादेवको खबर कर देना, जिससे जब मैं आऊँ, तब मुझसे जो काम लेने हों, लिये जा सकें।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५५०) से।

६०. टिप्पणियाँ

अशोभन व्यवहार अनुशासनहीनता है

'डेली प्रेस'में खबर छपी है कि मध्य प्रान्त विधान-सभाके अधिवेशनके उद्घाटनके अवसरपर लोगोंसे खचाखच भरी दर्शक-दीर्घामें श्री राघवेन्द्ररावके[2] विरुद्ध अशोभन प्रदर्शन किया गया। दीर्घामें शायद कांग्रेसी या कांग्रेससे सहानुभूति रखनेवाले लोग भरे हुए थे। जब हमें हमारा मनोनुकूल पूर्ण स्वराज्य प्राप्त हो जायेगा तब भी, मैं समझता हूँ, राजनीतिक दल तो रहेंगे ही। तब अगर ये दल परस्पर एक-दूसरेके प्रति सहिष्णुता का व्यवहार नहीं करेंगे और सामान्य शिष्टाचार नहीं बरतेंगे तो हमपर सचमुच बहुत कठिन गुजरेगा। और पूरे राष्ट्रका प्रतिनिधित्व करने का दावा करनेवाली कांग्रेसके सामने तो इस बातकी कतई कोई गुंजाइश नहीं है कि वह अपने विरोधियों या अन्य लोगोंके प्रति असहिष्णु रवैया अपनाये। यदि वह एकमात्र अखिल भारतीय संस्था है — और वास्तवमें है भी — तो वह सभी हितोंकी प्रतिनिधि है। वह श्री राघवेन्द्रराव की भी प्रतिनिधि है। वे तो स्वयं ही किसी समय उसके प्रतिष्ठित सदस्य थे। जिस निर्वाचन-क्षेत्रसे वे खड़े हुए, सम्भव है, उसमें

१. यह पत्र उपलब्ध नहीं है।
२. भूतपूर्व मुख्य मन्त्री।

मतदानमें बेईमानी हुई हो। अगर ऐसा है तो उसका निबटारा कानून करेगा। लेकिन जबतक वे दोषी नहीं सिद्ध कर दिये जाते तबतक तो उन्हें ईमानदार मानकर ही चलना चाहिए। और यदि वे दोषी सिद्ध हो भी जाते हैं तो भी उनका दोष उनके विरुद्ध ऐसे अशोभन प्रदर्शनका कारण नहीं हो सकता।

असहिष्णुता, अशिष्टता, कठोरता ये सब न केवल कांग्रेसके अनुशासन और प्रामाणिकताके नियमके विरुद्ध हैं, बल्कि सभी अच्छे समाजमें वर्जित हैं और निस्सन्देह लोकतन्त्रकी भावनाके खिलाफ तो हैं ही।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १४-८-१९३७

६१. सत्य और अहिंसाके विरुद्ध?

एक मित्र लिखते हैं:[1]

> **आपके "आलोचनाओंका जवाब" (३१ जुलाई) शीर्षक लेखका[2] निम्न-लिखित वाक्य सत्य और अहिंसाकी भावना तथा सही तर्कके भी विरुद्ध जान पड़ता है:**
>
> **"जो यूरोपीय शराबके बिना नहीं रह सकते अथवा रहना नहीं चाहते, सिर्फ उनके लिए विदेशी शराबें परिमित मात्रामें मँगाई जा सकती हैं।"**
>
> **कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलोंको अपने-अपने प्रान्तोंके यूरोपीय समुदायोंके कल्याणकी उतनी ही चिन्ता होनी चाहिए जितनी कि भारतीय समुदायोंके कल्याणकी। मैं मानता हूँ कि मद्य-निषेधवादी होनेके नाते कांग्रेसी इस बातसे सहमत होंगे कि शराब यूरोपीयोंके लिए भी उतनी ही हानिप्रद है जितनी कि भारतीयोंके लिए। अगर ऐसी बात है तो किसी शराबीकी सनकके कारण ही कोई छूट नहीं दी जा सकती। यूरोपीयोंके लिए भी शराब उतनी ही बुरी है जितनी कि औरोंके लिए। फिर भी अगर यह कहकर कि "इसके बिना उनका काम नहीं चल सकता या वे नहीं चलायेंगे", उन्हें इसकी छूट दी जाती है तो जापानी, अमेरिकी और बहुत-से अन्य विदेशी भी अपने लिए ऐसी इजाजत माँग सकते हैं। और अगर उन्हें सिर्फ इसी कारण अपनी बुरी लत कायम रखने दी जाती है तब फिर भारतीयोंको भी भारतमें अपने-आपको इसी तरह बरबाद करनेकी छूट क्यों न दी जाये? . . .**

अगर किसीको शराब पीने की (न कि उसमें अपने-आपको गर्क कर देने की) इजाजत दी जाये तो वह सिर्फ चिकित्सा-सम्बन्धी कारणोंसे या ऐसे किसी अन्य कारणसे जो सबपर समान रूपसे लागू हो सके। कांग्रेसके शासनमें किसी भी जातिके पक्ष अथवा विपक्षमें कोई भेदभावपूर्ण कानून नहीं बनाया जा सकता। . . .

कुछ कालके लिए ही भारतमें रहनेवाले विदेशीको भी इस दायित्वसे मुक्त नहीं करना चाहिए। उदाहरणके लिए, जो लोग ऐसा मानते हैं कि शराबसे पूरा परहेज सर्वथा आवश्यक नहीं उनके लिए भी यह लाजिम होना चाहिए कि अगर इस राष्ट्रने शराबके खिलाफ कानून बना दिया है तो शराब न पियें। उनके बारेमें ऐसा मानना चाहिए कि वे भारतमें इसी शर्तपर रह रहे हैं कि यहाँके लोगोंके कानूनों, रीति-रिवाजों और सदाचरणके नियमोंका पालन करेंगे।

इन मित्रने जो-कुछ लिखा है, आम तौरपर, उसे समझने और प्राय: स्वीकार करने में मुझे कोई कठिनाई नहीं हुई है। लेकिन, मुझे यह स्वीकार करना ही पड़ेगा कि इस पत्रको तीन बार पढ़ने पर भी मैं इसमें दी हुई दलीलको नहीं समझ सका हूँ।

प्रस्तावित छूट सत्य या अहिंसाकी भावनाके विरुद्ध भला क्यों है? मुझे तो इसमें ऐसी कोई बात दिखाई नहीं पड़ती जिसे लेखकने बुरी दलील बताया है। जीवित प्राणियोंके बारेमें विचार करते हुए कोरा तार्किक चिन्तन बुरा ही नहीं, बल्कि कभी-कभी घातक भी हो सकता है। क्योंकि अगर आप किसी बहुत छोटी चीजको भी छोड़ जायें —और यह तय है कि मनुष्यके साथ बरतने के प्रसंग में जितनी सारी चीजोंका समावेश हो जाता है उन सबपर आप कभी नियन्त्रण नहीं रख सकते — तो आपका निष्कर्ष गलत हो जाने की सम्भावना रहती है। इसलिए अन्तिम सत्यपर आप कभी नहीं पहुँचते; आप तो सिर्फ उसके आसपास ही पहुँचते हैं, और वह भी तभी जबकि आप अपने व्यवहारमें असाधारण रूपसे सावधान रहें।

वस्तुत: सत्य और अहिंसाकी खातिर ही मैंने यूरोपीयोंके लिए छूट रखने का खयाल किया है। क्योंकि सब आदमियों और सब जगहकी आबोहवाके लिए मैं इस तरहका एक नियम निर्धारित नहीं कर सकता कि शराब पीना पाप है। अत्यन्त शीत-प्रधान देशोंके लिए मैं इसे जरूरी मान सकता हूँ। इसलिए जो यूरोपीय अपने भोजनके साथ हर बार परिमित मात्रामें शराब पीना बुराई नहीं बल्कि जरूरी समझते हैं, उनपर शराबबन्दी न थोपने का ध्यान मैं जरूर रखूँगा। यह खयाल रखने की बात है कि हिन्दुस्तानमें जिस तरह आम तौरपर मद्यपानको बुरा माना जाता है, यूरोपीय समाजमें नहीं माना जाता। इसलिए भलमनसाहतके खयालसे भी (जो कि अहिंसाकी ही एक अवस्था है) मैं यह बात उन्हींके ऊपर छोड़ देना चाहूँगा कि जिस देशको उन्होंने अपनाया है, वहाँके आचारका वे खयाल रखें।

यूरोपीयोंके लिए जो छूट रखी जायेगी, वही दूसरे राष्ट्रवालों के लिए रखने के तर्कको भी मैं खुशीके साथ मंजूर करूँगा, बशर्ते कि उसकी आवश्यकता सिद्ध कर दी जाये। सच तो यह है कि शायद बहुत-से हिन्दुस्तानियोंको भी डाक्टरी परवानेवाली उस धाराके मातहत शराब पीने की इजाजत देनी पड़े।

मेरे लिए तो शराबका सवाल एक बढ़ती हुई सामाजिक बुराईको रोकने का सवाल है, जिसके लिए जब सरकारको अवसर मिला है तो उसे कुछ-न-कुछ करना ही चाहिए। उद्देश्य हमारा स्पष्ट है। हम मजदूरों और हरिजनोंको इस बुराईसे बचाना चाहते हैं। यह एक बहुत बड़ी समस्या है और शराबखोरी बन्द करने के लिए हमें सभी समाज-सुधारकोंकी, खासकर स्त्रियोंकी, तमाम शक्ति लगा देनी पड़ेगी। शराबबन्दीकी जो रूपरेखा मैंने बताई है वह तो तत्सम्बन्धी सुधारकी सिर्फ शुरुआत (निःसन्देह अनिवार्य शुरुआत) है। शराब पीनेवाले को लुभाने के लिए उसके दरवाजेके पास ही शराबकी दुकान मिल जाये, तब तो हमें उसके पास पहुँचने का, उसे समझाने-बुझाने का अवसर ही नहीं मिल सकता। यह तो उसी तरह निष्फल होगा जैसे कि किसी बीमार बच्चेके सामने, बल्कि बीमार आदमीके भी सामने, खुली हुई मिठाई रखी रहे और उसे वहाँसे हटा देने के बजाय उससे कहा जाये कि इसे छूना मत।

और जब मैं इस विषयकी चर्चा कर ही रहा हूँ तो यहाँ कृपालु मित्रगण मुझे जो अखबारोंकी कतरनें भेजते रहते हैं, उनमें से एकमें उठाई गई दलीलका जवाब भी दे ही दूँ। उसमें कहा गया है कि इस सुधारके जोशमें श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचारीने ताड़का रस उतारनेवालों की, जिन्हें शराबबन्दीके कारण अपना काम बन्द करना पड़ेगा, बेकारीकी समस्याका भी कोई खयाल नहीं किया है। राजाजीने उनके लिए क्या सोचा है, यह तो मुझे मालूम नहीं; लेकिन श्री गजाननने, जो कि ताड़के रसका गुड़ बनाने में विशेषज्ञ बनते जा रहे हैं, मुझे बताया है कि दक्षिणके इस प्रान्तमें ताड़से रस उतारनेवाले लोग (ताड़ी बनाने के) गन्दे व्यापारमें लगे हुए हैं। उनका यह भी कहना है कि रस उतारना बन्द करने की कोई जरूरत नहीं है। शराबबन्दीके अधीन फर्क सिर्फ इतना होगा कि वे जो रस उतारेंगे वह नीरा होगा, जिसका नशीले पेय पदार्थके बजाय गुड़ बनाया जायेगा। आन्ध्र प्रदेशके बारेमें तो मुझे यह मालूम हुआ है कि रस उतारनेवाले खजूरका रस नहीं बेचते हैं, बल्कि उसका गुड़ बनाकर 'अर्क' बनानेवालों को बेचते हैं, जो गुड़से 'अर्क' बनाते हैं। ऐसे मामलोंमें राज्यको इसके सिवा और कुछ करने की जरूरत नहीं है कि वह आपसम तय किये गये वाजिब दामोंपर इस गुड़को खरीद ले। रस उतारनेवालों के बारेमें मैं जो-कुछ जानता हूँ उसके आधारपर यह कह सकता हूँ कि आसन्न शराबबन्दीसे उनको कोई नुकसान होने की सम्भावना नहीं है, और दूसरी ओर गरीबोंके शरीर और आत्मा दोनोंको हानि पहुँचनेवाली शराबके बदले, शुद्ध गुड़के रूपमें एक पोषक और सस्ता खाद्य पदार्थ मिलने लगेगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १४-८-१९३७

६२. पत्र : नरहरि द्वा० परीखको

सेगाँव, वर्धा
१४ अगस्त, १९३७

चि० नरहरि,

इस पत्रके साथ नीमुका पत्र है। उसके प्रश्नोंके उत्तर तो तुम और मगनभाई[1] ही दे सकते हो। आश्रममें रहने की बातका उत्तर तुम दोगे, और विद्यापीठ-सम्बन्धी प्रश्नका उत्तर फिलहाल तो मगनभाईको देना पड़ेगा न? मगनभाई यहाँ हुए तो उन्हें यह पत्र दिखाऊँगा और फिर तुम्हें भेजूँगा। जिसमें अड़चन मालूम हो, ऐसी कोई बात तुम्हें नहीं करनी है। मगनभाईको भी नहीं करनी है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९१०९) से।

६३. चरखा द्वादशी

अपनी जयन्तीके बारेमें लिखते हुए मुझे संकोच होता है; न होता हो, तो होना चाहिए। पाठक यह ध्यान रखें कि अगर हिन्दुस्तानमें मेरी जन्म-तिथिका स्मरण करानेवाले न होते, तो मैं तो उसे बिलकुल भूल ही जाता। मुझे तो जो अपनी जन्म-तिथि याद आई वह सिर्फ स्कूलमें भर्ती होने के लिए, और वह भी खास कर तब जब कि मैं बैरिस्टर बनने के लिए गया था। लेकिन मेरे माता-पिताने मेरी या हममें से किसी भी भाईकी जन्म-तिथि विधिपूर्वक मनाई हो, ऐसा मुझे याद नहीं पड़ता। और मैंने तो न अपने माता-पिताकी जन्म-तिथि मनाई, न अपने बालकोंकी। एक समय उनकी जन्म-तिथिका लेखा मैं जरूर रखता था, लेकिन वह लेखा भी बिल्लीकी तरह सातसे भी अधिक बार घरोंकी अदला-बदली करने में खो गया। कौन जाने क्यों, पर जन्म-तिथियोंके बारेमें मेरे मनमें कभी दिलचस्पी पैदा नहीं हो सकी। लेकिन जब हिन्दुस्तानमें पहले-पहल आडम्बरके साथ मेरी जन्म-तिथि मनाई गई तभीसे मैंने उसे "चरखा द्वादशी"का नाम दे दिया है। ऐसी चरखा द्वादशी इस साल भी राजकोटकी राष्ट्रीय शालाकी तरफसे मनाई जानेवाली है, जिसके सिलसिलेमें श्री छगनलाल जोशी निम्न प्रकार लिखते हैं:[2]

१. मगनभाई प्रभुभाई देसाई।

२. पत्र यहाँ नहीं दिया जा रहा है। पत्र-लेखकने गांधीजी से चरखा द्वादशी मनाने की नारणदास गांधीकी योजनापर *हरिजनबन्धु* में लिखने का अनुरोध किया था।

काठियावाड़में और काठियावाड़के बाहर रहनेवाले सभी इसमें हाथ बँटायें तो १५,००० रुपयेकी जो आशा श्री छगनलाल रखते हैं वह बहुत नहीं है। खादी-प्रचार और हरिजन-सेवाके लिए तो जितनी भी रकम मिले, उसे मैं कम ही समझूँगा। क्योंकि खादी-प्रचारका मतलब तो देशकी सम्पत्तिमें अच्छी-खासी वृद्धि है। चरखा संघने आजतक बहुत ही मामूली पूँजीसे गरीबोंको तीन करोड़ रुपये दिये हैं, जिसका मतलब यह है कि कमसे-कम चार करोड़ रुपयेकी खादी तैयार हुई और उसमें से तीन करोड़ रुपये गाँवोंमें गये। इसी तरह हरिजन-सेवाको भी "तुरत दान महाकल्याण" का प्रतिरूप समझना चाहिए, क्योंकि वह प्रायश्चित्त-रूप है। और प्रायश्चित्त-रूपमें दिया हुआ दान तो अनन्त फल देता है। जो लोग यह जानते हैं वे तो दरिद्रनारायणकी थैलीमें कंजूसीसे नहीं, मुक्त-हस्त होकर देंगे।

लेकिन ऐसा राजकोटकी राष्ट्रीय शालामें ही क्यों हो, और दूसरी जगह कहीं भी क्यों नहीं, यह सवाल उठता है। इसका जवाब तो इतना ही है कि श्री नारणदासने चरखा द्वादशी मनाने की जो योजना बनाई है वह मुझे अनोखी मालूम पड़ी है। उससे जो प्राप्ति होती है उसका खर्च जिम्मेदार संस्थाके द्वारा होता है, और तीन सालसे चल रहा यह क्रम उत्तरोत्तर बढ़ता हुआ नजर आ रहा है। इसलिए खादी और हरिजनोंके भक्तोंसे मैं बिना किसी संकोचके इस थैलीमें वे जितना दे सकें उतना देने की सिफारिश कर सकता हूँ। थैलीमें अपना अंश देनेवालों को यह जरूर समझना चाहिए कि जो लोग सूतके रूपमें इस यज्ञकी पूर्ति करते हैं वे धनके रूपमें पूर्ति करनेवालों से ज्यादा देते हैं; क्योंकि वे अपनी मेहनतसे द्रव्य पैदा करके देते हैं, जबकि धन देनेवाला अपनी थैलीम से परोपकारकी थैलीमें डालता हैं और इसलिए नया द्रव्य पैदा नहीं करता, अलबत्ता नये उत्पादनमें मदद करता है।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, १५-८-१९३७

६४. टिप्पणियाँ

"चोटी-पत्र"

गुजरात हरिजन सेवक संघके मन्त्री श्री परीक्षितलाल मजमूदार लिखते हैं:[१]

यदि यह बात सच हो तो यह साफ गुनाह है, और राज्यको यह प्रथा शीघ्र समाप्त करनी चाहिए। संघके कार्यकर्त्ताओंको और भी खोज-बीन करनी चाहिए।

१. पत्रका अनुवाद यहाँ नहीं दिया जा रहा है। परीक्षितलाल मजमूदारने बड़ौदा राज्यकी एक भारी कुप्रथाकी सूचना दी थी, जिसके अन्तर्गत मेहसाना प्रखण्डके गरीब हरिजन महाजनोंके यहाँ अपनी स्त्रियोंकी चोटियाँ गिरवी रख देते थे, यानी एक प्रकारसे उनकी चुटिया महाजनोंके हाथोंमें थमा देते थे, जिससे उन स्त्रियोंपर उनका पूरा अधिकार हो जाता था। इस प्रथाको पत्र-लेखकने गुजरातीमें 'चोटला खत' यानि 'चोटी-पत्र' की संज्ञा दी थी और राज्यसे इसे समाप्त करनेका अनुरोध किया था।

क्या ऐसे दस्तावेज वास्तवमें होते हैं, या ऐसा केवल मौखिक रूपसे तय हो जाता है? ऐसा धन्धा करनेवाले कितने लोग हैं और वे कहाँ रहते हैं? ऐसे कितने मामले निगाहमें आये हैं?

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, १५-८-१९३७

६५. पत्र : मणिबहन पटेलको

[१५][1] अगस्त, १९३७

चि० मणि,

केवलरामका पत्र तो उन्हीं [पत्रों] में था जो तूने लौटाये थे। मैं यह जानता था कि तारका प्रथमार्द्ध नहीं था। अब मैं वे दोनों इसके साथ भेज रहा हूँ। आज मीराबहन दिल्लीसे आनेवाली गाड़ीसे ६ और ८ के बीच आ रही है। राजकुमारी कल सुबह बम्बईसे आ रही है।

बापूके आशीर्वाद

मणिबहन पटेल
पुरुषोत्तम बिल्डिंग
ऑपेरा हाउसके सामने, बम्बई

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो – ४ : मणिबहेन पटेलने, पृ० ११९

१. साधन-सूत्रमें '२६' तारीख दी गई है। मीराबहनके उसी दिन पहुँचने की सम्भावनाके उल्लेखसे स्पष्ट है कि यह पत्र १५ अगस्तको लिखा गया था; देखिए "पत्र : अमतुस्सलामको", पृ० ५७। इसके अतिरिक्त २३ अगस्तको तो अमृतकौर गांधीजी के साथ ही थीं; देखिए "पत्र : महादेव देसाईको", २३-८-१९३७।

६६. पत्र : एम० विश्वेश्वरय्याको[1]

[१५ अगस्त, १९३७ के पश्चात्][2]

प्रिय सर विश्वेश्वरय्या,

उड़ीसामें बाढ़से जो तबाही हुई है उसके बारेमें आपको मालूम ही है। मैंने मुख्य मन्त्री श्री विश्वनाथ दासको सलाह दी है कि वे इस सिलसिलेमें आपसे सलाह और मार्ग-दर्शन माँगें। मुझे पूरा विश्वास है कि आप अपनी सामर्थ्यानुसार उनकी सहायता करेंगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९८३६) से; सौजन्य : मैसूर सरकार

६७. पत्र : वाइसरायको

सेगाँव, वर्धा
१६ अगस्त, १९३७

प्रिय मित्र,

उड़ीसामें बाढ़के कारण हाल ही में जो विनाश हुआ है उसके बारे में आप जानते ही हैं। उड़ीसाके मुख्य मन्त्री मुझे कल ही क्षतिग्रस्त इलाकोंका हाल बता रहे थे। मैं बहुत पहलेसे ही यह मानता आया हूँ कि यदि बाढ़के पानीके बहावको अनुकूल दिशामें मोड़ा जा सके तो इस तरह हर साल होनेवाली तबाहीको रोका जा सकता है। बाढ़-नियन्त्रणका सबसे अच्छा उपाय क्या है, इसके सम्बन्धमें उड़ीसा सरकारको सलाह देने के लिए क्या आप किसी इंजीनियर मित्रको भेज पायेंगे?

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

परमश्रेष्ठ वाइसराय

अंग्रेजीकी नकलसे। प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

१. यह पत्र १९६९-७० में दिल्लीमें हुई गांधी-दर्शन प्रदर्शनीके मैसूर पण्डालमें प्रदर्शित किया गया था।

२. जान पड़ता है, यह पत्र १५ अगस्त, १९३७ को गांधीजी के उड़ीसाके मुख्य मन्त्रीसे मिलने के बाद ही लिखा गया था; देखिए अगला शीर्षक।

६८. पत्र : महादेव देसाईको

१६ अगस्त, १९३७

चि० महादेव,

इस पत्रके साथ दो लेख तो भेज रहा हूँ। हिन्दीवाला कनुने टाइप किया है। एक और तैयार हो रहा है।

तुम खासे नाजुकमिजाज मालूम होते हो। मैंने तो जो देखा, वही तुम्हें लिखा था। और कल जो हुआ था, वह देखने लायक था। तुम्हारा वहाँ रहना मुझे अच्छा न लगे, यह कैसे हो सकता है? लेकिन मैंने वातावरण को समझ लिया। कल नहीं आये, यह तो ठीक हुआ। बाकी मिलने पर।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५५१) से।

६९. पत्र : अमतुस्सलामको

१६ अगस्त, १९३७

चि० अमतुल सलाम,

तुमारा खत मिला। मेरा तार मिल गया होगा। मैंने कह दिया है जहां तक रहना चाहिये वहां तक रहो। तबीयत अच्छी हो जाय वह मेरे लिये बहुत हि बड़ी बात है। मैंने तो अमतुल मसूदकी फिकर की थी और अम्माकी। बाकी तो जो रामचंद्रनको लिखा है वही कायम समजो। जब वह इजाजत देवे तब ही आओ।

मिराबहन कल आ गई। बहूत अच्छी तो नहीं हुई है।

कांति लिखता है जबतक अ० स० मेरे बारेमें आसक्ति रखती है तबतक मैं उनसे कोई संबंध नहीं रखुंगा। जब अनासक्त हो जायगी तब तो बात ही क्या?

तुमारा और खत आज मिला। आने में जल्दी न की जाय। यदि अच्छा हो रहा है तो और ठहरो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९१) से।

७०. तार : रवीन्द्रनाथ ठाकुरको[1]

[१६ अगस्त, १९३७ या उसके पश्चात्][2]

विश्वास रखिए अण्डमानके संकटको[3] समाप्त करने के लिए मुझसे जो-कुछ भी बन पड़ेगा करूँगा। स्नेह।

गांधी

मूल अंग्रेजीसे: प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य: प्यारेलाल

७१. पत्र : सरस्वतीको

१७ अगस्त, १९३७

चि० सरस्वती,

तुमारा खत मिला। कांति नहीं चाहता कि तुमारी आखरी परीक्षा होने के पहले मेरे पास आना। रामचंद्रन भी वही चाहते हैं। इसलिये अब तो जल्दी परीक्षा में उत्तीर्ण हो और बादमें मेरे पास आओ।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१६३)से। सी० डब्ल्यू० ३४३६ से भी; सौजन्य: कन्तिलाल गांधी

१ और २. यह तार रवीन्द्रनाथ ठाकुरके १६ अगस्त, १९३७ के तार के उत्तरमें भेजा गया था। उन्होंने लिखा था: "अण्डमानके कैदियोंको भूख-हड़ताल समाप्त करने के लिए तार दिया है। उनके जीवनकी रक्षा होनी ही चाहिए। आशा है आप और जवाहरलाल भी अपने प्रभावका उपयोग करेंगे।"

३. २४ जुलाई, १९३७ से अण्डमानके लगभग २२५ कैदी भूख-हड़ताल पर थे। उनकी एक माँग यह थी कि सभी राजनीतिक कैदियोंकी सामूहिक रिहाई हो और सारे दमनकारी कानूनोंको रद किया जाये। लेकिन भारत सरकारने उनकी किसी भी माँगपर तबतक विचार करने से इनकार कर दिया था जबतक कि वे भूख-हड़ताल समाप्त नहीं करते। देखिए "तार: वाइसरायको", २७-८-१९३७ और "तार: अण्डमानके कैदियों को", ३०-८-१९३७ भी।

७२. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

सेगाँव, वर्धा
१८ अगस्त, १९३७

भाई घनश्यामदास,

आपका पत्र मिला। मैं ध्यानसे पढ़ गया हूं। मुझे प्रतीत होता है कि इस बारेमें कांग्रेसकी तरफसे या मेरी तरफसे कुछ भी नहीं कहा जा सकता है, अर्थात् मेरी पसंदगी अथवा नापसंदगी पर आप लोगोंको कोई कदम उठाना नहीं चाहिये। क्योंकि आप लोगोंकी दृष्टि एक है, मेरी दूसरी है। ऐसा कोई भी आर्थिक समझौता को मैं राज्यप्रकरणसे भिन्न नहीं समझ सकता हूं — जैसे मैंने राउण्ड टेबलके[1] समय लंकेशीअरमें [भी] किया था। आप लोग पैक्ट कमेटीमें हैं। इसका अर्थ यह है कि राज्य-प्रकरणका प्रश्न उठाने का आप लोगोंको कुछ भी अधिकार नहीं रहा है। इसलिये आप इस चीजको पृथक समझकर, गुण-दोषपर ही विचार करें। और गुण-दोष पर मैं क्या कहूँ? उस बारेमें जो आपका खयाल होगा वही शायद मेरा होगा। इसी तरहसे करने का आप लोगोंका धर्म भी हो जाता है। यदि हो सकता है तो आप इतना आपके अभिप्रायमें कहें कि अगरचे गुण-दोषपर आपका अभिप्राय अमुक होते हुए भी उसकी ज्यादी किम्मत न मानी जाय। क्योंकि लोकप्रिय संस्था कांग्रेस ही है इसलिये जो-कुछ भी समझौता किया जाय उसपर कांग्रेसकी महोर होनी ही चाहिये। और वही समझौता कायम माना जाय। इसमें आप लोगोंकी प्रामाणिकता और न्यायबुद्धि होंगी।

यह पत्र प्रातःकालकी प्रार्थनाके बाद लिखवा रहा हूँ। ज्युरिकमें फायदा हुआ होगा।

बापुके आशीर्वाद

मूल पत्र (सी० डब्ल्यू० ७९९०)से; सौजन्य: घनश्यामदास बिड़ला

१. १९३१ में; देखिए खण्ड ४८, पृ० ७५-७६, ८४-८६ और ८७-८८।

७३. पत्र : च० राजगोपालाचारीको

सेगाँव
१९ अगस्त, १९३७

प्रिय सी० आर०,

हम लोग दिल खोलकर आपसे बातें नहीं कर पाये, इससे मुझे अपने-आप पर बहुत खीज आई। किन्तु यह कोई महत्त्वकी बात नहीं थी। मुझे चिन्ता तो इस बात की है कि दिनमें आप जरा भी आराम नहीं करते। ऐसा करना पाप चाहे न हो पर गलत अवश्य है। किसी भी कामको अपनी सीमाके बाहर जाकर करने में कोई पुण्य नहीं है। यदि आप दिनमें एक घंटा आराम कर लिया करें तो दुनियाका उससे कुछ बिगड़ेगा नहीं। जल्दी ही बुरी तरह बीमार पड़ना चाहते हों तो बात अलग है, अन्यथा आपको मेरी राय अवश्य ही माननी चाहिए। एक घंटेका आराम तो बहुत आसान चीज है। यदि राज्यकी सुरक्षा को खतरेमें डाले बिना आप इतना भी नहीं कर सकते तो कहीं कुछ गड़बड़ जरूर है। तो, मेरी सलाहपर ध्यान दीजिए।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २०६०) से।

७४. पत्र : भारतन कुमारप्पाको

१९ अगस्त, १९३७

प्रिय भारतन,

रावके बारेमें तुम्हारा पुर्जा मेरे सामन है।[1] यह मुझे सवेरे ७ बजे सैर करते समय मिला। जवाब तो तभी जायेगा जब छोटेलाल रवाना होगा। तुम आज दोपहर बाद १ बजे या ४ बजे आ सकते हो। २ और ४ के बीच मैं किसीको समय दे चुका हूँ। आशा है, तुमने रावसे सब कागजात और रोकड़ ले ली होगी। यदि उसे आने को राजी किया जा सके तो मैं उससे मिलना चाहता हूँ।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५९३) से।

१. देखिए खण्ड ६५, पृ० ४२२।

७५. पत्र : लक्ष्मी गांधीको

सेगाँव, वर्धा
१९ अगस्त, १९३७

चि० लक्ष्मी,

बहुत दिनोंके बाद अथवा कहो हप्तोंके बाद मैं यह पत्र लिखता हूं। तुम्हारे और बच्चों के बारेमें खबर मिलती ही रहती है। यह खत लिखने का कारण तो अण्णा[1] है। कारण उनके व्यवसायके बारेमें मैं पूछ रहा था तो पता चला सवेरेसे रात्री के ११ बजे तक अविश्रांत काम करते रहते हैं। यह सुनकर मैं बहुत ही चिन्तीत हो गया हूं। मैंने उनसे भी थोडा सुनाया है।[2] इस तरह काम करने का कोई धर्म नहीं है। मैं तो इसे दोष समझता हूं। इस तरह काम कहां तक चल सकता है? वह भी खुद बिमार हो जायेंगे फिर क्या करेंगे? बिमारीका सामान तैयार करना और बिमार न होने की आशा रखना यह तो आकाश-कुसुम पाने [का] प्रयत्न [करने] जैसी बात हुई। इसलिये तुमसे मैं यह आशा करता हूँ कि इतना काम करने से तुम भाई-बहिन मिलकर उनको रुको और हरगीज इस तरह काम करने मत दो। सब भाई-बहिन इतना निश्चय करोगे तो सफलता प्राप्त होगी।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २०१४) से।

१. च० राजगोपालाचारी, लक्ष्मी गांधीके पिता।
२. देखिए पृ० ६०।

७६. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको

वर्धा
२० अगस्त, १९३७

श्री के० एफ० नरीमानने मुझे एक निवेदन भेजा है, जिसमें उन्होंने सरदार वल्लभभाई पटेल और अन्य लोगोंके खिलाफ अपना पक्ष पेश किया है। वे चाहते हैं कि मैं साक्षियोंको आमन्त्रित करूँ और उन्हें कुछ आश्वासन दूँ।[1] इस वक्तव्य द्वारा उनकी यह माँग मैं सहर्ष पूरी कर रहा हूँ।

मैं चाहूँगा कि विधानसभा और विधान-परिषद्‌के जिन सदस्योंने कांग्रेस दलके नेताके चुनावमें भाग लिया था, और मतदानके सम्बन्धमें लोगोंको प्रभावित करने की कोशिश की थी, वे जो-कुछ भी जानते हों, उसके बारेमें मुझे अपने बयान भेजें। अपने बयानमें वे खासकर यह बतायें कि जिस ढंगसे उन्होंने मतदान किया, क्या वह सरदार वल्लभभाईके प्रत्यक्ष या परोक्ष उकसावेपर किया था, और साथ ही मतदानके अपने कारण भी लिखें। यह कहा गया है कि चुनाव क्योंकि सर्वसम्मति से हुआ था, इसलिए मतदान हुआ ही नहीं था। फिर भी मैं चाहूँगा कि जो सदस्य चुनावके समय उपस्थित थे, वे यदि चाहें तो मुझे लिखें कि उन्होंने अपनी असहमति क्यों प्रकट नहीं की। मैं यह भी चाहूँगा कि जिन्होंने निर्वाचकोंके निर्णयोंको प्रभावित करने में भाग लिया था, वे मुझे लिखें कि क्या वे सरदारके उकसावे या उनकी सलाह पर वैसा कर रहे थे और क्या वस्तुतः निर्वाचकोंसे बात करते हुए उन्होंने उनके नामका उपयोग किया था और यदि किया था तो क्या सरदारको उसकी जानकारी थी और उसमें उनकी अनुमति थी।

१९३४ में केन्द्रीय विधानसभाके लिए बम्बईसे सदस्योंका जो चुनाव हुआ, उसमें श्री नरीमानकी भूमिकाके बारेमें एक अन्य प्रकारके साक्षियोंका वर्ग भी है। श्री नरीमानके विरुद्ध विश्वासघात या अनुचित आचरणका जो आरोप है, उसपर जो लोग प्रकाश डाल सकते हैं, उनसे मैं कहूँगा कि वे प्रकाश डालें।

१. **सरदार वल्लभभाई पटेल**, खण्ड–२ में नरहरि परीख इसके स्पष्टीकरणमें लिखते हैं: "नरीमानने . . . १७ अगस्तको एक वक्तव्य जारी किया। उसमें उन्होंने कहा था कि मैं क्षमा माँगने को तैयार नहीं हूँ और सभी साक्षियोंको सुरक्षाका आश्वासन मिलना चाहिए। उस सार्वजनिक वक्तव्यके बाद उन्होंने गांधीजी को एक पत्र लिखा कि संसदीय समितिके प्रधानकी हैसियतसे सरदार पटेलको बहुत बड़े और निरंकुश अधिकार प्राप्त हैं और बहुत-से साक्षी, जो विधानसभाके सदस्य हैं, इस बातसे डरते हैं कि उन्हें उनका कोपभाजन बनना होगा। इसलिए सचाईके हितमें यह आवश्यक है कि साक्षियोंको पूर्ण सुरक्षाका आश्वासन दिया जाये।"

मुझसे यह कहा गया है कि सरदार उन व्यक्तियोंको तंग करेंगे, इस डरसे सचाई दबाई जा सकती है। सरदार उन्हें कैसे तंग कर सकते हैं, यह मेरी समझमें नहीं आता। परन्तु मैं यह आश्वासन दे सकता हूँ कि यदि सरदार इस तरहके आचरणके दोषी पाये गये तो उनके साथ मेरा जो घनिष्ठ सम्बन्ध है, वह मैं तोड़ लूँगा। यदि कुछ ऐसे साक्षी हैं जो मुझे गुप्त रूपसे लिखना चाहते हैं, तो मैं उनके रहस्यको प्रकट नहीं करूँगा। परन्तु उन्हें यह समझ लेना चाहिए कि यदि उनके बयान ऐसे हैं जिनका सरदार द्वारा या जिन अन्य लोगोंका उनमें जिक्र है उनके द्वारा सम्पोषण या निराकरण जरूरी है, तो यदि मैं ये बयान — जरूरी नहीं कि नाम भी — सम्बन्धित पक्षोंको दिखा न सकूँ, तो मेरे लिए उनका कोई मूल्य नहीं होगा।

उपर्युक्त दो मामलोंमें यदि कोई भी व्यक्ति कोई साक्ष्य देना चाहे तो वह मेरे पास इस महीनेकी ३१ तारीख तक मगनवाड़ी, वर्धाके पतेपर पहुँच जाना चाहिए, और उसपर "गोपनीय: श्री नरीमानके सम्बन्धमें" लिखा होना चाहिए। बयान साफ लिखावटमें बिना किसी दलीलके या किसी तरहसे नमक-मिर्च लगाये बगैर लिखे होने चाहिए और जिन मामलोंका मैंने जिक्र किया है उनसे सम्बद्ध होने चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २१-८-१९३७

७७. पत्र : महादेव देसाईको

२० अगस्त, १९३७

चि० महादेव,

इतना ढेर-सा काम मैंने खुद ही अपने सिर ले लिया है न? नरीमान और शिक्षापर ये लेख कब पढ़ूँ? साथका यह वक्तव्य[1] एसोसिएटेड प्रेसको तारसे भेजना ठीक होगा न? जैसा तुम्हें ठीक लगे, वैसा करना। फलोंकी बात समझा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५५२) से।

१. देखिए पिछला शीर्षक।

७८. पत्र : हरिहर शर्माको

२० अगस्त, १९३७

चि० अण्णा,

तुम्हारा पत्र मिला। दुःख मानने की कोई आवश्यकता नहीं थी। मेरे दिलपर जो चोट स्टेशनपर लगी उसे बताना ही चाहिये था। न बताने से मित्रद्रोह लगता। मैं उससे पहले यदि शंकित बन जाता तो अवश्य कराता। जब तुमने मेरी संमति मिलने पर जाने का इरादा कर लिया था तब तुम्हारे अपने कामको किसी-न-किसी को सुपुर्द कर जाना चाहिये था। मानो कि मैं संमति न देता तो कोई आपत्ति नहीं होनेवाली थी, क्योंकि सुपुर्द नहीं किया उसमें मुझे जो-कुछ हुआ और यकायक करना पड़ा वह भी तुमने देख लिया। और मेरे स्टेशनपर उतरते ही।

पत्रकी नकलसे; प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

७९. चर्चा : नशाबन्दीके बारेमें[1]

[२१ अगस्त, १९३७ के पूर्व]

गांधीजी : नये सुधारोंकी सबसे क्रूर विडम्बना यह है कि हमारे पास अपने बच्चोंकी शिक्षाके लिए शराबसे प्राप्त होनेवाले राजस्वके सिवा कोई और सहारा नहीं है। शिक्षाके मामलेमें यह जटिल समस्या है, पर हमें इससे किंकर्त्तव्यविमूढ़ नहीं होना चाहिए। हमें इसका समाधान निकालना है और उस समाधानमें हमें मद्यनिषेधके अपने आदर्शको नहीं छोड़ना है, चाहे उसकी कुछ भी कीमत क्यों न देनी पड़े। यह सोचना लज्जास्पद और अपमानजनक होना चाहिए कि शराबसे प्राप्त होनेवाले राजस्व के बिना हमारे बच्चे शिक्षासे वंचित रह जायेंगे। किन्तु यदि यही होना है, तो अपेक्षाकृत छोटी बुराई मानकर हमें इसीको स्वीकार करना चाहिए। यदि हम केवल आँकड़ोंके हौए को अपने दिमागपर हावी न होने दें और हमारे बच्चोंको जिस तरहकी शिक्षा आज मिल रही है उन्हें ठीक वैसी ही शिक्षा देने की कल्पित आवश्यकतासे मनको परेशान न होने दें तो यह समस्या हमें किंकर्त्तव्यविमूढ़ नहीं कर सकती।

१. महादेव देसाईके "द एजुकेशन पज़ल" (शिक्षाकी जटिल समस्या) शीर्षक लेखसे उद्धृत।

प्रश्नकर्त्ता : तो आप आज जो माध्यमिक शिक्षा कहलाती है उसे सचमुच बन्द कर देंगे और मैट्रिकुलेशन तककी पूरी शिक्षा ग्राम-शालाओंमें ही देंगे ?

उ० : बेशक। आपकी माध्यमिक शिक्षा इसके सिवा और है ही क्या कि बेचारे बालकोंको एक विदेशी भाषामें सात सालतक वह सब सीखने के लिए बाध्य किया जाता है जो वे अपनी मातृभाषामें केवल दो सालमें सीख सकते हैं? यदि आप केवल यह निश्चय कर लें कि बच्चोंको पाठ्य विषय एक विदेशी भाषामें सीखने के दुःस्वप्नसे मुक्त करना है, और यदि आप उन्हें अपने हाथ-पैरोंका सदुपयोग करना सिखायें, तो शिक्षाकी समस्या सुलझ जाती है। फिर तो मद्यसे प्राप्त होनेवाले पूरे राजस्वको आप बिना किसी पश्चात्तापके त्याग सकते हैं। परन्तु आपको इस राजस्वके त्यागका निश्चय पहले करना चाहिए, और शिक्षाके उपायों और साधनोंके बारेमें बादमें सोचना चाहिए। श्रीगणेश बड़े कदमसे कीजिए।

प्र० : लेकिन क्या मद्यनिषेधकी घोषणा-मात्रसे ही मद्यनिषेध हो जायेगा? क्या यह आशंका नहीं है कि मद्यपानके अभिशापको समाप्त करना तो दूर रहा कहीं हम उसे छुए बिना ही उसके राजस्वसे हाथ न धो बैठें?

उ० : घोषणाका अर्थ यह नहीं है कि आप उसके बाद हाथपर-हाथ धर कर बैठे रहें। इसके विपरीत, आप हर किसीको अपने इस कार्यमें लगायेंगे। दर-असल, कर्मचारियोंका पूरा दल — आबकारी इंस्पेक्टरोंका दल, उनसे ऊपर के अधिकारियोंका दल और उनके तमाम मातहत कर्मचारियोंका दल — मौजूद है। आप उन्हें बतायेंगे कि उनकी सेवाकी शर्तें इसके सिवा और कुछ नहीं होंगी कि वे पूर्ण मद्य-निषेधके लिए काम करें। प्रत्येक मद्यशालाको आप मनोरंजन-केन्द्रमें परिवर्तित करेंगे। जिन जगहोंपर मद्यपानके अवसर सबसे ज्यादा हैं, वहाँ आप अपना ध्यान केन्द्रित करेंगे। मिलों और कारखानोंके मालिकोंसे आप कहेंगे कि वे उपाहार-गृहोंकी व्यवस्था करें, वहाँ श्रमिकोंके लिए गन्नेके रस-जैसे ताजगी देनेवाले पेय पदार्थों और खेलोंका प्रबन्ध करेंगे, उनके लिए लैन्टर्न शो आयोजित करेंगे, और उन्हें यह महसूस करायेंगे कि वे भी आप-जैसे ही हैं। बिना किसी अपवादके, हर किसीको अपने इस कार्यमें लगायें। गाँवका स्कूल-मास्टर और अन्य अधिकारी, सबको मद्यनिषेधके कार्यकर्त्ता बनना चाहिए।

प्र० : बहुत ठीक। पर बहुत-से स्थानोंपर आप गाँवके पटेल और अन्य लोगोंको शराबियोंके साथ उनकी रंगरेलियोंमें भाग लेते पायेंगे। उनका क्या होगा?

उ० : आपके स्कूलके बच्चोंमें से हरएक मद्यनिषेधका कार्यकर्त्ता होगा। मंत्री देहातोंका दौरा करेंगे और मनोरंजन-केन्द्रोंमें परिवर्तित मद्यशालाओंमें जायेंगे, वहाँ सर्व-साधारणके साथ बैठकर ताजगी देनेवाले पेय पियेंगे, और इस तरह इन स्थानोंको लोकप्रिय बनायेंगे।

आप यह सोचकर हतोत्साह न हों कि मद्यनिषेध अमेरिकामें असफल रहा है। यह बात याद रखिए कि यह विराट् प्रयोग वहाँ करके देखा गया था जहाँ मद्यपान

कोई बुराई नहीं मानी जाती है, जहाँ करोड़ों लोग आमतौरपर शराब पीते हैं; यहाँ मद्यपान सभी धर्मोंमें निन्दनीय माना जाता है और यहाँ करोड़ों लोग नहीं, बल्कि कुछ व्यक्ति शराब पीते हैं।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २१-८-१९३७

८०. हिन्दी-उर्दू

श्री जवाहरलाल नेहरूके बहुमूल्य निबन्धसे,[१] जो कांग्रेस राजनीतिक एवं आर्थिक अनुशीलन-मालाका छठा पुष्प है, मैं उनके निम्नलिखित सत्रह मुख्य सुझाव उद्धृत कर रहा हूँ।[२]

वस्तुतः पाठकोंको चाहिए कि वे इस पुस्तिकाको प्राप्त करके स्वयं इसका उचित मनोयोगसे अध्ययन करें। यह अ० भा० कां० क० कार्यालय, स्वराज्य भवन, इलाहाबादसे चार आना मूल्य और एक आना डाक-खर्च देकर प्राप्त की जा सकती है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २१-८-१९३७

८१. टिप्पणियाँ

निर्देश-पत्र नहीं

कांग्रेसी मन्त्रियोंके सामने जो रचनात्मक कार्यक्रम है उसके सम्बन्धमें हालके मेरे लेखोंको कुछ समाचार-पत्रोंमें "निर्देश-पत्र" की संज्ञा दी गई है। कांग्रेसी मन्त्रियोंके लिए निर्देश जारी करने का अधिकार कांग्रेस-अध्यक्ष और कार्य-समितिके अतिरिक्त और किसीको नहीं है। मैंने जो-कुछ लिखा है वह तो अति विनम्र टिप्पणी है। मैं तो ऐसे विषयोंपर सिर्फ सलाह ही दे सकता हूँ जिनके बारेमें विशेष ज्ञान या अनुभव रखने का दावा कर सकता होऊँ। मेरे लेखोंका केवल उसी हदतक मूल्य है जिस हदतक उन लोगोंकी बुद्धिको जँचे जिनके लिए वे लिखे गये हैं। यद्यपि मुझे कार्य-समितिका विश्वास प्राप्त है, फिर भी मेरे द्वारा व्यक्त किये गये विचारोंको उसके विचारों या उसके किसी एक गुटके भी विचारोंका प्रतिबिम्ब नहीं मानना चाहिए। वस्तुतः लोगोंको यह जान लेना चाहिए कि कई मामलोंमें मेरे विचार बहुत-से सदस्योंके

१. गांधीजी के प्राक्कथनके लिए देखिए पृ० ७।

२. देखिए परिशिष्ट १।

विचारोंसे मेल नहीं खाते। इसलिए इन स्तम्भोंमें मैं जो-कुछ कहूँ उसे कार्य-समितिका नहीं, बल्कि पूर्णतया मेरा वैयक्तिक विचार ही समझना चाहिए।

परन्तु जहाँतक अहिंसात्मक कार्रवाइयों द्वारा स्वराज्य-प्राप्तिके संघर्षका सम्बन्ध है, बेशक मैं विशेष योग्यताओंका दावा करता हूँ। मेरे लिए, कांग्रेस घोषणा-पत्र और कांग्रेस-प्रस्तावोंके अनुसार भी, मन्त्रीपद स्वीकार करने का एक विशेष अर्थ है। मन्त्रीपद स्वीकार करने के अपने उस अर्थको यदि मैं मन्त्रियों और जनताके आगे न रखूँ, तो वह गलत होगा। पर यह जरूरी नहीं है कि वह सदा कांग्रेसका अधिकृत दृष्टिकोण या आम कांग्रेसजनोंका दृष्टिकोण ही हो। अपनी स्थिति और सीमाएँ मैंने स्पष्ट कर दी हैं, इसलिए मन्त्रियोंको और मुझे अब कोई उलझन महसूस नहीं होनी चाहिए। मेरे लेखोंको यदि अधिकृत या अनधिकृत कांग्रेसी दृष्टिकोणकी स्वीकृति माना गया, तो मैं अपनेको एक शिकंजेमें कसा महसूस करूँगा।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २१-८-१९३७

८२. तात्पर्य यह है

मैंने अपनी यह राय बेझिझक जाहिर की है कि कांग्रेसी मन्त्रियोंने अपने लिए जो वेतन तय किये हैं, वे उस स्तरसे बहुत अधिक हैं जो संसारके इस सबसे गरीब देशमें होने चाहिए। प्रोफेसर के० टी० शाहने बहुत ही जल्दीमें जो नोट मुझे भेजा है और जो पाठकोंको इसी अंकमें अन्यत्र मिलेगा, उसमें वे देखेंगे कि भारतकी प्रति-व्यक्ति वार्षिक आय ४ पौंड है जबकि ग्रेट ब्रिटेनकी ५० पौंड है। दुर्भाग्यसे ब्रिटिश विरासतका भार हमें अभी कुछ समय और वहन करना है और अपनी पूरी कोशिशों के बावजूद हम आदर्श स्तरपर नहीं पहुँच सके हैं। वेतन और भत्ते तो निश्चित हो चुके हैं। अब सवाल यह रहता है कि मन्त्री, उनके सचिव और विधायक जो परिलब्धियाँ लेंगे, क्या उनके मुताबिक वे कड़ा श्रम करके उनका औचित्य सिद्ध करेंगे? क्या सदस्य राष्ट्रकी सेवामें अपना पूरा समय लगायेंगे और अपनी सेवाओंका सही ब्योरा देंगे? हमें यह मान लेनेकी गलती नहीं करनी चाहिए कि हालात जैसे हम चाहते हैं या जैसे होने चाहिए वैसे ही हैं।

मन्त्री सादा जीवन बितायें और कड़ा श्रम करें इतना ही काफी नहीं है। उन्हें इस बातकी भी कोशिश करनी है कि उनके अधीन जो विभाग हैं वे भी ऐसा ही करें। उदाहरणके लिए न्याय सस्ता और शीघ्र मिले, ऐसी व्यवस्था की जानी चाहिए। आज तो वह धनिकोंके लिए विलास और जुआरियोंके लिए उल्लासका एक साधन है। पुलिसको लोगोंके लिए आतंकका कारण न होकर उनका मित्र होना चाहिए। शिक्षामें इतनी क्रान्ति लानी चाहिए कि वह साम्राज्यी शोषकोंकी जरूरतें पूरी करने की बजाय गाँवके सबसे गरीब लोगोंकी जरूरतें पूरी करे।

जो लोग राजनीतिक अपराधोंके कारण, चाहे उनका स्वरूप हिंसात्मक ही क्यों न हो, जेलोंमें बन्द हैं, वे सब, यदि मन्त्री उन्हें रिहा कर सके तो, शीघ्र ही रिहा हो जायेंगे। यह एक ऐसी चीज है जिसे हमें नगण्य नहीं समझना चाहिए। क्या इसका अर्थ हिंसाकी छूट देना है? कांग्रेसके अहिंसाके सिद्धान्तके अनुसार तो ऐसा हर्गिज नहीं है। कांग्रेसको वैयक्तिक हिंसासे जितनी सच्ची अरुचि है उतनी तो उस सरकारको भी नहीं है जिसका स्थान अब वह ले रही है। वैयक्तिक हिंसाका सामना वह दण्ड कहलानेवाली संगठित हिंसासे नहीं, बल्कि अहिंसासे इस रूपमें करना चाहती है कि गलती करनेवाले व्यक्तियोंके प्रति उसका रवैया मैत्रीपूर्ण होगा और हर प्रकारकी हिंसाके विरुद्ध वह स्वस्थ जनमत तैयार करेगी। उसके तरीके दण्डात्मक नहीं, निरोधात्मक होंगे। दूसरे शब्दोंमें, कांग्रेस पुलिसके जरिये, जिसकी पीठपर सेना है, शासन नहीं करेगी, बल्कि अपने उस नैतिक अधिकारके जरिये शासन करेगी जो जन-साधारणके ज्यादासे-ज्यादा सद्भावपर आधारित है। वह श्रेष्ठतर सैनिक शक्तिसे प्राप्त अधिकारके बलपर शासन नहीं करेगी, बल्कि उस जनताकी सेवाके बलपर शासन करेगी, जिसका कि वह अपने सभी कार्योंमें प्रतिनिधित्व करने की कोशिश करती है।

सभी तरहके जब्त साहित्यपर से प्रतिबन्ध हटाया जा रहा है। मैं समझता हूँ कि जब्त पुस्तकोंमें से कुछ ऐसी निकलेंगी जो हिंसाका प्रतिपादन करती होंगी, अश्लीलताका प्रचार करती होंगी, या विभिन्न वर्गों या सम्प्रदायोंमें द्वेष फैलाती होंगी। कांग्रेस-शासनका अर्थ हिंसा या अश्लीलताको छूट देना या द्वेषको बढ़ावा देना नहीं है। आपत्तिजनक साहित्यके मामलेमें भी कांग्रेस प्रबुद्ध जनमतके असीम समर्थनपर ही भरोसा करेगी। मन्त्री यदि अपने प्रान्तोंमें हिंसा, द्वेष या अश्लीलताको फैलते देखें, तो वे, फौजदारी कानून और उससे सम्बन्धित प्रक्रियाओंका सहारा लेने से पहले, कांग्रेस-संगठनों और अन्ततः कार्यसमितिसे सक्रिय और प्रभावी सहायताकी आशा करें। वस्तुतः कांग्रेसकी विजय इस चीजसे आँकी जायेगी कि वह पुलिस और सेनाको लगभग व्यर्थ बना देनेमें कहाँतक सफल होती है। और यदि उसे ऐसे संकटोंका सामना करना पड़ा जिसमें पुलिस और सेनाका उपयोग अनिवार्य हो, तो वह उसकी पूर्ण असफलता होगी। मौजूदा संविधानको नष्ट करने का सबसे अच्छा और कारगर तरीका कांग्रेसके लिए यही है कि वह निर्णायक रूपसे यह सिद्ध कर दे कि वह सेनाकी सहायताके बिना और पुलिसकी यथासम्भव कमसे-कम सहायतासे शासन कर सकती है। पुलिस संगठनमें, जैसाकि एक पत्र-लेखकने सुझाया है, कुछ नये और मैत्रीपूर्ण पद-नाम दाखिल किये जा सकते हैं।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २१-८-१९३७

८३. पत्र : वेरियर एलविनको

दुबारा नहीं पढ़ा

सेगाँव, वर्धा
२१ अगस्त, १९३७

प्रिय वेरियर,

जमनालालजी के नाम लिखे तुम्हारे पत्र और अब बापाको लिखे अपेक्षाकृत विस्तृत पत्रको पढ़कर दुःख हुआ। ईश्वरने तुम्हें और भी बड़ी सेवा करने के लिए बचा लिया है। तुम्हें हताश नहीं होना चाहिए। हताशा मनुष्यकी आस्थाके अभावका मापदण्ड है। बापाके पत्रमें तुमने कहा है: "ईसाई होनेके नाते मुझमें जैसी श्रद्धा होनी चाहिए उसका या धार्मिक श्रद्धाका अधिकांश मैं खो बैठा हूँ। न्यायप्रिय और नेक ईश्वर गरीबोंका ऐसा दुःख कैसे सह सकता है?" यहाँ क्या तुम ईश्वरके सम्बन्ध में फतवा नहीं दे रहे हो। हम यह कहनेवाले कौन होते हैं कि वह अमुक चीजोंको क्यों सहता है, क्यों होने देता है? अगर हम ईश्वरके हर कार्यको बुद्धिकी कसौटी पर परख सकें तो फिर श्रद्धाकी गुंजाइश ही कहाँ रह जायेगी। फिर तो हम ईश्वरके समकक्ष बन जायेंगे। तुमपर जो अत्याचार हुआ है उसे मैं समझता हूँ,[1] लेकिन यही तो परीक्षाकी घड़ी होती है। तुम्हारी श्रद्धा हिमालयकी तरह अविचल होनी चाहिए। सच तो यह है कि क्षय हिमालयका भी होगा, लेकिन अगर तुम्हारी श्रद्धा किसी योग्य है तो उसका क्षय कभी नहीं हो सकता। नहीं, ऐसा नहीं चल सकता। तुम्हें प्रसन्न होना है। बेकारकी चिन्ता और दुःख अब और नहीं!

ठक्कर बापाने महादेवको लिखे अपने संलग्न पत्रमें कहा है कि तुम ऐसा मानते हो कि मैं तुमसे नाराज हूँ। उसके द्वारा तुमपर या तुम्हारे द्वारा मुझपर लगाया गया यह कैसा आरोप है? मेरा तुमसे मतभेद हुआ है। यह तुम्हें मालूम है। लेकिन तुमने ऐसा कुछ तो कभी नहीं किया जिससे मैं तुमपर नाराज होऊँ। मेरा प्रेम ऐसी बहुत-सी परीक्षाओंको झेल सकता है। लेकिन तुमने तो उसकी कोई परीक्षा ही नहीं ली है। वह आज भी उतना ही जाज्वल्यमान है जितना कि कभी रहा है। तो उसी विपुल भण्डारमें से ढेर-सा स्नेह ग्रहण करो और उसे शामराव[2] आदिके बीच बाँट दो।

बापू

अंग्रेजीकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य: प्यारेलाल

१. सम्भवतः तात्पर्य एलविन और चर्चके अधिकारियों में मतभेद से है।
२. शामराव हिवले, वेरियर एलविनके सहयोगी।

८४. पत्र : महादेव देसाईको

२१ अगस्त, १९३७

चि० महादेव,

प्रेमा जिस पुस्तकके[1] बारेमें लिख रही है, वह कहाँ है? मेरी समझमें तो वह मुझे नहीं मिली है। आज शामको छह बजेसे मौन शुरू किया है, और मौन तो मुझे माफिक आता ही है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

वेरियरका पत्र भेज देना।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५५३) से।

८५. पत्र : जयन्ती एन० पारेखको

सेगाँव, वर्धा
२२ अगस्त, १९३७

चि० जयन्ती,

तेरा पत्र मिला। छोटे हों या बड़े, सबके बरस बीतते जा रहे हैं। कालचक्र की गति एक क्षणके लिए भी नहीं रोकी जा सकती।

कल तुम सब बिलकुल बच्चे थे। अब बच्चे नहीं रहे। मुझे तो यह प्रयत्न-पूर्वक याद रखना पड़ता है। तेरी शुभकामनाएँ सफल हों, और तेरा जीवन सदा भुखमरी आदि अनेक कष्टोंसे पीड़ित लोगोंके कष्ट-निवारणमें बीते। जिन अवांछनीय परिवर्तनोंके बारेमें तू मुझे लिख रहा है, उनकी ओर सीधे सरदारका ध्यान क्यों नहीं आकर्षित करता? तुझे यह डर तो नहीं है न कि वे तेरी बात नहीं सुनेंगे? अगर हाँ, तो इस डरको निकाल बाहर करना। आशा है, दिनकरकी शक्ति लौट रही होगी।

इन्दुका मन स्थिर हो जाये तो बड़ा काम हो जाये।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६२६५) से।

१. ब्रह्मचर्यके बारेमें प्रेमाबहन कंटक द्वारा लिखित; देखिए "पत्र: प्रेमाबहन कंटकको", २५-८-१९३७ भी।

८६. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

सेगाँव, वर्धा
२२ अगस्त, १९३७

भाई वल्लभभाई,

आज मेरे नाम जयन्तीका पत्र आया है, वह साथ भेज रहा हूँ। मैंने उसे लिखा है[1] कि मुझे लिखने के बजाय सीधे तुमको लिखना अधिक अच्छा होगा। यदि साथके पत्रका उत्तर तुम ही दो तो ठीक होगा।

नरीमानकी तरफसे पत्र आ रहे हैं। उनकी नकलें तुम्हें नहीं भेज रहा हूँ। जिनकी नकल भेजना उचित होगा उनकी तो भेजूँगा ही।

मेरे स्वास्थ्यके बारेमें चिन्ता मत करना। मैं आराम कर रहा हूँ, और अब उसका समय और बढ़ा लूँगा।

बापूके आशीर्वाद

सरदार वल्लभभाई पटेल
पूना

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० २१०

८७. पत्र : मूलशंकर नौतमलालको

सेगाँव, वर्धा
२३ अगस्त, १९३७

चि० मूलशंकर,

मुझे नहीं लगता कि तुम्हारा १९ मार्चका पत्र मुझे मिला है।

तुम मन लगाकर काम कर रहे हो, यह अच्छा है। ऐसे ही करते रहना।

विवाहके सम्बन्धम मैं जिसे धर्म मानता हूँ, वह यह है: माता-पिता विवाह करने को, अथवा अपने ही मनके किसी व्यक्तिसे विवाह करनेको, बाध्य नहीं कर सकते। अपने साथीका चुनाव करने में पुत्र अथवा पुत्री अपने माता-पिताकी बात अत्यंत

१. देखिए पिछला शीर्षक।

आदरपूर्वक सुनें; किन्तु जहाँ उनका मन न माने, वहाँ वे विवाह न करें। इसी प्रकार जिस सम्बन्धसे माता-पिता प्रसन्न न हों, वह सम्बन्ध भी न करें।

जबतक संयमका पालन करने की शक्ति हो, तबतक विवाहकी इच्छाका दमन करने में मैं कोई हर्ज नहीं मानता। अलबत्ता, अपनेको किसी प्रकारके धोखेमें नहीं रखना चाहिए।

फिरसे जेल जानेका मौका आ जाये, तो जिनमें आत्म-बलिदानकी भावना तीव्र हो, उन्हें जेल जाने का अधिकार है। इसमें बड़े-बूढ़ोंके आशीर्वाद प्राप्त करने का प्रयत्न करना चाहिए। किन्तु मैं ऐसी स्थितिकी सम्भावनाकी कल्पना कर सकता हूँ जिसमें इस प्रकारका आशीर्वाद न मिले और तब भी आत्म-बलिदान करना कर्त्तव्य हो। प्रत्येक मामलेमें परिस्थितिकी जाँच करके ही निर्णय किया जा सकता है।

मुझे लगता है, इसमें तुम्हारे सभी सवालोंका जवाब आ जाता है। कुछ रह गया हो तो फिर पूछना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २५८५) से। सी० डब्ल्यू० ९४६४ से भी; सौजन्य: मूलशंकर नौतमलाल

८८. पत्र: महादेव देसाईको

सेगाँव
२३ अगस्त, १९३७

चि० महादेव,

महत्त्वके पत्र छोड़कर 'हरिजन' के लिए लिखता रहा हूँ। अभी तीन बजकर पच्चीस मिनट हुए हैं और अन्तिम लेख पूरा किया है। एक भी फिरसे नहीं पढ़ा। राजकुमारीने इन्हें दोहराया है। तुम देख लेना। जितने टाइप हो सके, उतने कराये हैं; लेकिन जो दो बजेके बाद लिखे गये वे कैसे टाइप होते? मेरी सलाह है कि समय न हो, तो ज्यों-के-त्यों भेज देना। समय हो, और नकल कराओ तो एक-एक नकल मुझे भेजना। जो टाइप किये गये हैं, उनकी भी सभी नकलें तुम्हारे पास आ रही हैं। अगर सम्भव हो तो [सबकी एक-]एक नकल मुझे भेजना। आज तो अब और कुछ नहीं भेज पाऊँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५५४) से।

८९. सन्देश : त्रावणकोर महिला सम्मेलनको[1]

[२४ अगस्त, १९३७ के पूर्व][2]

मेरी हार्दिक इच्छा है कि त्रावणकोरकी महिलाएँ अपने हृदयसे अस्पृश्यता और उसके सभी भावोंको मिटाकर तथा जो शराबबन्दी आन्दोलन अभी शुरू हुआ है उसमें यथेष्ट भाग लेकर धर्मको शुद्ध बनाने में अपनी भूमिका अदा करें।[3]

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २५-८-१९३७

९०. पत्र : जी० ए० नटेसनको

सेगाँव, वर्धा
२४ अगस्त, १९३७

प्रिय नटेसन,

आपके पत्र तथा कतरनके लिए बहुत-बहुत धन्यवाद। जो-कुछ आपने किया है, वह सब आपके अनुरूप है। आपने अपना मतभेद ईमानदारीसे व्यक्त किया और अपने विचारको खुले तौरपर सुधार लिया है।

शिक्षाके बारेमें 'हरिजन' के[4] आगामी अंकमें आप देखेंगे कि मैंने आपके पत्रका उपयोग किस प्रकार किया है।

मुझे सख्त आदेश दिया गया है कि यदि मैं गम्भीर परिणामोंसे बचना चाहता हूँ तो मुझे आराम करना चाहिए। इसलिए मैं आपके किये हुए संस्कृत-ग्रन्थोंके सार-संक्षेपको[5] पढ़ना शुरू करूँ, इसके लिए तो अभी आप कृपया प्रतीक्षा करें।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २२३७) से।

१. यह सम्मेलन क्विलोन में हुआ था।

२ और ३. सम्मेलन २४ अगस्त को समाप्त हो गया था, जिसमें "महाराजा और महारानी के प्रति मन्दिर-प्रवेश घोषणा जारी करने के लिए हार्दिक कृतज्ञता प्रकट की गई थी और एक अखिल केरल हिन्दू महिला परिषद् स्थापित करने का निश्चय किया गया था।"

४. देखिए "टिप्पणियाँ", २८-८-१९३७ का उप-शीर्षक "अनावश्यक भय"।

५. **रामायण, महाभारत** आदि का।

९१. पत्र : जी० कनिंघमको

सेगाँव, वर्धा
२४ अगस्त, १९३७

प्रिय मित्र,

इस महीनेकी १७ तारीखके आपके पत्रके[1] लिए धन्यवाद। जाहिर है कि परम-श्रेष्ठ वाइसरायने सीमा-पारके बारेमें मुझसे जो कहा, वह मेरी समझमें नहीं आया। उनका अभिप्राय मुझे यह जान पड़ा कि मुझे सीमा पार करने की आज्ञा देने की बात वे नहीं सोच सकते। और मैंने वाइसरायके निर्णयको जिस रूपमें समझा उस रूपमें मान लिया। साथ ही मैंने यह भी लिखा कि मैं इस आशाको नहीं छोड़ रहा हूँ कि जब मेरी ईमानदारी और योग्यताके विषयमें वे पर्याप्त आश्वस्त हो जायेंगे तब मुझे सीमा पार करने की अनुमति देने में कोई झिझक नहीं रह जायेगी। लेकिन यह बात इस पत्रके लिए अप्रासंगिक है। मैं इन शब्दोंके फलितार्थको जानना चाहूँगा कि मैं वहाँ जाऊँ तो "कबीलोंसे सम्बन्धित किसी भी मामलेमें किसी तरहका दखल न दूँ।" ऐसी बात नहीं कि मुझे सीमा-पारके मामलोंमें दखल देने की कोई इच्छा है। जब मैंने लॉर्ड हैलीफैक्स, जो तब लॉर्ड इर्विन थे, के सामने पहले-पहल इस विषयको छेड़ा था[2] उस समय मेरा जो इरादा था वही आज भी है — अर्थात् यह कि मैं सीमा-स्थित पठानोंको स्वयं उनके घरमें देखना-जानना चाहता हूँ, खुदाई खिदमत-गारोंका परिचय पाना चाहता हूँ और खुद इस बातका पता लगाना चाहता हूँ कि उनका सर्वथा अहिंसक होने का दावा कहाँतक सही है और कैसे पठानोंके कल्याणके लिए, जिसकी खान साहब अब्दुल गफ्फार खाँको इतनी ज्यादा लगन है, कार्य कर सकता हूँ। जिस तरह मैं उन्हें सर्वथा निश्छल और विश्वसनीय व्यक्ति मानता हूँ उसी तरह वे भी मुझपर आँख मूँदकर भरोसा करते हैं। लेकिन मैं मानता हूँ, यह अवश्यम्भावी है कि लोग सीमा-पारकी समस्याओंकी चर्चा करने मेरे पास आयेंगे। क्या मुझे उनकी समस्याओंकी गाथा नहीं सुननी चाहिए, बल्कि यदि वे उनपर मेरी राय माँगें और उनकी बातोंको सुनकर मैं कोई राय कायम कर पाऊँ तो क्या मुझे उनको वह राय भी नहीं देनी चाहिए?

आपके दिल्लीमें रहते हम दोनोंका पहला परिचय हुआ था और अगर सीमा-प्रान्त जाने का अवसर मिलने पर भी मुझे आपके साथ उस परिचयको फिरसे ताजा किये बिना वहाँसे लौट आना पड़ा तो निश्चय ही मुझे बहुत दुःख होगा।

१. देखिए परिशिष्ट ३।

२. मार्च, १९३१ में; देखिए खण्ड ४५, पृ० २७४-७५।

खान साहबके मामलेके बारेमें आप फिर पत्र लिखेंगे, ऐसी आशा कर रहा हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[पुनश्च :]

अभी-अभी अखबारोंमें पढ़ा है कि प्रतिबन्ध हटा लिया गया है। मैं आभारी हूँ।

परमश्रेष्ठ गवर्नर
पश्चिमोत्तर सीमा-प्रान्त

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७९९१) से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

९२. पत्र : मंगलदास पकवासाको

सेगाँव, वर्धा
२४ अगस्त, १९३७

भाई मंगलदास,

कुमारप्पाने खबर दी है कि तुमने कमाईका रास्ता हमेशाके लिए छोड़ दिया है, और अपना शेष जीवन केवल सेवार्थ बिताना चाहते हो। तुम्हारा शुभ निश्चय कायम रहे! ऐसे त्यागकी जरूरत तो है ही। हमारे पूर्वज जब वानप्रस्थ आश्रममें प्रवेश करते थे तो उसका ध्येय भी कुछ ऐसा ही होता होगा न?

नरीमानके प्रकरणमें तुम्हारी ओरसे परिपूर्ण समीक्षात्मक विवरणकी आशा रखता हूँ। आखिर तुम तो अध्यक्ष थे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४६७८) से; सौजन्य : मंगलदास पकवासा

९३. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

सेगाँव, वर्धा
२५ अगस्त, १९३७

चि० प्रेमा,

मेरे स्वास्थ्यके बारेमें तो तूने सुना ही होगा। कमसे-कम मानसिक परिश्रम और अधिकसे-अधिक आराम, यह हुक्म है। मस्तिष्क और दाहिना हाथ पूरा आराम चाहते हैं, इसलिए तुझे अभी जितना चाहिए उतना ही कहकर निपटा देता हूँ।

तेरी राखी बाँध ली। समयपर मिल गई थी।

तेरे प्रश्नोंका उत्तर नये सिरे से ही लिख डाला है।[1] पुराने उत्तर गलत नहीं हैं। अपूर्ण होनेके कारण उनका अनर्थ हो सकता है। पुराना लौटाता हूँ। इसे रद्द कर देना। यह छपना तो कदापि नहीं चाहिए। नया उपयोगी हो तो छाप देना। तेरे पत्र सुरक्षित रखे हैं। तबीयत अच्छी होने पर उत्तर दूँगा। अगर पत्र लिखाने की इजाजत मिल जाये तो हो सकता है जवाब बहुत जल्दी भी भेज दूँ।

मेरे बारेमें चिन्ताका कोई कारण नहीं। परन्तु मुझे बहुत सावधान रहकर चलना है।

बापूके आशीर्वाद

प्रश्न: एक प्रोफेसर हैं। वे विवाहित हैं। प्रोफेसर ब्रह्मचर्यका पालन करना चाहते हैं। पत्नीको यह मंजूर नहीं है। ऐसी परिस्थितिमें उक्त भाईका कर्त्तव्य क्या है?

उत्तर: यदि विवाहके बाद पतिके मनमें यह विचार आया हो, तभी यह प्रश्न उत्पन्न होता है। धार्मिक विवाहसे मेरा तात्पर्य यह है कि स्त्री-पुरुष संसर्ग केवल सन्ततिके लिए ही हो, विकार-तृप्तिके लिए कदापि नहीं। जो विवाहका ऐसा अर्थ नहीं करते वे एक-दूसरेकी सुविधाका विचार रखेंगे। सहमति न हो तो उसे बलात्कार ही कहा जायेगा।

अब उपर्युक्त प्रश्नको लें। जहाँ ब्रह्मचर्य-पालनकी इच्छा केवल पतिको है, पत्नीको नहीं, वहाँ यदि पति बिलकुल ही निर्विकार हो गया हो, अर्थात 'गीता' के श्लोक

१. ब्रह्मचर्य के पालन की आकांक्षा रखनेवाले एक विवाहित प्रोफेसर के साथ हुई गांधीजी की चर्चाके आधारपर प्रेमाबहन कंटकने एक उपन्यास लिखा था। प्रेमाबहन ने गांधीजी के उत्तर को अपने उपन्यास में सम्मिलित कर लिया। इस उपन्यास का गुजराती अनुवाद **काम अने कामिनी** शीर्षक से प्रकाशित हुआ था।

२/५९ के शब्दोंमें उसे पर-दर्शन हो चुका हो तो सम्भोग असम्भव है। पत्नी पतिकी दशाको समझकर स्वयं निर्विकार हो जायेगी। किन्तु प्रस्तुत प्रश्नमें तो बात प्रयत्न की ही है। जिस प्रयत्नकी कल्पना विवाहके अवसरपर नहीं थी, उस प्रयत्नकी दिशामें तो दोनोंकी सम्मतिसे ही बढ़ा जा सकता है। अर्थात् पत्नीकी सहमतिके बिना पति ब्रह्मचर्यका व्रत नहीं ले सकता। सामान्य संयमका प्रयत्न तो सभी करते हैं। एककी भी इच्छा संग करने की होने पर दूसरेकी भी काफी हदतक स्वीकृति होती है। अथवा थोड़े अनुरोधके बाद हो जाती है। जहाँ ऐसा न हो वहाँ कटुता उत्पन्न हो जाती है। लोगोंके पर्याप्त अनुभवों और उनपर किये गये विचारके आधारपर मैं इस निष्कर्षपर पहुँचा हूँ कि संयम-पालन एक-दूसरेपर ही निर्भर है। इस तरह प्रश्न सदोष है, यह कहना ठीक होगा। जहाँ ब्रह्मचर्य स्वयंसिद्ध है, वहाँ तो प्रश्न ही नहीं उठता। जहाँ विकार होते हुए भी बात प्रयत्न की है, वहाँ प्रश्न करने योग्य कुछ नहीं है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३९३) से। सी० डब्ल्यू० ६८३२ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक

९४. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

सेगाँव, वर्धा
२५ अगस्त, १९३७

भाई घनश्यामदास,

मैं क्या लिखूं? मेरी बुद्धि एक ही तरह काम कर सकती है। मुझे मालूम नहीं कि मैं कैसे मदद दे सकूं? जिस बातमें मैं अनजान हूं उसमें क्या अभिप्राय कायम करूं? इसलिए मैं तो इतना ही कहूंगा कि जो भारतवर्षके लिये हितावह समझा जाय, उसे करो। भले कांग्रेसवालों·का अभिप्राय कैसे भी हो। इतना विश्वास रखो कि जो हितावह होगा उसे कांग्रेसने कबूल करना ही होगी। यदि कबूल नहीं होगा तो कांग्रेसकी प्रतिष्ठा घट जायगी। कांग्रेसके पास प्रतिष्ठाके सिवाय कोई धन नहीं। हां, उसकी प्रतिष्ठा करोड़ों गरीबोंकी सम्मतिपर निर्भर है। इसलिये भारत-वर्षका हितका अर्थ एक ही होता है — करोड़ोंका आर्थिक, बौद्धिक और नैतिक हित। यह मैंने कोई नई बात नहीं लिखी। कोई वक्त ऐसी सिद्धांतिक बातें किसी मित्रसे सुनते हैं तब असर होता है।

मेरी तबियत खासी है ऐसा माना जाय। थोड़ी दुर्बलता है वह निकल जायगी। स्थानांतर करने की आवश्यकता नहीं है। सरहद जाना होगा तो स्थानांतर हो ही जायगा। वहांकी आबोहवा तो अच्छी है ही। फलादि काफी मिलते हैं।

तुम्हारा शरीर अच्छा बन रहा होगा। आपरेशनने खासी मदद दी होगी।

बापुके आशीर्वाद

सी० डब्ल्यू० ७९८३ से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

९५. पत्र : च० राजगोपालाचारीको

सेगाँव, वर्धा
२६ अगस्त, १९३७

प्रिय च० रा०,

पता नहीं आपके पास हिन्दी प्रचार सभाके बारेमें सोचने के लिए कुछ भी समय है या नहीं। उसकी आर्थिक स्थितिके बारेमें राघवन बहुत चिन्तित है। वह उत्तर भारतमें रहनेवालों से पैसोंकी आशा करता है, लगता है इस सम्बन्धमें दक्षिण भारतमें रहनेवालों पर उसका विश्वास नहीं है। और यहाँ उत्तरवालों का भी भरोसा नहीं किया जा सकता। जमनालालजी का खयाल है कि दूसरे प्रान्तोंकी उपेक्षा की गई है। क्या आपको ऐसा लगता है कि आप वहाँ कुछ इकट्ठा कर सकेंगे? मैं यह आशा नहीं करता कि आप इस काममें कुछ ज्यादा समय लगायें; मैं तो इस बातकी ओर आपका ध्यान-भर दिला रहा हूँ।

आशा करता हूँ कि दिनमें आपने एक घंटा आराम करना शुरू कर दिया होगा। वह एक कर्त्तव्य है जिसकी आप उपेक्षा नहीं कर सकते।

सस्नेह,

बापू[1]

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २०६७) से।

१. महादेव देसाई ने पत्र के अन्त में जोड़ी हुई अपनी पंक्तियों में लिखा था : "स्वयं बापूकी स्थिति हमारे लिए बड़ी चिन्ता का कारण बन गई है। डॉ० गिल्डरकी जाँच के अनुसार रक्तचाप २००/१२० था और बाहरी लक्षण भी सुखद नहीं हैं। वे स्वयं आराम करने की कोशिश कर रहे हैं, किन्तु उनके लिए आराम कहाँ?"

९६. पत्र : एडिथ हंटरको

सेगाँव, वर्धा, म० प्रा०
२६ अगस्त, १९३७

प्रिय बहन,

यह रहा मेरा सन्देश। इसका आप जैसा उपयोग करना चाहें, कर सकती हैं।

सच्ची विश्व-शान्तिकी प्राप्ति तबतक असम्भव है जबतक कि आपसी संहार के साधनोंके आविष्कारके लिए और उनका संगठन करके उन्हें अधिक सक्षम बनाने के लिए जितनी चाहिए उससे ज्यादा वैज्ञानिक बारीकी, आत्माकी ज्यादा गहरी व्याकुलता, ज्यादा धैर्य तथा ज्यादा साधन-सम्पत्ति सुलभ नहीं हो जाती। वह शान्ति चाहनेवाले लाखों मनुष्योंके एक बहुत लम्बी-चौड़ी नामावलीपर हस्ताक्षर करने मात्रसे प्राप्त नहीं की जा सकती। लेकिन यदि शान्तिका कोई विज्ञान है और मैं मानता हूँ कि है तो उसे प्राप्त किया जा सकता है और उसका रास्ता यह है कि चंद लोग इस शान्तिके साधनोंकी खोजमें प्राणपणसे जुट जायें। उनके प्रयत्न अन्दरसे होंगे, इसलिए उनमें कोई बाहरी आकर्षण नहीं होगा किन्तु तब उनमें एक धेलेके भी खर्चकी जरूरत नहीं पड़ेगी।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्रीमती एडिथ हंटर
सेक्रेटरी, फ्रेन्ड्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी
४७, विक्टोरिया स्ट्रीट
लन्दन एस० डब्ल्यू० १

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १५३४) से। प्यारेलाल पेपर्स से भी; सौजन्य : प्यारेलाल

९७. पत्र : चन्दन पारेखको

सेगाँव
२६ अगस्त, १९३७

चि० चन्दन,

तेरा स्पष्ट पत्र मिला। अब मुझे और कुछ पूछने को नहीं रह जाता। तू लिखती है कि मैं यह पत्र शंकरको[1] भेज दूँ और काका साहबके सिवाय किसीको न दिखाऊँ, ऐसा क्यों? हमसे कोई अपराध हो गया हो किन्तु फिर यदि हमने अपने अपराधका मार्जन कर लिया तो उसे भले सारा संसार भी जान ले। इसमें शरमाने की भी क्या बात है? फिर, तुझे तो स्त्री-जातिकी सेवा करनी है। तू तो लड़कियोंको . . . के[2] पाशसे बचाना चाहती है, क्योंकि तेरी मान्यताके अनुसार उनका सम्पर्क लड़कियोंके लिए अत्यन्त हानिकारक है। तो जबतक तू अपने साथ हुई उनकी चेष्टाओं का पर्दाफाश नहीं करेगी, तबतक मुझे अपने कार्यमें सफलता कैसे मिलेगी? इसलिए तेरा पत्र चाहे जो व्यक्ति पढ़े, इसमें तुझे किसी भी दृष्टिसे कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए। इसका अर्थ यह भी नहीं है कि यह पत्र चाहे जिसको दिखाया जाये। फिर भी जहाँ-कहीं जरूरत हो, वहाँ बिना संकोचके इस पत्रको दिखाने की छूट होनी चाहिए। तेरे पत्रका यथोचित उपयोग किये बिना मेरी जाँच भी आगे नहीं बढ़ सकती। इसलिए इस पत्रकी नकल अपने पास रखकर मूल पत्र शंकरको भेजूंगा।

तुझे यदि इस मामलेसे निबटने के लिए शक्ति की जरूरत हो, तो तुझे अपने हृदयकी शक्ति बढ़ानी होगी। जो बहनें इस सम्बन्धमें कुछ जानती हों, उनसे विवरण प्राप्त करना होगा। उनमें से कोई ऐसी हो जो मुझे पत्र लिख सके तो उसे प्रोत्साहित करना। जैसा तू लिखती है, यदि इसी प्रकार सचमुच सब-कुछ हुआ हो तो इसमें तेरे शरमाने की तो कोई बात ही नहीं है। सारा दोष . . .का ही माना जायेगा; क्योंकि तेरे पत्रके अनुसार तुझमें विकार उत्पन्न करनेवाले भी तो वे ही थे, और अपने विकारोंकी तृप्तिमें उन्होंने तुझे ऐसा विवश कर दिया कि तूने भी उनकी चेष्टाओं में रस लिया। मेरा ऐसा समझना ठीक है न? मुझे बिना संकोच के पत्र लिखती रहना। तेरे पत्रकी नकल नानाभाईको[3] तो भेज ही रहा हूँ। इससे तू नाराज तो नहीं हो जायेगी? इतना भी न करूँ तो मेरी जाँच आगे नहीं बढ़ सकती।

१. शंकर उर्फ सतीश कालेलकर, चन्दन पारेखका मँगेतर।
२. नाम छोड़ दिया गया है।
३. नृसिंहप्रसाद कालिदास भट्ट।

आशा है, तेरा अध्ययन ठीक चल रहा होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९४३) से; सौजन्य: सतीश द० कालेलकर

९८. पत्र : महादेव देसाईको

२६ अगस्त, १९३७

चि० महादेव,

डाक अभी आई है। आज तो सारी सामग्री यहीं टाइप हो गई, इसलिए तुम्हें कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए। डाकमें डाले जानेवाले पत्रोंकी बात तुमपर छोड़ता हूँ। शिवप्रसाद तो हद करता है। काले कौन है और श्रीधर कौन है? मैं कुछ समझ नहीं पाया। शिवप्रसादको ठीक खोज-बीन करनी चाहिए। कु[सुम] और छोटेलाल में से कोई जानता हो तो पूछना। उसे ये जवाब कैसे मिले?

सवेरेकी डाक मिल गई होगी। फल बराबर लेते ही रहना। नरीमानका तो अब जो होना हो सो हो।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५५५) से।

९९. तार : वाइसरायको

२७ अगस्त, १९३७

यदि अंडमानमें अभी तक भूख-हड़ताल चल रही हो तो क्या हड़तालियोंको निम्नलिखित तार भेजने की कृपा करेंगे? उद्धरण आरम्भ। गुरुदेव टैगोरकी[1] और कार्य-समितिकी[2] सलाहके साथ मैं भी यह सलाह देना चाहता हूँ कि हड़ताल तोड़ दीजिए और भरोसा रखिए कि हम सब आपको राहत दिलाने की ज्यादासे-ज्यादा कोशिश कर रहे हैं। इस राष्ट्रव्यापी प्रार्थनाको मान लेना आपको शोभा देगा। यदि मुझे यह आश्वासन मिल सके कि जिन लोगोंका आतंकवादी तरीकोंमें विश्वास था, वे अब उनमें विश्वास नहीं रखते और

१. देखिए "तार: रवीन्द्रनाथ ठाकुरको", पृ० ५८।
२. देखिए परिशिष्ट ४।

अहिंसाको ही सबसे अच्छा तरीका मानने लगे हैं, तो इससे खुद मुझे बड़ी मदद मिलेगी। मेरी इस प्रार्थनाका आधार कुछ नेताओंका यह कहना है कि नजरबन्दोंने आतंकवादको तिलांजलि दे दी है; लेकिन इसके प्रतिकूल राय भी व्यक्त की गई है। गांधी। उद्धरण समाप्त। यदि आप इसका उत्तर तारसे माँगने की कृपा करें तो मैं आभारी होऊँगा।[1]

गांधी

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७७९३) से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

१००. पत्र : आर० गंगाधरनको

सेगाँव, वर्धा
२७ अगस्त, १९३७

प्रिय मित्र,

इसी महीनेकी १० तारीखके पत्रके लिए धन्यवाद।

विवाह कोई ऐसा काम नहीं है जिसमें कोई व्यक्ति अपनी लड़की या लड़केको उसकी इच्छाके विरुद्ध जहाँ चाहे वहाँ बाँध दे। मेरे बेटेने श्री राजगोपालाचारीकी बेटीसे विवाह किया, क्योंकि वे दोनों एक-दूसरेसे सच्चा प्रेम करते थे। दोनोंको हम लोगोंका आशीर्वाद भी प्राप्त हुआ। यदि आपका विवाह भी इसी तरह हो सके तो मुझे प्रसन्नता होगी। मेरे मनमें इस बारेमें कोई पूर्वग्रह नहीं है, लेकिन कोई तीसरा पक्ष ऐसे विवाह-सम्बन्ध तय नहीं करवा सकता।

मूँछें या शिखा रखना या दोनों रखना मैं अस्वास्थ्यकर नहीं मानता। युगों पुरानी इस रीतिके कारणके बारेमें मैं कुछ नहीं कह सकता, लेकिन जिस रिवाजको बन्द करने का मैं कोई ठोस कारण नहीं बता सकता और साथ ही जो रिवाज

१. वाइसरायने उसी दिन इसका यह उत्तर दिया था : "आपके सन्देशके लिए बहुत-बहुत धन्यवाद। मैं इसे भूख-हड़तालियोंको भेजते हुए सूचित कर रहा हूँ कि वे आपको इसका उत्तर तारसे भेजें।" अंडमानसे मिले २८ अगस्तके तारमें कहा गया था : "आपका सन्देश मैंने खुद आज २८ अगस्तकी सुबह भूख-हड़तालियोंको दे दिया था। हड़तालको खत्म करने के प्रश्नपर विचार-विमर्श करने के लिए उन्होंने समय माँगा है और अभी सायं ७ बजे तक भी वे उसपर विचार कर रहे हैं। आशा है, कल और समाचार भेज सकूँगा।" २९ अगस्तको गांधीजी को निम्नलिखित तार मिला : "कल बहुत रात गये बहुत बड़ी संख्यामें लोगोंने भूख-हड़ताल स्थगित कर दी और उपवास तोड़ दिया। केवल सात व्यक्ति अब भी भूख-हड़तालपर हैं।" गांधीजी के उत्तरके लिए देखिए "तार : अंडमानके कैदियोंको", पृ० ९९।

नैतिकता या स्वच्छताकी भावनाकी दृष्टिसे अरुचिकर नहीं है उसे समाप्त करने में मेरा विश्वास नहीं है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

आर० गंगाधरन
तोप्पिक्काविलकम
वक्कम, डाकखाना – अंजुतेंगु, त्रावणकोर

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

१०१. पत्र : जाकिर हुसैनको

सेगाँव
२७ अगस्त, १९३७

प्रिय जाकिर,

आपका पत्र कल मिला। तदनुसार मैंने राजेन्द्र बाबूको कान्फरेन्समें शामिल होने और मौलवी अब्दुल हक साहबका पता लगाने के लिए तार कर दिया है। यह बड़े दुःखकी बात है कि नागपुर उनके लिए परेशानीका कारण बना। किस वजहसे वे असन्तुष्ट हैं, यह मैं अभी मालूम नहीं कर पाया हूँ। आपने मुजीबको[1] पटना भेजकर ठीक किया। वहाँ जो-कुछ हो उसकी खबर मुझे दीजिएगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

जाकिर हुसैन
जामिया मिलिया
दिल्ली

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

१. प्रो० मुहम्मद मुजीब, जामिया मिलिया इस्लामिया, दिल्लीके उप-कुलपति।

१०२. पत्र : एम० सुब्रह्मण्य राजूको

सेगाँव, वर्धा
२७ अगस्त, १९३७

प्रिय मित्र,

आपके १२ अगस्तके पत्रके लिए धन्यवाद। निश्चय ही शान्तिपूर्वक धरना देने का कार्यक्रम फिरसे जारी किया जा सकता है और जिला मद्यनिषेध समितियोंका दुबारा संगठन किया जा सकता है। मुझे विश्वास है कि जरूरत पड़ने पर ये दोनों बातें अवश्य होंगी।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्रीयुत एम० एस० राजू
मन्त्री, ग्राम कांग्रेस समिति
कारवेटनगर
चित्तूर

मूल अंग्रेजी (जी० एन० ११५१८) से।

१०३. पत्र : राघवदासको

सेगाँव
२७ अगस्त, १९३७

भाई राघवदास,

कलकी बात विचारणीय है। मैं देखता हूं कि हाथ-चक्कियां यों भी मिट रही हैं। हाथ-चक्की भी मिलना मुश्किल होता है। तब भी इस बारेमें ग़ौर करके मुझको लिखो। यू० पी० में और गोरखपुरमें कितनी कल चलती है। कल बंद होने से चाहिये उतना आटा मिल सकता है या नहीं यह सब देख लो। इतना भी ख्याल कर लो कि छोटी कल बंद होने से मंबई इत्यादिमें हजारों टन सफेद आटा तैयार होता है वह तो देहातोंमें नहीं घूस जायगा? क्योंकि उससे छोटी कलोंका आटा अच्छा रहता है।

पत्रकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

१०४. पत्र : रामदास गुलाटीको

२७ अगस्त, १९३७

भाई रामदास,[1]

तुम्हारा खत मिला। काम बढ़ा . . .।[2] यहांके बारेमें ॐ[ओम्]को कह दिया है। प्रदर्शनीके लिये मैं शंकरलाल बेंकरको लिखता हूं। शायद वो ही आ जायेंगे और सब देख लेंगे। मेरी दृष्टिसे खर्च इतना बड़ा लगता है कि देहाती लोग इस तरह कांग्रेस भूला नहीं सकते हैं। यह कांग्रेस देहाती नहीं बनेगी। देहाती कांग्रेसकी कल्पना ही ऐसी है कि दो-चार हजारके खर्चसे ही काम निपट जाय। पानीका जो खर्च होगा वह भी कांग्रेस हो जानेके बाद निरर्थक होगा न? क्या कोई ऐसी कल्पना नहीं है कि जिससे इतने खर्च से हम लोग बच जाय? मुझे कुछ ऐसा प्रतीत होता है कि इतने लोगोंके लिए कांग्रेस शायद शहरमें कम दामसे बने। यदि यह सच है तो कहीं भी कुछ दोष है।

पत्रकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य: प्यारेलाल

१०५. बातचीत : नशाबन्दीके बारेमें[3]

[२८ अगस्त, १९३७ के पूर्व]

गांधीजी: यदि हम अगले तीन वर्षोंमें मद्यनिषेध कर सकें, और यदि हम दुनियाको यह दिखा सकें कि हम प्रान्तोंमें सेनाके बिना काम चला सकते हैं, तो भारत एक ऐसे ख्याति-शिखरपर पहुँच जायेगा जहाँतक वह पहले कभी नहीं पहुँचा था और जहाँ कोई अन्य राष्ट्र भी अभीतक नहीं पहुँचा है। लोगोंको मद्यत्यागी बनाना सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य है और उसमें जितनी भी शक्ति लगाई जायेगी, कभी बेकार नहीं जायेगी। वह एक प्रकारकी सच्ची प्रौढ़ शिक्षा होगी और साथ ही उससे नागरिकोंकी कर देने की क्षमतामें वृद्धि होगी।

[प्रश्न]: भारतको मद्यत्यागी बनाने के सबसे कारगर माध्यम क्या हो सकते हैं?

१. हरिपुरा कांग्रेसके लिए जो निर्माण-कार्य हो रहा था उसकी देखरेखके लिए जिम्मेदार वास्तुकार; देखिए "पत्र: वल्लभभाई पटेलको", २६-९-१९३७।

२. साधन-सूत्रमें कुछ शब्द अस्पष्ट हैं।

३. महादेव देसाईके लिखे "ए स्टुपेंडस टास्क" (एक जबर्दस्त काम) से उद्धृत।

गां० : मैं पहले ही कह चुका हूँ कि मौजूदा आबकारी विभागकी शक्तिका सदुपयोग किया जा सकता है। अबतक तो आबकारी विभागको यही विश्वास नहीं था कि सरकारका सुदूर भविष्यमें भी मद्यनिषेध करनेका सचमुच कोई इरादा है। किन्तु अब वह यह अच्छी तरह जान गया है कि जबतक मद्यनिषेध नहीं होगा, कांग्रेस न तो खुद चैनसे बैठेगी और न दूसरोंको चैनसे बैठने देगी। इसलिए यह विभाग नवीन नीति और कार्यक्रममें खुशीसे सहयोग करेगा। परन्तु शुद्ध सेवा-भावसे काम करनेवाले गैर-सरकारी संगठन इसमें ज्यादा कारगर रहेंगे। देशमें प्रोफेसर और शिक्षक हैं, विद्यार्थी और कालेज हैं। उनसे इस कार्यमें प्रतिदिन दो घंटे देनेकी अपील की जा सकती है। जहाँ शराबी रहते हैं उन इलाकोंमें जाकर उन्हें उन लोगोंसे मिलना-जुलना चाहिए, बातचीत करनी चाहिए, उनको समझाना चाहिए और वहाँ शिक्षाप्रद ढंगसे शान्तिपूर्ण धरना देना चाहिए। चिकित्सकोंसे मैं यह आशा करता हूँ कि वे मिलकर यह सोचें कि लोग शराब क्यों पीते हैं, उनकी शराबकी लत कैसे छुड़ाई जा सकती है; वे शराबके कारगर, हितकर और स्वास्थ्यप्रद विकल्प भी खोजें। फिर हमारी बहनें हैं। असहयोगके दिनोंमें उन्होंने बहुत काम किया था। उस कामको अब और भी बेहतर परिस्थितियोंमें फिरसे शुरू करनेके लिए उन्हें पुन संगठित किया जाना चाहिए। उनको उपस्थित देखकर निश्चय ही लोग अपने-आप [दुकानपर जाते हुए] हिचकेंगे; साथ ही उन्हें [पिछली] कठिनाइयोंका सामना भी नहीं करना पड़ेगा। पहले पुलिस तटस्थकी तरह देखती रहती थी; यही नहीं, वह उन दिनों बदमाशोंकी मदद तक करती थी। अब महिलाएँ अपने इस पवित्र धर्मयुद्धमें उससे सहायताकी आशा कर सकती हैं। फिर, कितने ही नशाबन्दी संगठन हैं। उनमें से ज्यादातर अभी तक जड़ और निष्क्रिय रहे हैं। हमें अब उनसे मिलकर काम करने और इस धर्मयुद्धमें सक्रिय रूपसे भाग लेनेका अनुरोध करना चाहिए। हम एक मद्यनिषेध संघ भी बना सकते हैं; ये सब उसके अधीन नियमित और व्यवस्थित ढंगसे काम कर सकते हैं। आबकारीसे मिलनेवाले राजस्वका उपयोग मद्यनिषेध आन्दोलनके लिए हो सकता है, और वह न्यायोचित भी होगा। कलंकित धनका यह उपयोग वर्ज्य नहीं माना जायेगा; वह तो गन्दे पानीके एक नालेको गंगामें बदलने और पवित्र बनाने-जैसी बात होगी।

और सबसे मुख्य बात यही है कि इस महामारीके केन्द्रोंका पता लगाइए और अपनी सारी शक्ति वहाँ लगा दीजिए। शराबके ठेकेदारों और दुकानदारोंकी सभाएँ आयोजित कीजिए और उन्हें यह समझाइए कि वे अपने शराबके अड्डोंको मनोरंजन-केन्द्रोंमें परिवर्तित करके किस तरह ईमानका पैसा कमा सकते हैं। ये स्थान किस तरह निर्दोष मनोरंजन, बल्कि शिक्षाप्रद मनोरंजनके केन्द्रोंमें परिवर्तित किये जा सकते हैं, यह मैं पहले ही बता चुका हूँ।[१]

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २८-८-१९३७

१. देखिए "चर्चा : नशाबन्दीके बारेमें", पृ० ६४-६५।

१०६. टिप्पणियाँ

शीत-प्रधान देशोंमें भी खतरनाक

मेरी इस उक्तिपर[1] कि शीत-प्रधान देशोंमें शायद शराबकी जरूरत हो, एक मित्रने 'लिकर कंट्रोल' में से जी० ई० जी० कैटलिनका एक दिलचस्प अनुच्छेद मेरे पास भेजा है, जिसमें शराबके गर्मी पैदा करनेवाले असरपर विचार करते हुए कहा गया है:

> **लेकिन तनिक-सा विचार करने पर ही हमें यह मालूम हो जायेगा कि इन परिणामोंका गलत अर्थ भी लगाया जा सकता है। शरीरका तापमान नहीं बदलता, बल्कि उष्ण रक्त शरीरकी सतहपर आ जाता है, जहाँ यदि वह शीतल हो जाये तो वापस आकर सारे शरीरका तापमान घटा देता है। जहाँ ठंडसे बचावकी विशेष आवश्यकता हो वहाँ मद्य न केवल व्यर्थ है बल्कि खतरनाक भी है। फ्रिटजोफ नैनसनने[2] कहा है कि "मुझे जो अनुभव हुए हैं उनसे" शीत-प्रधान उत्तरी ध्रुव-क्षेत्रोंकी यात्रामें "किसी भी तरहके उत्तेजक और नशीले पदार्थका सेवन करने का मैं निश्चित रूपसे विरोधी बन गया हूँ"— शराबके विरुद्ध इसलिए कि उसे पीनेसे ठण्ड खाकर मर जाने का भय है।**

लेकिन हिन्दुस्तानमें तो हमें ऐसे प्रमाणोंकी जरूरत नहीं है। यहाँ तो हमें जितनी उष्णताकी जरूरत है वह सब सूर्य ही दे देता है, इसलिए इस तापमानमें शराब पीने की कोई प्रत्यक्ष और वास्तविक वजह ही नहीं रह जाती है।

व्यर्थकी आशंका

एक उदार मित्रने[3] तीन सालके दौरान कांग्रेसके मद्यनिषेध कार्यक्रमकी सफलता की काफी सराहना करने के बाद शिक्षाके बारेमें आशंका व्यक्त की है:

> **कांग्रेसका शिक्षणका कार्यक्रम कुछ उलझन पैदा कर रहा है। आशंका है कि उच्चतर शिक्षामें गतिरोध उत्पन्न हो जायेगा। मैं आशा करता हूँ कि जबतक कोई सुविचारित योजना तैयार नहीं कर ली जाती और प्रस्तावित परिवर्तनोंकी सूचना काफी पहलेसे नहीं दे दी जाती तबतक जल्दबाजी में कोई कदम नहीं उठाया जायेगा और जनताको कांग्रेसके प्रस्तावोंपर ठीकसे चर्चा करने का मौका दिया जायेगा।**

१. देखिए "सत्य और अहिंसाके विरुद्ध", पृ० ५०-५२।
२. (१८६१-१९३०); नार्वेका उत्तरी ध्रुव-क्षेत्रान्वेषक, जिसे १९२२ में नोबेल पुरस्कार मिला था।
३. जी० ए० नटेसन; देखिए "पत्र: जी० ए० नटेसनको", पृ० ७३।

यह आशंका बिलकुल बेकार है। कार्य-समितिने कोई सामान्य नीति नहीं निर्धारित की है। कांग्रेस काशी विद्यापीठ, जामिया मिलिया, तिलक विद्यापीठ, बिहार विद्यापीठ, गुजरात विद्यापीठ आदि कई राष्ट्रीय शिक्षण-संस्थाओंके अस्तित्वके लिए पूर्णतः उत्तरदायी है; लेकिन इसके अलावा उसने कोई सामान्य घोषणा नहीं की है। मैंने जो लिखा है वह इस विषयकी चर्चामें मेरा निजी योगदान है। वास्तवमें वर्तमान शिक्षा-प्रणालीने देशके युवावर्गको और भारतकी भाषाओं तथा सामान्य संस्कृतिको जो भयंकर क्षति पहुँचाई है उसके बारेमें सोचकर मेरा मन बहुत क्षुब्ध होता है। मैं अपने विचारोंपर दृढ़तासे कायम हूँ। लेकिन मैं यह दावा नहीं करता कि मैंने आम तौरपर कांग्रेसियोंको अपने विचारोंका कायल बना लिया है। तब उन शिक्षा-शास्त्रियोंको कायल करने का तो सवाल ही नहीं उठता जो कांग्रेस-वातावरणके बाहर हैं और जो भारतके विश्वविद्यालयोंमें छाये हुए हैं। उनके विचार बदलना आसान काम नहीं है। मेरे ये मित्र तथा अन्य जो लोग ऐसी आशंका रखते हैं, उन्हें आश्वस्त रहना चाहिए कि सम्बन्धित लोग श्री शास्त्रियरकी दी हुई सलाहका पूरा खयाल रखेंगे और उन लोगोंसे समुचित विचार-विमर्श किये बिना कोई गम्भीर कदम नहीं उठाया जायेगा जिनकी राय शिक्षाके मामलोंमें मूल्यवान है। मैं यह भी बता दूँ कि कई शिक्षा-शास्त्रियोंसे मेरा पत्र-व्यवहार चल रहा है और मुझे उनकी मूल्यवान रायें भी मिल रही हैं तथा मुझे बताने में खुशी है कि उनमें मेरी योजनासे सामान्य तौरपर सहमति व्यक्त की गई है।

साक्षरताके बारेमें क्या है?

शिक्षापर इन स्तम्भोंमें मैं जो विचार व्यक्त करता हूँ उनपर मुझे बहुत-सी रायें मिली हैं। उनमें से कुछ बहुत महत्त्वपूर्ण रायें शायद इन स्तम्भोंमें उद्धृत भी कर सकूँ। फिलहाल तो मैं एक विद्वान् पत्र-लेखककी शिकायतका जवाब देना चाहता हूँ। शिकायतका सम्बन्ध साक्षरताकी अवहेलनासे है और उसके लिए दोषी मुझे माना गया है। मैंने जो-कुछ लिखा है, उसमें ऐसा मानने लायक कुछ भी नहीं है। क्योंकि मैंने क्या यह विचार नहीं रखा है कि मेरी अवधारणाके स्कूलोंमें बच्चों को हर तरहकी शिक्षा, उन्हें जो उद्योग सिखाये जायेंगे, उनके जरिये मिलेगी? उसमें साक्षरता भी शामिल है। मेरी योजनाके अन्तर्गत, हाथ लिखने या कोई आकृति बनाने से पहले औजार उठाना-चलाना सीखेंगे। आँखें जीवनकी अन्य वस्तुओंकी जानकारी हासिल करने के साथ-साथ अक्षरों और शब्दोंकी आकृतियाँ पढ़ना सीख लेंगी और उसी तरह कान भी सहज ही चीजोंके नाम और वाक्योंके अर्थ ग्रहण करते जायेंगे। पूरा प्रशिक्षण बहुत स्वाभाविक रीतिसे और शिक्षार्थीकी सहज ग्रहणशीलताके आधारपर दिया जायेगा और इसलिए वह देश-भरमें सबसे सस्ती और सबसे कम समय लेनेवाली शिक्षा-पद्धति होगी। इसलिए मेरे स्कूलके बच्चे लिखने से कहीं जल्दी पढ़ेंगे। और जब वे लिखेंगे तो उस तरह भद्दा नहीं लिखेंगे जैसा मैं आज भी लिखता हूँ, और जिसके लिए मैं अपने शिक्षकोंका शुक्रगुजार हूँ। वे तो जिस प्रकार अपनी देखी चीजोंकी सही आकृतियाँ बना लेंगे उसी प्रकार सुन्दर अक्षर भी लिखेंगे। यदि

मेरी अवधारणाके स्कूल कभी कायम हुए तो मैं यह कहने की धृष्टता करता हूँ कि जहाँतक कमसे-कम समयमें पढ़ना सिखाने का सम्बन्ध है, वे अत्यन्त उन्नत स्कूलोंसे भी सफलतापूर्वक होड़ लेंगे और यदि यह मान लिया जाये कि लिखने का मतलब आज अधिकांश मामलोंमें जैसा देखा जाता है, उस तरह गलत ढंगसे लिखना नहीं, बल्कि सही और सुन्दर अक्षरोंमें लिखना है तो इसके सम्बन्धमें भी यही बात लागू होगी। पारम्परिक दृष्टिसे देखा जाये तो भले ही यह कहा जा सकता है कि सेगाँवके विद्यार्थी लिखते भी हैं, लेकिन मेरी दृष्टिमें तो वे कागज और स्लेट बरबाद ही करते हैं।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २८-८-१९३७

१०७. सबसे बड़ा काम

चूंकि सन् १९२० यानी असहयोगके प्रारम्भसे ही शराब और मादक पदार्थोंका सम्पूर्ण निषेध कांग्रेसके कार्यक्रमका एक खास अंग रहा है, और हजारों स्त्री-पुरुषोंको इसके लिए जेल तथा शारीरिक कष्ट सहने पड़े हैं, कार्य-समितिकी राय है कि अब कांग्रेसी मन्त्रियोंको इस उद्देश्यकी पूर्तिके लिए यत्न करना चाहिए। कार्य-समिति अपेक्षा करती है कि वे अपने-अपने प्रान्तोंमें तीन वर्षमें शराब और मादक पदार्थोंका पूरा निषेध लागू कर दें। कार्य-समिति अन्य प्रान्तोंके मन्त्रियोंसे और देशी राज्योंसे भी अपील करती है कि वे भी नैतिक और सामाजिक कल्याणके इस कार्यक्रमको हाथमें ले लें।

कार्य-समितिके इस प्रस्तावको[1] मैं उसके अबतक के उतार-चढ़ाव-भरे जीवनका सबसे बड़ा काम समझता हूँ। यों शराबबन्दीकी आवाज उठाने का फैशन तो हमेशा रहा है। पर सन् १९२० में उसे कांग्रेसके रचनात्मक कार्यका एक मुख्य अंग बनाया गया। इसलिए देशके किसी भी हिस्सेमें सत्ता प्राप्त करते ही शराब आदिका पूरा निषेध करने का प्रयत्न करना कांग्रेसके लिए स्वाभाविक ही था। छह प्रान्तोंमें मन्त्रियों को ग्यारह करोड़ रुपयेकी हानि सहने की हिम्मत दिखानी थी। पर कार्य-समितिने अपने वचनकी पूर्ति तथा शराब और अन्य नशीली चीजोंके आदी बने हुए लोगोंके नैतिक और भौतिक कल्याणकी दृष्टिसे यह खतरा भी उठाने का साहस किया है। मुझे पूरी आशा है कि अन्य पाँच प्रान्त भी, जिनमें गैर-कांग्रेसी लोगोंका बहुमत है, इन छह प्रान्तोका अनुकरण करेंगे। उनके लिए शराब आदिका पूरा निषेध करना इन छह प्रान्तोंके मुकाबले कम मुश्किल है। और क्या देशी राज्योंसे यह आशा करना कि वे भी ब्रिटिश भारतके साथ सहयोग करें, बहुत अधिक होगा?

१. यह प्रस्ताव कांग्रेस कार्य-समितिकी वर्धामें १४ से १७ अगस्त तक हुई बैठकमें पारित हुआ था।

मैं जानता हूँ कि बहुत-से लोग ऐसा सोचते हैं कि शराबका पूरा निषेध भला कैसे होगा। उनका खयाल है कि सरकारके लिए आयके लोभको रोकना बड़ा कठिन होगा। उनकी दलील यह है कि नशेबाज तो किसी भी तरह शराब या मादक चीजें प्राप्त कर ही लेंगे, और जब मन्त्रिगण देखेंगे कि इस निषेधका अर्थ तो केवल सरकारी आयकी क्षति है और इससे मादक वस्तुओंके उपयोगमें — चाहे वह गैर-कानूनी ही क्यों न हो — कोई उल्लेखनीय कमी नहीं हुई है तब तो वे फिर पापकी कमाई करने के मोहमें फँस जायेंगे और वह हालत आजसे भी बुरी होगी।

पर मुझे ऐसा कोई भय नहीं है। मुझे तो विश्वास है कि हमारे राष्ट्रमें इस महान् उद्देश्यकी पूर्तिके लिए आवश्यक नैतिक बल जरूर है। अगर शराबबन्दी सचमुच लागू होनी है तो तीन सालके अन्तमें नहीं, बल्कि केवल छह महीनेमें ही हमें शराब वगैरहका अन्त दिखाई देने लगेगा। और जब देश उस वास्तविकताको अपनी आँखों देख लेगा तब शेष प्रान्त और देशी राज्योंको भी उस अटल होनहारके सामने सिर झुकाना होगा।

इसलिए हमें हक है कि हम इस प्रयत्नमें, जो शायद इस शताब्दीका सबसे बड़ा नैतिक आन्दोलन है, न केवल भारत-स्थित यूरोपीयों-सहित हिन्दुस्तानके सभी पक्षों और दलोंसे, बल्कि समस्त संसारके विचारशील लोगोंसे सहानुभूति और सहयोग-की अपेक्षा करें।

इसलिए अगर मद्य-निषेधका मतलब भारतमें महान् नैतिक जागृति है तब तो शराबकी दुकानोंके बन्द होने का अर्थ उस महान् आन्दोलनका अनिवार्य प्रारम्भ-मात्र होना चाहिए जिसके अन्तमें उन तमाम गरीबों और कुछ अमीरोंको भी, जिनके शरीर और आत्मा दोनोंको इन नशीली चीजोंकी लतने तबाह कर दिया है, इससे पूरी तरह विमुख कर देना है। यह कार्य केवल राज्यके प्रयत्नसे सम्पन्न नहीं हो सकता। महादेव देसाई अपनी टिप्पणियोंमें जो-कुछ कह चुके हैं उसके दोहराये जाने का खतरा उठाकर भी यहाँ संक्षेपमें बता देता हूँ कि मेरी रायमें इस सम्बन्धमें हमारा विस्तृत कार्यक्रम क्या होना चाहिए :

१. हर प्रान्तका एक नक्शा बनाया जाये, जिसमें वे स्थान या गाँव दिखाये जायें जहाँ शराब वगैरह नशीली चीजोंकी दुकानें हों।

२. इनके लाइसेंसोंकी मीयाद खत्म होते ही ये शराबकी दुकानोंके रूपमें बन्द कर दी जायें।

३. शराबकी आय, जबतक वह होती रहे, शराबबन्दीके लिए ही पूर्णतः सुरक्षित रख दी जाये।

४. जहाँ-जहाँ सम्भव हो, शराब वगैरहकी दुकानोंकी जगह, इस आशासे कि पुराने ग्राहक इनका उपयोग करते रहेंगे, उपाहार-गृह और क्रीड़ागार बना दिये जायें। अगर शराबके ठेकेदार चाहें तो वे खुद ही यह काम उठा लें।

५. आबकारी विभागके तमाम वर्त्तमान कर्मचारी यह पता लगाने के काममें लगा दिये जायें कि कानूनके खिलाफ कहीं कोई शराबकी भट्टी तो नहीं लगा रहा है, या शराब तो नहीं पी रहा है।

६. शिक्षा-संस्थाओंसे हम प्रार्थना करें कि वे अपने शिक्षकों तथा विद्यार्थियोंका कुछ समय इन कार्योंके लिए दें।

७. बहनोंसे प्रार्थना करें कि वे दल बनाकर उन लोगोंको जाकर समझायें जिन्हें शराब आदि नशीली चीजोंकी लत है।

८. पड़ोसके देशी राज्योंसे बातचीत चलायें कि वे भी हमारे साथ-साथ अपने इलाकेमें शराबबन्दीका काम शुरू कर दें।

९. डाक्टरों, वैद्यों और हकीमोंसे इस सम्बन्धमें निःशुल्क या जरूरी हो तो सशुल्क सलाह लें कि नशेबाजोंका नशा किस तरह छुड़ाया जाये, और उनके लिए कौन से गैर-नशीले पेय या अन्य विकल्प ठीक होंगे।

१०. नशाखोरीके खिलाफ चलाई जानेवाली इस मुहिमके समर्थनमें मद्य-निषेधवादी संस्थाओंकी प्रवृत्तियोंका फिरसे आरम्भ किया जाना।

११. मालिकोंसे अपने मजदूरोंके लिए उपाहार-गृह, क्रीड़ागार और शिक्षा-गृह खुलवाये जायें और इस बातका ध्यान रखा जाये कि इन सबका प्रबन्ध उत्तम हो।

१२. ताड़ी निकालनेवालों से पीने और गुड़ बनाने के लिए ताड़का मीठा रस निकालने का काम लिया जाये। मुझे पता लगा है कि शराबके लिए जो रस निकाला जाता है उससे इस प्रकारका रस निकालने की क्रिया भिन्न है।

यह तो हुआ शराब और मादक द्रव्योंके खिलाफ आन्दोलनके बारेम।

अब सवाल यह है कि इससे राजस्वकी जो हानि होगी — और कुछ प्रान्तोंको तो इस वजहसे एक तिहाई आयसे वंचित होना पड़ेगा — उसकी पूर्ति कैसे की जाये? मैंने तो बगैर किसी हिचकिचाहटके यह सुझाया है कि हम शिक्षापर किये जानेवाले खर्चमें कमी कर दें, क्योंकि प्रायः आबकारीकी आयसे ही इसकी पूर्ति होती है। मैं अब भी यही कहता हूँ कि शिक्षा स्वावलम्बी बनाई जा सकती है। पर इसपर मैं अन्यत्र विचार करूँगा।[1] यह जरूर है कि यदि हम यह मान लें कि वह स्वावलम्बी बनाई जा सकती है, तो भी ऐसा एक दिनमें नहीं हो जायेगा। मौजूदा भार और जिम्मेदारियोंको तो निबाहना ही होगा। इसलिए आयके नये रास्ते ढूंढ़ने पड़ेंगे। मृत्यु, तम्बाकू — जिसमें बीड़ी भी शामिल है — आदि पर कर लगाने की बात कुछ लोगोंने सुझाई ही है। अगर इनपर तत्काल अमल करना असम्भव समझा जाये तो तात्कालिक खर्चकी पूर्तिके लिए थोड़ी मीयादवाले कर्ज लिये जा सकते हैं। पर अगर यह भी सम्भव न हो तो केन्द्रीय सरकारसे प्रार्थना की जा सकती है कि वह अपने फौजी खर्चमें कमी करके उस बचतमें से हर प्रान्तको अनुपातके अनुसार सहायता दे। और केन्द्रीय सरकार इस प्रार्थनाको कभी अस्वीकार नहीं कर सकेगी — खास तौरपर यदि प्रान्तीय सरकारें यह सिद्ध कर दें कि कमसे-कम आन्तरिक शान्ति-सुव्यवस्थाके लिए उन्हें फौजकी जरूरत नहीं है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २८-८-१९३७

१. देखिए "**स्वावलम्बी शिक्षा**", पृ० १३६-३८।

१०८. "काफी जानकारी"

एक प्रोफेसर लिखते हैं:

आपने सुझाव दिया है कि विधान-सभाका कोई सदस्य अंग्रेजीमें अपनेको व्यक्त कर सकता हो तो भी यह घोषित करने का अधिकार रखता है कि उसे उस भाषाकी "काफी" जानकारी नहीं है, और इस तरह अध्यक्ष, जिससे निस्सन्देह सदस्यकी ईमानदारीपर शंका करने की अपेक्षा नहीं की जाती है, उसे हिन्दुस्तानीमें बोलने की अनुमति दे सकता है। आपकी टिप्पणियोंको[1] मैंने बहुत ही ध्यानसे पढ़ा है, पर मैं यह समझ नहीं सका कि सत्यमें पूरी निष्ठा रखने-वाला कोई भी व्यक्ति यह मार्ग कैसे अपना सकता है, और आप ऐसा सुझाव दें, यह बात तो और भी समझमें नहीं आती। अनुच्छेद ८५ स्पष्ट रूपसे ऐसे व्यक्तियोंके बारेमें है जो अपना आशय अंग्रेजीमें इतनी अच्छी तरह व्यक्त करने में अपने को असमर्थ पाते हैं जिससे अंग्रेजी जाननेवाले उसे समझ सकें; अंग्रेजी न जाननेवालों के समझ सकने की बात उसमें नहीं है। इन दूसरे लोगोंको अपना आशय समझा सकने के लिए अंग्रेजीकी 'काफी' जानकारीका कोई सवाल ही पैदा नहीं होता। उसके शब्द इतने साफ हैं कि कोई और अर्थ हो ही नहीं सकता। ऐसी हालतमें किसी व्यक्तिका, केवल इसलिए कि कुछ सदस्य ऐसे हैं जो अंग्रेजी नहीं समझते हैं, यह घोषित करना कि उसे अंग्रेजीकी काफी जानकारी नहीं है, केवल वाक्छल ही लगता है। संयुक्त प्रान्तमें उन्होंने इस कठिनाईसे बचने के लिए 'अंग्रेजी भाषाकी जानकारी होने या काफी जानकारी न होने' का अर्थ हिन्दीकी अपेक्षा अंग्रेजी भाषाकी कम जानकारी किया है। परन्तु मेरा यह खयाल है कि इस सन्दर्भमें आपेक्षिक जानकारीका भी सवाल पैदा नहीं होता। मैं इस बातसे सहमत हूँ कि यह अनुच्छेद बहुत ही अप्रीतिकर है और अवश्य हटना चाहिए। यदि आप यह सुझाव दें कि इसकी जान-बूझकर अवज्ञा की जानी चाहिए, तो वह एक बिलकुल सीधा मार्ग होगा और कमसे-कम अन्तरात्माके धरातलपर उसके खिलाफ कोई आपत्ति नहीं हो सकेगी। पर, आपने जिस मार्गका सुझाव दिया है उसके लिए आपके पास कुछ-न-कुछ औचित्य जरूर रहा होगा, जिसे मैं समझ नहीं सका हूँ। ऐसे और भी लोग

१. तात्पर्य १९३५ के भारत सरकार अधिनियमके खण्ड ८५ की महादेव देसाई द्वारा की गई व्याख्यासे है; देखिए परिशिष्ट ५।

होंगे जो इसी स्थितिमें हों। इसलिए यदि आप इस मुद्देपर 'हरिजन' में प्रकाश डालें तो हम सबको लाभ होगा।

"काफी" का आपेक्षिक अर्थ ही हो सकता है, निरपेक्ष नहीं। एक एम० ए० पास व्यक्ति तक में, उसके सामने जो कार्य है उसके लिए, अंग्रेजीकी जानकारी नाकाफी हो सकती है। उदाहरणके लिए, संयुक्त प्रान्तके एक एम० ए० पास आदमीको निश्चय ही अंग्रेजीका इतना ज्ञान नहीं होगा कि वह अपनी बात हिन्दुस्तानी बोलनेवाले मैट्रिक पास व्यक्तियोंको समझा सके। मेरे अध्यापकोंको अक्सर जिस क्लासको वे पढ़ाते थे अपनी बात समझाने के लिए उससे गुजरातीमें बोलना पड़ता था। कारण यह था कि उन्हें, जिनमें से अधिकतर ग्रेजुएट थे, क्लासको अपनी बात समझाने के लिए अंग्रेजीमें बहुत प्रयत्न करने पड़ते थे। गुजरातीमें बोलते हुए उनकी वाणी धारा-प्रवाह चलती थी, और तब जो ज्ञान हमारे भीतर रिस-रिसकर पहुँचता था उसका पान करते हुए हमारी आँखें चमक उठती थीं। अगर मैं किसी विधान-सभाका अध्यक्ष होऊँ, तो अंग्रेजीके सबसे मँजे हुए वक्ता तक को, यदि उसका यह विश्वास हो कि वह अपने श्रोताओंके लायक अंग्रेजीकी जानकारी नहीं रखता है, निश्चय ही, हिन्दुस्तानीमें बोलने की अनुमति दे दूँ। यह कोई व्याकरण या भाषाके प्रवाहका सवाल नहीं है। यह तो बोधगम्यताका प्रश्न है। उस अनुच्छेदको कोई और अर्थ देना उसके उद्देश्यको ही विफल करना होगा। यदि श्रोता केवल अंग्रेजी ही समझते हैं, कोई और भाषा नहीं समझते, तो अशुद्ध अंग्रेजीमें दिया जानेवाला भाषण भी अंग्रेजीकी काफी जानकारीका सूचक माना जायेगा। भारतके मेरे बहुत-से दौरोंमें इस तरहकी घटनाएँ अक्सर हुई हैं। इन स्तम्भोंमें जो अर्थ दिया गया है वह एक कठिन परिस्थितिसे निबटने का निश्छल प्रयास है। भारतके लिए भारतीय भाषाओंके प्रति मेरे सुविदित पक्षपातका इस व्याख्यासे कोई सम्बन्ध नहीं है। यदि मैं इस व्याख्यासे, जो महादेव देसाईके मेधावी मस्तिष्ककी उपज थी, ईमानदारीसे सहमत न होता तो निश्चय ही उसे इन स्तम्भोंमें जाने नहीं देता और खुशीसे "काफी जानकारी" शब्दोंकी एक न्यायोचित और व्यावहारिक व्याख्याके लिए सरकारके साथ संघर्ष करने की सलाह देता। निस्सन्देह, सही मार्ग तो यही है कि इस अनुच्छेदमें संशोधन किया जाये; पंजाबके मुख्य मन्त्रीने ऐसा सुझाव भी रखा है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २८-८-१९३७

१०९. पत्र : जे० सी० कुमारप्पाको

सेगाँव
२८ अगस्त, १९३७

प्रिय कु[मारप्पा],

पता नहीं राव मगनवाड़ीसे गया या नहीं। उसके बेईमानीके तरीकोंके बारेमें मुझे बहुत-से विवरण मिल रहे हैं। पण्डित हृषीकेश शर्मा आज मेरे साथ घूम रहे थे। ऐसा लगता है कि वे उसके बारेमें बहुत-कुछ जानते हैं। वे कहते हैं कि जिस संस्थामें भी वह गया, उसे उसने धोखा दिया है; लापरवाहीसे खर्च करता रहा। सभी जगह झगड़ा करता रहा है; कहीं भी उसने अच्छा नाम नहीं कमाया। इस सम्बन्धमें वे मद्रास, आन्ध्र, बनारस, पंजाब और अन्य स्थानोंके — जिनके नाम मैं भूल रहा हूँ — उदाहरण देते हैं। वे मुझे बतलाते हैं कि वह विश्वास करने योग्य आदमी नहीं है। उसकी आत्म-स्वीकृतियोंका भी पूरा विश्वास नहीं किया जा सकता। मेरा खयाल है, तुम इस बातका पता लगाओ कि उसका यह गबनका सलसिला, जो लम्बे समय तक चलता रहा, पकड़ा क्यों नहीं जा सका।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०१३१) से।

११०. पत्र : अतुलानन्द चक्रवर्तीको

सेगाँव, वर्धा
२८ अगस्त, १९३७

प्रिय अतुलानन्द,

मुझे आपका पत्र मिला। मुझे खुशी है कि आपकी लड़की खतरेसे बाहर है। मेरी कामना है, इस पत्रके पहुँचने तक उसकी हालत और भी बेहतर हो चुकी हो।

मैं आपका लेख "नॉट बाई पॉलिटिक्स एलोन" (केवल राजनीतिसे ही नहीं) ध्यानपूर्वक पढ़ गया हूँ। मैं अब भी "लीग" की कल्पना नहीं कर पाता — इसकी शाखा-प्रशाखाओंकी तो और भी कम। आपका लेख पढ़कर मैं फिर उसी निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ जो मैंने आपको पहले सुझाया था।[1] विश्लेषण किया जाये तो उसका

१. देखिए खण्ड ६५, पृ० ३५५-५६।

अर्थ यह बनता है कि आप अपने सन्देशका प्रचार अपनी पुस्तकके द्वारा तथा अन्यान्य रचनाओं और भाषणोंके द्वारा करेंगे। यह बिलकुल उचित भी है। आपकी पुस्तककी बिक्री तो आपके कार्यका गौण फल होगी और प्रसंगवशात् शायद इससे आपको अपने भरण-पोषणके लिए पैसा भी मिल जायेगा। आप एक ऐसे व्यक्ति मालूम होते हैं जिसके सामने एक विशिष्ट ध्येय है और जो उस ध्येयकी पूर्तिमें निष्ठापूर्वक जुटा हुआ है। आपकी कल्पनामें जिस "लीग" (संघ) का चित्र है वह बादमें, जब लोग आपके स्वीकृत ध्येयको मान्यता देने लगेंगे तब, अस्तित्वमें आ सकती है। यदि आप अभी "लीग" बना लें तो आपको विफलता ही हाथ लगेगी। आप एक नीरस काममें फँस जायेंगे तथा अपने-आपको कामके बोझसे दबा हुआ पायेंगे और तब अपने ही बनाये हुए जालसे मुक्ति पाने के लिए छटपटायेंगे। जो-कुछ मैं आपको बता रहा हूँ उससे आप देख सकते हैं कि जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, आपमें मेरी दिलचस्पी अवश्य है। इतना ही है कि अभी मैं आपसे पूरी तरह एकमत नहीं हो सकता। हो सकता है, कुछ ऐसी बात हो जो मैं अभी समझ नहीं पाया होऊँ। यदि ऐसा हो तो आप मुझे समझाने का तबतक प्रयत्न करते रहें जबतक कि मैं कायल न हो जाऊँ। मैं जानता हूँ कि कभी-कभी मेरी बुद्धि बहुत जड़ हो जाती है। आपको मेरे साथ धीरजसे काम लेना होगा। आपने जो पुस्तक मुझे दी थी, उसको मैं ढूँढ़ रहा हूँ। यदि उसे खोज पाया तो पढ़ने की कोशिश करूँगा। इसके पहले मैंने उसके पृष्ठोंपर मात्र सरसरी निगाह ही डाली थी।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १४७७) से; सौजन्य : ए० के० सेन

१११. पत्र : द० बा० कालेलकरको

सेगाँव
२८ अगस्त, १९३७

चि० काका,

नीमु (रामदासकी) यहाँ आई है। मैंने उसे हिन्दी सीखने को प्रोत्साहित किया है — इस उद्देश्यसे कि यह हिन्दी-प्रचारका काम करने के योग्य हो जाये, और उस कामसे, सीमित रूपमें, अपनी जीविका भी अर्जित करे। उसके लिए थोड़े-बहुत अंग्रेजीके ज्ञानकी भी आवश्यकता है; क्योंकि मेरा विचार है कि वह दक्षिण जाये। अब वह जल्दीसे-जल्दी हिन्दी सीख लेना चाहती है। इस दृष्टिसे मैंने उसे इलाहाबादका भी सुझाव दिया था, क्योंकि वहाँ तो हिन्दीके सिवाय और कुछ बोला ही नहीं जाता। लेकिन जब वह इलाहाबाद जाने को तैयार हो गई, तो मैं असमंजसमें पड़ गया।

इलाहाबाद ठीक है, लेकिन इलाहाबादमें कहाँ? इसलिए फिर मैंने तो उसे देहरादूनके कन्या-गुरुकुलमें विद्यावतीके पास भेजने का विचार किया। लेकिन फिर रातमें विचार करने लगा कि तुम्हारी राय भी जान लूँ। क्या तुम्हारी रायमें उसे यहाँ सिखाया जा सकता है? या तुम कोई और योजना ज्यादा पसन्द करोगे? विचार करके लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७७०४) से।

११२. बर्बरताका बोलबाला[1]

खेड़ा जिलेके हरिजनोंकी स्थितिके विषयमें श्री नरहरि परीख लिखते हैं:[2]

यदि ऊपरकी बातें सही हों और ये आम हो गई हों तो खेड़ा जिलेकी कांग्रेस कमेटीमें इसका मुकाबला करने की शक्ति आनी चाहिए।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, २९-८-१९३७

११३. एक अन्धविश्वास

काठियावाड़में अन्धविश्वासोंकी कोई सीमा नहीं है। उनमें से एक बछड़ोंको बधिया न करने के बारेमें है। काठियावाड़में यह खास तौरपर देखने में आता है। किसान बैलके बिना तो अपना जीवन-निर्वाह कर ही नहीं सकते। इसलिए वे बैल तो खरीदते हैं, और अपने बछड़ेको भटकने देते हैं या मरने देते हैं, या कसाईके घर जाने देते हैं, और इसको धर्म मानते हैं। इस प्रकारके अन्धविश्वास तभी मिट सकते हैं जब राजा तथा प्रजामें से समझदार लोग जी लगाकर मेहनत करें। दण्डनीतिका उपयोग यदि कहीं क्षम्य माना जा सकता हो, तो शायद ऐसे ही प्रसंगोंमें माना जा सकता है। इस-

१. इसका अंग्रेजी अनुवाद **हरिजन**, ४-९-१९३७ के अंक में प्रकाशित हुआ था।

२. पत्र यहाँ नहीं दिया जा रहा है। इसमें बताया गया था कि यद्यपि स्थानीय बोर्डकी शालाओंमें हरिजनोंके प्रवेशपर कोई प्रतिबन्ध नहीं था बल्कि इसके विपरीत ऐसी व्यवस्था थी कि जो शालाएँ हरिजन बच्चोंको प्रवेश न दें उनकी मान्यता छीन ली जाये तथापि हरिजन अपने बच्चोंको शालाओंमें नहीं भेजते थे। पत्रके अनुसार इसका कारण यह बर्बरतापूर्ण प्रथा थी कि कमजोर वर्गके जो लोग सशक्त वर्गोंके लोगोंकी इच्छाके विरुद्ध कोई काम करते थे तो उन्हें तरह-तरहसे तबाह किया जाता था; उन्हें बाजाब्ता धमकी दी जाती थी और अगर उससे वे नहीं डरते थे तो उनके घर उजाड़ दिये जाते थे। पुलिस भी इस सम्बन्धमें कोई कारगर कार्रवाई नहीं कर पाती थी।

नीतिका उपयोग जब सिर्फ सजा देने के लिए नहीं बल्कि लोगोंकी भलाईके लिए किया जाता है तो उसकी योजना बड़ी सावधानीसे करनी पड़ती है। यहाँ जो लोग अपने बछड़ेको बधिया नहीं करने देते, उन लोगोंसे उनके बछड़े छीन लेना शायद अच्छेसे-अच्छा दण्ड होगा। इसके साथ ऐसी शर्त रखी जा सकती है कि जिसे अपना बछड़ा वापस लेना हो, वह बधिया करने तथा बछड़ेको रखने का खर्च देकर वापस ले जा सकता है। अगर बधिया करने का खर्च और बछड़ेको रखने का प्रतिदिनका खर्च भी पहलेसे निश्चित कर दिया जाये तो प्रजाको कष्ट नहीं होगा; और अन्धविश्वासी लोगोंको भी यह सन्तोष रहेगा कि बधिया करने का पाप स्वयं उन्होंने नहीं किया, राज्यने किया है। राज्यकी ओरसे ऐसे मामलेके लिए प्रचारक तो होने ही चाहिए, जिनका काम इस प्रकारके अन्धविश्वासोंको मिटाना हो। ऐसी बातोंको मैं तो शिक्षाका एक अंग मानता हूँ; क्योंकि जिस ज्ञानका उपयोग लोगोंकी गलत धारणाओंको दूर करने में नहीं होगा, उस ज्ञानकी क्या कीमत हो सकती है?

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, २९-८-१९३७

११४. पत्र : नारणदास गांधीको

सेगाँव, वर्धा
२९ अगस्त, १९३७

चि० नारणदास,

रामेश्वरीदेवीका कार्यक्रम बना लिया हो तो भेजना। उन्हें किस रोज वहाँ पहुँचना चाहिए, किस गाड़ीसे? कितने दिन वहाँ रहना पड़ेगा?

जयन्तीलालकी लिखी दो लकीरें मैंने पढ़ लीं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८५३७ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

११५. पत्र : जेठालाल जी० सम्पतको

सेगाँव, वर्धा
२९ अगस्त, १९३७

भाई जेठालाल,

तुम्हारे दो पत्र मिले हैं। गायके बारेमें मैं कुछ-न-कुछ लिखता तो रहता ही हूँ। तुम्हारे पास गायके दूधका घी बिक्रीके लिए तैयार हो जाये, तब मुझे लिखना। तुम्हारा घी बिकवा देना मुश्किल नहीं होगा; लेकिन ऐसे दो-तीन हुनर हैं जो बहुत आसानीसे सीखे जा सकते हैं और जिन्हें तुम्हें हस्तगत कर लेना चाहिए। अभी सेगाँव आ जाओ, तो ये बातें तुम्हें यहाँ भी सिखाई जा सकती हैं। तुम्हें दो-तीन जगह जाना चाहिए और सीख लेना चाहिए। मशीन तो सेगाँवमें भी है और रोज चलती है। वहाँ घी बनाने के लिए पहले तुम्हें दूध इकट्ठा करना चाहिए। जो गायें दूध देनेवाली होती हैं, उनकी तुम्हें पहचान होनी चाहिए, साथ ही अच्छे साँड़की पहचान भी होनी चाहिए। इन सब बातोंका थोड़ा-बहुत ज्ञान तो तुम्हें जरूर होना चाहिए। पारनेरकरसे[1] कुछ लिखवाकर भेजूंगा; वह यहीं है। मशीन तो तुम्हें लेनी ही पड़ेगी। बेगार वगैरह जिन बातोंके बारेमें तुमने लिखा है उस सम्बन्धमें मैं कुछ कर सकूँगा, ऐसी मेरी धारणा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९८६३) से। सौजन्य: नारायण जेठालाल सम्पत

१. यशवन्त महादेव पारनेरकर।

११६. तार : अण्डमानके कैदियोंको

३० अगस्त, १९३७

तारके लिए धन्यवाद। खुशी है कि सातको छोड़कर शेष सबने उपवास तोड़ दिया। क्या वे सातों लोग उपवास जारी रखने के कारण बताते हैं? मेरा उनसे अनुरोध है कि वे इस बातपर अड़े न रहें और देशको राहत पाने की कोशिश करने का अवसर दें। क्या नजरबन्द अहिंसासे सम्बन्धित मेरे प्रश्नका उत्तर नहीं देंगे?[1]

गांधी

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७७९६) से; सौजन्य: घ० दा० बिड़ला। कांग्रेस बुलेटिन, सं० ६, सितम्बर १९३७; फाइल सं० ४/१५/३७, होम, पॉलिटिकल से भी; सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार

११७. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको

[३१ अगस्त, १९३७][2]

मेरे और अंडमानके कैदियोंके बीच सन्देशोंका[3] जो आदान-प्रदान हुआ सो मैं प्रसन्नतासे प्रकट कर रहा हूँ। आतंकवादी तरीकोंकी और उनके वर्त्तमान रुखकी घोषणाके सम्बन्धमें मेरे अनुरोधपर कैदियोंकी जो समुचित प्रतिक्रिया हुई, उसे देखते हुए हम यह आशा कर सकते हैं कि उन सबको बिना शर्त रिहा कर दिया जायेगा।

१. उसी दिन शामके ७ बजे गांधीजी को कैदियों की ओर से निम्नलिखित उत्तर मिला: "सारे राष्ट्रकी अपील एवं आपके सन्देशसे हम बहुत प्रभावित हैं। हमने भूख-हड़ताल इस आश्वासनपर स्थगित कर दी है कि सारे देशने हमारी माँगोंको उठाया है और हमें पूरी आशा है कि आप हमारी माँगें उचित अवधिके भीतर पूरी करा सकने में सफल हो जायेंगे। हमें प्रसन्नता है कि आपने हमें यह अवसर दिया है कि हम आतंकवादपर अपना दृढ़ मत अभिव्यक्त कर सकें। आपको और राष्ट्रको यह सूचित करते हुए हम गौरव अनुभव करते हैं कि हममें से जो लोग आतंकवादमें विश्वास करते थे अब उनकी उस पर आस्था नहीं रह गई है और उन्हें यह विश्वास हो गया है कि राजनीतिक अस्त्र या सिद्धान्त के रूपमें उसकी कोई उपयोगिता नहीं है। हम घोषणा करते हैं कि उससे हमारे देशका हित होने की अपेक्षा हानि ही होती है।"

२. महादेव देसाईने इसी तारीखको पत्र-व्यवहारकी सामग्री अखबारोंको प्रकाशनार्थ दी थी।

३. देखिए "तार : वाइसरायको", पृ० ८१-२ और पिछला शीर्षक।

उनकी रिहाईके लिए मैंने उचित लोगोंसे अपील की है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि सम्पूर्ण देश इस मामलेमें मेरा साथ देगा।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १-९-१९३७

११८. पत्र : प्रभाशंकर पट्टणीको

सेगाँव, वर्धा
३१ अगस्त, १९३७

सुज्ञ भाईश्री,

आपका पत्र आज शामको मिला। आपके यहाँ आने अथवा नृसिंहप्रसादको भेजने के बारेमें आज तार[1] भेज रहा हूँ। यदि आ सकें तो जरूर आ जाइए। इतना घूम आये, फिर भी लगता है, कोई फायदा नहीं हुआ। मेरे बारेमें चिन्ता करने-जैसी कोई बात नहीं है। हाथको और दिमागको खूब आराम देने की जरूरत है, सो दे रहा हूँ। लेकिन आपके आनेसे, या आप जिसे भी भेजें उसके आने से क्या अड़चन होगी? स्नेहीके आने से कहीं तकलीफ होती है? आपके तार मिलते रहे हैं। उनके जवाब तो देने नहीं थे।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५९५२) से। सी० डब्ल्यू० ३२६९ से भी; सौजन्य : महेश पट्टणी

११९. तार : प्रभाशंकर पट्टणीको

वर्धागंज
३१ अगस्त, १९३७

सर प्रभाशंकर
भावनगर

आपका पत्र मिला। नृसिंहप्रसादको भेज दें। खुद आ जायें तो और भी अच्छा रहे।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५९५३) से। सी० डब्ल्यू० ३२७० से भी; सौजन्य : महेश पट्टणी

१. देखिए अगला शीर्षक।

१२०. पत्र : जे० सी० कुमारप्पाको

सेगाँव
१ सितम्बर, १९३७

प्रिय कु०,

हाँ, संघकी बैठकसे पहले अध्यक्षके विषयमें कुछ भी करने की आवश्यकता नहीं है।[1]

शंकरलालके इस सुझावपर क्या तुमने कुछ सोचा है कि बैठक इस १६ तारीखके बदले २३ तारीखको की जाये?

रावके विषयमें तुम जो कहते हो वह मैं समझता हूँ। यह पत्र पहुँचने तक यदि लापता छोटेलालका कुछ पता न मिले तो अपनी सूझबूझसे काम लो और देखो कि उसे ढूँढ़ने का कोई तरीका निकाल सकते हो या नहीं।

अगर तुमने अभी तक ऐसा न किया हो तो मेरे विचारमें तुम्हें भारतमें हाथसे बननेवाले सभी प्रकारके कागजोंके नमूने उनकी वर्त्तमान मूल्य-दरों-सहित इकट्ठा कर लेने चाहिए।

यदि जोशी यहाँ शनिवारको दिनमें ३ बजे आ सके तो मुझे सुविधा रहेगी, किन्तु यदि सुबह आना अधिक सुविधाजनक हो तो उसे ८ बजे ले आना।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०१३२) से।

१२१. पत्र : महादेव देसाईको

१ सितम्बर, १९३७

चि० महादेव,

"सुख-दु:ख मनमां न आणीए घट साथे रे घड़ीआ" (सुख-दु:खको मनमें न लाओ, इनकी रचना तो शरीरके साथ ही हुई है)। सब बातोंपर विचार करने के बाद मुझे लगता है कि छोटेलालने आत्महत्या नहीं की है, बल्कि कहीं भाग गया है; लेकिन कौन कह सकता है कि क्या हुआ है? तुम मोटरमें मेरे वहाँ आने की उम्मीद करते हो? खोये हुए व्यक्तिकी तलाशके लिए मैं वहाँ आकर क्या करूँगा? बीमारकी खातिर तो मैं अवश्य आ सकता हूँ। यदि छोटेलाल मिल जाये तो उसके

१. श्रीकृष्णदास जाजूने अ० भा० ग्रामोद्योग संघके अध्यक्ष-पदसे त्यागपत्र दे दिया था।

कान खींचने के लिए भी आ सकता हूँ। इसलिए यदि किसी बातपर चर्चा करना जरूरी हो तो तुम्हीं आना। यदि बातचीत करना जरूरी न हो तो तुम भी समय-की बचत कर लेना। इस पत्रके मिलने तक यदि छोटेलाल न आया हो अथवा उसकी कोई खबर न मिली हो तो पुलिस चौकीमें खबर देना। मैयाके यहाँ तलाश करना। छोटेलाल यदि यहाँ आ जाये तो मुझे आश्चर्य नहीं होगा। उसका शरीर किसी कुएँमें तो नहीं पड़ा है, यह अच्छी तरहसे देख लेना।

विशेष खोज-बीन करने की जरूरत नहीं है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५६८) से।

१२२. पत्र : पी० जी० मैथ्यूको

सेगाँव, वर्धा
१ सितम्बर, १९३७

प्रिय मैथ्यू,

मैं पत्रोंमें "सस्नेह" लिखूँ या न लिखूँ, उससे तुम्हारे प्रति मेरे रुखमें कोई फर्क नहीं पड़ता। यह तो इस बातपर निर्भर करता है कि मैं पत्र किस स्थितिमें लिख रहा हूँ। ऐसा कोई बना-बनाया प्रशस्त मार्ग नहीं है जिसपर चलकर मनुष्य नैतिक बन सकता है। नैतिक तो मनुष्य प्रार्थना और तपश्चर्याके द्वारा और मानव-सेवाके लिए जीकर ही बन सकता है। जब वह ऐसा करता है तब उसके पास अनैतिक बनने का समय ही नहीं रहता। बेशक, विवाह तो सबके लिए एक सामान्य वस्तु है। इस प्रवृत्तिपर मैं जिस सीमातक नियन्त्रण कर पाया हूँ वह सिर्फ इसी कारणसे कि मेरी सेवाकी प्रवृत्ति यौन प्रवृत्तिसे बड़ी थी। मैं नहीं कह सकता कि मुझसे जुड़े हुए कितने लोग शुद्ध हैं। इसके अलावा उनके जीवनमें ताक-झाँक करने की भी मेरी कोई इच्छा नहीं है। जबतक उनकी अशुद्धता मेरी आँखोंके सामने बरबस नहीं आ जाती तबतक मैं उनको शुद्ध मानकर ही चलता हूँ। ब्रह्मचारीका विवाह तो उस कार्यसे होता है जिसपर वह प्रेमासक्त हो जाता है। अगर तुम्हें दोनों स्थितियोंमें कोई अन्तर दिखाई देता हो तो मैं अपनी हार स्वीकार करता हूँ।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

१२३. पत्र : एस० अम्बुजम्मालको

सेगाँव, वर्धा
१ सितम्बर, १९३७

चि० अम्बुजम्,[१]

साथमें कमलाकी माँका नाम और पता भेज रहा हूँ। मैं चाहूँगा कि तुम उसे मेरी ओरसे १० रुपये भेज दो या अदा कर दो, जिसमें से ५ रुपये प्रतिमास उसकी बेटीकी ओरसे होगा। यानी ये १० रुपये दो महीनोंके हुए। हर महीने मनीआर्डर करने की झंझटसे बचने के खयालसे तुमसे यह काम करने को कह रहा हूँ। तुम्हारे जरिये भेजने से कुछ खर्च भी बच जायेगा। लेकिन यह राशि तुम्हें मुझसे लेने को तैयार रहना पड़ेगा। सारी राशि मैं तुम्हें एकमुश्त भेजना चाहता हूँ। चूँकि तुम कमलाकी माँसे किसी तरहका सम्बन्ध नहीं रखना चाहती हो, इसलिए तुम्हें यदि यह रुपया भेजने का काम जरा भी अटपटा लगता हो तो मुझे निःसंकोच बता देना। उस हालतमें कोई और व्यवस्था करूँगा। वैसे जल्दी नहीं है।

फलोंकी टोकरी नियमानुसार मिल गई है। फल भेजते समय महँगे और दक्षिणमें न होनेवाले फलोंको न भेजने का ध्यान रखना। क्योंकि ऐसे फल दिल्लीसे मँगवाने में सस्ते पड़ते हैं।

आशा है, पिताजी[२] स्वस्थ होंगे और तुम भी स्वस्थ और प्रसन्न होगी।

स्नेह।

बापू

[पुनश्च :]

पता यह है : श्री लक्ष्मी अम्माल, २९ एम० पी० कोइल स्ट्रीट, मइलापुर, मद्रास

मूल अंग्रेजीसे : अम्बुजम्माल पेपर्स। सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. सम्बोधन हिन्दीमें है।

२. एस० श्रीनिवास अय्यंगार।

१२४. पत्र : जेठालाल जी० सम्पतको

सेगाँव, वर्धा
१ सितम्बर, १९३७

भाई जेठालाल,

साथके पत्र उसी दिन लिखवाये थे जिस दिन मैंने [तुम्हारे नाम] पोस्ट कार्ड लिखवाया था; लेकिन चूँकि पोस्ट कार्ड तैयार था और इन्हें मैं पढ़ नहीं सका था इसलिए इन्हें दो दिन बाद भेजा जा रहा है।

भाई पारनेरकरने जिन विषयोंकी सूची बनाई है वे सब तुम एक महीनेमें सीख लेना। इससे तुम्हारा काम आसान हो जायेगा। अर्थात् मेरी सलाह है कि इसके लिए तुम एक महीना रख लो। सम्भव है कि तुम इतनेमें सन्तुष्ट हो जाओ। एक महीना तो मैंने ज्यादासे-ज्यादा बताया है।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९८६४) से; सौजन्य : नारायण जे० सम्पत

१२५. एक मूक साथीका देहान्त[1]

[१ सितम्बर, १९३७]

साबरमती सत्याग्रहाश्रमके निवासी और सम्बन्धी कुछ इस तरह बिखरे पड़े हैं कि उन्हें एक-दूसरेकी प्रवृत्तिका पता तक नहीं रहता। विशेष रूपसे सम्बन्ध स्थापित करने या उसे यत्नपूर्वक बनाये रखने की प्रथा नहीं डाली गई। सम्बन्ध केवल सेवाका रहा है। कहने का यह आशय नहीं कि सब ऐसा ही करते हैं। किन्तु मूक सेवामें स्व० मगनलाल गांधीके साथ स्पर्धा करनेवाले आश्रमवासी श्री छोटेलाल जैनका आत्मघात इन शब्दोंको लिखते हुए मुझे भीतर-ही-भीतर साल रहा है। छोटेलालकी मूक सेवाको शब्दोंमें नहीं बाँधा जा सकता। ऐसा करना मेरी शक्तिसे बाहर है। जहाँ कोई व्यक्ति छोटेलालका नाम लेता था, वे भाग खड़े होते थे। उनकी मृत्युका समाचार हरएक आश्रमवासी और उनके सगे-सम्बन्धी भी जानना चाहेंगे। मुझे याद नहीं पड़ता कि आश्रममें आने के बाद छोटेलाल कभी किसी सम्बन्धीके पास गये हों और न यही याद आता है कि कोई व्यक्ति उनसे मिलने आश्रममें आया हो। उन लोगोंके नाम-

१. प्यारेलाल द्वारा किया गया इसका अंग्रेजी रूपान्तर **हरिजन**, ११-९-१९३७ के अंकमें छपा था।

ठिकाने भी मुझे मालूम नहीं; तथापि मेरा यह कर्त्तव्य हो जाता है कि मैं उनतक यह खबर पहुँचाऊँ। उनकी खातिर भी मेरे लिए यह टिप्पणी लिखना उचित है, और फिर यदि मैं छोटेलालकी दुःखद मृत्युपर टिप्पणी लिखता हूँ तो भला उससे किसीको ईर्ष्या क्यों होने लगी?

यह मेरा सौभाग्य है कि मुझे कुछ ऐसे योग्य साथी मिले हैं कि उनके बिना मैं अपंग ही हूँ। छोटेलाल मेरे ऐसे ही साथी थे। उनकी बुद्धि तीव्र थी। उन्हें कोई भी काम सौंपते हुए मुझे संकोच नहीं होता था। वे भाषा-शास्त्री भी थे। राजपूतानाके निवासी होनेके कारण उनकी मातृभाषा हिन्दी थी, लेकिन वे गुजराती, मराठी, बंगला, तमिल, संस्कृत और अंग्रेजी भी जानते थे। नई भाषा या नया काम तुरंत हाथमें लेने की उनकी-जैसी शक्ति मैंने और किसीमें नहीं देखी। आश्रमकी स्थापना होने के बाद ही छोटेलाल आश्रममें आकर रहने लगे थे।

रसोई बनाना, पाखाना साफ करना, कातना, बुनना, हिसाब-किताब रखना, अनुवाद करना, चिट्ठी-पत्री लिखना आदि सब कामोंको वे स्वाभाविक ढंगसे करते थे और फबते थे। कहा जा सकता है कि 'वणाटशास्त्र' लिखने में मगनलालका जितना योगदान था उतना ही छोटेलालका भी था। उन्हें कितनी ही जोखिमका काम क्यों न दिया जाये, वे खुशीके साथ उसे करते थे, और जबतक उसे पूरा नहीं कर लेते थे तबतक उन्हें शान्ति नहीं मिलती थी। अविश्रान्त काम करते हुए भी छोटेलाल दूसरा काम हाथमें लेने को हमेशा तैयार रहते थे। उनके शब्दकोशमें 'थकान' के लिए स्थान नहीं था। सेवा करना और दूसरोंसे सेवा-कार्य लेना, उनका मन्त्र था। जब ग्रामोद्योग संघकी स्थापना हुई तब घानीका काम शुरू करनेवाले छोटेलाल, धान दलने-वाले छोटेलाल, और मधुमक्खियाँ पालनेवाले भी छोटेलाल थे। जिस तरह छोटेलालके बिना मैं अपंग-जैसा हो गया हूँ ऐसी ही स्थिति आज उनकी मधुमक्खियोंकी भी होगी। क्योंकि यह टिप्पणी लिखते समय मुझे पता नहीं कि उनके इस परिवारकी अब इतनी सार-सँभाल कौन रखेगा।

छोटेलाल मधुमक्खियोंके पीछे जैसे दीवाने हो गये थे। उनकी शोधमें उन्हें पैरा-टाईफाइड बुखार हो गया जो प्राण-लेवा सिद्ध हुआ। मालूम होता है, उन्हें छह-सात दिन अपनी सेवा कराना भी असह्य लगा। इसलिए ३१ अगस्त, मंगलवारकी रातको ग्यारह और दो बजेके बीच सबको सोता हुआ छोड़कर वे मगनवाड़ीके कुएँमें कूद पड़े। आज पहली तारीखको शामके चार बजे लाश हाथमें आई। मैं सेगाँवमें बैठा हुआ रातके आठ बजे यह लिख रहा हूँ। छोटेलालकी देहका इस समय वर्धामें अग्निदाह हो रहा होगा।

इस आत्मघातके लिए छोटेलालकी भर्त्सना करने की मुझमें हिम्मत नहीं। छोटे-लाल तो वीर पुरुष थे। उनका नाम १९१५ के दिल्ली-षड्यन्त्र केसमें आया था, लेकिन उसमें वे बरी हो गये थे। वे उन दिनों किसी अधिकारीकी हत्या कर स्वयं फाँसीके तख्ते पर चढ़ने का स्वप्न देखते थे। इसी दरमियान वे मेरे लेख पढ़कर उनके पाशमें फँस चुके थे; दक्षिण आफ्रिकाके मेरे जीवनके बारेमें उन्होंने जानकारी प्राप्त कर

ली थी। अपनी तीव्र हिंसक बुद्धिको उन्होंने बदल दिया, और अहिंसाके पुजारी बन गये। जिस तरह साँप केंचुल उतार देता है उसी तरह उन्होंने अपने हिंसक जीवनकी खोल उतारकर फेंक दी थी, तथापि वे अपने मनपर विजय नहीं पा सके थे। उन्हें इस बीमारीमें अपनी सेवा लेना असह्य लगा, और गहरी पैठी हुई हिंसापर उन्होंने अपनी बलि चढ़ा दी। इस आत्मघातका मैं इसके अलावा और कोई अर्थ नहीं लगा सकता।

छोटेलाल मुझे अपना देनदार बनाकर ४५[१] वर्षकी उम्रमें चल बसे। मुझे उनसे बहुत आशाएँ थीं। उनकी अपूर्णता मैं सहन नहीं कर सकता था, इसलिए छोटेलालने मेरे जितने वाग्बाण सहन किये उतने तो शायद मैंने एक-दोको ही कराये होंगे। पर छोटेलालने उन्हें सदैव सहन किया। परन्तु ऐसे वचन सुनाने का मुझे क्या अधिकार था? मुझे तो उन्हें हिन्दू-मुसलमानोंकी लड़ाईमें, या हिन्दू-धर्मसे अस्पृश्यता-रूपी कचरा निकाल बाहर करने में या गोमाताकी सेवामें होम कर उनका कर्ज चुकाना था। ऐसा करने की शक्ति रखनेवाले साथियोंमें छोटेलाल एक ऊँचा स्थान रखते थे। मेरे लिए तो ये सब स्वराज्यकी वेदियाँ हैं।

पर छोटेलालकी मृत्युका रोना रोकर अब क्या करूँ? ऐसे अनेक मूक योद्धाओंकी आवश्यकता होगी। रामराज्य-रूपी स्वराज्य प्राप्त करना आसान नहीं है। छोटेलालके जीवनके इस छोटे-से टुकड़ेका परिचय पाकर दूसरे मूक सेवक आगे आयें।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, ५-९-१९३७

१२६. पत्र : अमृतकौरको[२]

३ सितम्बर, १९३७

दायाँ हाथ अभी भी आराम कर रहा है। तुम्हारा अच्छा-सा तार आया है। मैं पहलेसे ठीक हूँ।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७९९) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६९५५ से भी

१. *हरिजन* में '४२' वर्ष दी गई है।
२. यह पत्र अमृतकौरके नाम मीराबहनके पत्रके पादलेखके रूपमें लिखा गया था।

१२७. पत्र : महादेव देसाईको

सेगाँव
३ सितम्बर, १९३७

चि० महादेव,

आज तो हम सबने आँखें फाड़-फाड़कर मोटरकी राह देखी; 'अब आई, अब आई' कहते रहे, लेकिन वह नहीं आई। अन्ततः मैं इस निष्कर्षपर पहुँचा कि तुम जिस समय यहाँसे रवाना होनेवाले थे मैंने उसी समय तुमसे यह कहा था, इसलिए कदाचित् तुम उस बातको भूल ही गये; खैर कोई हर्ज नहीं। अब कल मोटर या बैलगाड़ी भेजना अथवा लाना। यदि बैलगाड़ी आनेवाली हो तो बेहतर होगा कि खाली ही आये।

गोसीबहन आज दोपहरको दो बजे वर्धा पहुँचना चाहती है। इसलिए उसके लिए मोटर भेजी जानी चाहिए। अभी तो बैलगाड़ीमें चिमनलाल और डाक्टर आये हैं। बैलगाड़ीमें डाक्टर वापस वर्धा जानेवाले हैं। इसलिए यदि दोपहरको बैलगाड़ी फिर आती है तो इससे बैलोंपर जुल्म होगा। उसके बारेमें मैं दामोदरको लिख रहा हूँ, जिससे वह आजके लिए बन्दोबस्त करेगा। इस बारेमें तुम्हें आज कुछ भी नहीं करना है। यह तो मैंने इसलिए लिखा है कि तुम्हें अथवा किसीको यहाँ आना हो तो तुम बँगलेसे गाड़ीके आने का समय जानकर उसमें आ सकते हो।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :][1]

१०-३० बजे हैं। मैं स्नान करने जा रहा हूँ। मैं तुम्हारे आदमी[2] रोक रहा हूँ। भोजनके बाद जवाब लिखकर भेजूंगा।[3]

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५६९) से।

१. यह अंश गांधीजी ने कनु गांधीको बोलकर लिखवाया था।
२. शाहजो।
३. देखिए "पत्र : महादेव देसाईको", पृ० १०९।

१२८. तार : भारत सरकारके गृह-सचिवको

वर्धा

३ सितम्बर, १९३७

गृह सचिव
शिमला

आपके कल ढाई बजे भेजे हुए और यहाँ आज सात बजेके बाद प्राप्त तारके[1] लिए धन्यवाद। कृपया सात कैदियोंको तार भेजिए। उद्धरण। आपके सन्देशकी बहुत कद्र करता हूँ जिससे मुझे समान ध्येयकी प्राप्तिमें भारी सहायता मिल रही है। आपकी 'राहत'की व्याख्याको व्यक्तिगत रूपसे मानता हूँ और वादा करता हूँ कि बन्दी मित्रोंके सक्रिय सहयोगसे उसके पूर्ण फलनके लिए कार्य करूंगा। इस कारण आपसे आग्रह है कि उपवास छोड़ें और शुभ समाचार भेजें। उद्धरण समाप्त।

गांधी

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७७९७ ए०) से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

१. तारीख २-९-१९३७ का तार इस प्रकार था: "उन सात कैदियोंकी भूख-हड़ताल जारी है और वे आपको यह सन्देश भेजते हैं। आरम्भ : आतंकवाद-विषयक आपके तारके लिए धन्यवाद। हमने घोषणा कर दी कि इससे देशका हित नहीं बल्कि अहित होगा। यदि अभी भी जेलों और नजरबन्दी कैम्पोंमें सजा भोग रहे कुछ कैदी और संगठन ऐसे हैं जो आतंकवाद द्वारा भारतकी स्वतन्त्रता-प्राप्तिमें विश्वास रखते हैं तो इस अवसरका लाभ उठाते हुए हम आपके जरिये उनसे अपील करते हैं कि वे हमेशाके लिए इस विचारको छोड़ दें। हम आपसे यह भी प्रार्थना करते हैं कि 'राहत' का स्पष्टीकरण करें। हमारे विचारसे सरकार द्वारा प्रान्तोंमें स्वायत्त शासन लागू करनेके बाद 'राहत' का अर्थ यही है कि सब राजनीतिक कैदियों, नजरबन्दों, सरकारी कैदियों, स्थानबन्धित नजरबन्दोंको रिहा कर दिया जायेगा, निष्कासितोंपर से प्रतिबन्ध हटा लिया जायेगा और सब दमनात्मक कानूनोंको रद कर दिया जायेगा। यदि हमें आपसे इन मामलोंमें आश्वासन मिले तो भूख-हड़ताल तोड़नेको राजी हैं। समाप्त। इसमें उल्लिखित तार आपका २७ अगस्तका सन्देश है। आपका ३० अगस्तका सन्देश तबतक पहुँचाया नहीं गया था।" गांधीजी के २७ और ३० अगस्तके तारोंके लिए देखिए पृ० ८१-२ और ९९। ८ और ११ सितम्बरके तारोंके, लिए देखिए पृ० १२१ और १३८।

१२९. पत्र : महादेव देसाईको

सेगाँव
३ सितम्बर, १९३७

चि० महादेव,

जिस समय तुम्हारा पत्र आया उस समय मेरा स्नान करने का समय था, इसलिए मैं अब नित्यकर्म आदिसे निवृत्त होकर यह पत्र लिख रहा हूँ। शाहजीने आज भोजन यहीं किया है।

मोटरको लेकर आज जो भूल हुई है वह अक्सर हो सकती है। यह तो अच्छा हुआ कि आजका चक्कर इतना महत्त्वपूर्ण न था। मैं यह माने लेता हूँ कि कल मोटर अवश्य आयेगी। जब नीमु[1] रवाना हो जाये तब देवदासको तार कर देना।

गृह[-सचिव]को जो तार[2] भेजा जानेवाला है उसका मसौदा उनके तारके पीछे लिखा हुआ है। चूँकि सब तार तुम्हारे पास हैं इसलिए इसे भी अपने पास सँभालकर रख लेना। इस पत्र-व्यवहारकी एक प्रति मुझे भेज देना।

छोटेलालकी अस्थियाँ अभी तो एक डिब्बेमें रख दो। गंगा तक पहुँचाने की मेरी तनिक भी इच्छा नहीं है; पवनारकी नदीमें भी मैं उन्हें प्रवाहित नहीं करना चाहता और उन्हें फेंकने भी नहीं दूँगा। बा का कहना है, कदाचित् छोटेलालके पिता उसकी अस्थियाँ प्रवाहित करना चाहें; यह सम्भव है। इस दृष्टिसे भी उन्हें डिब्बेमें रखना ठीक होगा।

रामेश्वर[3] तो अत्यन्त सरल व्यक्ति है। धूलियाके दो व्यक्तियोंके बारेमें वह क्या कहता है? गंगाको तो वर्धा ही बुलाना।

खानचन्दके पत्रसे मुझे तो सन्तोष नहीं हुआ। तुमने जो सुना है, वह किशोरलालके[4] सामने रखना।

बाबलोने[5] एनीमा लिया, यह तो एक अच्छी खबर है। भयसे भी अँतड़ियाँ शिथिल हो जाती हैं।

१. रामदास गांधीकी पत्नी निर्मला।
२. देखिए पिछला शीर्षक।
३. रामेश्वरदास पोद्दार।
४. किशोरलाल मशरूवाला।
५. महादेव देसाईके पुत्र नारायण।

तुमने पत्र मोहरबन्द करके भेजे, यह अच्छा ही किया।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५६३) से।

१३० पत्र : बहरामजी खम्भाताको

सेगाँव, वर्धा
३ सितम्बर, १९३७

भाई बहरामजी,

तुम्हारे दोनों पत्र और एक हजार रुपयेके नोट भी मिले हैं। उसमें ५०० रुपये बहन दीनबाई खानकी ओरसे तथा ५०० रुपये तुम्हारी ओरसे हैं। बहन दीनबाईकी रकम मैंने भाई वेरियर एलविनको गोंड लोगोंके लिए कुएँ बनवाने को भेज दी है और तुम्हारी रकमका उपयोग मैं हरिजन भाई-बहनोंके लिए करूँगा। तुम्हारा अथवा दीनबाईका नाम मैं प्रकाशित नहीं करूँगा। दीनबाईको मेरी ओरसे धन्यवाद देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५६०) से। सी० डब्ल्यू० ५०३५ से भी; सौजन्य : तहमीना खम्भाता

१३१. टिप्पणियाँ

रिहाशुदा कैदियोंसे अपील

राजनीतिक हेतुसे की गई हिंसाके लिए गुनहगार साबित होकर जिन्होंने सजा पाई थी उन कैदियोंको रिहा करनेवाले कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलोंको तथा मुक्त हुए कैदियोंको भी मैं बधाई देता हूँ। मैं खुद तो निजी हेतु अथवा राजनीतिक हेतुसे की गई हिंसामें कोई फर्क नहीं देखता। हिंसा करनेवाले के हेतुमें फर्क होने से उस मनुष्यपर पड़नेवाले असरमें कोई फर्क नहीं आता जिसके प्रति हिंसा की जाती है। पर अहिंसापर पूरी-पूरी आस्था रखनेवाले की हैसियतसे, खानगी या सार्वजनिक अपराधके लिए सजा देने की पद्धतिपर मेरा विश्वास नहीं है। इसलिए मन्त्री लोग जिस सिद्धान्त का अनुसरण करके कैदियोंको छोड़ रहे हैं उस सिद्धान्तके अधिक विस्तृत क्षेत्रमें लागू होने का मैं स्वागत करता हूँ। पर मुझे इस बातका पता है कि अहिंसाके सम्बन्धमें मेरे-जैसे चरम विचार वे नहीं रखते। इसलिए हिंसात्मक अपराधोंके लिए सजा पाये हुए कैदियोंको छोड़ने में जो कारण मैं लागू करना चाहूँगा वह कारण उन्होंने

लागू नहीं किया। उनका·हेतु·शुद्ध राजनीतिक था; और यह स्वाभाविक और उचित ही था। मन्त्रियोंका हेतु था उन लोगोंके साथ सम्पर्क स्थापित करना जो भारतकी स्वतन्त्रता हासिल करने के लिए अबतक यह मानते आये हैं कि अमुक प्रकारकी हिंसाका उपयोग करने से काम बनेगा। वे चाहते हैं कि ये लोग हिंसाका मार्ग छोड़ दें और उनकी शक्तिको कांग्रेसके अहिंसा-मार्गमें लगाया जाये। कांग्रेसकी कार्य-पद्धतिका जो अर्थ मैं लगाता हूँ वह अगर सही है, तो 'काकोरी काण्ड' के कैदियोंके छोड़े जाने के समय जो भारी प्रदर्शन लोगोंने किया वह — कमसे-कम कहें तो — एक राजनीतिक भूल थी। उन कामोंको, जो कि कैदियों द्वारा (मैं आशा करता हूँ कि गलत जोशमें) किये कहे जाते हैं, क्या इन प्रदर्शनोंमें शरीक होनेवाले हजारों लोग सही मानते थे ? अगर वे सही मानते थे तो यही कहा जायेगा कि उन्होंने कांग्रेसकी कार्य-पद्धति समझी नहीं; इतना ही नहीं, बल्कि उन्होंने मन्त्रिमण्डलको अटपटी स्थितिमें डाल दिया है, और अपने प्रान्तके लोगोंको पूरी-पूरी स्वतन्त्रता देने के मुश्किल कामको और ज्यादा मुश्किल बना दिया है। मन्त्रियोंके ऐसे कामोंको हमें स्वाभाविक काम समझकर शान्तिके साथ देखते रहना चाहिए। काकोरी काण्डके कैदी कुछ बेवकूफ नहीं हैं। वे योग्य और समझदार आदमी हैं, और स्वदेश-प्रेममें वे किसीसे पीछे नहीं हैं। वे और उनके-जैसे दूसरे तमाम कैदी अगर अनुकरणीय बरताव रखकर, और मूक और निःस्वार्थ सेवा द्वारा कांग्रेसके संगठनको मजबूत बनाने के काममें पूरा योग देकर अपनेको सच्चा कांग्रेसी साबित करेंगे, और इस तरह कांग्रेसी मन्त्रियोंको मदद पहुँचाने में अपनी इस स्वतन्त्रताका उपयोग करेंगे, तो वे दूसरोंकी मुक्तिके लिए भी रास्ता खोल देंगे। कारण, उन्हें यह जानना चाहिए कि बहुत-से मामलोंमें जो यह दिखाई देता है कि कांग्रेसी मन्त्री अपनी इच्छाके अनुसार काम कर सकते हैं उसका कारण यह है कि उन्होंने अपने-अपने प्रान्तके गवर्नरोंके मनमें ऐसा विश्वास पैदा कर दिया है कि उनके हाथमें सौंपे हुए सभी विभागोंको, खासकर कानून और व्यवस्थाके कामको, पुलिस और फौजकी दस्तन्दाजीके बगैर चलाने की शक्ति इन मन्त्रियोंमें है। इस विषयमें जिस क्षण वे अपनी साख गँवा बैठेंगे और उन्हें कानूनके इन दो तथाकथित अंगोंका सहारा लेनेके लिए मजबूर हो जाना पड़ेगा उसी क्षण उनके ऊपर जो विश्वास जमा हुआ है वह ढीला पड़ जायेगा, और उनकी सत्ता करीब-करीब चली जायेगी। जबरदस्ती ऊपरसे थोपी हुई सत्ताको हमेशा पुलिस और फौजकी जरूरत पड़ती है; किन्तु जिस सत्ताका जन्म प्रजाके अन्दरसे होता है उसे इनके उपयोगकी नगण्य अथवा तनिक भी जरूरत नहीं होनी चाहिए।

जुआ और दुराचार

जिन प्रान्तोंमें कांग्रेसका बहुमत है वहाँ लोगोंके अन्दर तरह-तरहकी आशाएँ पैदा हो गई हैं। कुछ आशाएँ उचित हैं और निस्सन्देह पूरी की जायेंगी। कुछ अन्य आशाएँ हैं, जिन्हें पूरा नहीं किया जा सकता। उदाहरणार्थ जो लोग जुएबाजी करते हैं — और दुर्भाग्यवश इसकी आदत बम्बई प्रान्तमें बढ़ रही है — वे सोचते हैं कि जुएबाजीको वैध करार दे दिया जायेगा और बम्बई-भरमें चोरी-छिपे चल रहे जुएके

अड्डोंकी कोई जरूरत नहीं रह जायेगी। मुझे इस बातका भरोसा नहीं है कि जुएको, जो कि एक सीमित रूपमें अभी भी वैध है, यदि सार्वत्रिक रूपसे वैध करार दे दिया जायेगा तो गैरकानूनी अड्डे नहीं रह जायेंगे। उदाहरणके लिए यह सुझाव दिया गया है कि टर्फ क्लबको, जिसको घुड़दौड़के जुएपर एकाधिकार प्राप्त है, एक अतिरिक्त प्रवेश-द्वार खोलने की अनुमति दे दी जाये, ताकि गरीब लोगोंके लिए जुआ खेलना और सरल हो जाये। लालच यह दिया गया है कि इससे सरकारको और अधिक राजस्वकी प्राप्ति होगी। इसी प्रकारका दूसरा सुझाव है कि वेश्यालयोंका नियमन किया जाये और उनको लाइसेंस दिया जाये। इस प्रकारके सभी मामलोंकी भाँति ही इस मामलेमें भी तर्क यह दिया गया है कि वैध किया जाये या नहीं, ये दुराचार और दुर्व्यसन तो जारी ही रहेंगे, और इसलिए यही बेहतर है कि वेश्यावृत्तिको वैध करार दे दिया जाये और वेश्यालयोंमें जानेवालों के लिए उन्हें सुरक्षित बना दिया जाये। मैं आशा करता हूँ कि मन्त्रिगण इस जालमें नहीं फँसेंगे। वेश्यालयोंसे निपटने का सही तरीका यह है कि औरतें दोतरफा प्रचार-कार्य करें: (क) उन स्त्रियोंमें प्रचारका काम करें जो जीविकोपार्जनके लिए अपना सम्मान बेचती हैं, और (ख) पुरुषोंके बीच प्रचार-कार्य करें और उन्हें शर्मिन्दा करें, ताकि वे अपनी बहनोंके साथ बेहतर व्यवहार करें, उन बहनोंके साथ जिन्हें वे मूढ़तावश या ढिठाईके कारण अबला कहते हैं। मुझे याद है कि बरसों पहले, १९ वीं सदीके अन्तिम दशकके प्रारम्भमें मुक्ति सेना (साल्वेशन आर्मी) के कार्यकर्त्ता अपनी जानको जोखिममें डालकर बम्बईकी उन बदनाम सड़कोंके कोनोंपर धरना दिया करते थे जिनमें वेश्यालयोंकी भरमार थी। कोई कारण नहीं कि ऐसी ही कोई चीज एक बड़े पैमानेपर क्यों नहीं संगठित की जा सकती। घुड़दौड़के मैदानोंमें जुआ खेलने के रिवाजके बारेमें मेरा खयाल है कि अन्य अनेक चीजोंकी तरह यह भी पश्चिमसे आई हुई एक बुराई है और अगर मेरा बस चलता तो घुड़दौड़के जुएको जो-कुछ कानूनी संरक्षण प्राप्त है उसको भी मैं वापस ले लेता। कांग्रेसका कार्यक्रम आत्मशुद्धिका कार्यक्रम है, जैसा कि १९२० के प्रस्तावमें[१] स्पष्ट शब्दोंमें कहा गया है। इसलिए दुर्व्यसनोंसे प्राप्त आयसे कांग्रेसका कोई वास्ता नहीं हो सकता। इसलिए मन्त्रियोंको चाहिए कि उन्हें जो सत्ता प्राप्त हुई है उसका उपयोग वे जनताको सही दिशामें प्रशिक्षित करने के लिए करें और ऊँचे वर्गमें जुएबाजीको रोकें। यह आशा करना निरर्थक है कि अविवेकी जनता तथाकथित ऊँचे लोगोंकी बुरी आदतोंकी नकल नहीं करेगी। मैंने लोगोंको यह तर्क देते हुए सुना है कि घोड़ोंकी अच्छी नस्ल तैयार करने के लिए घुड़दौड़ खेलना जरूरी है। इसमें सचाई हो सकती है। क्या बिना जुएके घुड़दौड़ खेलना सम्भव नहीं है? या घोड़ोंकी अच्छी नस्ल तैयार करने में जुएसे भी मदद मिलती है?

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ४-९-१९३७

१. देखिए खण्ड १९, परिशिष्ट १।

१३२. पदग्रहणसे मेरा आशय

श्री शंकरराव देव[1] लिखते हैं:

'हरिजन' के पिछले अंकमें "निर्देश-पत्र नहीं"[2] शीर्षकसे प्रकाशित टिप्पणीके दूसरे अनुच्छेदमें आपने लिखा है: "मेरे लिए, कांग्रेस घोषणा-पत्र और कांग्रेस प्रस्तावोंके अनुसार भी, मन्त्रिपद स्वीकार करने का एक विशेष अर्थ है। मन्त्रिपद स्वीकार करने के अपने उस अर्थको यदि मैं मन्त्रियों और जनताके आगे न रखूँ, तो वह गलत होगा।" मैंने आपका आशय यह समझा है कि पद-ग्रहणके पक्षमें आप इसलिए हैं कि इससे जनताकी सेवा करने तथा रचनात्मक कार्यक्रमके जरिये कांग्रेसकी शक्ति बढ़ाने का मौका मिलेगा। लेकिन मैं समझता हूँ कि इस सम्बन्धमें अगर आप अपना आशय जरा विस्तारसे समझा दें तो ज्यादा अच्छा होगा।

ठीक हो या गलत, लेकिन १९२० से कांग्रेसके-से विचार रखनेवाले लाखों-करोड़ों हिन्दुस्तानियोंका यह दृढ़ मत रहा है कि अंग्रेजी हुकूमत हिन्दुस्तानके लिए कुल मिलाकर अभिशाप-रूप ही सिद्ध हुई है। और इस हुकूमतके टिके रहने का कारण अंग्रेजी फौजें तो हैं ही, पर साथ ही इसके लिए विधानमण्डल, उपाधियाँ, अदालतें, शिक्षा-संस्थाएँ और वित्त-नीति इत्यादि भी उतने ही जिम्मेदार हैं। कांग्रेस आखिर इस नतीजेपर पहुँची कि हमें बन्दूकोंसे डरना नहीं चाहिए; बल्कि जनताको उस सुसंगठित हिंसाका — जिसकी कि अंग्रेजी बन्दूकें एक नग्न प्रतीक हैं, प्रतिकार अपनी सुसंगठित अहिंसा द्वारा करना चाहिए; और इन विधानमण्डलों आदि अन्य चीजोंका प्रतिकार उनके प्रति असहयोग द्वारा करना चाहिए। असहयोगकी उपर्युक्त योजनाका एक मजबूत और प्रभावकारी क्रियात्मक पहलू भी था, जिसे लोग रचनात्मक कार्य कहते थे। राष्ट्र जिस हदतक १९२० में निर्धारित कार्यक्रमको अंजाम देने में सफल हुआ, उसी हदतक वह अपने मुख्य ध्येयकी प्राप्तिमें भी सफल हुआ।

यह नीति कभी बदली नहीं है। इसकी शर्तें भी कांग्रेसने उठाई नहीं हैं। मेरे विचारमें, तबसे जितने भी प्रस्ताव कांग्रेसने मंजूर किये हैं, उनके पीछे यदि १९२० वाली मनोवृत्ति ही कायम रही है तो वे इस मूलभूत नीतिके वर्जक नहीं बल्कि साधक हैं।

१९२० की नीतिका मुख्य आधार राष्ट्रकी सुसंगठित अहिंसा थी। हमने देखा कि अंग्रेजी शासन-प्रणाली पत्थरकी तरह जड़ ही नहीं, बल्कि राक्षसी भी है; परन्तु उसके पीछे काम करनेवाले स्त्री-पुरुष ऐसे नहीं हैं। इसलिए हमारी अहिंसाका उद्देश्य

१. अध्यक्ष, महाराष्ट्र प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी।

२. देखिए पृ० ६६-७।

इस प्रणालीको चलानेवालों का नाश करना नहीं, बल्कि उनके दिलको बदलना था — चाहे वे अपना दिल खुशीसे बदलें या मजबूर होकर। अगर न चाहते हुए भी उन्हें यह देखना पड़ा कि हमारी अहिंसाके कारण उनकी बन्दूकें, तोपें और वे तमाम चीजें, जिनका उन्होंने अपनी सत्ताको मजबूत करने के लिए निर्माण किया है, बेकार हो गई हैं, तो वे सिवा इसके कर ही क्या सकेंगे कि अटल नियतिके सामने अपना सिर झुकाकर या तो यहाँसे चले जायें, या अगर रहना ही पसन्द करें तो हमारी शर्तोंपर, यानी हमपर अपनी इच्छाएँ थोपने के लिए हमारे शासकोंकी तरह नहीं, बल्कि हमसे सहयोग करने के लिए मित्रोंकी तरह रहें।

कांग्रेसी अगर इस मनोवृत्तिको लेकर विधानमण्डलोंमें गये हैं और पद-ग्रहण किया है, और अगर अंग्रेज शासक भी कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलोंको अनिश्चित कालतक बरदाश्त करते रहें, तो समझना चाहिए कि कांग्रेस इस अधिनियमको[1] तोड़ने और सम्पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त करने के मार्गमें काफी हदतक सफल हो जायेगी। क्योंकि अगर मेरी बताई शर्तोंपर काफी अरसेतक मन्त्रिमण्डल कायम रहे, तो निश्चय ही कांग्रेसकी शक्ति दिन-दिन बढ़ती ही जायेगी और अन्तम वह ऐसी दुर्निवार हो जायेगी कि उसके मार्गमें कोई खड़ा नहीं हो सकेगा। पर इस परिणतिकी सबसे पहली और अनिवार्य शर्त होगी सम्पूर्ण जनता द्वारा अहिंसाका स्वेच्छापूर्वक पालन। इसके मानी हैं समस्त जातियोंके बीच सम्पूर्ण मित्रता और सहयोग; अस्पृश्यताका सम्पूर्ण नाश; नशेबाजों द्वारा अफीम और शराबका खुद-ब-खुद परित्याग; स्त्रियोंको उनके समस्त सामाजिक अधिकारोंका दिया जाना; गाँवोंमें रहनेवाले करोड़ों श्रम-जीवियोंका उत्तरोत्तर कष्ट-निवारण; निःशुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा — आजकलकी तरह नाममात्रकी शिक्षा नहीं, बल्कि वैसी सच्ची शिक्षा जैसी कि मैंने बताने का साहस किया है; प्रौढ़ शिक्षा द्वारा ऐसे अन्धविश्वासोंका क्रमशः निर्मूलन जो निश्चित रूपसे हानिकर सिद्ध हो चुके हैं; माध्यमिक शिक्षामें इस दृष्टिसे आमूल परिवर्तन कि वह मुट्ठी-भर मध्यम वर्गकी नहीं, बल्कि करोड़ों ग्रामवासियोंकी जरूरतोंकी पूर्ति कर सके; न्याय-विभागमें भी ऐसा मौलिक परिवर्तन जिससे कम खर्चमें शुद्ध न्याय मिल सके; और जेलोंका भी सुधार-गृहमें परिवर्तन, और वहाँ सजाके लिए नहीं बल्कि सम्पूर्ण शिक्षा पाने के लिए उन लोगोंका भेजा जाना जिनको अबतक हम गलतीसे अपराधी कहते आये हैं, परन्तु दरअसल जिनके दिमागमें अस्थायी तौर पर खराबी पैदा हो जाती है।

इस लम्बी-चौड़ी कार्य-योजनाको देखकर कोई डरे नहीं। अगर हम निश्चय कर लें तो मेरी बताई इस योजनाके हरएक हिस्सेपर बगैर किसी रुकावटके हम आज ही से अमल शुरू कर सकते हैं।

पद-ग्रहणकी सलाह देते समय तक मैंने अधिनियमको ध्यानसे पढ़ा नहीं था। लेकिन उसके बादसे प्रोफेसर के० टी० शाहकी लिखी हुई 'प्रॉविंशियल ऑटोनामी'

१. १९३५का गवर्नमेंट ऑफ इंडिया ऐक्ट।

(प्रान्तीय स्वायत्त शासन) पुस्तकका मैं ध्यानपूर्वक अध्ययन कर रहा हूँ। इस पुस्तकमें यथार्थवादी दृष्टिसे नये विधानकी जोरदार निन्दा की गई है, जो सही है। मगर कांग्रेसके इस तीन महीनेके संयमने सारे वातावरणको बदल दिया है। मुझे ऐसी एक भी बात इस कानूनमें नजर नहीं आती जो मन्त्रियों द्वारा मेरा सुझाया कार्यक्रम शुरू करने में बाधक हो। कानूनमें जिन विशेष अधिकारों और संरक्षणोंका जिक्र है उनपर अमल करने का मौका तभी आ सकता है जबकि देशमें हिंसा हो, या अल्पसंख्यकों और तथाकथित बहुसंख्यक जातिके बीच संघर्ष पैदा हो, जो हिंसाका दूसरा नाम है।

इस कानूनकी हरएक धारामें मुझे यह दिखाई देता है कि इसके बनानेवालों के दिलोंमें हिन्दुस्तानकी अपना शासन खुद करने की योग्यता में घोर अविश्वास और अंग्रेजी हुकूमतको चिरस्थायी बनाने की इच्छा है। मगर साथ ही इसके निर्माताओंने जनताको अंग्रेजोंके पक्षमें लाने के लिए एक साहसपूर्ण प्रयोग किया है, और इसमें इस बातकी गुंजाइश रखी है कि अगर सफल न हुए तो जनताकी ब्रिटिश प्रभुत्वकी समाप्तिकी इच्छाको दार्शनिक भावसे भी स्वीकार कर लेंगे। इन लोगोंका दिल बदलने की दृष्टिसे ही कांग्रेसने विधानमण्डलोंमें जाना स्वीकार किया है; और अगर वह अहिंसा, असहयोग और आत्मशुद्धिकी सच्ची भावनासे काम करती रही तो मुझे निश्चय है कि वह जरूर कामयाब होगी।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ४-९-१९३७

१३३. राष्ट्रीय तिरंगा[1]

तिरंगे राष्ट्रीय झंडेके बारेमें कानपुरसे एक सज्जन लिखते हैं:

राष्ट्रपति पण्डित जवाहरलालजी की आज्ञानुसार हमारे नगरमें भी पहली अगस्तको राष्ट्रीय झंडा फहराया गया था। उस दिन तथा उसके बाद कुछ दुःखद दृश्य देखने में आये। इसीसे मैं आपको यह पत्र लिख रहा हूँ।

जो झंडा उस दिन फहराया गया था उसे लोगोंने चाहे जिस तरहका अपनी पसन्दके माफिक बना लिया था। आकार-प्रकार या रंग एक-सरीखे थे ही नहीं। कुछ झंडे चौरस थे तो कुछ लम्बे आकारके। कुछ झंडोंका रंग हलका था, तो कुछका खूब गहरा। कुछमें चरखेका निशान था और कुछमें नहीं।

आज पन्द्रह दिन ही हुए हैं, पर इन झंडोंकी बहुत बुरी दशा हो गई है। रंग कच्चा होनेसे सफेद हिस्सा तो उनका दीखता ही नहीं; वह कुछ

१. यह मूल हिन्दी लेख कुछ मामूली हेर-फेरके साथ **हरिजन**, ४-९-१९३७ के अंकमें प्रकाशित हुआ था।

हरा और कुछ पीला हो गया है। कुछ झंडे तो मैले चीथड़े-से लगते हैं। खादी-भण्डारसे लाये हुए झंडोंकी भी यही दशा हुई है।

झंडेका प्रश्न दिन-दिन महत्त्वपूर्ण होता जा रहा है, इसलिए प्रबन्ध ऐसा होना चाहिए कि एक-से आकार और रंगके झंडोंका ही उपयोग किया जाये। रंग पक्का होना चाहिए, ताकि सब ऋतुओंमें वह एक-सा बना रह सके।

मुझे तो ऐसा लगता है कि झंडे एक ही केन्द्रसे तैयार कराये जायें और वहींसे बेचे जायें। राष्ट्रीय झंडे खानगी रीतिसे न बन सकें, ऐसा प्रचार करना चाहिए।

इस पत्रमें जैसा लिखा है यदि वैसा हुआ हो तो यह शोचनीय बात है। यह झंडा आज सत्रह सालसे काममें लाया जाता है। किसी भी राष्ट्रके झंडेका मूल्य तभी है जब वह एक निश्चित नियमके अनुसार तैयार किया गया हो। यह नियम प्रत्येक वस्तुके साथ लागू होता है। बाजारमें हम कोई भी चीज खरीदने जाते हैं तो उसका रंग, रूप और आकार देखकर उसे खरीदते हैं, और जैसी चीज हमें चाहिए वैसी मिलने पर ही उसके ऊपर हम लोग पैसा खर्च करते हैं। तो फिर जिस राष्ट्रीय झंडेकी खातिर लोग प्राण तक अर्पण कर देते हैं, उसकी कितनी अधिक कीमत होगी?[१] राष्ट्रीय झंडा राष्ट्रके आत्म-सम्मान और गौरवका, उसके आदर्शों और आकांक्षाओंका प्रतीक है। अतः उसे ऐसा होना चाहिए कि सिक्कोंकी तरह उसे भी सरलतासे पहचाना जा सके। उसको उचित पवित्रता प्रदान करने के लिए यह जरूरी है कि उसे निश्चित मापदण्डके अनुरूप बनाया जाये। यदि उसकी इतनी अधिक कीमत है तो उसे हम चीथड़ोंका या अपनी मरजीके माफिक न बनायें। ऐसा करके तो हम अपने झंडेका अपमान करते हैं। परन्तु एक-सरीखे झंडे मिलेंगे कहाँसे? कानपुरके इन सज्जनने जो तजवीज सुझाई है वह ठीक है। किसी एक ही जगह बनवाने से झंडे एक-सरीखे बन सकेंगे। जैसे टकसालमें सिक्के बनते हैं अथवा जैसे कारखानोंमें अनेक चीजें बनती हैं उसी तरह अगर ये झंडे लाखोंकी संख्यामें बनवाये जायें, तभी सस्ते और एकसमान बन सकते हैं। यह काम चरखा संघ और कांग्रेस कार्यालयकी मारफत ही हो सकता है, क्योंकि शुद्ध नमूना और रंग वगैराका वर्ण वहींसे निकल सकता है।

हरिजनसेवक, ११-९-१९३७, और **हरिजन**, ४-९-१९३७

१. इसके आगेके तीन वाक्य **हरिजन**से लिये गये हैं।

१३४. पत्र : सरस्वतीको

सेगाँव, वर्धा
४ सितम्बर, १९३७

चि० सरस्वती,

तुम्हारा खत मिला। अमतुल सलाम बहिन आ गई हैं। सब खबरें सुनीं। अब तो तुम्हारे एकध्यान होकर अभ्यास पूर्ण करना है। उसके बाद आरामसे यहां आ सकेगी। लेकिन यह बात हुई दो वर्षके बाद की। देखें ईश्वरकी क्या इच्छा है? मुझको बरोबर खत लिखा करो। यह कितनी आश्चर्य की बात है कि जो यहां बिमार पडते है वह त्रावणकोर जाय, लेकिन त्रावणकोरमें इतने बिमार रहते हैं उनका क्या? अगर त्रावणकोरमें ऐसे चतुर वैद्य रहते है कि जो महारोग भी मिटा सकते है, फिर भी त्रावणकोरमें रोगी क्यों होने चाहिये? ऐसे प्रश्नोंका उत्तर तुमारी शालामें सीखाए जाते है क्या?

अमतुल सलाम बहिन पूछती है कि मैंने तुम्हारी जन्मतिथिके आशीर्वाद भेजे थे या नहीं? मुझे ठीक स्मरण तो नहीं है। अगर नहीं भेजे है तो अब चोगुना सूदके साथ ले लो। सूद का अर्थ है ब्याज। दोनों में से एक शब्द तो जानोगी, या दोनों जानोगी।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१६४) से। सी० डब्ल्यू० ३४३७ से भी; सौजन्य : कान्तिलाल गांधी

१३५. पत्र : हीरालाल शर्माको

सेगाँव, वर्धा
४ सितम्बर, १९३७

चि० शर्मा,

तुमारा खत मिला। अम्तुल सलाम यहां पहुंच गई है। रामदासके साथ तुमारा जाना असम्भवित-सा था क्योंकि रामदास ही मि० केलनबैक के साथ गया। देखें अभी क्या होता है? . . .[1] मुझे बताओ कि किस तरहके दर्दी [मरीज़] रखते हो? वहां फल मिलते हैं? सब्जी मिलती है? गायका दूध मिलता है?

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० २६४

१३६. टिप्पणियाँ

हरिपुरा कांग्रेस स्वागत-समिति

दरबार साहबका[2] अध्यक्ष चुना जाना और तीन बहनोंका उपाध्यक्ष तथा एक बहनका स्वयंसेविकाओंका सेनापति नियुक्त किया जाना, ये सब बातें शुभ संकेत हैं। स्वागत-समितिमें सदस्य भी काफी हैं। काम ठीक समयपर शुरू हुआ है। यदि सभी सदस्योंकी नियुक्ति केवल कामके लिए ही हुई हो, नामके लिए नहीं तो आगामी कांग्रेस सबसे अच्छी और अत्यन्त सादगीपूर्ण होनी चाहिए। बहुत बार ऐसा होता है कि सब काम ठीक तरहसे सम्पन्न होता है और वह भी अनायास ही — किसी विशेष व्यवस्थाके कारण नहीं। कांग्रेस-अधिवेशन-जैसे महान् कार्यमें ईश्वरका हाथ रहता ही है और मनुष्यसे जिस कार्यके बिगड़ने की आशंका होती है वह भी सुधर जाता है। आगामी कांग्रेसकी व्यवस्था भी इस तरह की जानी चाहिए कि अपने वश-भर कोई दुर्घटना न होने पाये और सब-कुछ अच्छी तरहसे और पूर्व-निर्धारित कार्यक्रमके मुताबिक सम्पन्न हो।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, ५-९-१९३७

१. साधन-सूत्रमें यहाँ कुछ अंश छूटा हुआ है।

२. दरबार गोपालदास, ढसाके भूतपूर्व शासक, जिन्हें असहयोग आन्दोलनके दिनोंमें गद्दीसे उतार दिया गया था।

१३७. पत्र : ग्लेडिस ओवेनको

सेगाँव, वर्धा
५ सितम्बर, १९३७

प्रिय ग्लेडिस,

चीनी-आन्दोलनमें जी-जानसे जुट जाने का तुम्हारा विचार मुझे पसन्द आया। परन्तु मेरी समझमें नहीं आता कि मैं कैसे मार्ग-दर्शन कर सकता हूँ। कोई बाह्य शक्ति तुम्हारा मार्ग-दर्शन नहीं कर सकती। मार्ग-दर्शन और उस मार्गपर चलने की शक्ति तो तुम्हें अपने अन्तरसे ही मिल सकती है।

मुझे अभी म्यूरियलका[1] पत्र मिला है। वह भी चाहती है कि मैं चीनके लिए कुछ करूँ। किन्तु मुझे कबूलना पड़ेगा कि मैं तो मानों अन्धकारमें टटोल रहा हूँ। चीन जापानके साथ उसीके तरीकेसे युद्ध करना चाहता है। और ऐसे मामलेमें मैं अपनेको बिलकुल किंकर्त्तव्यविमूढ़ पाता हूँ। मेरी समझमें नहीं आता कि चीन तक किस प्रकार अहिंसाका सन्देश सफलतापूर्वक पहुँच सकता है और ठीक यही बात स्पेनके लिए भी लागू होती है। अतएव मेरा कर्मक्षेत्र केवल भारत है। यदि भारत इस सन्देशको पूर्णरूपेण हृदयंगम कर ले तो पूरे संसारके लिए भी कुछ आशा है। परन्तु मुझे तो यही दीखता है कि यदि भारत इसे ग्रहण न करे तो फिर विश्व-व्यापी संकटको टाला नहीं जा सकता।

स्नेह।

हृदयसे तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०५७१) से।

१. म्यूरियल लेस्टर।

१३८. पत्र : अमृतकौरको

सेगाँव, वर्धा
६ सितम्बर, १९३७

मूर्खा रानी,

दो-चार शब्दोंसे अधिक नहीं लिखूँगा। तुम्हारे तार यथासमय मिले और उसी तरह पत्र भी। पत्र तो पढ़कर तत्काल नष्ट कर दिया।

मैं ठीक हूँ, रक्तचाप १६०/१०५ है। हाँ, कमजोरी तो है ही। शरीरको खूब आराम दे रहा हूँ।

स्नेह।

तानाशाह

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८००) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६९५६ से भी

१३९. पत्र : अमृतकौरको[1]

सेगाँव
७ सितम्बर, १९३७

कोई २ समय मैं भी हिन्दीमें लिखुं न? दिन-प्रति-दिन अच्छा होता जाता हूं, खूब सोता हूं।

बापु

मूल पत्र (सी० डब्ल्यू० ३८०१) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६९५७ से भी

१. यह मीराबहन द्वारा अमृतकौरको लिखे गये पत्रके पादलेख रूपमें है।

१४०. तार : देशबन्धु गुप्ताको[1]

[८ सितम्बर, १९३७ के पूर्व][2]

मैं निश्चय ही लाहौरके बूचड़खानेके[3] विरुद्ध हूँ; बल्कि सभी बूचड़खानोंके विरुद्ध हूँ। यदि मुसलमान भी सहयोग दें तो लाहौरमें बूचड़खाना नहीं बन सकेगा।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, ८-९-१९३७

१४१. एक तार[4]

८ सितम्बर, १९३७

सात बन्दियोंके लिए भेजे गये अपने सन्देशके[5] सिलसिलेमें उनके उत्तरकी बेचैनीसे प्रतीक्षा कर रहा हूँ। क्या भूख-हड़ताल अब भी जारी है? यदि जारी है, तो कृपया उनको बताइए कि जबतक वे अनशन नहीं छोड़ते मेरे प्रयास व्यर्थ होंगे।[6]

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १६-९-१९३७

१. पंजाब विधानसभाके सदस्य।

२. रिपोर्ट पर "नई दिल्ली, बुधवार" लिखा था। बुधवार ८ सितम्बरको पड़ा था।

३. लाहौर छावनीमें एक बहुत बड़ा बूचड़खाना बननेवाला था।

४. यह तार पोर्ट ब्लेयरमें अंडमानके अधिकारियोंके पास भेजा गया था।

५. ३ सितम्बर, १९३७ का; देखिए पृ० १०८।

६. उत्तरमें अधिकारियोंका यह तार आया था: "आपका तार कल अनशन करनेवालोंको दे दिया गया। वे 'राहत' की अपनी व्याख्या की आपकी स्वीकृति की कद्र तो करते हैं, परन्तु अनशन तोड़ने से इनकार करते हैं।"

१४२. तार : अमृतकौरको

वर्धागंज
८ सितम्बर, १९३७

राजकुमारी अमृतकौर
समर हिल

अखबारोंको दिये जमनालालजी के वक्तव्यमें अतिरंजना है।[१] तुम जब यहाँ थी उसकी अपेक्षा अब सचमुच वहुत अच्छा हूँ। रक्तचाप १६०/१०५। स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८०३) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६९५९ से भी

१४३. पत्र : वाइसरायको

सेगाँव, वर्धा
८ सितम्बर, १९३७

प्रिय मित्र,

तार द्वारा की गई मेरी प्रार्थनाका आपने स्पष्ट और विस्तृत उत्तर दिया, इसके लिए धन्यवाद। आपने जो स्थिति अख्तियार की है, उसे मैं समझता हूँ और उसके बारेमें विवाद करने का प्रयत्न नहीं करूँगा।

बन्दियोंको सम्बोधित मेरे अनुरोधका उन्होंने जो उत्तर[२] दिया उसकी जो अपूर्णता आपके ध्यानमें आई वह मेरी भी दृष्टिसे चूकी नहीं थी, परन्तु जहाँतक आतंकवादी पद्धतियोंका सवाल है, उन्होंने जिन स्पष्ट और असन्दिग्ध शब्दोंमें विचार प्रकट किये हैं, उससे मैं सन्तुष्ट और प्रभावित हुआ हूँ। अंडमानवाले मित्र जिस कोटिके देशभक्त हैं, उस कोटिके देशभक्तोंके साथ-साथ स्थायी और सम्मानयुक्त

१. देखिए पृ० १२६ पर की पाद-टिप्पणी १।
२. देखिए पृ० १०८ पर की पाद-टिप्पणी १।

समझौता करने के अपने उद्देश्यकी पूर्तिमें आपका सक्रिय सहयोग पाने की मैं आपसे सदा आशा रखूँगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

परमश्रेष्ठ वाइसराय

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७७९८) से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

१४४. पत्र : जी० कनिंघमको

सेगाँव, वर्धा
८ सितम्बर, १९३७

प्रिय मित्र,

आपके पत्रके[1] लिए धन्यवाद। मैं समझ गया कि आप मुझसे क्या अपेक्षा रखते हैं। आशा है, आपको निराश नहीं करूँगा; इसका सीधा-सादा कारण यह है कि जो शक्तिवान् हैं उनके सम्मुख अपनी साखमें वृद्धि करना चाहता हूँ, ताकि उसके बलपर मैं उनके साथ और बढ़िया सौदा कर सकूँ।

इस समय तो मैं डाक्टरोंकी आज्ञासे आराम करने का प्रयास कर रहा हूँ, और मैंने अपने मित्र खान साहबसे कह दिया है कि मुझे सीमा-प्रान्त बुलाने में उतावली न करें।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

परमश्रेष्ठ गवर्नर महोदय
पश्चिमोत्तर सीमा-प्रान्त

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७७९८ ए) से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

१. सम्भवतः गांधीजी के २४ अगस्त के पत्र के उत्तर में; देखिए पृ० ७४-७५।

१४५. पत्र : एम० वी० श्रीनिवासनको

सेगाँव, वर्धा
८ सितम्बर, १९३७

प्रिय मित्र,

आशा है, आपका सम्मेलन सफलतापूर्वक सम्पन्न होगा, और उसमें पूर्ण नशाबन्दीके कार्यक्रमका हार्दिक रूपसे समर्थन किया जायेगा। मुझे यह भी आशा है कि इस सम्मेलनके फलस्वरूप बहुत बड़ी संख्यामें ऐसे स्वयंसेवक मिल सकेंगे जो शराबियोंकी प्रेममय मनोयोगसे सेवा करके उनकी शराबकी आदत छुड़ाने के कार्यक्रममें योग देने को तत्पर हों।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अध्यक्ष
स्वागत समिति
द्वितीय राजनीतिक परिषद्
तिरूचेनगोडु तालुका
पल्लीपालयम्, (बरास्ता) एरोड

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९९) से।

१४६. पत्र : डी० बी० बर्वेको[1]

सेगाँव, वर्धा
८ सितम्बर, १९३७

आपके पत्र और सुझावोंके लिए धन्यवाद।[2] ग्रामोद्योग मन्त्रीसे बातचीतके समय मैं इन सब सुझावोंका ध्यान रखूँगा।

मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकलसे। बी० जी० खेर पेपर्स; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. संयुक्त प्रान्त सरकारके कला तथा दस्तकारी वाणिज्य केन्द्र, लखनऊके व्यवसाय-प्रबन्धक।

२. डी० बी० बर्वे मानते थे कि भारतीय दस्तकारी विदेशी बाजारमें खपने की महती सम्भावनाओंसे आपूरित है। इसलिए उन्होंने नीचे लिखे अनुसार सुसम्बद्ध प्रयत्न करने का सुझाव दिया था.

१४७. पत्र : लीलावती आसरको

सेगाँव
८ सितम्बर, १९३७

चि० लीलावती,

भला लीला न रहकर लीलावती तो बनी। इसका अर्थ यदि समझमें न आया हो तो महादेवसे पूछना। यदि मेरी अनुमति लिये बिना जायेगी तो यह तुझे अनुकूल नहीं आयेगा। यदि तू जाना चाहती है तो खुशीसे जा लेकिन इस तरह क्रोधमें नहीं। मैं तो शामतक तेरे यहाँ पहुँचने की आशा करता हूँ। आधा मन अथवा एक मन खजूर लेकर आना। मेरे साथ अच्छी तरहसे बातचीत करने के बाद जो उचित लगे सो करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३६७) से। सी० डब्ल्यू० ६६४२ से भी; सौजन्य : लीलावती आसर

१४८. पत्र : जे० पी० भणसालीको

सेगाँव
८ सितम्बर, १९३७

चि० भणसाली,

सपनेमें भी यहाँसे जाने की बात मत सोचना। तुम जा ही नहीं सकते। तुम्हारी गुफा भी यहीं है और श्मशान भी यहीं है। लीलावती तो सम्भवत: आज ही

"कारीगरोंके लिए कच्चा माल तैयार रखनेके निमित्त अपूर्ति केन्द्रोंका संगठन करना; विभिन्न विदेशी बाजरोंमें जिन डिजाइनोंकी माँग है उनकी आपूर्ति करना; ग्राहकोंके पास जाकर उन्हें माल खरीदनेके लिए राजी करनेवाले एजेंटोंके माध्यमसे मालका भारत तथा विदेशोंमें वितरण करना; इन उद्योगोंकी सहायताके लिए राज्यसे धन प्राप्त करना; सभी प्रान्त इस प्रयत्नमें शामिल हों; विभिन्न राज्यों तथा प्रान्तोंके मालका विनिमय करके नये बाजारकी तलाश करना; मालका उत्पादन बड़े पैमानेपर करना और जो सुविधाएँ विदेशोंके अपने मालके सम्बन्धमें भारतमें प्राप्त हैं उन सुविधाओंको भारतके लिए विदेशोंसे प्राप्त करना।"

पहुँचेगी। यदि आज नहीं तो थोड़े दिनोंमें अवश्य आ जायेगी। तुम उसके नामसे एक चिट्ठी लिखकर मुझे दे देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८३५७) से। सी० डब्ल्यू० ७०२१ से भी; सौजन्य : मुन्नालाल जी० शाह

१४९. पुर्जा : अमृतकौरको[1]

८ सितम्बर, १९३७

आज तो केवल प्यार जताने-भरका समय है।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८०२) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६९५८ से भी

१५०. पत्र : अमृतकौरको

सेगाँव
८ सितम्बर, १९३७

मूर्खा रानी,

यह पत्र शामकी सैरसे वापस आकर लिख रहा हूँ। मेरे बारेमें चिन्ताका कोई कारण नहीं है। यह सुनकर तुम्हें धक्का तो नहीं पहुँचेगा कि मैं उस विशेषज्ञ की दवा ले रहा हूँ। उसने मुझे उसके बारेमें पूरा ब्योरा दिया है। वह एक साधारण-सी बूटी है, जिसे धूपसे सेका गया है। वह कहता है कि स्थायी आराम देनेमें यह हमेशा अचूक सिद्ध हुई है। खैर, उससे कोई हानि नहीं हो सकती। केवल उसे लेनेके कारण

१. ये पंक्तियाँ मीराबहन द्वारा अमृतकौरको लिखे पत्रके अन्तमें लिखवाई हैं। मीराबहनने और बातोंके अलावा यह भी लिखा था : "बापूने आज सुबह तुम्हें एक आश्वासनपूर्ण तार भेजा था, और यह पत्र उसी सिलसिलेमें कुछ और बताने के लिए है। आज वे सचमुच पहले से बहुत ठीक हैं। जमनालालजी ने समाचारपत्रोंको दिये अपने वक्तव्यमें जिस थकानकी चर्चा की है वह वही थकान है जिसका आरम्भ तुमने देखा था और अब उसका अन्त हो रहा है। थकानका कारण थीं एक-के-बाद-एक होनेवाली वे भेंट-मुलाकातें और छोटेलालकी मृत्यु। अब तो विश्राम और भरपूर नींदसे स्थितिमें अद्भुत अन्तर आ गया है।"

मेरे भोजनमें एक वस्तु कम हो जायेगी।[1] किन्तु इसकी कोई परवाह नहीं। इस औषधिको न आजमाना अनुचित होता।

खान साहबका पत्र उनके अनुरूप ही है।

मुझे खुशी है कि तुम बर्फ और भापका प्रयोग कर रही हो। अब मिट्टीकी पट्टी भी शामिल कर लो। शम्मीने[2] तुम्हारे स्वास्थ्यके विषयमें क्या कहा? मैं उनका मत जानना चाहता हूँ। उन्हें मेरा प्यार कहने के साथ ही यह भी कह देना।

चार्लीके[3] बारेमें एस० और जे० का विचार मैं समझता हूँ। जबतक वे [एन्ड्रयूज] तुम्हारे पास हैं, उनका भोजन भी संतुलित और नियमित रखो और उन्हें उनकी दुर्बलताका भी बोध कराओ।

शिक्षापर वह टिप्पणी मैं देख रहा था। क्या तुम अब भी चाहती हो कि मैं उसका अध्ययन करके अपना मत दूँ?

मीराका हाल ठीक ही है। कुछ लेखन-कार्य कर रही है। अमतुस्सलाम आजकल तो काफी प्रसन्न है। शारदाकी[4] भी खूब प्रगति है। लीलावती रूठकर चली गई है, क्योंकि मैंने उसपर क्रोध किया था। मैं भी कभी-कभी गधापन कर बैठता हूँ। कई बार मुझे अपनी अहिंसाकी वास्तविकतापर सन्देह होता है। मैं अपने क्रोधका स्थायी रूपसे दमन क्यों नहीं कर पाता? यदि मेरी अहिंसाका कुछ भी मूल्य है तो उसे सब प्रलोभनों और क्रोधके सब अवसरोंको जीत लेना चाहिए। मेरा बचाव मत करो, बल्कि खरी-खरी सुनाओ। यदि मैं लीलावतीको खो बैठा तो इसका दोष बहुत अंशोंमें मेरा ही होगा। किन्तु वह इतनी भली है कि वापस आ जायेगी। और यदि आ गई तो इसमें श्रेय उसीका होगा।

स्नेह।

तानाशाह

[पुनश्च :]

जे० कल यहाँ आनेवाले हैं।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८०५) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६९६१ से भी

१. गांधीजी १९१५ से ही खानेमें केवल पाँच वस्तुएँ लेने के व्रतका पालन कर रहे थे; देखिए खण्ड ३९, पृ० २९७।

२. अमृतकौरके भाई कुँवर शमशेर सिंह, जो एक अवकाश-प्राप्त सर्जन थे।

३. सी० एफ० एण्ड्रयूज लम्बी बीमारीके बाद शिमलामें स्वास्थ्य-लाभ कर रहे थे।

४. चिमनलाल एन० शाहकी लड़की।

१५१. पत्र : महादेव देसाईको

[८ सितम्बर, १९३७][1]

चि० महादेव,

किसीके भी साथ आधा मन, या फिर एक मनतक, खजूर भिजवाना। यहाँ हमें रोज तीन दर्जन मुसम्बी मिलनी चाहिए, और दो दर्जन केले।

इस पत्रके साथ राजकुमारीको भेजने के लिए तार है। एन्ड्रयूजको भेज दिया गया होगा।

सात कैदियोंका तार आया था। लगता है, वह प्रेसमें नहीं दिया गया। यदि वह तार और मेरा जवाब अभी भी प्रेसमें दे सको, तो दे देना। थोड़ी देर तो हो गई है। तारोंकी नकलें मैंने रख ली हैं। इन सात कैदियोंका तार और मेरा जवाब क्या प्रेसको दिये ही नहीं थे?

सवेरे एक कष्टप्रद किस्सा हो गया। लीलावती आलसी तो है ही। वह लापरवाह है, उसके अभिमानका पार नहीं है और सहनशक्ति तो उसमें बिलकुल नहीं है। बात कुछ नहीं थी। नानावटीने उसकी लापरवाहीकी तरफ उसका ध्यान आकर्षित किया, जो उससे सहन नहीं हुआ। तब नानावटीने उसके व्यवहारकी ओर मेरा ध्यान आकर्षित किया। मैं तो अपने काममें व्यस्त था, और बातको टाल जाना चाहता था। मैंने यों ही हँसीमें कुछ कहा कि बाई साहेबा पधारीं। एक-एक वाक्य जोर दे-देकर बोलती जाती थीं, सो भी गरजकर। मैंने उससे शान्तिसे बोलने को कहा, लेकिन कौन सुनता है? और फिर तो बकवास करने लगी। तब तो मैंने आवाज ऊँची करके कहा, "यहाँ और कोई दरवाजा नहीं है। बस एक है, और वह खुला हुआ है। तुझसे सहन नहीं होता, तो चली जा।" मैं खुद भी यह कहते हुए होश-हवास खो बैठा था, इसलिए उससे भी अधिक गला फाड़कर चिल्ला उठा। वह अब चली गई है। लेकिन जायेगी तो महादेव-मन्दिरमें ही न? इसलिए तुम्हारे पास पहुँची होगी। मुझपर उसने जो निर्दयता की है, यदि उसे इसका भान हो जाये, तो उसे लज्जित करके यहाँ रवाना कर देना। लेकिन यदि उसे अपने अपराधकी गुरुताका भान न हो, तो उसे जो अच्छा लगे, करे। हरिजन आश्रममें उसको रखना सम्भव नहीं है। वहाँ उसे नहीं भेजना चाहिए। तुम सँभालो तो ठीक है।...[2]

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५६७) से।

१. "राजकुमारीको भेजनेके लिए तार" देखिए "तार: अमृतकौरको", ८-९-१९३७, तथा "रूठकर चली गई" देखिए "पत्र : अमृत कौरको", ८-९-१९३७ के उल्लेखसे। देखिए "पत्र : लीलावती आसरको", ८-९-१९३७ भी।

२. पत्र अधूरा है।

१५२. पत्र : महादेव देसाईको

[८ सितम्बर, १९३७ के पश्चात्][1]

चि० महादेव,

लीलावतीको तो अवश्य भेज देना। आज वह डाक्टरके पास गई होगी; आज जाने का दिन था।

यहाँ मुझे तुमसे निजी बातचीत तो कोई नहीं करनी थी। लेकिन तुमने अपना समय बचाकर ठीक ही किया। तुम्हें लीलावतीको कुछ समय देना पड़ा, इसमें दोष उसका नहीं, मेरा था। यदि मैं खामोश रहता तो उसे यहाँसे जाना ही न पड़ता। तुमने अपनी नींद खराब की, यह तुम्हारा दोष है। क्योंकि ऐसे मामलोंमें तुम्हें अपने मनकी शान्ति नहीं खोनी चाहिए।

आज बहुत दिनों बाद छोटा कनु[2] बीमार पड़ा है।

मैं हस्ताक्षर भेज रहा हूँ।

ईश्वरदास आना चाहे तो आये, लेकिन फिलहाल वह यहाँ ठहर नहीं सकेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५६५) से।

१५३. बातचीत : शिक्षा-शास्त्रियोंके साथ[3]

[११ सितम्बर, १९३७ के पूर्व]

[गांधीजी :] मैं शिक्षाको स्वावलम्बी इस तरह बनाना चाहता हूँ कि बच्चे राज्यसे जो शिक्षा प्राप्त करते हैं उसका आंशिक मुआवजा वे खुद ही काम करके चुका दें। आज आप जिसे प्राथमिक और माध्यमिक अथवा हाईस्कूलकी शिक्षा कहते हैं, मैं उन दोनोंको मिला देना चाहता हूँ। मेरा यह निश्चित मत है कि बच्चोंको हाई स्कूलोंमें अंग्रेजीका अधकचरा ज्ञान होने के अलावा गणित, इतिहास और भूगोलकी

१. पत्रसे स्पष्ट है कि यह पिछले शीर्षकके बाद लिखा गया होगा।

२. कानम, रामदास गांधीके पुत्र।

३. यह लेख महादेव देसाईके "द मीनिंग ऑफ़ मैन्युअल वर्क" (शारीरिक श्रमका अभिप्राय) शीर्षक लेखसे लिया गया है। मध्य प्रान्तके शिक्षा-मन्त्री रविशंकर शुक्लने अपने शिक्षा-शास्त्रियोंके साथ, जिनमें शिक्षा-निदेशक श्री ओवेन और श्री डी'सिल्वा भी शामिल थे, गांधीजी से मुलाकात की। वर्तमान शिक्षा-पद्धतिमें गांधीजी जो क्रान्तिकारी परिवर्तन करना चाहते थे उसके बारे में वे गांधीजीके विचार सुनना और समझना चाहते थे।

थोड़ी-सी शिक्षाके सिवा और कुछ नहीं मिलता। इन विषयोंको तो वे कुछ-कुछ प्राथमिक पाठशालाओंमें ही अपनी मातृ-भाषा द्वारा सीख लेते हैं। आप जो विषय पढ़ाते हैं उन्हें हटाये बिना यदि आप पाठ्यक्रमसे अंग्रेजी बिलकुल उड़ा दें तो आप बच्चोंसे सारा पाठ्यक्रम ग्यारहके बजाय सात वर्षमें ही पूरा करवा सकते हैं। और इसके अलावा आप उन्हें जो शारीरिक श्रम करने के लिए देंगे उससे राज्यको ठीक-ठीक आय होगी। शारीरिक श्रम इस सबका केन्द्र-बिन्दु होगा। मुझे बताया गया है कि सर्वश्री एबट[1] और वुडने ग्रामीण शिक्षाके एक महत्वपूर्ण अंगके रूपमें शारीरिक श्रमकी उपयोगिताको स्वीकार किया है। मुझे ऐसे प्रतिष्ठित शिक्षा-शास्त्रियोंका समर्थन प्राप्त है, यह जानकर मुझे प्रसन्नता होती है। लेकिन मैं समझता हूँ कि जिस दृष्टिसे मैं शारीरिक श्रम पर जोर देता हूँ, उनकी दृष्टि शायद वैसी नहीं है। क्योंकि मेरा कहना है कि शारीरिक श्रमके द्वारा ही बच्चोंका मानसिक विकास होना चाहिए और शारीरिक श्रमकी शिक्षा महज इसलिए नहीं दी जायेगी कि बच्चे स्कूलके संग्रहालयोंके लिए चीजें तैयार कर सकें अथवा ऐसे खिलौने बना सकें जिनकी कोई कीमत न हो। शारीरिक श्रमके द्वारा ऐसी चीजोंका उत्पादन होना चाहिए जो बाजारमें बिक सकती हों। पुराने जमानेके कारखानोंमें जिस तरह मारके भयसे बच्चे काम करते थे उस तरह हमारे बच्चे यह काम नहीं करेंगे। वे इसलिए करेंगे कि इससे उनका मनोरंजन होता है और उनकी बुद्धिको उत्तेजन मिलता है।

[डी' सिल्वा:] हाँ, में आपके इस प्रस्तावसे तो सहमत हूँ कि हमें बच्चोंको सृजनात्मक कार्य द्वारा शिक्षा देनी चाहिए, किन्तु हम कोमल बालकसे किसी प्रौढ़ व्यक्तिसे स्पर्धा करने की अपेक्षा कैसे कर सकते हैं?

बच्चे बड़े कारीगरोंके साथ स्पर्धा नहीं करेंगे। राज्य इन बच्चोंकी बनाई चीजें खरीद कर उनके लिए बाजार ढूँढ़ लेगा। उन्हें ऐसी चीजें सिखाई जायें जो सचमुच उपयोगी हों। उदाहरणके लिए, चटाई लीजिए। जिस कामको करने में घर पर बच्चोंका दिल नहीं लगेगा, उसे वे यहाँ मन लगाकर बुद्धिपूर्वक करेंगे। इस तरह जब आपकी शिक्षा स्वयं-प्रेरित और स्वाश्रयी बन जायेगी तो यह जबरदस्त समस्या खुद ही सरल हो जायेगी।

लेकिन बच्चोंको इस तरहकी शिक्षा देने से पहले हमें शिक्षकोंकी वर्तमान पीढ़ीका सफाया कर देना होगा।

नहीं, इसके लिए बीचकी स्थिति है ही नहीं। आपको इस कामकी शुरुआत कर देनी चाहिए और इसके साथ-साथ शिक्षकोंको तैयार करना चाहिए।[2]

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ११-९-१९३७

१. क्लॉड फ्लीर एबट, अंक अंग्रेज शिक्षा-शास्त्री।

२. बादमें गांधीजी ने उनसे अनुरोध किया कि वे इस सिलसिलेमें आर्यनायकम्, भारतन कुमारप्पा, और द० बा० कालेलकरसे बातचीत करें।

१५४. क्या ईसाई शराब-बन्दीके विरुद्ध हैं ?

मेरे पास कुछ ईसाइयोंके ऐसे पत्र आये थे जिनमें शराब बन्दीके प्रति विरोध प्रकट किया गया है। मैंने महादेव देसाईसे कहा कि वे ईसाई जातिके प्रतिनिधि समझे जानेवाले कुछ मित्रोंकी राय जानने के लिए उन्हें लिखें। उनके उत्तरमें दो पत्र आये हैं, जिनको मैं यहाँ दे रहा हूँ। नेशनल क्रिश्चियन कौंसिल ऑफ इंडियाके भारतीय मन्त्री श्री पी० ओ० फिलिप लिखते हैं:[1]

> मुझे यह जानकर कोई आश्चर्य नहीं हुआ कि कुछ ईसाई मित्र आपको इस आशयके पत्र लिख रहे हैं कि "शराब बन्दीकी नीति हमारे मद्यपानके अधिकार पर कुठाराघात है। और मेरा यह सोचना शायद बहुत गलत नहीं होगा कि इस तरहके पत्र लिखनेवालोंमें अधिकतर रोमन कैथलिक अथवा ऐंग्लो कैथलिक वातावरणमें पले हुए ईसाई हैं। . . . हिन्दुस्तानमें परिमित मात्रामें भी शराब पीने के बारेमें मुसलमानों और ऊँचे वर्णके हिन्दुओंमें जिस तरहका सामाजिक और धार्मिक निषेध है, वैसा रोमन कैथलिक ईसाइयोंमें नहीं है। लेकिन प्रोटेस्टेंटोंका शराबके प्रति एक भिन्न दृष्टिकोण है।
>
> . . . प्रोटेस्टेंट ईसाई जातिमें परिमित मात्रामें भी मद्यपान करना सामाजिक तथा धार्मिक दृष्टिसे हलका समझा जाता है।
>
> रोमन कैथलिकोंमें भी इधर मद्यपानके दुष्परिणामोंके विषयमें लोकमत जागृत होता जा रहा है। कैथलिक सम्प्रदायके धर्माधिकारी आधिकारिक रूपसे भले ही यह कहें कि परिमित मात्रामें शराब पीने में कोई बुराई नहीं है, लेकिन उनके अनुयायियोंका शराबकी वजहसे जो नैतिक और आर्थिक ह्रास हो रहा है उसकी ओरसे वे आँख बन्द नहीं कर सकते . . .।
>
> एक भारतीय ईसाईके रूपमें मुझे यह देखकर बहुत खुशी होती है कि कांग्रेस मन्त्रिमण्डलोंने शराब बन्दीको अपने कार्यक्रममें सबसे पहला स्थान दिया है। भूतकालमें, बहुत ही कम अंग्रेज और अमेरिकी पादरियोंने कांग्रेस द्वारा चलाये हुए मद्य-निषेधके आन्दोलनमें साथ दिया था, क्योंकि उनके दिलमें यह गलत धारणा थी कि कांग्रेसने इस कार्यक्रमको सुधार करने की सच्ची नीयतसे नहीं, बल्कि ब्रिटिश सरकारको परेशान करने के लिए ही आरम्भ किया है। दुर्भाग्यसे भारतीय ईसाइयोंने भी पादरियोंके इस विचारका अनुसरण किया

१. यहाँ केवल कुछ अंश ही उद्धृत किये गये हैं।

और साधारणतया इस आन्दोलनसे अपनेको अलग ही रखा। लेकिन शराबबन्दीका आन्दोलन करने में कांग्रेसकी नीयत बिलकुल साफ है, इस बारेमें कतई कोई शंकाकी गुंजाइश नहीं है। . . .

. . . गाँवोंमें जिन वर्गोंके आगे — जिनमें ईसाई भी हैं — आज शराबका प्रलोभन रखा जाता है, उनकी उससे रक्षा करने की जितनी जरूरत है उतनी दूसरे वर्गोंको नहीं है। जिस दिन यहाँसे शराबका नाम-निशान उठ जायेगा उस दिन भारतके गाँवोंमें नई चेतना और नई समृद्धि देखने में आयेगी। पूर्ण शराबबन्दीसे अन्य जातियोंके साथ-साथ भारतीय ईसाई कौम को भी अपार लाभ होगा।

. . . भारतीय ईसाइयोंको, जो भारतको हृदयसे चाहते हैं और जिन्हें ग्रामीण जन-समुदायके सच्चे कल्याणकी चिन्ता रहती है, यह जानकर खुशी होगी कि छः प्रान्तोंमें[१] शराबबन्दी लागू होनेवाली है। शराबबन्दीको पूरी तरह सफल बनाने के लिए अपने दूसरे देशभाइयोंको पूरे दिलसे सहयोग देने में उन्हें कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए।

भारत, बर्मा और सीलोनके स्टुडेंट क्रिश्चियन मूवमेंटके महामन्त्री रेवरेंड ए० रलाराम लिखते हैं :

देशमें पूर्ण शराबबन्दी लागू करने का कांग्रेसका जो ध्येय है उसका मैं पूरी तरहसे समर्थन करता हूँ और जो लोग यह कहते हैं कि हमें परिमित मात्रामें शराब पीने देनी चाहिए, उनकी बात नहीं सुननी चाहिए। मेरी राय यह है कि जो यूरोपीय इस देशमें आते हैं उन्हें हमारी अभिलाषाओंमें हमारा साथ देना चाहिए; और मुझे ऐसी आशंका है कि अगर हम इस विषयमें उनकी भावनाओंका आदर करेंगे तो इससे अन्य अनेक लोगोंके लिए द्वार खुल जायेगा।

जैसा कि मैं पहले कह चुका हूँ,[२] इसमें यूरोपीयोंको ही यह तय करना होगा कि उन्हें क्या करना है। जो आदत सारी जिन्दगीसे पड़ी हुई है और जो प्रतिष्ठित मानी जाती है उसका परित्याग कर देना उनके लिए कितना मुश्किल है, यह मैं जानता हूँ। पर अगर वे इस महान् राष्ट्रीय सुधारमें योग देना चाहेंगे, तो उनकी यह इच्छा इतनी प्रबल साबित होगी कि वह उनकी इस आदतको छुड़ा देगी। चाहे जो हो, अन्तमें अगर हमें उचित मर्यादाके अन्दर शराबबन्दीमें छूट देनी ही पड़े तब भी हमें आशा है कि वे अपने प्रीतिभोजों और पारिवारिक समारोहोंमें शराबका

१. बम्बई, मद्रास, संयुक्त प्रान्त, बिहार, मध्य प्रान्त, और उड़ीसामें कांग्रेस मन्त्रिमण्डल बनाये गये थे।

२. देखिए "अहिंसा और सत्यके विरुद्ध?", पृ० ५०-२ तथा खण्ड ६५, पृ० ४८४-८५ भी।

उपयोग नहीं करेंगे। छूट उनकी सारी जिन्दगीकी आदतका खयाल करके दी जायेगी, उनकी कमजोरी या फिजूलखर्चीकी वजहसे नहीं।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ११-९-१९३७

१५५. टिप्पणियाँ

अभिनन्दनीय

मौलवी अब्दुल हक साहब और श्री राजेन्द्रप्रसादने हिन्दी-उर्दू विवादके बारेमें जो संयुक्त वक्तव्य निकाला है उससे यह आशा की जा सकती है कि यह विवाद अब खत्म हो जायेगा, और जो अन्तर्प्रान्तीय भाषाके विकासमें दिलचस्पी रखते हैं वे इसके गुण-दोष पर विचार कर सकेंगे, तथा कुछ मिलाकर किसी अच्छी व्यावहारिक योजनापर भी पहुँच सकेंगे। वक्तव्य यह है :

> पटनामें २८ अगस्तको बिहार उर्दू कमेटीकी जो बैठक हुई थी, उस अवसरपर हमें हिन्दुस्तानी भाषाके सवालके बारेमें एक-दूसरेके साथ, और दूसरे भी कुछ दोस्तोंके साथ बातचीत करने का मौका मिला। उर्दू-हिन्दी-हिन्दुस्तानीके विवादके बारेमें जो गलतफहमियाँ दुर्भाग्यसे पैदा हो गई हैं उनको दूर करने के लिए हम उत्सुक थे। हमें यह कहते हुए खुशी होती है कि इस समस्याके विभिन्न पहलुओंपर हमने बातचीत की, और इसके परिणामस्वरूप हमने देखा कि अनेक प्रश्नोंके बारेमें हम लोगोंमें काफी मतैक्य है। हम परस्पर इस बातसे सहमत हैं कि हिन्दुस्तानीको हिन्दुस्तानकी राष्ट्रभाषा होना चाहिए, और वह उर्दू व नागरी दोनों लिपियोंमें लिखी जानी चाहिए तथा सरकारी कार्यालयों और शिक्षाके क्षेत्रमें इन दोनोंको मान्यता दी जानी चाहिए। "हिन्दुस्तानी" हम उस जबानको कहते हैं, जिसे उत्तर हिन्दुस्तानमें बहुत बड़ा जनसमुदाय बोलता है; और हमारा विश्वास है कि जो शब्द आम व्यवहारमें इस्तेमाल होते हों उन्हें चुनकर हिन्दुस्तानी शब्द-भण्डारमें दाखिल कर लेना चाहिए। और हम यह भी मानते हैं कि उर्दू और हिन्दी तथा साहित्यक भाषाओंके विकासके लिए भरपूर मौका दिया जाना चाहिए। हमारा यह सुझाव है कि उर्दू और हिन्दीके विद्वानोंके सहयोगसे हिन्दुस्तानी शब्दोंका एक बुनियादी कोष तैयार करने का प्रयत्न किया जाना चाहिए।
>
> हमारा सुझाव है कि ऐसे कोषको तैयार करने के लिए क्या व्यावहारिक कदम उठाये जाने चाहिए, इस बातपर विचार करने तथा पारिभाषिक शब्दावलीके चुनाव-सम्बन्धी समस्याओं तथा ऐसी ही विभिन्न प्रमुख समस्याओंके

समाधानके लिए जल्द ही एक छोटी प्रातिनिधिक समिति नियुक्त की जानी चाहिए। इस समितिमें उर्दू और हिन्दीके ऐसे प्रतिष्ठित हिमायती होने चाहिए जो इन दोनों भाषाओंको अधिक समीप लाने और हिन्दुस्तानी भाषाको प्रोत्साहन देने के कार्यमें विश्वास रखते हों और जो इस तरह दोनों भाषाओंके बोलनेवालोंमें सद्भाव पैदा करना इष्ट समझते हों।

हम आशा है कि इस वक्तव्यके प्रकाशक सभी पक्षोंको स्वीकार्य हिन्दुस्तानी शब्दोंका बुनियादी कोष तैयार करने के लिए जल्दी ही काम शुरू करेंगे, और इस कामके लिए तथा "विभिन्न समस्याओंके समाधान"के लिए उन्होंने जिस छोटी-सी कमेटीको नियुक्त करने का निश्चय किया है, उसे फौरन ही नियुक्त करेंगे। और यदि ये लोग इस कामको मुस्तैदीसे करना चाहते हैं तो मैं इस बातपर जरूर जोर दूँगा कि कमेटी, जहाँतक हो सके, छोटी होनी चाहिए।

स्कूलोंमें संगीत

गन्धर्व महाविद्यालयके पंडित खरेने[1], जिनका जीवन लड़के-लड़कियोंमें शुद्ध संगीतका प्रचार करने के कार्यको समर्पित है, गुजरात और विशेषकर अहमदाबादमें इस दिशामें हो रही भारी प्रगतिका विवरण लिख भेजा है। उन्होंने इस बातपर दुःख प्रकट किया है कि शिक्षा-विभागके अधिकारी संगीतको पढ़ाईमें शामिल करने की बातपर अपनी मंजूरी नहीं देते हैं। पण्डितजीकी अपने अनुभवपर कायम की हुई राय यह है कि प्रारम्भिक शिक्षाके पाठ्यक्रममें संगीतको अवश्य स्थान दिया जाना चाहिए। मैं इस प्रस्तावका हृदयसे समर्थन करता हूँ। बच्चेके हाथको शिक्षा देने की जितनी जरूरत है, उतनी ही जरूरत उसके गलेको शिक्षा देने की है। लड़के-लड़कियोंके भीतर जो अच्छाइयाँ भरी रहती हैं, उन्हें बाहर लाने और पढ़ाईमें भी उनकी सच्ची दिलचस्पी पैदा करने के लिए कवायद, उद्योग, चित्रकारी और संगीत साथ-साथ सिखाये जाने चाहिए।

और मैं स्वीकार करता हूँ कि इसका अर्थ शिक्षाकी पद्धतिमें क्रान्ति लाना है। राष्ट्रके भावी नागरिकोंके जीवन-कार्यकी पक्की बुनियाद डालनी हो, तो ये चार चीजें जरूरी हैं। किसी भी प्राथमिक शालामें जाकर देख लीजिए, वहाँ मैलापन दिखेगा, व्यवस्थाका नाम न होगा और कई बेसुरी आवाजें निकलती होंगी। इसलिए मुझे तो कोई शंका नहीं कि जब कई प्रान्तोंके शिक्षा-मन्त्री शिक्षा-पद्धतिका नये सिरेसे गठन करेंगे और उसे देशकी जरूरतके मुताबिक बनायेंगे, तब जिन जरूरी बातोंकी तरफ मैंने ऊपर ध्यान खींचा है, उन्हें वे छोड़ नहीं देंगे। मेरी प्राथमिक शिक्षाकी योजनामें ये चीजें शामिल ही हैं और ये चीजें उसी क्षण आसान बन जायेंगी जिस क्षण बच्चोंके सिरसे एक कठिन विदेशी भाषा सीखने का बोझ उतार दिया जायेगा।

१. नारायण मोरेश्वर खरे।

बेशक, हमारे पास इस नई पद्धतिसे शिक्षा दे सकनेवाले शिक्षक नहीं हैं। परन्तु यह कठिनाई तो हर नये उपक्रममें आने ही वाली है। यदि आज का शिक्षक-वर्ग उपर्युक्त शिक्षा-पद्धतिको सीखने को राजी हो, तो उसे सीखने का मौका दिया जाना चाहिए; और वे यदि इन जरूरी विषयोंको सीख लेते हैं तो उनकी तनख्वाहें तुरन्त बढ़ाने की तजवीज भी की जानी चाहिए। यह अकल्पनीय है कि जिन नये विषयोंको प्राथमिक शिक्षामें शामिल किया जायेगा उन सबके लिए अलग-अलग शिक्षक रखे जायेंगे। इससे तो खर्च बहुत बढ़ जायेगा और इसलिए यह बिलकुल अनावश्यक है। यह हो सकता है कि प्राथमिक स्कूलोंके कितने ही शिक्षक इतने कच्चे हों कि वे इन नये विषयोंको थोड़े समयमें न सीख सकें। परन्तु जो लड़का मैट्रिकतक पढ़ा हो, उसे संगीत, चित्रकारी, कवायद और हस्तकला-उद्योगकी बुनियादी बातें सीखने में तीन महीनेसे ज्यादा समय नहीं लगना चाहिए। यदि वह इनकी कामचलाऊ जानकारी प्राप्त कर ले, तो फिर वह पढ़ाते-पढ़ाते इस ज्ञानको हमेशा बढ़ाता रह सकता है। बेशक, यह काम तभी हो सकता है जब शिक्षकोंमें राष्ट्रके पुनरुत्थानके लिए दिन-ब-दिन अपनी योग्यता बढ़ाते रहने की लगन और उत्साह हो।

सूदखोरीका राक्षसी तरीका

अभी हालमें ही 'हरिजनबन्धु'में छपी एक टिप्पणीमें[1] मैंने एक पत्र-लेखकका पत्र उद्धृत किया था, जिसमें कहा गया था कि गायकवाड़ इलाकेमें सिद्धपुर और उसके आसपास ऐसे सूदखोर हैं जो सूदकी बहुत कड़ी दरपर रकम देते हैं और मूलधन तथा सूदकी अदायगीके लिए जमानतें लेते हैं। ऋणदाताओंका ऋणी व्यक्तियोंकी अन्य चीजोंके साथ-साथ उनकी लड़कियोंपर भी हक होता है। इस शर्मनाक सूदखोरीके परिणामस्वरूप जब माता-पिता सूद — जो कि १०० प्रतिशतसे भी ऊपर होता है — की अदायगी नहीं कर पाते तब उन्हें विवश होकर अपनी लड़कियोंको बेचना पड़ता है। मैं समझता हूँ, कुछ कार्यकर्त्ताओंने सिद्धपुरके जिला अधिकारियोंका ध्यान इस ओर खींचा है। उक्त पत्र-लेखकने जो तथ्य पेश किये हैं, यदि वे सही हैं — और उनपर अविश्वास करने का कोई कारण नहीं है — तो इसका तुरन्त उपाय किया जाना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ११-९-१९३७

१. देखिए पृ० ५४-५५।

१५६. स्वावलम्बी शिक्षा

डॉ० ए० लक्ष्मीपति लिखते हैं:

मैंने मिशनरियों द्वारा संचालित कुछ संस्थाएँ देखी हैं, जहाँ स्कूल केवल सवेरे लगते हैं और शामको विद्यार्थियोंसे या तो खेतीका या किसी गृह-उद्योगका काम लिया जाता है। और जो विद्यार्थी जैसा तथा जितना काम करता है, उसके अनुसार उसे कुछ मजदूरी भी दी जाती है। इस तरह संस्था को न्यूनाधिक परिमाणमें स्वावलम्बी बनाया जाता है, और चूँकि विद्यार्थी भी कमसे-कम अपनी आजीविका प्राप्त करने लायक कुछ-न-कुछ काम सीख लेते हैं, इसलिए पढ़ाई खत्म होने पर वे अपने-आपको असहाय महसूस नहीं करते हैं। मैंने यह भी देखा है कि इन पाठशालाओंका वातावरण सरकारी शिक्षा-बिभाग द्वारा संचालित एक ही ढरेंकी पाठशालाओंके नीरस कार्यक्रमसे कहीं भिन्न होता है। बच्चे अधिक स्वस्थ दिखाई देते हैं और यह सोचकर कि उन्होंने कुछ उपयोगी काम किया है, वे आनन्दका अनुभव करते हैं। उनके शरीरका गठन भी मजबूत होता है। खेतीके मौसममें ये पाठशालाएँ कुछ दिनों के लिए बन्द भी रहती हैं, क्योंकि उन दिनों लड़कोंको सारे दिन खेतोंपर काम करना पड़ता है। शहरोंमें भी जिन विद्यार्थियोंकी व्यापार और धन्धोंमें दिलचस्पी हो, उन्हें तरह-तरहके व्यापार या धन्धोंमें लगाया जा सकता है, जिससे उन्हें विविधता मिल सके। सुबहकी कक्षाओंमें आधे घंटेकी छुट्टीके समय जिन विद्यार्थियोंको जरूरत हो अथवा जो चाहें, उन विद्यार्थियोंके लिए एक बारके भोजनका प्रबन्ध भी किया जा सकता है। इस तरह गरीब लड़के तो खुद-ब-खुद खुशीसे दौड़ते हुए पाठशालाओंमें आने लग ही सकते हैं और माता-पिता भी अपने बच्चोंको नियमित रूपसे पढ़ने को भेजने के लिए प्रोत्साहित कर सकते हैं।

और यदि आधे दिनकी पाठशालाओंकी इस योजनाको स्वीकार कर लिया जाता है तो इनमें से कुछ अध्यापकोंको गाँवोंमें प्रौढ़-शिक्षाके काममें भी लगाया जा सकता है। और इसके लिए उन्हें अलगसे मेहनताना देने की भी जरूरत नहीं रहेगी। इसी तरह इमारतका और पढ़ने की अन्य सामग्रीका भी उपयोग किया जा सकता है।

मैंने इस सिलसिलेमें मद्रासके शिक्षा-मन्त्रीसे मुलाकात की है और उन्हें पत्र भी लिखा है, जिसमें मैंने बताया है कि वर्तमान पीढ़ीकी शारीरिक दुर्बलता

का एक खास कारण पाठशालाओंका यह असुविधाजनक समय ही है। मेरी यह राय है कि तमाम पाठशालाएँ और कॉलेज केवल सवेरे ही, अर्थात् ६ बजे से ११ बजे तक लगा करें। ४ घंटेका अभ्यास-क्रम काफी होना चाहिए। दोपहरको लड़के घरपर रहें और शामको खेलें-कूदें तथा अपने शरीरके विकास की ओर ध्यान दें। कुछ लड़के दोपहरमें अपनी आजीविका कमाने में लग सकते हैं और कुछ अपने माता-पिताके व्यापार-व्यवसायमें भी मदद कर सकते हैं। इस तरह विद्यार्थी अपने माता-पिताके सम्पर्कमें अधिक रह सकेंगे, जो किसी भी पेशे या परम्परागत व्यवसायमें कुशलता प्राप्त करने के लिए जरूरी है।

यदि हम यह अनुभव कर लें कि सुगठित शरीर सुगठित राष्ट्रका द्योतक है तो पाठशालाके सम्बन्धमें मैंने जो परिवर्तन सुझाया है वह देखने में भले ही क्रान्तिकारी लगे तथापि वह भारतीय रिवाज और आबोहवाके अनुकूल है और अधिकांश लोग इसका स्वागत भी करेंगे।

विद्यालयोंका समय केवल सुबहका ही रखने के सम्बन्धमें डॉ० ए० लक्ष्मीपतिके सुझावके बारेमें मैं विशेष कुछ नहीं कहना चाहता, सिवा इसके कि शिक्षा-विभागके अधिकारियोंसे मैं इसकी सिफारिश कर दूँ। और न्यूनाधिक परिमाणमें स्वाश्रयी संस्थाओंके बारेमें तो यही कहना होगा कि यदि वे उनसे अपना सारा या कुछ खर्च निकालना चाहती हैं और विद्यार्थियोंको भी किसी योग्य बनाना चाहती हैं तो वे इसके सिवा कुछ कर ही नहीं सकतीं। तथापि मेरे सुझावोंसे कई शिक्षा-शास्त्रियोंको जबरदस्त आघात पहुँचा है, महज इसलिए कि उन्हें शिक्षा देने का और कोई तरीका मालूम ही नहीं है। शिक्षाको स्वावलम्बी बनाने की बात सुनकर ही उन्हें ऐसा लगता है, मानों उसका सारा महत्त्व चला गया है। इस सुझावके पीछे उन्हें पैसा प्राप्त करने का मंशा दिखाई देता है। लेकिन आजकल मैं शिक्षाके सम्बन्धमें यहूदियोंके एक प्रयत्नपर लिखा गया एक प्रबन्ध पढ़ रहा हूँ। यहूदी पाठशालाओंमें उद्योग-धन्धोंकी जो शिक्षा दी जाती है, उसके सम्बन्धमें लेखकने लिखा है:

इस तरह लड़के अपने हाथसे जो काम करते हैं, वह खुद भी बड़ा कीमती होता है। चूँकि शारीरिक श्रमके साथ-साथ बच्चोंको सोचना भी पड़ता है, इसलिए काम हल्का हो जाता है और उसके मूलमें देशहितकी भावना होने के कारण इस शरीरश्रमको एक प्रकारका गौरव प्राप्त हो जाता है।

यदि हमें योग्य शिक्षक मिल जायें तो हमारे बच्चे शारीरिक श्रमके गौरवको समझने लगेंगे और उसको अपने बौद्धिक विकासका अविभाज्य अंग और साधन भी मानने लगेंगे। साथ ही, वे यह भी अनुभव करने लगेंगे कि वे जो शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं, उसका मूल्य श्रमके रूपमें चुकाना भी एक प्रकारकी देश-सेवा ही है। मेरे सुझावका सार तो यह है कि हम बच्चोंको दस्तकारियोंकी शिक्षा महज इसलिए न दें कि वे कुछ उत्पादक काम करना सीखें, बल्कि इसलिए दें कि उसके द्वारा उनकी बुद्धिका विकास हो। अगर राज्य ७ से १४ वर्षकी उम्रके अन्दरके बच्चोंको अपने हाथमें ले ले तथा उत्पादक श्रम द्वारा उनके मन और शरीरको विकसित करने की

कोशिश करे तो सरकारी स्कूल निश्चय ही स्वावलम्वी हो सकते हैं। और अगर वे ऐसे नहीं बनते हैं तो मानना होगा कि वे स्कूल मात्र एक फरेब हैं और उनके शिक्षक निरे बेवकूफ।

मान लीजिए कि एक लड़का या लड़की यन्त्रकी तरह नहीं, बल्कि अक्लमन्दीके साथ काम करने लग जाये और एक विशेषज्ञके मार्गदर्शनमें होनेवाले सामूहिक कार्यमें दिलचस्पी भी लेने लगे, तो एक वर्षकी शिक्षाके बाद हरएक विद्यार्थीको फी घंटा एक आना कमाने योग्य हो जाना चाहिए। इस तरह अगर महीनेमें २६ दिन स्कूल लगे और बच्चे रोज ४ घंटे काम करें, तो हरएक विद्यार्थी साढ़े छः रुपये महीना कमा लेगा। अब सवाल सिर्फ यही है कि क्या हम इस तरह लाखों बच्चोंके श्रमका लाभदायक उपयोग कर सकेंगे? एक बरसकी तालीमके बाद भी अगर हम बच्चोंकी शक्ति और बुद्धिको इस लायक न बना सकें कि उनकी बनाई चीजें बाजारमें भेजने पर उनसे इतनी कीमत आ सके जिससे लड़कोंकी फी घंटा एक आनेके हिसाबसे मजदूरी पड़ जाये, तो समझना चाहिए कि हमारी बुद्धिका दिवाला ही निकल गया है। मैं जानता हूँ कि हिन्दुस्तानमें आज कहीं भी गाँवोंके लोग इतना नहीं कमा सकते, जिससे कि फी घंटा एक आनेकी मजदूरी पड़ जाये। पर इसका कारण तो यह है कि आज हमें गरीबों और अमीरोंके बीच जो गहरी विषमता है वह खलती नहीं है, और दूसरे यह भी कि शहरके निवासी गाँवोंको लूटने में शायद अनजाने ही अंग्रेजोंके साथ शामिल हो गये हैं।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ११-९-१९३७

१५७. एक तार[1]

११ सितम्बर, १९३७

तारके[2] लिए धन्यवाद। कृपया भूख-हड़तालियोंसे कहिए: आपके भूख-हड़ताल स्थगित करनेसे इनकारसे गहरा दुःख हुआ। आपका तार[3] मुझे ऐसा आश्वासन देता लगा था कि यदि मैं "राहत" शब्दकी आपकी व्याख्या स्वीकार कर लूँ तो आप भूख-हड़ताल स्थगित कर देंगे। कृपया भूख-हड़ताल स्थगित करके देश-भरकी चिन्ता दूर कीजिए और मेरे जैसे कार्यकर्त्ताओंको राहत दिलवाने का अवसर दीजिए।[4]

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १६-९-१९३७

१. इसे अण्डमान अधिकारियोंके नाम पोर्ट ब्लेयर भेजा गया था।

२. देखिए पा० १२१ पर पा० टि० ६।

३. देखिए पा० १०८ पर पा० टि० १।

४. इस तार के बाद भी हड़ताली बन्दियोंने हड़ताल स्थगित करने से इनकार कर दिया था।

१५८. पत्र : अतुलानन्द चक्रवर्तीको

सेगाँव, वर्धा
११ सितम्बर, १९३७

प्रिय अतुलानन्द,

मुझे खुशी है कि आप, आंशिक रूपसे ही सही, मेरे सुझावको[१] युक्तियुक्त समझते हैं। यदि संघ बनना ही है तो वह समयानुसार बन ही जायेगा।

कुछ समय पूर्व यदि आप महिलाओंकी समस्यापर अपनी पुस्तिका भेज भी चुके हों, तो भी कृपया उसकी एक और प्रति भेज दें ताकि मैं पढ़ सकूँ। मुझे यह भी बताइए कि आपका मासिक खर्च कमसे-कम कितना है। यदि आप अपने आत्म-निर्धारित लक्ष्यको पूरा करना चाहते हों तो आपको अपनी आयके भीतर ही खर्च पूरा करने की कला सीखनी होगी। और इसे सम्पादित करने के दो शाही रास्ते हैं। एक तो अपनी आवश्यकताओंको कमसे-कम कर देना, और दूसरा, अपना काम-धन्धा इस विधिसे चलाना कि कभी सिर पर ऋण न चढ़े। इन्हें छोड़कर और कोई तीसरा रास्ता नहीं है जो सीधा भी हो और जिसमें स्वाभिमानकी भी रक्षा हो सके। और जो रास्ता सम्मानरहित हो, वह शाही हो ही नहीं सकता।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी[२]

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १४७८) से; सौजन्य : ए० के० सेन

१५९. पत्र : कान्तिलाल गांधीको

सेगाँव, वर्धा
१२ सितम्बर, १९३७

चि० कान्ति,

इस समय मैं स्वयं तुझे पत्र नहीं लिख सकता। यह तू क्या कर रहा है? तू बेकार ही परेशान होता है। मुझे तो कोई कारण समझमें ही नहीं आता। यदि तेरी

१. देखिए "पत्र : अतुलानन्द चक्रवर्तीको", ९४-९५।

२. इसके बाद अधोलेखके रूपमें महादेव देसाईकी लिखावटमें निम्न प्रकार लिखा गया है : "कृपया अपनी पुस्तक की भी एक प्रति भेजिएगा। लगता है, आपने गांधीजी को जो प्रति दी थी वह विद्यापीठके पुस्तकालय को दे दी गई है।"

मनाही होती तो अमतुस्सलाम कभी त्रिवेन्द्रम न जाती। तूने उसे बुलाने के लिए कहा तो मैंने तुरन्त उस पर अमल किया। लेकिन रामचन्द्रन्,[1] सरस्वती और पपारम्मा, इन सबको नाराज करके तथा जब उसकी तबीयत सुधर रही थी तब उसमें खलल डालकर मैंने उसे बुलाना उचित नहीं समझा। यदि मुझे मालूम होता कि तू अभीतक इतना तुनुकमिजाज बना हुआ है — मैंने यह अब जाना — तो सारी जोखिम उठाकर भी मैं उसे बुला लेता। लेकिन मैं क्या जानता था कि बहुत ज्यादा बहादुरी जतानेवाले लड़केका दिल इतना कमजोर होगा कि कल्पना-मात्रसे बीमार पड़ जायेगा और बिस्तरसे नहीं उठ सकेगा। मैंने तो जब उससे किसी और बहानेसे बात की तो वह एकदम इस बातके लिए राजी हो गई कि वह तुझे कभी नहीं लिखेगी, न सरस्वतीको लिखेगी और न किसी औरको ही लिखेगी तथा त्रिवेन्द्रम जाने का नाम भी नहीं लेगी। इससे अधिक वह और क्या कर सकती है? इतना ज्यादा तिरस्कार किसलिए? मुझे तो उसमें कोई दोष दिखाई नहीं देता। वह किसीसे सेवा नहीं करवाती, चुपचाप सेवा करती रहती है। तू उससे इतनी ज्यादा घृणा करता है, सो किसलिए? तू जाग और तनकर खड़ा हो जा। इस घोर अन्धकारसे उजालेमें आ जा। जिस दुःखका कोई आधार नहीं उसका निवारण भी भला कैसे किया जाये? तुझे मैंने तार तो दिया ही है। उसके उत्तरकी प्रतीक्षामें हूँ।

मेरी तबीयत सुधरती जा रही है। मुझे आरामकी जरूरत है।

इस पत्रके साथ हिसाबका कागज वापस भेज रहा हूँ।

अभी-अभी रामचन्द्रन्का तार मिला है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७३३०) से; सौजन्य : कान्तिलाल गांधी

१६०. पत्र : प्रभावतीको

सेगाँव, वर्धा
१२ सितम्बर, १९३७

चि० प्रभा,

तेरा पत्र मिला। जिस तरह बड़े आदमियोंके पतोंमें परिवर्तन होता रहता है उसी तरह तेरे पते भी बदलते रहते हैं। एक दिन तू सिताब दियारामें होती है तो दूसरे दिन सीवान, पटना और तीसरे दिन न जाने कहाँ-की-कहाँ। कहीं भी चार दिन टिककर नहीं रहती। ऐसी हालतमें तुझे कहाँ लिखूँ? तू जो पता बताती है वहीं मैं पत्र लिखता हूँ; लेकिन पत्रके पहुँचने तक तू वहाँ नहीं रहती और इस तरह मेरा पत्र तुझ तक नहीं पहुँच पाता। इसका क्या उपाय है?

१. जी० रामचन्द्रन्।

मेरी तबीयत अच्छी है। कमजोरी तो है ही। बहुत ज्यादा मानसिक आरामकी जरूरत है। साथमें शरीरको भी आराम मिलना चाहिए; लेकिन शारीरिक आराम तो मिल ही जाता है। मानसिक-विश्राममें तनिक विघ्न पड़ता है। किस व्यक्तिके साथ कैसा व्यवहार किया जाये, यह प्रश्न मेरे सामने रहता है। तथापि मैं सबसे ठीक-ठीक व्यवहार कर पाता हूँ।

ऐसा नहीं कहा जा सकता कि बा का पैर बिलकुल ठीक हो गया है।

शेष सब सामान्य है। तेरे पत्रसे मैं यही मान लूँ न कि तू फिलहाल तुरन्त इधर आनेवाली नहीं है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५०५) से।

१६१. भेंट: विलियम बी० बेंटनको[1]

[१३ सितम्बर, १९३७ के पूर्व]

गांधीजी ने अपने सामने ६ फुटकी दूरीपर रखी हुई संतरोंकी पेटीसे आधे आकारकी एक वार्निशदार पेटीकी तरफ इशारा करते हुए कहा:

आप वहाँ बैठ जायें तो अच्छा हो।

मैंने उनसे भारतीय राजनीति और विजयी कांग्रेस पार्टीकी नीतियोंके बारेमें कुछ प्रश्न पूछे।

ऐसे प्रश्नोंके लिए यह उपयुक्त समय नहीं है। मुझे यहाँ काम करना है, और ऐसे प्रश्नोंका उत्तर देनेके लिए मैं समय नहीं निकाल सकता। आपको ये प्रश्न भारतके राजनीतिक नेताओंसे पूछने चाहिए। बेशक, मैं यह नहीं कहता कि मैं राजनीतिके बारेमें कुछ नहीं जानता। लेकिन ऐसे प्रश्नोंके लिए इस समय मुझे फुरसत नहीं है।

बहुत-से लोग ऐसा महसूस करते हैं कि किसी भी प्रकारका सहयोग एक भूल है। अन्य लोग इससे सहमत नहीं हैं; उन्हें लगता है कि अपने उद्देश्योंकी प्राप्तिके लिए शायद यह उचित है कि हम कभी-कभी अपने प्रतिपक्षीकी बात मान लें। दोनों ही तरहके लोग ईमानदार हैं।

हमने अभी-अभी एक बहुत बड़ी विजय प्राप्त की है और इससे हमारी जिम्मेदारी और भी बढ़ गई है। हमारा लगभग कोई विरोध नहीं हुआ। यही बात महत्वपूर्ण है। मुझे इस परिणामपर आश्चर्य नहीं हुआ, लेकिन यह दूसरोंके देखने की एक अच्छी चीज है। इससे दुनियाको हमारी ताकतका पता चलता है।

१. एक अमेरिकी पत्रकार।

तब हमने अमेरिकी लोकमत और भारतके प्रति उसके रुखके बारेमें बात की।

अमेरिकी जनमत हमारे लिए बहुत महत्त्व रखता है और हमें आशा है कि हम अपने कार्यों द्वारा उसे अपने पक्षमें कर लेंगे।

गांधीजी ने इस बातको स्वीकार किया कि ब्रिटेनकी विदेश-नीति अक्सर अमेरिकी जनमतसे प्रभावित होती है। उन्हें यह भी मालूम है कि इंग्लैण्ड अनेक कुटिल तरीकों से अमेरिकी लोकमतको अपने अनुकूल ढालने की कोशिश करता है।

हम लोग अमेरिकी जनमतको अपने पक्षमें करनेके लिए उन तरीकोंका प्रयोग नहीं कर सकते जो इंग्लैण्ड अपनाता है। हम उसके साथ इस मामलेमें कोई होड़ नहीं करते। हमारे तरीके भिन्न होने चाहिए। अमेरिकी जनमतको प्रभावित करने का हम कोई प्रयास नहीं करते। अमेरिकी लोग भावनात्मक रूपसे हमारे उद्देश्यके साथ सहानुभूति रखते हैं, लेकिन वे लोग सही तथ्योंसे और हमारी असली समस्यासे बहुत अनभिज्ञ हैं। उचित समय आने पर अमेरिकी लोग हमारे कार्योंके माध्यमसे सत्यको जान जायेंगे।

अमेरिकामें लोगोंकी आम धारणा है कि भारतको अपनी रक्षाके लिए इंग्लैण्डकी जरूरत है। अंग्रेजोंके न रहने पर क्या भारतमें नागरिक और धार्मिक उपद्रव शुरू हो जायेंगे? कांग्रेस पार्टी अंग्रेजोंको भारतसे बाहर निकालने के अपने प्रयत्नमें सफल हो गई तो क्या भारत किसी अन्य ताकतका शिकार हो जायेगा? कांग्रेस देशी नरेशोंसे किस तरह निबटेगी?

ये भ्रामक धारणाएँ हैं। वर्षोंसे इनका प्रचार किया जाता रहा है। इस तरहके खतरोंके बारेमें जो कहानियाँ गढ़ी गई हैं अथवा जो बातें कही जाती हैं, वे बहुत अतिरंजित होती हैं। मैं जानता हूँ कि कई अंग्रेज ईमानदारीसे इनपर विश्वास करते हैं; अतः आप स्वयं देख सकते हैं कि प्रचारमें कितनी शक्ति है।

जहाँतक देशी रियासतोंका सवाल है, जब भारत अपने सच्चे स्वरूपको प्राप्त कर लेगा, तब वे भी रास्ते पर आ जायेंगी।

गांधीजी को जो विषय अत्यन्त प्रिय है और जिसपर वे दिल खोलकर बात कर सकते हैं वह है भारतके गाँववालों या किसानोंके उत्थान के लिए चलाया गया उनका आन्दोलन। . . . ग्रामीणोंकी हालतमें सुधार करने के नये-नये तरीके ढूंढ़ने के लिए निरन्तर प्रयोग किये जा रहे हैं। महात्मा गांधीने मुझे बताया:

हमारी तरक्कीकी रफ्तार धीमी है, लेकिन आपको याद रखना होगा कि हमारा आन्दोलन नया है। हमने अपना आन्दोलन केवल आस्थाके बलपर शुरू किया था —केवल आस्था। आज इस आस्थाके साथ ही हमारे पास ज्ञान भी है।

और फिर उनके पोपले मुखपर वही चिरपरिचित मुस्कान खेल गई। [वे बोले:]

आप इसमें तीसरी बात और जोड़ सकते हैं—आपको अपनी इस भेंटकी कहानी बेचने पर जो पैसा मिलेगा उसमें से कुछ हमें दे दीजिएगा।

यदि आप समझते हैं कि आस्था और ज्ञानके संयोगमें बड़ी ताकत है, तब तो आस्था, ज्ञान और धनका संयोग और भी ज्यादा ताकतवर चीजें हैं।

हाँ, हाँ।

वे खिलखिला कर हँस पड़े।

क्या आपने कभी अमेरिकी फिल्म देखी है अथवा अमेरिकी जाज़ संगीत सुना है। ये हमारे यहाँसे निर्यात होनेवाली दो अत्यधिक प्रसिद्ध वस्तुएँ हैं।

नहीं, नहीं, मैंने नहीं देखी हैं और न जाज़ संगीत ही सुना है।

वे फिर हँसे [और बोले:]

यह आपके लिए एक अच्छी कहानी है। आप इसका चाहे जो उपयोग कर सकते हैं। मैंने कभी कोई चल-चित्र नहीं देखा है।

मैंने पूछा कि क्या आपके पास कभी कोई फिल्म नहीं लाई गई। वे फिर हँसे [और कहा:]

नहीं, मैंने कभी कोई फिल्म नहीं देखी है।

गांधीजी से विदा लेते हुए . . . मैंने वर्धामें बना कागजका एक टुकड़ा निकाला, जिसे मैंने एक आनेमें खरीदा था। मैंने उनसे पूछा कि क्या वे उसपर हस्ताक्षर कर देंगे।

नहीं, उन्होंने लजीली मुस्कानके साथ कहा और सिर घुमा लिया। तभी उन्होंने उस कागजको देखा और प्रसन्न-भावसे हँस पड़े और बोले:

नहीं, यह देखकर भी मुझे लोभ नहीं होता।[1]

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, १३-९-१९३७

१६२. पत्र : अमृतकौरको[2]

सेगाँव

१३ सितम्बर, १९३७

आज तो केवल प्यार ही भेज सकता हूँ, इससे अधिक कुछ नहीं।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८०६) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६९६२ से भी

१. यह रिपोर्ट सर्वप्रथम **न्यूयॉर्क टाइम्स**में प्रकाशित हुई थी।

२. ये पंक्तियाँ मीराबहन द्वारा अमृतकौरको लिखे पत्रके अन्तमें लिखी गई हैं।

१६३. तार : सुरेन्द्रनाथ मैत्रको[1]

[१४ सितम्बर, १९३७ के पूर्व][2]

अधिकारियों और बन्दियोंके साथ तार द्वारा मेरा संतत सम्पर्क जारी है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १५-९-१९३७

१६४. तार : नीलरतन सरकारको

वर्धा
१४ सितम्बर, १९३७

डॉ० नीलरतन सरकार
शान्तिनिकेतन

भगवान्को धन्यवाद है। गुरुदेवके शीघ्र स्वास्थ्य-लाभके लिए कितने ही लोग हृदयसे मौन प्रार्थना कर रहे हैं। प्रतिदिन तार द्वारा खबर अपेक्षित है।

गांधी

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९८७७) से।

१६५. पत्र : नारणदास गांधीको

सेगाँव, वर्धा
१४ सितम्बर, १९३७

चि० नारणदास,

इसके साथ गोकीबहनकी[3] ओरसे मनुका[4] लिखा हुआ पत्र भेज रहा हूँ। इससे मैं यह समझा हूँ कि बिजलीके नामपर एक रुपया किराया बढ़ाये जाने की बात

१. यह श्री मैत्रके उस तारके उत्तरमें था जिसमें गांधीजी से आग्रह किया गया था कि वे अण्डमानके शेष सात बन्दियोंका अनशन तुड़वाने के लिए फिरसे हस्तक्षेप करें।

२. यह रिपोर्ट दिनांक "कलकत्ता, १४ सितम्बर" के अन्तर्गत छपी थी।

३. रलियातबहन, गांधीजी की बहन।

४. हरिलाल गांधीकी पुत्री।

कही गई है। मैं समझता हूँ कि जितना पैसा मिलता है वह भाई बेचरलाल डाक्टरकी ओरसे अथवा उनकी स्मृतिमें दिया जाता है। इस व्यवस्थामें मैंने कोई दखल नहीं दिया है। अब तुम जाँच करना। यदि एक रुपया ज्यादा देना ठीक लगता हो तो उसके अनुसार तुम बेचरलालसे कहना। मैं जो समझता हूँ यदि वह ठीक नहीं है तो गोकी-बहनका मासिक खर्च कैसे चलता है, यह विस्तारसे बताना। उनसे कहना कि पत्र आनेके तुरन्त बाद मैंने उसपर कार्रवाई की है। तुम उन्हें मेरी तबीयतके बारेमें सूचित कर देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८५३८ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

१६६. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको

१५ सितम्बर, १९३७

ये तार[1] मैंने इस आशासे रोक रखे थे कि उन सात बन्दियोंकी "राहत" शब्दकी व्याख्याको मेरे स्वीकार कर लेने के फलस्वरूप उनके अनशन तोड़ने का सुखद समाचार मैं घोषित कर सकूँगा। मुझे दुःख है कि मैं अपने प्रयासमें असफल रहा। अब तो मैं केवल यही आशा कर सकता हूँ कि बन्दियोंके कोई विशेष मित्र उन्हें समझा-बुझाकर अनशन तोड़ने के लिए राजी कर सकेंगे। कारण, जिस राहतके लिए वे अपने प्राणोंका बलिदान कर रहे हैं वह राहत दिलाने के लिए जनताको सुसंगठित प्रयत्न करने का समय केवल तभी मिल सकता है।

अधिकारियोंसे भी, वे जो कोई भी हों, मेरी प्रार्थना है कि वे नरमी से काम लें और यदि बन्दी लोग उपवास नहीं छोड़ते, तो उन्हें उसी तरह रिहा कर दें, जिस तरह १९३३ में मेरे उपवास न छोड़ने पर मुझे रिहा करके अपने ही हालपर छोड़ दिया गया था।[2]

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १६-९-१९३७

१. देखिए "तार : गृह-सचिवको", पृ० १०७ पृ० १२० और पृ० १३८।
२. मई, १९३३ में; देखिए खण्ड ५५।

१६७. पत्र : अमृतकौरको

सेगाँव, वर्धा
१५ सितम्बर, १९३७

प्रिय अमृत,

बापूने आज मुझे तुम्हारे लिए अनेक सन्देश दिये हैं।

१. उनकी इच्छा है कि तुम सिखोंके उच्च वर्गमें मिलो-जुलो और नशाबन्दी आन्दोलनमें उनकी रुचि जाग्रत करो। जो लोग शराब पीते हैं उनका यह व्यसन छुड़वाना चाहिए और विशेष रूपसे स्त्रियोंमें जागृति पैदा करनी चाहिए ताकि वे एक प्रस्ताव तैयार करें।

मैं चाहूँगा कि गण्यमान्य सिख नशाबन्दीके सम्बन्धमें एक घोषणा करें।[1]

२. एन्ड्रयूजको डाक्टरकी बताई हुई खुराक ही खानी चाहिए। शायद उनकी शारीरिक दशा ऐसी है कि फल इत्यादिसे उन्हें सचमुच हानि पहुँचती हो। परन्तु अबतक तो अवश्य ही वे उस स्थितिको पार कर चुके होंगे। यह सब तो डाक्टरके मतपर ही निर्भर है। एन्ड्रयूज माँस खाते हैं, यह बात बापू अच्छी तरह जानते हैं।

३. बापू तुमसे बिलकुल सहमत हैं कि एन्ड्रयूजको मिस मेयोकी पुस्तकका जवाब देने का विचार छोड़ देना चाहिए। ऐसे उत्तरकी आवश्यकता न भारतमें है न पश्चिम में। इस विषयकी चर्चा एक बिलकुल स्वतन्त्र पुस्तक लिखकर ही हो सकती है।[2]

४. अक्तूबरसे पहले बापूके सीमा-प्रान्त जाने की कोई सम्भावना नहीं है। उनका जाना इस बातपर निर्भर करता है कि खान साहब[3] कब और कैसा पत्र लिखते हैं।

५. यह तो बड़ी अच्छी खबर है कि शिमला का खादी-भण्डार अब आत्मनिर्भर हो गया है।

६. बापू तुम्हारी पीतलकी बाल्टीको देख लेंगे, और यदि जँची तो अपने उपयोग में लायेंगे।

७. तुम्हारा पंखा सहेजकर रख दिया गया है। यहाँ और बहुतेरे पंखे हैं। जब तुम लौटोगी तब तुम्हारे उपयोगके लिए उसे अलग रख दिया गया है।

१. यह पंक्ति और हस्ताक्षर गांधीजी ने अपने हाथसे जोड़ दिये थे।

२. सी० एफ० एन्ड्रयूजने कैथरिन मेयोकी पुस्तक **मदर इंडिया** का जवाब **द टू इंडिया** नाम की पुस्तक १९३८ के ग्रीष्म-कालमें लिखकर पूरा किया था।

३. अब्दुल गफ्फार खाँ।

८. बापूका दायाँ हाथ अब काम करने लायक तो हो गया है, परन्तु उन्हें लगता है कि उसे अभी जितना आराम दिया जा सके उतना ही अच्छा होगा। उनका कहना है कि इसका एक लाभ यह भी है कि इस मजबूरी के कारण वे ज्यादा नहीं लिखेंगे और इस प्रकार उन्हें जबर्दस्ती आराम मिल जायेगा।

९. बापूके विचारमें तुम्हारे हिन्दी अक्षर काफी सुधर गये हैं और अब वे बड़े-बड़े भी नहीं होते।

१०. बालकोबाकी[1] दशामें धीरे-धीरे सुधार हो रहा है। वे अपनी पूरी खुराक ले पाते हैं और वजन भी एक पौंड बढ़ा है।

बापूके स्वास्थ्यमें सचमुच उन्नति हुई है। वे दवाई अधिक मात्रामें ले रहे हैं क्योंकि वह उन्हें माफिक आई है और रक्तचाप घटाने में लाभदायक है। यहाँ मौसम खूब अच्छा है।

बहुत-सा प्यार

मीरा

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८०७) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६९६३ से भी

१६८. पत्र : मनहरराम मेहताको

१५ सितम्बर, १९३७

भाई मनहरराम,

स्वाँगी, भाट और चारणों आदिसे तो ठेठ बचपनसे मैं परिचित हूँ और तभीसे उनपर मुग्ध रहा हूँ। किन्तु इन बेचारोंको हमने ओछा मानकर निम्न कोटिके लोगोंमें धकेल दिया है। समय बीतने के साथ वे भी स्वयंको [वैसा ही][2] मानने लग गये। यह विचार मुझे तो बहुत अच्छा लगता है, किन्तु इसपर किस प्रकार अमल किया जा सकता है, यह तो तुम-जैसे लोगोंके सोचने की बात है।

गुजरातीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

१. बालकृष्ण, विनोबा भावेके छोटे भाई।
२. यहाँ कुछ शब्द पढ़े नहीं जा सके।

१६९. पत्र : चन्द्रशंकरको

१५ सितम्बर, १९३७

भाई चन्द्रशंकर,

मैं भी निश्चय ही कताईपर जोर देता हूँ और सो भी तकली-कताई पर। अनुभवके आधारपर मेरा यह विश्वास दृढ़ होता जाता है कि हिन्दुस्तानमें इतनी छोटी किन्तु व्यापक, इतनी सस्ती, इतनी कलात्मक, इतनी उपयोगी, इतनी सुन्दर अन्य कोई भी वस्तु या . . .[1] नहीं है।

मेरा यह भी दावा है कि अंग्रेजीके अतिरिक्त अन्य विषयोंकी जो शिक्षा आज दी जाती है उतनी शिक्षा उद्योगोंके द्वारा उतने ही समयमें दी जा सकती है। तुम्हारे इतना आश्वासन देने के बावजूद यदि माता-पिता उद्योगका नाम सुनते ही घबरा जाते हैं, तकलीका नाम सुनते ही घबरा जाते हैं, तकलीका नाम सुनते ही उन्हें . . .[2] आ जाता है और यदि तुम डेढ़ रुपयेकी बजाय आठ आने या चार आने वजीफ़ा देते हो किन्तु इसके बावजूद वे बच्चोंको न भेजते हों तो यदि तुम्हारी जगह मैं होऊँ तो पाठशालाको बन्द करके कोई अन्य काम करूँ। सच्चा शिक्षक अपनी ही शर्तपर पढ़ायेगा। माता-पिता या . . .[3] शिक्षाके बारेमें जिन्हें कोई जानकारी नहीं हैं, उनकी शर्त पर कदापि नहीं।

गुजरातीकी नकलसे। प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

१७०. पत्र : नरसिंहभाईको

१५ सितम्बर, १९३७

भाई नरसिंहभाई,

कमला स्मारक-कोषमें बहुत कम पैसा आया है। सबसे बड़ी रकम जवाहरलालके प्रवासके दौरान ही मिली है। यह भी बेचारी कमलाके नामपर नहीं, बल्कि उसके पतिके नामपर आई ही समझिए। जिस प्रकार योगिनी स्त्रियाँ किसीपर कोई बोझ डाले बिना चिर-निद्रामें लीन हो जाती हैं, ऐसा ही कमलाके साथ हुआ है। इस स्मारककी अवधारणाके मूलमें यही भावना है। प्रयागके कांग्रेस अस्पतालके कामको उन्होंने अपने जिम्मे ले लिया था। उसके लिए वे जीवन-पर्यन्त पैसा इकट्ठा करती रहीं। केवल उन्हींके प्रयत्नसे यह अस्पताल चलता था। उनके देहान्तके बाद उसमें

१ से ३. उक्त अंश साधन-सूत्रमें अस्पष्ट हैं।

ताला डाल देनेकी स्थिति आ गई थी। इसलिए मुझ-जैसे दो-तीन लोगोंने — जो उन्हें अच्छी तरह जानते थे — विचार किया कि यह अस्पताल कायम रहना चाहिए। इसका सबसे सरल उपाय यह था कि उसे कमलाके स्मारकका रूप दे दिया जाये। जवाहरलालने उसमें अपनी छोटी-सी जायदादका आधा हिस्सा दे दिया। अब इस दो-ढाई लाखकी रकमका उपयोग नीति-भंग किये बिना कैसे किया जाये? इसके अलावा जिन लोगोंने पैसा दिया है, इस बातसे अभिज्ञ होते हुए दिया है। इसलिए इस पैसेका उपयोग प्रयागके अस्पतालके लिए हो, इसीको हमें अपना कर्त्तव्य मानना चाहिए। और अगर हम एसा नहीं मानते कि प्रयागकी बहनें जो-कुछ पाती हैं वह वास्तवमें हम सब भी प्राप्त कर रहे हैं तो इसका मतलब यह होगा कि हम भारतवासी न होकर, अपने-अपने प्रान्तके ही निवासी हैं। हमें तो 'गीता'के इस वचनका अनुसरण करना चाहिए कि कृष्णार्पण करके जो-कुछ सेवा-भावसे दिया जाता है वह कृष्णके ही पास पहुँचता है। और यह कृष्णार्पण भारतके लिए है — और उसका माध्यम है कमला-स्मारक। इसलिए अन्य सभी विचार लोग अपने मनसे निकाल दें।

गुजरातीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

१७१. पत्र : डॉ० धनजी शाहको

१५ सितम्बर, १९३७

भाई धनजी शाह,

आपके पत्रके लिए आभार मानता हूँ। आपने जो लिखा है उससे यह प्रकट होता है कि खादी-सेवकोंका अभाव है। आप-जैसे खादी पहननेवाले बहुत हैं। खादी-सेवक तो उसीको कहा जायेगा जो खादी तैयार करता हो, खुद पहनता हो और दूसरोंको भी पहनने को राजी करता हो। अगर सब पहननेवाले ही हों और तैयार करानेवाला कोई नहीं तो खादी एक दिन भी नहीं चल सकती, वैसे ही जैसे 'अवेस्ता'को पढ़नेवाले तो बहुत-से लोग हों और उसके अनुसार आचरण करनेवाला कोई न हो तो जरथुस्तका फरमान नहीं चल सकता। इसलिए आपको मेरा सुझाव तो यह है कि जहाँ लोग आपको खादी पहनते न दिखें वहाँ कोशिश करके उन्हें पहनने के लिए राजी कीजिए।

डॉ० एम० धनजी शाह, तान्त्रिक
एडियूर
डाकघर-मंड्या (मैसूर)

गुजरातीकी नकलसे। प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

१७२. पत्र : अमृतकौरको

सेगाँव, वर्धा
१५ सितम्बर, १९३७

मूर्खा रानी,

आजकल तो मैं मीराके माध्यमसे ही तुमसे बातचीत करने को विवश हूँ।[१]

तुम्हारा उत्तर मैं पढ़ गया। काफी ठीक है और काफी दृढ़तापूर्ण भी, ठीक तुम्हारे समान। तुम्हारी दुर्बलता तो केवल मित्रोंके लिए है। इसका क्या उत्तर मिलता है, इसे जानने की उत्सुकता रहेगी। नाम बदलने का क्या कारण है? क्या इसमें धन स्मारक-कोषमें से लगेगा, इस कारण? आशा है, तुमने इस बातका अच्छी तरह निश्चय कर लिया होगा कि तुम्हारा एतराज उचित कारणोंपर आधारित है।

नबीबख्श[२] तो अब आता ही होगा। उससे मेरा प्यार कहना।

विचित्र बात है कि तुम्हें वहाँ अच्छी मिट्टी नहीं मिलती।

तुम पूरी नींद लेती हो या नहीं? अब तो पाबन्दीका समय हो रहा है, इसलिए शुभ-रात्रि और प्यार।

तानाशाह

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८०८) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६९६४ से भी

१७३. तार : नीलरतन सरकारको

[१७ सितम्बर, १९३७ या उसके पूर्व][३]

ईश्वर बड़ा महान् और दयालु है। आप गुरुदेवकी रोग-शय्याके पास ही हैं इससे मन बहुत आश्वस्त है। कृपया जबतक पूर्ण स्वास्थ्य-लाभ न हो तबतक प्रतिदिन तार देते रहिए।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १७-९-१९३७

१. देखिए "पत्र : अमृतकौरको", पृ० १४६।

२. अमृतकौरका नौकर।

३. यह रिपोर्ट दिनांक "शान्तिनिकेतन, १७ सितम्बर", के अन्तर्गत हुई थी।

१७४. पत्र : अमृतकौरको[1]

सेगाँव
१७ सितम्बर, १९३७

आज अधिक नहीं।
स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८०९) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६९६५ से भी

१७५. पत्र : जमनालाल बजाजको

सेगाँव, वर्धा
१७ सितम्बर, १९३७

चि० जमनालाल,

यह देखकर कि [ग्राम] उद्योग संघके इतने सारे सदस्य यहाँ आये हैं, मुझे शर्म आई और दुःख हुआ। ऐसे कामके लिए मुझे वहाँ जाना चाहिए था। इससे खर्च वगैरह भी बच जाता। मेरे शरीरको तो इस तरह घूमने-फिरने से कोई नुकसान नहीं होता; बल्कि वहाँ न जाकर सबको यहाँ घसीटने पर मुझे तो बहुत दुःख होता है। इसलिए तुम मुझे मोटर अथवा घोड़ागाड़ी समयपर पहुँचा देना, जिससे कि मैं ज्यादासे-ज्यादा पौने दो बजे तक वहाँ पहुँच सकूँ। सबको अपने बँगलेपर ही बुलाना। और यदि बँगलेमें [बैठक बुलाना] सम्भव न हो तो खुशीसे मगनवाड़ी ले जाना। चरखा संघके जितने सरल अथवा जटिल कार्योंको भी तुम अपने हाथमें ले सकते हो, ले लेना ताकि हम अत्यन्त महत्त्वपूर्ण मामलोंपर बातचीत कर सकें।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९८८) से।

१. ये पंक्तियाँ मीराबहन द्वारा अमृतकौरको लिखे पत्रके अन्तमें लिखी हुई हैं।

१७६. बातचीत : एक शिक्षा-शास्त्रीके साथ[1]

[१८ सितम्बर, १९३७ के पूर्व]

[गांधीजी ने] इस विचारके विरुद्ध चेतावनी दी कि स्वावलम्बी शिक्षाका विचार शराबबन्दीको जल्दीसे-जल्दी लागू करने की आवश्यकताके कारण पैदा हुआ है।

दोनों एक-दूसरेसे स्वतन्त्र आवश्यकताएँ हैं। आपको इस विश्वासको लेकर चलना होगा कि सरकारी आय हो या नहीं, शिक्षा दी जा सके या न दी जा सके, पूर्ण शराबबन्दी करनी ही होगी। इसी तरह आपको इस विश्वासको लेकर चलना होगा कि हिन्दुस्तानके गाँवोंकी आवश्यकताओंको देखते हुए यदि हम शिक्षाको अनिवार्य बनाना चाहते हैं, तो हमें अपनी ग्राम-शिक्षाको स्वावलम्बी बनाना होगा।

[शिक्षा-शास्त्री :] पहला विश्वास तो मेरे मनमें गहरा पैठा हुआ है। मेरे लिए शराबबन्दी स्वयंमें एक लक्ष्य है, और मैं इसको अपने-आपमें एक बड़ी भारी शिक्षा मानता हूँ। इसलिए शराबबन्दीको सफल बनाने के लिए मैं शिक्षाका सर्वथा बलिदान करने के लिए तैयार हूँ। लेकिन दूसरे विश्वासका मुझमें अभाव है। मैं अभी तक इस बातपर विश्वास नहीं कर सका हूँ कि शिक्षा स्वावलम्बी बनाई जा सकती है।

यहाँ भी मैं यह चाहता हूँ कि आप विश्वासको लेकर चलें। ज्यों ही आप उसपर अमल करना शुरू करेंगे, आपको उसके उपाय और साधन सूझते चले जायेंगे। मुझे खेद है कि इस बातकी ओर मेरा ध्यान इतनी उम्र बीत जाने पर गया है, अन्यथा मैं खुद ही यह परीक्षण करता। अब भी, यदि ईश्वरने चाहा तो यह दिखाने के लिए कि शिक्षा स्वावलम्बी हो सकती है, मुझसे जो-कुछ हो सकेगा, करूँगा। लेकिन इन वर्षोंके दौरान मेरा समय अन्य बातोंमें चला गया, जो शायद इतनी ही महत्त्वपूर्ण थीं, लेकिन मेरे सेगाँव-निवासके कारण मुझे इसके बारेमें पक्का विश्वास हो गया है। अभीतक हमने अपने बच्चोंके दिमागमें हर तरहकी जानकारीको ठूँसकर भरने की ही कोशिश की है और उनकी बुद्धिको जाग्रत करने व उसका विकास करने की ओर कभी ध्यान नहीं दिया है। अब हमें अपना पुराना ढंग रोक देना चाहिए और एक गौण प्रवृत्तिके रूपमें नहीं, बल्कि बौद्धिक शिक्षाके एक प्रमुख साधनके रूपमें हमें शारीरिक श्रम द्वारा बच्चोंको उचित रूपसे शिक्षा देने में अपनी शक्ति लगानी चाहिए।

१. महादेव देसाईके "टॉक्स ऑन सेल्फ-सपोर्टिंग एजुकेशन" (स्वावलम्बी शिक्षापर बातचीत) शीर्षक लेखसे उद्धृत।

यह भी मैं समझता हूँ, लेकिन यह क्यों जरूरी है कि वह शिक्षा स्कूलको भी सहारा दे ?

यह उसकी उपयोगिताकी कसौटी होगी। चौदह वर्षकी उम्र होने, अर्थात् सात वर्षका शिक्षा-क्रम समाप्त करने के बाद, जब विद्यार्थी स्कूल छोड़कर जाये तब उसे कुछ कमा सकने योग्य होना चाहिए। अब भी गरीब लोगोंके बच्चे अपने माता-पिता-को अपने-आप सहारा देते हैं, इसके पीछे उनके मनम यही भाव होता है कि अगर वे उनके साथ काम न करेंगे तो उनके माता-पिता क्या खायेंगे और क्या उन्हें खाने को देंगे। यह स्वयं ही एक शिक्षा है। इसी तरह राज्य सात वर्षकी उम्रमें बच्चेको अपनी देख-रेखमें ले लेता है और फिर उसके कुटुम्बको एक कमाऊ इकाईके रूपमें सौंप देता है। आप शिक्षा भी देते हैं, और साथ-ही-साथ बेकारीकी जड़ भी काटते जाते हैं। आपको बच्चोंको किसी-न-किसी धन्धेके लिए तैयार करना होगा। आप इस खास धन्धेके साथ ही उसकी बुद्धिको प्रशिक्षित करते हैं, शरीरको सुगठित करते हैं, हाथकी लिखावटको सुधारते हैं, उसकी कलाकी भावनाको जाग्रत करते हैं, आदि-आदि। इस तरह उसे जो दस्तकारी सिखाई जायेगी उसमें वह निपुण हो जायेगा।

लेकिन मान लीजिए कि लड़का खादी बनाने की कला और विज्ञान लेता है, तो क्या आप समझते हैं कि खादी बनाने की कलाको हस्तगत करने के लिए उसे सात वर्ष लगने चाहिए ?

हाँ ? अगर वह उसे यन्त्रवत् नहीं सीखता है तो उसे सात वर्ष लगने चाहिए। इतिहास अथवा भाषाके अध्ययनमें हम वर्षों क्यों लगाते हैं ? आजतक इन विषयोंको जो कृत्रिम महत्त्व प्रदान किया गया है, उनकी अपेक्षा इस उद्योगका महत्त्व क्या कम है ?

लेकिन आप चूँकि मुख्यतः कताई और बुनाई के बारेमें सोचते रहते हैं, इसलिए जाहिर है कि आप इन स्कूलोंको बुनाई के स्कूलोंमें परिवर्तित करने की बात सोच रहे हैं। हो सकता है कि बालककी रुचि बुनाई के काममें न होकर किसी दूसरे काममें हो।

तब हम उसे कोई दूसरा उद्योग सिखायेंगे। लेकिन आपको यह जान लेना चाहिए कि एक ही स्कूलमें बहुत सारे उद्योगोंकी शिक्षा नहीं दी जायेगी। धारणा यह है कि हमें २५ लड़कोंके पीछे एक शिक्षक रखना चाहिए, और आपको जितने शिक्षक मिल सकें, आप हरएक २५ लड़कोंके लिए एक वर्ग या स्कूल खोल सकते हैं, और इनमें से हरएक स्कूलके लिए अलग-अलग उद्योग, जैसे बढ़ईगिरी, लुहारी या जूता वगैरह बनाने का धन्धा नियत कर सकते हैं। आपको सिर्फ यह बात ध्यानमें रखनी होगी कि इन उद्योगोंके द्वारा आपको बच्चोंकी बुद्धिका विकास करना है। साथ ही, मैं एक बातपर और जोर दूँगा। आप शहरोंको भूल जाइए और गाँवोंपर अपनी शक्ति केन्द्रित कीजिए। वे समुद्र हैं। शहर तो इस सिन्धुमें बूँदके समान हैं। यही वजह है कि आप ईंट बनाने-जैसे विषयकी कल्पना भी नहीं कर सकते। अगर

वे सिविल और मेकेनिकल इंजीनियर ही होना चाहेंगे, तो वे सात वर्षकी शिक्षा खत्म करने के बाद इन उच्च और खास विषयोंके लिए बने हुए खास कॉलेजोंमें चले जायेंगे।

साथ ही, मैं एक बातपर और जोर दूँगा। शारीरिक श्रमको शिक्षासे दूर रखने के कारण हम ग्रामीण उद्योग-धन्धोंको हलका समझने के अभ्यस्त हो गये हैं। शारीरिक श्रमको कुछ नीचे दर्जेका काम समझा जाने लगा, और वर्णाश्रमकी भीषण विकृतिके कारण हम लोग कतैयों, जुलाहों, बढ़ई और मोचियोंको नीची जातिका और सर्वहारा समझने लगे। दस्तकारियोंको कौशलसे रहित नीचे दर्जेकी कोई चीज समझने के बुरे रिवाजके कारण ही हमारे यहाँ क्रॉम्पटन[1] और हारग्रीव्ज[2]-जैसे आविष्कारक पैदा न हो सके। विद्याको जैसा दर्जा मिला हुआ है, अगर पेशे या हुनरको भी स्वतन्त्र रूपसे वैसा ही दर्जा मिला होता, तो हमारे कारीगरोंमें से कई आविष्कारक हो गये होते। बेशक, कातने की मशीनके फलस्वरूप जल-शक्ति और दूसरी चीजोंका आविष्कार हुआ, जिससे मिलोंने हजारों मजदूरोंका स्थान ले लिया। मेरे विचारमें यह आसुरी चीज थी। गाँवोंको अपने ध्यानका केन्द्र बनाकर हम इस बातका खयाल रखेंगे कि हुनरकी गहन शिक्षाके कारण विद्यार्थियों में शोधबुद्धिका विकास हो और वह सारे गाँवकी जरूरतें पूरी करनेवाली हो।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १८-९-१९३७

१७७. बन्दरोंके विषयमें

मेरे सामने अमेरिकासे आये लगभग पचास पत्र पड़े हुए हैं। उनमें मुझसे कहा गया है कि जीवित प्राणियोंकी चीरफाड़के प्रयोगके प्रयोजनसे हिन्दुस्तानसे बन्दरोंके निर्यातका जो सिलसिला चल रहा है उसे बन्द कराने के लिए मैं जो-कुछ कर सकता हूँ वह करूँ। इनमें से कुछ तो जीवदया-मण्डलोंके और जीवित जानवरोंकी चीरफाड़का विरोध करनेवाली संस्थाओंके हैं। उन्होंने इससे सम्बन्धित कुछ मनोरंजक साहित्य भी भेजा है, जिसमें इस चीरफाड़की भयंकर तसवीरें और तफसीलें दी हुई हैं। प्रख्यात डाक्टरोंकी रायें भी उन्होंने भेजी हैं, जिनमें उन्होंने इस क्रियाकी उपयोगिताके खिलाफ अपना मत व्यक्त किया है। इसी तरहके एक पत्रमें असीसीके सन्त फ्रान्सिसका चित्र भी है, जो पशु-पक्षियोंको अपने भाई-बहनोंकी तरह प्यार करते थे। सन्त फ्रान्सिसकी नीचे लिखी एक प्रार्थना पाठकोंको अवश्य पसन्द आयेगी :

१. स्पिनिंग म्यूलके आविष्कारक सैम्युअल क्रॉम्पटन, तथा अधिक परिष्कृत बुनाई की खड्डीके आविष्कर्त्ता विलियम क्रॉम्पटन और उनके पुत्र जॉर्ज क्रॉम्पटन।

२. स्पिनिंग जेनीके आविष्कारक जेम्स हारग्रीव्ज।

प्रभो, मुझे अपनी शान्तिका साधन बना। द्वेषकी जगह मुझे प्रेमके बीज बोने दे; अत्याचारके बदले क्षमा, शक और सन्देहके बदले विश्वास, निराशा के स्थानपर आशा, अन्धकार की जगह प्रकाश, और विषादकी भूमिमें आनन्दका संचार करने दे।

भगवन्, मुझे यह वरदान दे कि किसीको मुझे सान्त्वना देने की जरूरत ही न पड़े, बल्कि मैं लोगोंको सान्त्वना दूँ; लोग मुझे समझें, इसके बजाय मैं ही उन्हें समझूँ; लोग मुझे प्यार करें, इसके बजाय मैं ही उनसे प्यार करना सीखूँ; क्योंकि देने से ही हमें प्राप्त होता है; क्षमा करने से ही हम क्षमाके पात्र बनते हैं और मरकर ही हम शाश्वत जीवन प्राप्त करते हैं।

इन पत्र-लेखकोंके साथ मेरी पूरी सहानुभूति है। मेरा बस चले तो हत्या या चीरफाड़के लिए मैं एक भी बन्दरको बाहर न जाने दूँ। इन पत्र-लेखकोंको मेरी यही सलाह है कि भारत सरकारको उन्हें इस सम्बन्धमें प्रार्थनापत्र भेजने चाहिए और यदि उनके प्रार्थनापत्रोंको लोगोंका पर्याप्त समर्थन प्राप्त होगा तो सरकार उस पर अवश्य ध्यान देगी। दूसरा उपाय स्पष्ट ही यह है कि बन्दरोंको बाहर भेजने के खिलाफ देशमें जोरदार आन्दोलन किया जाये। लेकिन जहाँतक मैं समझता हूँ, यहाँ इस प्रवृत्तिकी बहुत कम सम्भावना है। क्योंकि जनसाधारणको शायद इस बातका पता भी न हो कि बन्दरोंको बाहर भेजा जाता है, और मेरी समझमें नहीं आता कि मैं उन लोगोंको बन्दरोंको विदेश भेजने से कैसे रोक सकता हूँ जिनके लिए निजी तौरपर यह व्यापार बहुत फायदेमन्द है। इसलिए इस सम्बन्धमें मैं तो केवल यही इच्छा व्यक्त कर सकता हूँ कि हिन्दुस्तान इस अमानुषिक व्यापारसे दूर ही रहे। अगर यह सिद्ध भी हो जाये कि इस तरहकी चीरफाड़से हम मनुष्य-जातिकी पीड़ाको कम कर सकते हैं, तो भी निम्न श्रेणीके प्राणियोंपर ऐसा अत्याचार करना सरासर अन्याय है। मनुष्य-मात्रके दुःखको कम करने का ध्येय कोई ऐसा ध्येय नहीं है जिसके लिए मनुष्येतर प्राणियोंकी चीरफाड़में निहित अमानुषिकताको उचित कहा जा सके। इसके विपरीत, मनुष्य-जातिका उद्देश्य तो यह होना चाहिए कि वह कोमलता और दयाको कभी न छोड़े। इसके परिणामस्वरूप अगर उसके कष्टोंका सिलसिला कायम रहता है तो रहे, उसके कष्ट और भी बढ़ जाते हैं तो बढ़ें। मेरा तो यह कहना है कि दूसरे मनुष्यों अथवा मनुष्येतर प्राणियोंके प्रति दया-धर्म रखने से हमारा दुःख और पीड़ा कम होती है, क्योंकि इससे हमें उस पीड़ाको सहने की शक्ति मिलती है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १८-९-१९३७

१७८. मद्यनिषेधका सामाजिक पक्ष

मद्यनिषेधकी नीतिको सफल बनाने की इच्छा रखनेवाले हरएक आबकारी मन्त्रीको यह उत्कृष्ट लेख[१] अवश्य पढ़ना चाहिए। शराबकी प्रत्येक दुकानको मनोरंजन केन्द्रमें परिवर्तित कर देना चाहिए। पैसा तो है ही—नई व्यवस्था लागू होने से पहले आबकारीसे मिलनेवाला पैसा।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १८-९-१९३७

१७९. शिक्षा-मन्त्रियोंके लिए

दक्षिण भारतके एक उच्च विद्यालयके अध्यापकने विद्यार्थियोंपर सरकारकी ओरसे लगाये गये कुछ प्रतिबन्धोंकी झलक देनेवाले कतिपय नियम उद्धृत करके भेजे हैं, जो निम्न प्रकार हैं:[२]

> **नियम ९९.** सरकारके विरुद्ध किसी भी आन्दोलनमें हिस्सा लेने के जुर्ममें जिस विद्यार्थीको अदालतसे सजा हुई है, उसे पहले से सरकारकी अनुमति लिये बिना किसी स्कूलमें दाखिल न किया जाये। स्कूलके किसी अधिकारी या नौकरको सरकारकी सत्ताके विरुद्ध किसी भी राजनीतिक आन्दोलनमें भाग न लेने दिया जाये, या उसे ऐसी कोई राय जाहिर न करने दी जाये जिससे कि सरकारके विरुद्ध अराजभक्ति और अप्रीतिके भावोंको बढ़ावा मिलता हो। विद्यार्थियोंको राजनीतिक सभाओंमें या किसी प्रकारके राजनीतिक आन्दोलनमें भाग न लेने दिया जाये।
>
> **१००.** अध्यापक या संचालकगण अगर ऐसा व्यवहार करना जारी रखते हैं या विद्यार्थियोंके इस तरहके व्यवहारको प्रोत्साहन देते हैं अथवा वैसा करने की इजाजत देते हैं तो उन्हें उचित चेतावनी देने के बाद शिक्षा-विभागका निदेशक उस स्कूलको अमान्य करार दे सकता है अथवा उक्त स्कूलको

१. लेख यहाँ नहीं दिया गया है। इसमें जॉन बारनाबासने उन विभिन्न सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियोंकी चर्चाकी थी जिनसे विवश हो एक आम आदमी शराबकी शरण जाता है। अतः उन्होंने सुझाव दिया था कि मजदूरोंके लिए शराबकी दुकानोंके स्थानपर मनोरंजन और जलपान-गृहकी व्यवस्था कर शराबबन्दीको विवेकपूर्ण ढंगसे लागू किया जा सकता है।

२. यहाँ कुछ अंश ही दिये जा रहे हैं।

सरकारकी ओरसे दी जानेवाली सहायता बन्द कर सकता है, अथवा उस स्कूलके विद्यार्थियोंको सरकारी छात्रवृत्तियोंसे सम्बन्धित परीक्षाओंमें बैठने से और सरकारी छात्रवृत्ति पानेवाले विद्यार्थियोंको ऐसे स्कूलमें दाखिल होने से रोक सकता है।

१०१. यदि किसी शिक्षकके सार्वजनिक भाषण इस ढंगके हैं कि उनसे उसकी देख-रेखमें विद्याध्ययन करनेवाले विद्यार्थियोंके अपरिपक्व मस्तिष्क में सत्ता के प्रति आदर-भावका ह्रास करनेवाले सिद्धान्तोंका प्रवेश होता है और इस तरह उनसे लड़कोंके व्यवस्थित विकासमें बाधा पड़ती है और यदि वे भाषण ऐसे हैं जिनसे भावी नागरिकोंके रूपमें लड़कोंकी उपयोगिता कम होती है या बादके जीवनमें उनकी तरक्कीमें बाधा पड़ सकती है, या यदि यह पाया जाता है कि वह शिक्षक स्वयं ही विद्यार्थियोंको किसी राजनीतिक सभामें ले जा रहा है अथवा उसने जान-बूझकर उन्हें वहाँ जाने के लिए प्रोत्साहित किया है तो उसके इस आचरणको कर्त्तव्य-विमुखता माना जायेगा और उसके विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्रवाई की जायेगी।

७९. स्कूलमें (धार्मिक शिक्षा देनेवाली पुस्तकोंके अतिरिक्त) ऐसी किसी भी पुस्तकका कतई उपयोग नहीं किया जाना चाहिए जिसपर सरकारने अपनी स्वीकृति न दी हो। स्कूलोंमें किसी पुस्तक या पुस्तकोंका उपयोग करने या करने देने का अधिकार सरकारने अपने हाथमें रखा है।

८०. (इस धाराके अनुसार सभी बालकोंको टीका लगना चाहिए। यद्यपि इसपर अमल नहीं होता, फिर भी इस धाराको निकाल ही दिया जाना चाहिए।)

सरकार द्वारा स्वीकृत स्कूलोंके ऊपर राष्ट्रीय झंडा न फहराया जाये, वर्गोंमें राष्ट्रीय नेताओंके चित्र न लटकाये जायें, किसी स्कूलके विद्यार्थी परीक्षामें प्रश्नोंके उत्तरोंमें राष्ट्रीय विचार जाहिर करें तो उन्हें सजा दी जाये। . . .

इनमें से अधिकांश प्रतिबन्ध तो तत्काल हटा दिये जाने चाहिए। विद्यार्थियों अथवा शिक्षकोंके दिलको पिंजरेमें बन्द नहीं करना चाहिए। शिक्षक तो विद्यार्थियोंको वही रास्ता बता सकते हैं जिस रास्तेको वे या राज्य सबसे अच्छा समझते हों। ऐसा करने के बाद उन्हें अपने विद्यार्थियोंके विचारों और भावनाओंको दबाने का कोई अधिकार नहीं है। इसका अर्थ यह नहीं कि विद्यार्थियोंपर किसी प्रकारका अनुशासन नहीं होना चाहिए। अनुशासनके बिना कोई स्कूल चल ही नहीं सकता। किन्तु विद्यार्थियोंके सर्वांगीण विकासपर लगाये गये कृत्रिम अंकुशको अनुशासन नहीं कहते। जहाँ उनके पीछे जासूस लगाये जाते हों, वहाँ सर्वांगीण विकास असम्भव है। असल बात यह है कि आजतक वे जिस प्रकारके वातावरणमें रहे हैं, वह साफ ही अराष्ट्रीय रहा है। यह वातावरण अब दूर हो जाना चाहिए। विद्यार्थियोंको

जानना चाहिए कि राष्ट्रीय भावनाको विकसित करना कोई अपराध नहीं, किन्तु एक सद्गुण है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १८-९-१९३७

१८०. स्वावलम्बी स्कूल

भारतकी आर्थिक अवनतिका मुख्य कारण यह है कि उसके मजदूर अपने जीवनकी शुरुआत बहुत जल्दी करते हैं। . . . कच्ची उम्रके बालकोंको औद्योगिक प्रशिक्षण देने से उनका दिमाग कुन्द हो जाता है और विकास रुक जाता है और वे कामके आर्थिक महत्त्वको नहीं समझ पाते हैं। ऐसे मजदूरका कोई भी शोषण कर सकता है। . . . जब मैं लंकाके चाय-बगानोंको देखने गया था तब सबसे ज्यादा दुःख तो मुझे यह देखकर हुआ था कि वहाँ बच्चोंसे मजदूरी करवाई जाती है। . . . लंका-जैसे देशमें भी, जहाँ प्राकृतिक साधनों का पूरा लाभ उठाने की दृष्टिसे आबादी कम है, बच्चोंसे मजदूरी करवाने का औचित्य नहीं हो सकता — भारतमें तो और भी नहीं, क्योंकि यहाँ बच्चोंको कामपर लगाने से बड़े बेकार हो जाते हैं।

हम अपने-आपको इस भ्रममें न रखें कि माल तैयार करके बाजारमें बेचनेवाले कारखानों-जैसे स्वावलम्बी स्कूल बच्चोंको शिक्षा देंगे। व्यवहारमें तो यह कानूनन बच्चोंसे मजदूरी करवाने की बात ही होगी। . . . मैं 'हरिजन' के सम्पादक की इस बातसे सहमत नहीं हो सकता कि कपड़ेके एक थानके लिए कितने सूतकी जरूरत है, यह गिनकर हिसाब सीखा जा सकता है या रुईके तनावके विकास और सुधारको देखकर विज्ञान और भूगोलकी शिक्षा प्राप्त की जा सकती है। . . . हाथ, कान व आँखकी शिक्षा बहुत आवश्यक है और शारीरिक श्रमको स्कूलोंमें अनिवार्य विषय घोषित कर दिया जाना चाहिए। लेकिन हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि हाथकी शिक्षा वास्तवमें दिमागकी ही शिक्षा है। जो स्कूल शिक्षा देना चाहता है उसे, बाजारमें बेचा जा सके, ऐसा माल तैयार करने का विचार ही छोड़ देना चाहिए। उसे बच्चोंको भाँति-भाँतिका कच्चा माल और यन्त्र देने चाहिए, जिनपर वे प्रयोग करें और प्रयोगमें बरबादी हो तो बरबादी भी करें। बरबादी तो लाजिमी है। श्रीयुत परीखने 'हरिजन' के वर्त्तमान अंकमें जो आँकड़े दिये हैं उनका अच्छी तरहसे अध्ययन करने पर पता चलता है कि किसी ऐसे स्कूलमें भी जहाँ केवल एक ही उद्योगकी शिक्षा दी

जाती हो और जहाँ शिक्षा प्राप्त करनेवाले लड़के बड़ी उम्रके हों, काफी माल बरबाद होता है। उद्योग-धन्धा सिखानेवाला स्कूल विज्ञानके कॉलेजकी तरह प्रयोग करने और साधन-सामग्री बिगाड़नेवाली जगह है। भारत-जैसे सीमित साधनोंवाले देशमें ऐसे स्कूल कमसे-कम खोले जाने चाहिए, बल्कि उतने ही जितने बहुत जरूरी हों। . . .

यह बात कि हम काम सिखाने की गतिको बढ़ा सकते हैं और आज जिस चीजको सीखने में सात वर्ष लगते हैं उसे दो वर्षोंमें ही सिखाया जा सकता है, एक विचित्र भ्रामक धारणा है। . . . बालक जो चीज केवल १६ वर्षकी आयुमें ही सीख सकता है उसे वह ८ वर्षकी आयुमें सीखने का प्रयत्न नहीं कर सकता और उसे करना भी नहीं चाहिए। विदेशी भाषाके कारण विलम्ब होता है, यह बात नहीं है, और न ही हम जितना लोग समझते हैं उतना समय देते हैं। . . .

. . . अच्छा यही है कि हम ऐसी माँग न करें कि स्कूल न केवल व्यक्तियोंको तैयार करें, वरन् माल भी तैयार करें।

सारांशमें, स्कूल समृद्ध और राष्ट्र दिवालिया बने, ऐसी अल्प दृष्टिवाली नीति गलत अर्थव्यवस्था है।

'एक प्रोफेसर'

यह लेख[1] एक प्रसिद्ध विश्वविद्यालयके प्रोफेसरका है। इसके साथके पत्रमें प्रोफेसरके हस्ताक्षर हैं, लेकिन लेखपर नहीं हैं। इसलिए मैं लेखकका नाम नहीं दूँगा। पाठकको लेखकसे नहीं, लेखसे ही तो मतलब है। यह लेख इस बातका असाधारण उदाहरण है कि किसी चीजके बारेमें पहलेसे ही एक निश्चित धारणा बना लेने से मनुष्यका दृष्टिकोण कितना संकुचित हो जाता है। लेखकने मेरी योजनाको समझने का कष्ट ही नहीं उठाया है। वे जब मेरी कल्पनाके स्कूलोंके लड़कोंके साथ लंकाके बगानोंके अर्धगुलाम लड़कोंकी तुलना करते हैं तब वे अपनी बात आप काट देते हैं। वे भूल जाते हैं कि बागानोंके बालकोंके साथ विद्यार्थियोंके-जैसा व्यवहार नहीं किया जाता है। उनकी मजदूरी उनकी शिक्षाका अंग नहीं है। मैं जिन स्कूलोंकी हिमायत करता हूँ उन स्कूलोंमें अंग्रेजीको छोड़कर उन सभी विषयोंकी शिक्षा दी जायेगी जो आज किसी हाई स्कूलमें सिखाये जाते हैं। ऊपरसे कवायद, संगीत, चित्रकला तथा किसी एक धन्धेकी शिक्षा भी दी जायेगी। इन स्कूलोंको 'कारखाने' कहना अनेक तथ्योंको समझने से इनकार करना है। यह तो ठीक वैसा ही है जैसे किसी व्यक्तिने बन्दरके अलावा और कोई प्राणी न देखा हो और चूंकि मनुष्यका वर्णन अंशत: बन्दरसे मिलता है, इसलिए जब उसे मनुष्यका वर्णन पढ़ने को कहा जाये तो वह उससे साफ इतकार कर दे। मैंने अपने प्रस्तावमें जिन परिणामोंका दावा किया है

१. इसके कुछ अंश ही यहाँ दिये गये हैं।

वे सब परिणाम अवश्य निकलेंगे। यदि प्रोफेसर जनताको उनके विरुद्ध चेतावनी देते तो ठीक करते। लेकिन उनका यह चेतावनी देना भी अनावश्यक होता, क्योंकि मैंने स्वयं यह चेतावनी दी है।

मैं स्वीकार करता हूँ कि मेरा सुझाव नया है। लेकिन नयापन कोई अपराध नहीं है। मैं मानता हूँ कि इसके पीछे काफी अनुभव नहीं है। लेकिन मुझे और मेरे सहयोगियोंको जो अनुभव है उसके आधारपर मुझे लगता है कि यदि इस योजना पर पूरी निष्ठाके साथ अमल किया जाये तो यह अवश्य सफल होगा। और यदि यह सफल न हो तो भी इस प्रयोगको करने से राष्ट्रका कोई नुकसान नहीं होनेवाला है। और यदि यह प्रयोग आंशिक रूपसे भी सफल होता है तो उससे बहुत ज्यादा लाभ होगा। इसके अलावा और किसी भी तरीकेसे प्राथमिक शिक्षा मुफ्त, अनिवार्य और प्रभावकारी नहीं बनाई जा सकती। आजकी प्राथमिक शिक्षा निर्विवाद रूपसे एक भ्रम और पाश-रूप है।

श्री नरहरि परीखके आँकड़े जिस हदतक इस योजनाको समर्थन दे सकते हैं उस हदतक देने के लिए लिखे गये हैं। ये आँकड़े अन्तिम नहीं हैं। इनसे प्रोत्साहन मिलता है। इनसे उत्साही व्यक्तिको अच्छी सामग्री प्राप्त होती है। सात वर्ष मेरी योजनाका अनिवार्य अंग नहीं है। हो सकता है कि मेरे द्वारा निर्धारित बौद्धिक स्तरपर पहुँचने के लिए इससे भी ज्यादा समयकी जरूरत हो। शिक्षणका समय बढ़ाने से राष्ट्रका कोई नुकसान नहीं होनेवाला है। मेरी योजनाके आवश्यक अंग निम्नलिखित हैं:

१. सब तरहसे देखते हुए एक या अनेक उद्योग लड़के अथवा लड़कीके सर्वांगीण विकासके लिए सबसे अच्छे साधनोंमें से हैं, और इसलिए सारा पाठ्यक्रम उद्योग-प्रशिक्षणको ध्यानमें रखकर तैयार किया जाना चाहिए।

२. इस कल्पनाके आधारपर दी हुई प्राथमिक शिक्षा कुल मिलाकर स्वावलम्बी होगी, हालाँकि पहले अथवा दूसरे वर्षके भी पाठ्यक्रमम कदाचित् वह पूरी तरह स्वावलम्बी न हो। यहाँ प्राथमिक शिक्षाका अर्थ उस शिक्षासे है जिसका मैंने ऊपर वर्णन किया है।

प्रोफेसर साहबने उद्योगों द्वारा हिसाब तथा अन्य विषयोंकी शिक्षा दी जाने की सम्भावनापर शंका व्यक्त की है। यहाँ वे बिना अनुभव के बोल रहे हैं जबकि मैं अनुभवसे कह सकता हूँ। (ट्रान्सवालमें) टॉल्स्टॉय फार्ममें जिन लड़के व लड़कियोंकी शिक्षाकी जिम्मेदारी मुझपर थी,[१] उनका सर्वांगीण विकास करने में मुझे कोई दिक्कत नहीं हुई। जो शिक्षा वहाँ दी जाती थी उसकी मुख्य विशेषता लगभग आठ घंटेका औद्योगिक प्रशिक्षण थी। उन्हें एक अथवा ज्यादासे-ज्यादा दो घंटे किताबी शिक्षा दी जाती थी। उद्योगमें खोदना, खाना पकाना, पाखाना साफ करना, चप्पल बनाना, सरल बढ़ईगिरी और सन्देश लाना और ले जाना — ये सब काम थे। उसमें छः

१. देखिए खण्ड ३९, पृ० २५५-६०

वर्षकी आयुसे लेकर १६ वर्षकी आयुतक के लड़के थे। उसके बादसे इस प्रयोगमें और भी वृद्धि हुई है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १८-९-१९३७

१८१. दिल्लीमें अमानुषिकता

जहाँतक गरीब लोगोंका सम्बन्ध है, दिल्लीमें प्रगति बहुत धीमी लगती है। दिल्लीमें मैंने आवास-क्षेत्र देखे, उनमें भंगियोंके आवास-क्षेत्रकी दशा सबसे दयनीय थी। मुझे यह नहीं मालूम कि आज उनकी दशा पहलेसे बेहतर है या नहीं। ठक्कर बापा अब रोड़ी कूटनेवालों की गम्भीर शिकायतोंकी ओर ध्यान दिलाते हैं।[1] इन गरीब लोगोंके श्रमका मूल्य नहीं दिया जाता और हृदयहीन ठेकेदार उनके अज्ञान तथा उनकी निर्धनताका नाजायज फायदा उठाते हैं। वह समय आ गया है कि दिल्लीकी जनता जागे और इस बुराईको दूर करे। यदि ठेकेदार उनसे ठीक व्यवहार नहीं करते तो जनताको चाहिए कि रोड़ी कूटनेवाले मजदूरोंकी हड़ताल करने में मदद करे और उस दौरान उनके लिए उचित धन्धेकी भी व्यवस्था करे। इसमें कोई सन्देह नहीं कि ऐसा अन्तिम कदम उठाने से पहले ठेकेदारोंके साथ बातचीत करना जरूरी होगा।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १८-९-१९३७

१८२. पत्र : निर्मला गांधीको

सेगाँव, वर्धा
१८ सितम्बर, १९३७

चि० नीमु,

तेरा दूसरा पत्र मिला। पण्डितजी आते हैं तो तुझे क्या सिखाते हैं? क्या तुझे लिखने और पढ़ने का काम भी देते हैं? वहाँकी आबोहवा तुझे कैसी लगती है? तेरे पास अब कितना पैसा है? जब जैसी जरूरत हो मँगा लेना। शायद बेहतर तो यह होगा कि मैं तुझे अलगसे ही पैसे भेजा करूँ। वहाँ यदि तुझे कोई काम मिल सकता हो तो कर लेना। यथासम्भव जितनी उपयोगी बन सके उतनी बनना। तू वहाँ सबके साथ घुलमिल तो गई होगी, क्योंकि तू मिलनसार तो है ही। आशा है, सुमित्रा[2] किसीको परेशान नहीं करती होगी। आचार्य महोदय

१. लेख यहाँ नहीं दिया गया है।

२. निर्मला गांधीकी ज्येष्ठ कन्या।

तुझे खुद ही अंग्रेजी पढ़ाते हैं, यह बहुत ही अच्छा चिह्न है। अपने कब्जकी बात विद्यावतीको भी बता देना।

कानम मौज कर रहा है।

फिलहाल गोशीबहन[1] और पेरीनबहन[2] यहीं हैं। वह उनसे घुलमिल गया है। गोशीबहन उसे कहानियाँ सुनाती है। और यदि उसे कहानियाँ सुनाई जायें तो उसे और कुछ नहीं चाहिए। कहानियाँ, फुटबाल और पतंग, यही उसकी खरी शिक्षा है। बाकी पढ़ाई तो चलती ही रहती है। किन्तु यदि उसे पढ़ाईमें कहानियों-जितना रस न आये तो इसे मैं शिक्षककी कमजोरी मानता हूँ। किन्तु शिक्षक तो उतना ही देगा न जितना उसके पास होगा?

वहाँ बड़ीसे-बड़ी लड़कियोंकी आयु कितनी है? उन्होंने तुझे वहाँ प्रवेश दिया, यह भी क्या अपवाद ही माना जाता है? क्या वहाँ कोई स्त्री शिक्षिका भी है या सभी पुरुष शिक्षक हैं?

वहाँके अमरूद और बेर प्रसिद्ध हैं। तू दोनोंको बारी-बारीसे औषधके तौरपर खाकर देखना। शायद इससे तेरे कब्जकी समस्या हल हो जाये। सरस्वतीबहनकी सिखावनोंपर यथासम्भव ध्यान देना।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजरातीसे: निर्मला गांधी पेपर्स। सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१८३. पत्र: महादेव देसाईको

सेगाँव, वर्धा
१८ सितम्बर, १९३७

चि० महादेव,

लीलावतीका रोग कुछ लम्बा हो गया जान पड़ता है। हलका-हलका बुखार उसका पीछा ही नहीं छोड़ता। लेकिन उसका शरीर लोहे-जैसा है, इसलिए वह चलती-फिरती रहती है। उसपर अंकुश रखना। खानेमें भी काफी परहेज रखा जाना है। डाक्टर जब आये तब जाँच करने के साधन भी साथ लेता आये। न केवल टॉन्सिल पर बल्कि दाईं ओर भी धब्बा-सा दिखाई देता है। वह तो टॉन्सिल काटने के बाद भी रहेगा न? इसलिए टॉन्सिलके बाहरके धब्बेको दूर करने का भी कोई उपाय होना चाहिए। इस रोगके बारेमें छोटालालको लिखना। यदि उसे कोई इलाज सूझे तो लिखे। और अमतुस्सलामके बारेमें भी लिखना; उसे दमा और खाँसी होती है, कब्ज तो है ही। इसके लिए भी यदि वहाँ बैठे-बैठे कोई इलाज बताया जा सकता हो तो

१. और २. गोशीबहन कैप्टेन और पेरीनबहन कैप्टेन, दादाभाई नौरोजीकी पौत्रियाँ।

वह बताये। उसने होम्योपैथसे इलाज करवाया था; वैद्यकी दवा तो अब भी चल रही है। लेकिन उससे कोई निश्चित रूपसे लाभ नहीं हुआ है। कह सकते हैं कि काम चल रहा है।

मेरे बारेमें [छोटालालको] लिखना कि उसके कहनके मुताबिक चार दिनोंसे मैं दो पुड़िया रोज ले रहा हूँ। आज चौथा दिन है। कलसे पाँच दिनों तक एक-एक पुड़िया लूँगा। उसके बाद यदि वह खुराकके बारेमें कुछ सुझाव देना चाहे तो दे। उससे तुम यह भी कह सकते हो कि उसकी दवा शुरू करने के बाद से मेरी खुराक कम हो गई है। कह सकते हैं, दूधकी मात्रा आधी रह गई है। रोटी भी नहीं खा पाता। दवा शुरू करने से पहले मैं रोटी और 'गोल पापड़ी'[1] के रूपमें गेहूँ ठीक प्रमाणमें ले पाता था। अब यह खानेकी क्षमता नहीं रही; इसका मुझे दु:ख नहीं है, लेकिन छोटालालको यह बात मालूम तो होनी ही चाहिए।

तुम्हारी डाक मिल गई है। इस समय तो मैं चार-पाँच लोगोंके बीचमें हूँ। अपनी तबीयत जल्दी ठीक कर लेना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५६६)से।

१८४. विरोध ताड़ीका नहीं, ताड़ीकी शराबका[2]

अहमदाबादसे एक पारसी सज्जन लिखते हैं:

मैं खुद शराब या ताड़ीका व्यापार नहीं करता, और इन चीजोंका उपयोग भी नहीं करता। मैं मांसाहारी भी नहीं हूँ। १८९६ से मैं शाकाहारी हूँ। अब मेरी उम्र ६७-६८ वर्षकी है। अतः मैं अपना खुदका अनुभव बताता हूँ। कुदरतमें कोई भी चीज अनुपयोगी नहीं है। मैं शराब न तो पीता हूँ, न मुझे उसकी आदत है; पर कभी अगर बतौर दवाके आधा औंस लेने की जरूरत पड़ जाये तो ले लेता हूँ। किन्तु इधर एक लाभ होता है तो उधर दिमाग घूमने लग जाता है, इसलिए फौरन बन्द कर देता हूँ। इसमें तो शक नहीं कि शराब-बन्दी हो जाने से श्रमजीवी-वर्गकी आयु बढ़ जायेगी, पर जो पैसा उनके पास बचेगा वह व्यभिचार, नाटक, सिनेमा आदिपर खर्च होगा, अथवा वे आलसी बनकर अपने कुटुम्बको भी आलस्यमें फँसायेंगे, या फिर चोरी-छिपे शराब बनाने का रास्ता अख्तियार करेंगे।

१. एक प्रकारकी मिठाई।

२. इसका अंग्रेजी अनुवाद ९-१०-१९३७ के **हरिजन**, में प्रकाशित हुआ था।

१. ताड़ी एक निर्दोष पेय है; हालाँकि धूपमें गर्म होने से (बीयर की तरह) वह सहजमें नशीली हो जाती है।

२. गर्मीके मरीजको, बतौर दवाके देने से गर्मीकी बीमारी दूर हो जाती है।

३. ताड़ी खमीरकी जगह काममें आती है। डबल रोटी, बिस्कुट और गेहूँकी रोटीमें बतौर खमीरके ताड़ीका उपयोग होता है, और खमीरके पकवान बनते हैं।

४. ताड़ीसे पेटका कब्ज दूर होकर आँतें साधारणतया साफ हो जाती हैं।

५. ताड़ीका सिरका बनता है, जो अचार और खाने-पीने की दूसरी चीजोंमें भी काम आ सकता है।

दुर्भाग्यकी बात यह है कि शुद्ध ताड़ी आज कहीं भी नहीं बिकती। ईमानदारीके साथ व्यापार करना किसीको पुसाता ही नहीं। आज ताड़ीके जितने व्यापारी हैं वे अपने पापी पेटको किसी तरह पाल रहे हैं और साहूकारोंके सभी कर्जदार हैं। आजकल ताड़ीके पेड़ोंपर सरकारी कर, दुकानका किराया और आबकारी महकमेके जुल्म इतने ज्यादा है कि ताड़ीमें पानी, सेकरीन, अफीम आदि नशीली चीजें और दूसरी दवाइयाँ, जो धीरे-धीरे असर करनेवाले जहरका काम करती हैं, मिलाई जाती हैं। यह हालत भारी करोंके कारण है, और इसका शिकार बनना पड़ता है बेचारे गरीब आदमियोंको। इसका उपाय सिर्फ एक ही है, और वह यह कि सरकारी कर हटाकर ऐसी सुविधा कर दी जाये कि गरीब आदमी दो पैसेकी बोतल खरीदकर निर्दोष पेयका फायदा उठा सकें। एक तो शराबबन्दीसे लोग ताड़ी पीने लगेंगे; और ताड़ीपर कर न होने से किसानोंमें प्रतिस्पर्धा शुरू हो जायेगी और इससे सस्ती और शुद्ध ताड़ी मिलने का मार्ग खुल जायेगा। आबकारी कर जब तमाम ताड़ीसे हट जायेगा तभी कोई रास्ता मिलेगा। ६० वर्ष पहले ताड़ीके पेड़ोंपर बिलकुल कर नहीं था। किसी भी किस्मका जाब्ता नहीं था। इसके बाद कर लगने लगा। उसका कारण यह है:

आबकारी कमिश्नर एक यूरोपीय था। उसका और महुएकी शराब बनानेवाले ठेकेदारमें बाप-बेटे-जैसा रिश्ता था; और वह ठेकेदार था सूरत जिलेका। अतः उसने शराबकी खपत बढ़ाने के लिए निर्दोष पेय पर फी पेड़ १ रुपयेका कर लगा दिया; जो बढ़ते-बढ़ते अब ४-५ रुपये तक पहुँच गया है। . . .

उस समय सूरत जिलेके कलक्टर मि० लेली थे। आजमाइश करके उन्होंने देखा तो उन्हें यह विश्वास हो गया कि ताड़ीसे तो गरीब मजदूर-वर्गकी खुराक का काम निकलता है। इसलिए मि० लेलीने आबकारी कमिश्नरको अपनी रिपोर्ट ताड़ीके पक्षमें लिख भेजी। पर जहाँ अधिकारियोंके बीच बाप-बेटेका

रिश्ता हो, वहाँ भला किसी भलाईकी आशा की जा सकती है। इस 'रिकार्ड' को खोजा जाये तो बहुत-कुछ कामकी बातें निकलेंगी। ताड़ी स्वास्थ्यके लिए हानिकारक तो निश्चय ही नहीं है; क्योंकि इसमें पेड़के कुछ प्राकृतिक क्षार ऐसे होते हैं, जो शरीरकी रचनाके लिए आवश्यक हैं। यह राय मैंने एक अच्छे, होशियार डॉक्टरकी जबानी सुनी है और यदि आप चाहें तो शुद्ध ताड़ीका पृथक्करण कराकर तसल्ली कर सकते हैं।

शराब और ताड़ी पर तो प्रतिबन्ध लगा दिया जायेगा, पर भाँग, गाँजा, अफीम, चरस वगैरह मादक चीजें इससे मुक्त रहेंगी तो जनता इससे यह सोचेगी कि हिन्दू व्यापारियोंको छूट देकर पारसियोंके लिए ही ये प्रतिबन्ध लगाये गये हैं। इसलिए मुझे तो यह लगता है कि सभी नशीली चीजोंको एक साथ बन्द कीजिए, या फिर बतौर प्रयोगके एक-के-बाद-एकको लीजिए।

मैं एक बेवकूफ शेखचिल्ली-जैसा हूँ। इसीसे अपने गलत या सही विचारों को आपके आगे रखने की हिम्मत कर रहा हूँ, और अपनी इस बेवकूफीके लिए आपसे क्षमा चाहता हूँ।

तम्बाकू-बीड़ीका व्यसन इतना ज्यादा बढ़ता जा रहा है कि दिन-प्रति-दिन १२-१५ सालके नादान लड़के भी बीड़ी पीने लगे हैं। इस व्यसनपर अगर प्रतिबन्ध लगा दिया जाये तो देश और जनताको अनेक लाभ हों। यह व्यसन क्षय-रोग का मूल है। यह चीज आयुको कम करती है। हिन्दुस्तानकी आबादी ३६ करोड़की कही जाती है। इसका तीसरा हिस्सा अगर बीड़ी पीता हो, और १२ करोड़ आदमी इस चीजका उपयोग करते हों, तो इस प्रतिबन्धसे सालमें लगभग सवासे डेढ़ अरब रुपये तककी रकम बच सकती है। यदि एक आदमी रोज केवल दो पैसे बीड़ीपर खर्च करता है, तो तीस दिनमें एक रुपया बच सकता है, और सालमें १२ रुपये बचें तो बारह करोड़ आदमी कितना रुपया बचा सकते हैं, क्या यह विचारणीय प्रश्न नहीं है? यदि तम्बाकूकी खेती ही न हो, और दिसावरसे भी इसका आना बन्द हो जाये तो सोचिए कि देश कितना शक्तिशाली बन जायेगा, और गाँवोंके लोग अपने बच्चोंकी शिक्षाका भार आसानीसे उठा सकेंगे। लोगोंका स्वास्थ्य सुधरने लगेगा, और अग्नि-जैसी पवित्र चीज, जो परवरदिगारका नूर — प्रतिबिम्ब — है, अपवित्र होने से बच जाये, और हमारे ऊपर खुदाका आशीर्वाद बरसने लग जाये।

शहरकी ताड़ीकी तमाम दुकानें बन्द कर देने से जो बगैर ताड़ीके रह ही नहीं सकते, वे आसपासके किसी गाँवमें जाकर ताड़ी पीने की अपनी उत्कट इच्छा पूरी कर लेंगे; इससे शहरका पैसा गाँवोंमें जायेगा, और गाँवोंके लोग इससे समर्थ बनेंगे। . . .

मैंने आपका बहुत कीमती वक्त ले लिया है, जिसके लिए मैं आपसे माफी चाहता हूँ; और मालिकके दरवाजेपर यह दुआ माँगता हूँ कि आप तन्दुरुस्तीके साथ खूब लम्बी उम्र पायें, और हिन्दुस्तानकी कंगालीको दूर करें।

इस तरहके पत्र अन्य भले पारसी भाइयोंकी ओरसे भी आते रहते हैं। आश्चर्य है कि ऐसी दलील पारसी भाइयोंकी तरफसे ही आती है। सम्भव है, दूसरोंको भी ऐसी दलील सूझती हो; लेकिन पारसी भाइयोंके साथ मेरा अत्यन्त प्रगाढ़ सम्बन्ध है, इसलिए वे मुझे अपना मानकर अपने मनके चाहे जो भी विचार लिखने की छूट ले लेते हैं। ऐसा करने का उन्हें अधिकार भी है और यह मुझे अच्छा लगता है। इन भाईकी दलील म जितने तथ्य हैं वे सब मेरे सुझाये प्रयोगपर लागू नहीं होते। ये भाई शराब नहीं पीते, ऐसा वे नहीं कह सकते, क्योंकि दवाके तौरपर वे पीते हैं। दवाकी तरह पीने की छूट मेरी योजनामें भी रखी गई है। इतना अन्तर अवश्य है कि दवा की तरह शराब कब पीनी चाहिए, इसका निर्णय ये स्वयं करते हैं; जबकि सामान्य दवाएँ पीने का अधिकार आदमी अपने हाथमें नहीं रखता, बल्कि वैद्य या हकीमसे पूछकर उसके बताये गये प्रमाणमें पीता है। ऐसा ही शराबके विषयमें भी होना चाहिए। ये भाई अपने स्वास्थ्यकी स्थितिको भले ही समझ सकते हों, उसपर उन्होंने अपना नियन्त्रण भले कायम कर लिया हो, लेकिन हर आदमी ऐसा नहीं कर सकता। अगर हरएक आदमीसे अपनी दवा आप कर लेने को कहा जाये तो इसका दुष्परिणाम निकले बिना नहीं रहेगा।

इन पत्र-लेखक भाईने ताड़ीके बहुत-से गुण और उपयोग बताये हैं। ये सभी गुण और उपयोग सही सिद्ध किये जा सकते हैं या नहीं, इस सम्बन्धमें मुझे अपनी राय देने की जरूरत नहीं है। लेकिन ताड़ीमें गुण हैं और उसका उपयोग है, यह बात मैंने मान ली है। ताड़ी-मात्र पर प्रतिबन्ध लगाने की बात नहीं है। मैंने जो प्रतिबन्ध सुझाये हैं वे शराब, दारू आदि नशीले पेयोंके सम्बन्धमें हैं; और दारू तो जिस प्रकार गन्नेके रसमें से निकल सकती है, जैसे निकाली जाती है, अंगूरमें से निकलती है, सेवमें से निकलती है, उसी प्रकार ताड़ीमें से भी निकलती है। जो नशीली नहीं है, ऐसी ताजी ताड़ी सब पियें, इस बारे में तो मुझे कुछ कहना ही नहीं है। मैं मानता हूँ कि इस ताड़ीमें कुछ गुण अवश्य हैं। खजूरकी ताड़ीका गुड़ और उसका शरबत मैंने खाया-पिया है और बेझिझक दूसरोंको भी दिया है। पूरे हिन्दुस्तानमें इसे खाने-पीनेकी छूट है। उसपर कहीं कोई प्रतिबन्ध नहीं है। अगले मौसममें २५० खजूरोंसे ताड़ी निकालकर अच्छेसे-अच्छा गुड़ बनाने की आशा मैं मनमें सँजोये हुए हूँ। ज्यों-ज्यों मैं शोध करता जाता हूँ, त्यों-त्यों मुझे इस बातके प्रमाण मिलते जाते हैं कि ताड़ीके सदुपयोगकी ओर जनताका ध्यान खींचा ही नहीं गया, क्योंकि ताड़ीको शराब मानकर उसकी निन्दा ही की जाती रही है। एटलांटिक महासागर में पुर्तगालियोंके शासनमें मदिरा नामका जो द्वीप है वहाँ अंगूरोंका भी यही हाल हुआ है। घर-घर अंगूरकी बेलें हैं और घर-घर शराब बनती है। इसलिए वहाँ यह

माना जाता है कि अंगूरका रस शराब ही है। यह शब्द इतना बदनाम हो गया है कि हमने अपनी भाषामें भी उसे उसी रूपमें ले लिया है और "मदिरा" का अर्थ शराब करते हैं।[1] ताड़ी भी इसी तरह बदनाम हो गई है। पिछले सत्याग्रहके दौरान इसकी निन्दा करने में खुद मैंने भी कुछ कम भाग नहीं लिया।[2] पत्र-लेखक भाई मान सकते हैं कि अब जनता को ताड़ीकी शुद्ध पहचान करवाकर ताड़ीमें से मदिरा-तत्त्वको अलग निकालकर मैं प्रायश्चित्त कर रहा हूँ। और अगर शरावके धन्धेमें लगे पारसी भाई उसमें से निकल कर ताड़ीका उद्धार करें तो वास्तवमें वे अपना उद्धार करेंगे और देशकी भारी सेवा करेंगे। बम्बई-क्षेत्रके लिए यह कितना अच्छा सुयोग है कि मद्यनिषेधका काम एक विख्यात पारसी डाक्टरके हाथोंमें आ गया है!

अब ये भाई समझ गये होंगे कि मद्यनिषेधकी मुहिम छेड़कर मैं पारसी समाज का नुकसान करने की इच्छा नहीं रखता। मेरा विरोध जितना मदिराके प्रति है उतना ही अफीम, गाँजा और सभी नशीली चीजोंके प्रति है। और पारसियोंकी प्रवृत्तिके खास विषय ताड़ीके खिलाफ तो मेरी लड़ाई बिलकुल नहीं है। ताड़ीसे निकाली जाने-वाली दारू, अर्थात् उसके दुरुपयोगसे मेरा विरोध है और इसमें तो ये वृद्ध पारसी भाई भी मेरा साथ देते जान पड़ते हैं।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, १९-९-१९३७

१८५. राष्ट्रीय शिक्षकोंसे

जो शिक्षक किसी भी प्रकारकी राष्ट्रीय शिक्षण संस्थाओंका संचालन कर रहे हैं, उन शिक्षकोंको मेरा यह सुझाव है कि मैं आजकल प्राथमिक शिक्षाके बारेमें जो लिख रहा हूँ[3] यदि वह उनके गले उतरा हो तो वे उसपर यथाशक्ति अमल करें, किस हदतक अमल कर पाये हैं इसका बाकायदा हिसाब रखें और अपने अनुभव मुझे लिख भजें। जो शिक्षक मेरे द्वारा सुझाई पद्धतिके अनुसार शाला चलाने के लिए तैयार हों, जो इस समय खाली हों अथवा जो दूसरा काम तो करते हों लेकिन उसे छोड़कर शाला चलाने को तत्पर हों, वे मेरे साथ पत्र-व्यवहार करें।

मेरी मान्यता यह है कि प्राथमिक शालाको आत्म-निर्भर बनाने की दिशामें सबसे पहले जिस उद्योगपर हमारी दृष्टि जाती है वह कताई आदि है। इसमें रुई चुनने से लेकर रंग-बिरंगी डिजाइनवाली खादी बनाने तककी सभी क्रियाएँ शामिल हैं। इसमें मजदूरी कमसे-कम दो पैसे प्रति घण्टेके हिसाबसे मानी जानी चाहिए। शाला पाँच

१. यहाँ गांधीजी ने 'मदिरा' शब्दकी अनोखी व्युत्पत्ति बताई है। वास्तवमें यह शब्द 'मद' से निकला है।

२. सन् १९३० का नमक सत्याग्रह, देखिए खण्ड ४३ पृ० १८८ और ३८७-८८।

३. देखिए पृ० १३६-३८। खण्ड ६५, तथा पृ० ४३८-४० भी।

घण्टे चले, उसमें चार घण्टे मजदूरीके होने चाहिए और बाकीके एक घण्टेमें जो उद्योग सिखाया जाता हो उसका तात्त्विक ज्ञान और अन्य विषयोंकी — जो उद्योग सिखाते समय न सिखाये जा सकते हों — शिक्षा दी जानी चाहिए। उद्योगकी शिक्षा देते समय आंशिक अथवा पूरी-पूरी शिक्षा — इतिहास, भूगोल और गणितशास्त्रकी भी — दी जायेगी। भाषा-विषयक ज्ञान और उसके अन्तर्गत व्याकरण तथा शुद्ध उच्चारणका समावेश तो होगा ही; क्योंकि शिक्षक इन समस्त विषयोंका ज्ञान देने का माध्यम उद्योगको मानेगा और बच्चोंको ठीक ढंगसे बोलना सिखायेगा और इस तरह वह सहज ही बच्चोंको व्याकरण सिखायेगा। बच्चोंको पहलेसे ही गिनती आनी चाहिए। इसलिए श्रीगणेश गणितसे होगा। सुघड़ता कोई अलग विषय नहीं होगा। बच्चोंके प्रत्येक कार्यमें सुघड़ता तो होनी ही चाहिए। उनका शालामें प्रवेश ही सुघड़तासे होगा। अतएव इस समय मेरी कल्पनामें एक भी ऐसा विषय नहीं आता कि जो बच्चोंको उद्योगकी शिक्षा देते समय सिखाया न जा सकता हो।

मेरी यह कल्पना अवश्य है कि जिस तरह मैंने सिखाये जानेवाले विषयोंको अलहदा नहीं गिना है, बल्कि सबको परस्पर एक-दूसरेसे सम्बद्ध माना है और यह माना है कि सब विषयोंकी उत्पत्तिका स्रोत एक ही है, उसी तरह मेरे खयालसे इन विषयोंको सिखानेवाला शिक्षक भी एक ही होना चाहिए। अलग-अलग विषयके लिए अलग-अलग शिक्षक नहीं बल्कि एक ही शिक्षक होना चाहिए। कक्षाओंके हिसाबसे शिक्षक अलग-अलग हो सकते हैं। अर्थात् यदि सात कक्षाएँ हों तो सात शिक्षक हों। एक शिक्षकके पास २५ से अधिक बच्चे नहीं होने चाहिए। यदि शिक्षा अनिवार्य हो तो मैं समझता हूँ कि आरम्भसे ही लड़के और लड़कियोंकी अलग-अलग कक्षाएँ होना जरूरी है। क्योंकि अन्ततः हर किसीको एक ही उद्योग नहीं सीखना है, इसलिए यदि आरम्भसे ही अलग कक्षाएँ हों तो उससे अधिक सुविधा होगी, ऐसी मेरी मान्यता है।

इस पद्धतिमें, घण्टोंमें, शिक्षकोंकी संख्यामें और विषयोंके चयनमें सुधारकी गुंजाइश हो सकती है; लेकिन जिन सिद्धान्तोंके आधारपर ऐसी शाला चलाई जायेगी उन सिद्धान्तोंको स्थायी समझकर ही मेरी कल्पनाकी शाला चल सकती है। फिलहाल भले ही इन सिद्धान्तोंपर अमल करने का कोई निश्चित परिणाम न निकला हो लेकिन जो मन्त्री ऐसी शिक्षा आरम्भ करना चाहता है, उसके मनमें सिद्धान्तोंके प्रति श्रद्धा होनी ही चाहिए। और चूँकि यह श्रद्धा बुद्धिपर आधारित है इसलिए यह अन्धश्रद्धा न होकर ज्ञानमय होनी चाहिए। ये सिद्धान्त दो हैं: (१) शिक्षाका माध्यम कोई भी ग्रामोपयोगी उद्योग होना चाहिए, और (२) शिक्षा समग्र रूपसे स्वावलम्बी होनी चाहिए। तात्पर्य यह कि पहलेके एक-दो वर्षोंमें वह भले ही स्वावलम्बी न हो लेकिन सात वर्षके अन्तमें आमदनी और खर्च समान होने चाहिए। मैंने इस शिक्षाके सात वर्ष माने हैं, इसम अवधिको कम-ज्यादा किया जा सकता है।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, १९-९-१९३७

१८६. पत्र : अमृतकौरको[1]

सेगाँव
१९ सितम्बर, १९३७

आज तुमको स्वयं ही लिखने की आशा की थी किन्तु नींदके कारण ऐसा करना असम्भव हो गया। वाइसराय महोदयके पत्रकी भाषा कूटनीतिक और कपटपूर्ण है, और तुम्हारी बिलकुल खरी और सुस्पष्ट।

बर्फ-चिकित्साका क्या रहा?

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८१०) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६९६६से भी

१८७. पत्र : निर्मला गांधीको

सेगाँव, वर्धा
१९ सितम्बर, १९३७

चि० नीमु,

ऊषाके[2] सम्बन्धमें तेरा पत्र चौंकानेवाला है। हम लोगोंमें बीमारीको देह धरेका दण्ड कहा जाता है। यह शब्द कितना अधिक उपयुक्त है। क्योंकि ऐसा देह धरेका दण्ड भुगतने पर ही निस्तार है। अब तू अधीर मत होना, चिन्ता मत करना। अपने काममें लगी रहना। सच कहा जाये तो तूने विद्यार्थीका जीवन कभी बिताया ही नहीं। तूने जो-कुछ बचपनमें सीखा, उसे वास्तवमें विद्यार्थी-जीवन नहीं माना जा सकता। जब मनुष्य किसी काममें इच्छापूर्वक जुट जाता है तभी यह कहा जा सकता है कि वह वैसा जीवन बिता रहा है। उदाहरण के लिए — सेवाके लिए जीवन, विद्यार्थी-जीवन, भोगके लिए जीवन, धन [कमाने] के लिए जीवन। इन मामलोंमें सेवा, विद्या, भोग और धन ही जीवनका उद्देश्य बन जाता है। और इनके कारण अन्य वस्तुओंका त्याग कर दिया जाता है। इस दृष्टिकोणसे जब तूने विद्यार्थी-जीवन अपनाया

१. ये पंक्तियाँ मीराबहन द्वारा अमृतकौरको लिखे पत्रके अन्तमें लिखी गई थीं।
२. निर्मला गांधीकी सबसे छोटी कन्या।

है तो तुझे ऊषाको भूल जाना चाहिए, सरिताको[१] भूल जाना चाहिए, रामदासको भूल जाना चाहिए और मुझे भूल जाना चाहिए। एकमात्र विद्या (अध्ययन)को नहीं भूलना चाहिए। इसका नाम अनासक्तियोग है। तूने एक वर्षके लिए विद्यार्थी-जीवन अपनाया है, इसलिए बाकी सब भूल जाना।

ऊषाकी खबर मैं लूँगा और सरिताको पत्र भी लिखूँगा। आज तो रविवार है, इसलिए मैं तार नहीं भेज रहा हूँ। कल तार दूँगा और नवनीतको पत्र भी लिखूँगा। जैसे रामदास दक्षिण आफ्रिकासे भागा-भागा ऊषाके पास नहीं आ सकता उसी प्रकार तू भी वहाँसे भाग नहीं सकती। जीवन-मरण ईश्वरके हाथमें है। यदि ऊषाके भाग्य में जीवित रहना बदा होगा तो वह जल्दी ही अच्छी हो जायेगी। यदि तू चाहे और सरिता सहमत हो तो ऊषाकी जिम्मेवारी लेनेको मैं तैयार हूँ। बा तो यहाँ है ही। अमतुस्सलाम भी यहीं है। यदि उसे ऐसी सेवा करनेका सुअवसर मिल जाये तो समझो कि उसकी पाँचों घी में। अमतुस्सलामकी स्वीकृति लेकर ही मैं यह लिख रहा हूँ। उपचारके बारेमें भी जितना मैं जानता हूँ उतना सरिताको लिख रहा हूँ। यदि तू स्वयं वहाँ होती भी तो उसका आज जैसा उपचार चल रहा है उससे अधिक भला तू क्या कर पाती? उसे अपने पास बुलानेका मतलब यह नहीं है कि उसकी यहाँ बेहतर देखभाल होगी। हाँ इसके पीछे यह विचार अवश्य है कि लखतरकी अपेक्षा यहाँ वैद्य-डाक्टरकी बेहतर सलाह मिल सकती है। अन्य प्रकारके सुझाव भी यहाँ बेहतर मिल सकते हैं और इस तरहकी कुछ व्याधियोंके बारेमें मैं भी काफी कुछ जानता हूँ। . . .[२]

गुजरातीकी नकलसे : निर्मला गांधी पेपर्स। सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१८८. पत्र : अमृतकौरको

सेगाँव
२० सितम्बर, १९३७

मूर्खा रानी,

मैंने हठपूर्वक दायें हाथसे लिखा है। दस मिनटमें प्रार्थना आरम्भ होगी और मौन टूटेगा। फिर अगले सोमवार तक दायें हाथसे लिखना बन्द।

मीराने तुम्हें मेरे जो समाचार दिये हैं उससे अधिक और कुछ नहीं है।

आशा है, महिलाओंके साथ तुम्हारी मुलाकात अच्छी रही होगी। तुम धन-वानोंका बिलकुल त्याग नहीं कर सकती। तुम्हें उनको अपने साथ ले चलनेकी भरसक कोशिश करनी होगी। तुममें अपार धीरज होना चाहिए।

१. निर्मला गांधीकी माँ।
२. साधन-सूत्रमें यहाँ कुछ अंश छूटा हुआ है।

चार्लीसे कहो कि उन्हें नियमित दिनचर्या और खानेमें सादगी रखनी होगी। अगर वे फिलस्तीनकी समस्याका भार अपने ऊपर लेना चाहते हैं तो उन्हें फिरसे बीमार नहीं पड़ना चाहिए। उनका धनोपार्जनके उद्देश्यसे लेखन-कार्य करना उचित नहीं है। मनमें पैसेकी कामना न होने पर भी यदि कार्य करने के बाद छोटे-मोटे उपहार मिलें तो उन्हें स्वीकार कर लेना और बात है, किन्तु अर्थ-लाभके निमित्त लेखन-कार्य मुझे बहुत अनुचित लगता है। यदि वे अध्यापक होते और स्कूलोंके लिए पाठ्य पुस्तकें लिखते तो और बात होती। उस प्रकारके श्रमका पारिश्रमिक लेना उचित है, परन्तु किसी मौलिक रचना, उदाहरणार्थ 'इंडियन फाइट फॉर फ्रीडम' या 'लाइफ ऑफ जीसस'[1] के लिए पैसे लेना उचित नहीं है।

तुमने अपने एक्जीमाके विषयमें कुछ नहीं लिखा है।

बेचारी शारदाकी छोटी आँतोंमें शायद घाव (अलसर) है, परन्तु वह ठीक है और काफी बहादुर है। उसके पिता यहाँ आये हुए हैं और बुखारमें पड़े हुए हैं। लीलावतीकी दशामें सुधार है। बा भी पहलेसे ठीक है, हालाँकि अभी लँगड़ाती है। बालकृष्ण पहले-जैसा ही है। बत्रा पंजाबमें है।

मैं जो दवाई ले रहा हूँ वह कोई पेटेन्ट दवा नहीं है। बाजारमें बिकनेवाली सुपरिचित जड़ी है, जिसे धूपमें सुखाया गया है। यदि मैं नीमकी पत्ती या छाल खा सकता हूँ तो कोई और कड़वी जड़ी खाने में क्या हर्ज है? यदि यह नुकसानदेह है तो उसी हदतक जिस हदतक कि अरंडीका बीज हो सकता है। अतएव मेरे दवा लेने पर तुम चिन्तित न होना। मैं सावधान हूँ।

नबीबख्शसे मेरा प्यार कहना। अबतक तो उसे वापस आ जाना चाहिए।

मौसम अचानक गर्म हो गया है। शायद भारी वर्षा हो।

अखिल भारतीय चरखा संघ और अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघकी यहाँ बैठक हुई। बैठक अच्छी रही।

उर्दूके अंक सुविधाजनक हैं। विद्रोहिणी मेरा कितना खयाल रखती है! इतना अच्छी तरह सीख लूँ तब औरके लिए कहूँगा। औजारोंके हिन्दी नामोंकी भेजी हुई तुम्हारी सूचीको मैंने जिस यत्नसे सँभालकर रखा है, इसे भी वैसे ही रखूँगा।

स्नेह।

डाकू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६१२) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६४२१ से भी

१. सी० एफ० एन्ड्रयूजने अपने जीवनके अन्तिम दिनोंमें यह पुस्तक लिखना आरम्भ किया था, पर वे इसे पूरा नहीं कर पाये।

१८९. पत्र : महादेव देसाईको

सेगाँव
२० सितम्बर, १९३७

चि० महादेव,

तुम्हारे लिफाफेपर यह लिखा हुआ है: "डाह्याभाईके पास सुमित्राको भेजें"। मैं सोचमें पड़ गया। बादमें यह मान लिया कि तुम इसे काटना भूल गये हो। लिफाफा वापस भेज रहा हूँ; इसे देखना। यह तो मैंने विनोद करने की खातिर लिखा है।

तुम्हारी टिप्पणियाँ संक्षिप्त होनी चाहिए। उदाहरणके तौरपर तुम गुलजारीलाल की टिप्पणीको संक्षिप्त कर सकते थे; और टिप्पणियाँ भी इसी तरह। मैंने तो आज यही काम किया है। यह तुम देख सकोगे। यदि हम ऐसा नहीं करते तो फिर चाहे हम कितने ही पन्ने क्यों न भर डालें, हम अपना काम पूरा नहीं कर पायेंगे। जैसे-जैसे विषयोंकी संख्यामें वृद्धि होती जाती है वैसे-वैसे हममें [उनको] संक्षिप्त बनाने की शक्तिका भी पर्याप्त विकास होना चाहिए।

चें० के अवतरणोंको प्रकाशित नहीं किया जा सकता। वापस तो भेज ही रहा हूँ। पहला भाग ठीक है लेकिन हमारे कामका नहीं है। हमें इस देशसे सम्बन्धित साहित्य तैयार करना होगा। दूसरा भाग बिना सोचे-समझे संकलित किया गया है। हमारे सम्मुख कर बढ़ाकर मद्यनिषेधको सफल बनाने की समस्या नहीं है। हमें तो वह आय ही नहीं चाहिए। मुझे शाहके मामलेको तो हाथमें लेना ही पड़ा, क्योंकि वे कुछ हदतक सहमत तो थे।

मेरा ख्याल है कि 'आनन्दमठ'[1] का हिन्दी अनुवाद उपलब्ध है। सम्भव है, अच्छा गुजराती अनुवाद भी हो। यदि हो तो एक प्रति प्राप्त करना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

चेंडीका लेख वापस भेज देना। इसमें से क्या तुमने एम० [सी०] राजाका नाम निकाल दिया है? मैं कुछ और हेरफेर भी करना चाहता हूँ।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५७०) से।

१. बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय कृत बंगला उपन्यास जिसमें 'वन्देमातरम्' गान भी है।

१९०. पत्र : ई० एम० एस० नम्बूद्रिपादको[1]

सेगाँव, वर्धा
२१ सितम्बर, १९३७

भाई नम्बूद्रिपाद,

आपका पत्र मिला। आपने ठीक किया कि मुख्य मन्त्रीको पत्र लिखा, लेकिन उससे पहले आपको पुलिस-अधिकारियोंको लिखना चाहिए था और इस तरह क्रमशः आगे बढ़ना चाहिए था। ऐसी आशा मत रखिए कि ऊपरसे नीचे तक सभी श्रेणीके स्थायी सरकारी नौकर बिलकुल साधु बन गये हैं। और आप ऐसा क्यों कहते हैं कि आप कांग्रेसी मन्त्रियोंके बुरे कामोंकी भी निन्दा नहीं कर सकते? मेरे विचारसे तो किसी भी कांग्रेसीको न केवल यह अधिकार है बल्कि यह उसका कर्त्तव्य है कि वह बड़ेसे-बड़े कांग्रेसी पदाधिकारियोंके कार्योंकी खुलेआम आलोचना करे। हाँ, आलोचना शिष्ट और पूर्ण तथ्योंपर आधारित होनी चाहिए।

हृदयके आपका,
मो० क० गांधी

श्रीयुत ई० एम० एस० नम्बूद्रिपाद
पोस्ट चेरूकारा, बरास्ता शोरानूर
दक्षिण मलाबार

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

१९१. पत्र : महादेव देसाईको

२१ सितम्बर, १९३७

चि० महादेव,

रा०[2] के साथ बात करना और [उससे पहले][3] अप्पासे पूछना। यदि रा० नपुंसक है तो इसके बारेमें गं०[4] को अवश्य मालूम होगा। यदि यह सच है तो फिर

१. अखिल भारतीय कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टीके संयुक्त मन्त्री तथा केरल प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके संयोजन मन्त्री श्री नम्बूद्रिपादने एक जब्तशुदा पुस्तकके सिलसिलेमें पुलिस द्वारा की गई तलाशीकी ओर गांधीजी का ध्यान खींचा था।

२. और ४. नाम छोड़ दिये गये हैं

३. साधन-सूत्रमें स्पष्ट नहीं है।

गं० को उसके पास नहीं रहना चाहिए और न उसे इस तरह सताया जाना चाहिए। रा० ने दवा तो की ही होगी? लेकिन यदि दवाएँ हमेशा कारगर हों तो हमें जो इतने विज्ञापन देखनेको मिलते हैं उतने क्यों दिखें? लेकिन पहले सारे तथ्य जान लेना। गं० ने जो किया है, और वहाँ हालात कैसे हैं, सो सब मालूम करके आना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५७१)से।

१९२. पत्र: रवीन्द्रनाथ ठाकुरको

सेगाँव, वर्धा
२३ सितम्बर, १९३७

प्रिय गुरुदेव,

आपका अमूल्य पत्र मेरे सामने है। आप मुझसे आगे निकल गये। जब सर नील-रतनका पिछला आश्वासन-भरा तार आया था, उसी समय मैं आपको पत्र लिखना चाहता था, परन्तु मेरे दायें हाथको आरामकी जरूरत है। बोलकर लिखवाना मैं चाहता नहीं था, और बायें हाथकी गति मन्द है। मैं यह सब केवल यह बताने के लिए लिख रहा हूँ कि हममें से कुछ लोगोंके मनमें आपके प्रति कितना स्नेह-भाव है। मेरा तो सचमुच यह विश्वास है कि ईश्वर ने आपके प्रशंसकोंकी मौन प्रार्थनाओंको सुना है और इसीलिए आप अभी भी हमारे बीच हैं। आप विश्व-गायक ही नहीं है, आपके जीवन्त शब्दोंसे हजारों लोगोंको मार्गदर्शन और प्रेरणा मिलती है। मेरी भगवान्से यही प्रार्थना है कि आप हमारे बीच बहुत वर्षों तक बने रहें।

प्रगाढ़ प्रेम-सहित,

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४६४९)से।

१९३. सन्देश : कर्नाटक एकीकरण संघ, बेलगाँवको

[२४ सितम्बर, १९३७ के पूर्व]

अलग कर्नाटक प्रान्तके गठनके प्रश्नपर उसके गुण-दोषोंके आधारपर विचार करें तो उसका विरोध नहीं किया जा सकता। अतः इस आशयका प्रस्ताव चाहे कोई लाये, कांग्रेस मन्त्रिमण्डल द्वारा स्वागत किया जाना चाहिए और उसे तुरन्त लागू करने के सम्बन्धमें जो कठिनाइयाँ हों वे स्पष्ट बता दी जानी चाहिए। कांग्रेस मन्त्रिमण्डल इस विषयमें अपनी नीति और कार्य-प्रणालीकी घोषणा करके विरोधी दलको पहलेसे ही निरुत्तर कर दे सकता है।[१]

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २४-९-१९३७

१९४. पत्र : एस० अम्बुजम्मालको

सेगाँव, वर्धा

२४ सितम्बर, १९३७

चि० अम्बुजम,[२]

यह है उस व्यक्तिका पत्र जो अपनेको कमलाबाईका मामा बतलाता है। मैंने पत्र-लेखकको बता दिया है कि कमलाबाईके शुद्धीकरणकी प्रक्रियामें किसी भी कारणसे बाधा नहीं आनी चाहिए। यह शुद्धीकरण स्वयं कमलाबाईके और साथ ही उसके परिवारके हकमें भी आवश्यक है।

रोगिणी वहीं है; तुम उसका ध्यान रखना और मेरा मार्गदर्शन करना। जबतक मैं न लिखूँ, रुपया-पैसा नहीं देना है।

मैं धीरे-धीरे अच्छा हो रहा हूँ।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजीसे : अम्बुजम्माल पेपर्स। सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. गांधीजी के सुझावपर सन्देश की एक प्रति बम्बई मन्त्रिमण्डलको भी भेजी गई थी। पृथक् कर्नाटक प्रान्तके गठनके लिए बम्बई विधान-सभामें एक प्रस्ताव पेश करने का इरादा जाहिर किया गया था।

२. सम्बोधन देवनागरी लिपिमें है।

१९५. पत्र : अमृतकौरको

२४ सितम्बर, १९३७

प्रिय विद्रोहिणी,

तुम्हें लिखने का मन हुआ, इसलिए यह पत्र लिख रहा हूँ। शम्मी बिलकुल गलत हैं। यदि सम्भव हो तो तुम्हें अवश्य प्रतिदिन लिखना चाहिए, परन्तु आराम या कामका हर्ज करके नहीं।

वेरियर[1] आज यहीं है। मैं उससे बात करूँगा और जो आवश्यक होगा सो करूँगा।

उन सात बन्दियोंने उपवास स्थगित कर दिया है।

जो बात तुम मिलने पर बताने को आतुर हो वह लिखकर क्यों नहीं कहतीं। लेकिन तुम्हें जो-कुछ अच्छा लगे वही करना। मैं ऐसे कुछ लोगोंको जानता हूँ जिनमें बड़ा कुतूहल है। मैं वैसा नहीं हूँ।

तुम कुछ गण्यमान्य सिखोंसे वचन[2] ले लो, चाहे उनके वचनोंका आम सिखोंके लिए कोई महत्त्व न हो।

आज बस करता हूँ।

स्नेह।

डाकू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८११) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६९६७ से भी

१९६. पत्र : नरहरि द्वा० परीखको

सेगाँव, वर्धा
२४ सितम्बर, १९३७

चि० नरहरि,

दूधाभाईको[3] लिखा तुम्हारा पत्र मुझे उचित लगा इसलिए मैंने उसे भेज दिया है और सलाह दी है कि वह जीवन्तिकाको सुसराल भेज दे। अब हमारे लिए और कुछ करने को नहीं रह जाता।

१. वेरियर एलविन।

२. देखिए "पत्र: अमृतकौरको", पृ० १४६।

३. दूधाभाई दाफड़ा।

धमकी-भरे गुमनाम पत्रकी बात मैं समझता हूँ। रावजीभाई इसके बारेमें क्या कहते हैं, सो जानना बाकी है। मैंने दिनकरके साथ सारी बातें कर ली हैं। दिनकरने खुद कहा कि मैं नरहरिभाईके साथ बातचीत कर लूँगा और हममें जो बातचीत हुई है उसका सार भी कह सुनाऊँगा। इसलिए मैंने तुम्हें कुछ नहीं लिखा। बातचीतका सार यह है कि जबतक कांग्रेसका काम-काज चलेगा तबतक वह वहाँ काम करता रहेगा। खर्चेके लिए हम जो देंगे सो लेगा। उसकी जरूरतें भी मामूली हैं। इसलिए मेरी सलाह उसे १०० रुपये देने की है। इसमें से कभी-कभी वह कुछ बचा लेगा और कभी-कभी पूरा पैसा खर्च हो जायेगा। वहाँ उसे घर बनाकर रहने की सुविधा प्रदान की जायेगी, ऐसा मैंने उससे कहा है। किराया उसे देना होगा।

डाह्यालाल आ गया है। अभी तो उसे मैंने भंगीका और कातने का काम सौंपा है।

यह खुशीकी बात है कि गायके दूधका घी बनाया जा रहा है। हर बार घीकी जाँच करते रहना। जरा भी कच्चा रह जानेसे उसके खराब हो जाने की पूरी आशंका रहती है। भैंसके घीकी अपेक्षा गायके घीमें अधिक सावधानीकी जरूरत होती है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९११०) से।

१९७. पत्र : प्रभाशंकर पट्टणीको

सेगाँव, वर्धा
२४ सितम्बर, १९३७

सुज्ञ भाईश्री,

मुझे कुछ-कुछ याद आता है कि मैंने आपको भावनगरमें मद्य-निषेधके सम्बन्धमें लिखा था। लेकिन मुझे उसका उल्लेख कहीं दिखाई नहीं देता। जैसाकि मेरे साथ आजकल होता है, मैंने उसके बारेमें लिखने का सिर्फ विचार किया होगा और लगता है कि मैंने लिखा था। मैं हाथसे कम लिख पाता हूँ और वह भी बायें हाथसे ही लिखता हूँ। इसलिए हो सकता है कि मुझे लिखने का विचार आया हो, लेकिन किसीके पास न होने की वजहसे लिखवा न सका होऊँ। यह तो हुई प्रस्तावना।

आपके यहाँ मद्य-निषेध लागू है, उसका पूरा-पूरा अर्थ आप मुझे समझायें। कितने अर्सेसे लागू है? इसका परिणाम क्या निकला? मद्य-निषेधसे कितना महसूल आपने खोया है? क्या उससे लोगोंमें खुशहाली आ गई है? यदि उसका परिणाम मेरी कल्पनाके विरुद्ध निकला हो तो उसके बारेमें जानकर मुझे क्षोभ नहीं होगा। यदि कल्पनाके अनुरूप परिणाम निकला हो तो उससे मुझे आश्चर्य नहीं होगा। क्योंकि मद्यनिषेधके साथ-साथ जहाँ रचनात्मक कार्य भी चलाया जा रहा है वहाँ अन्य कोई परिणाम निकल ही नहीं सकता। यदि आप अपने आबकारी विभागके किसी

अधिकारीको यह कार्य सौंपेंगे और वे मुझे लिखेंगे तो यह काफी होगा। मैं आपपर यह बोझ कतई नहीं लादना चाहता।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५९५४) से। सी० डब्ल्यू० ३२७१ से भी; सौजन्य : महेश पट्टणी

१९८. उड़ीसामें जलप्रलय

बाढ़, अकाल और महामारियाँ हिन्दुस्तानके नित्य जीवनका अंग बन गई हैं। बाढ़ और अकालके प्रकोप यों तो सारे संसारमें दिखाई देते रहते हैं, लेकिन जो देश आर्थिक और अन्य साधनोंसे सम्पन्न होते हैं, वहाँ इनकी उग्रता बहुत-कुछ कम कर दी जाती है। मगर हिन्दुस्तानमें, जहाँ दरिद्रता भुखमरीकी हदतक जा पहुँची है, बाढ़ और अकालपर काबू पाना तो दूर, उलटे उन्हें जितना होना चाहिए उससे दूने असह्य हो जाते हैं। गरीबीके ही कारण हमारे यहाँ महामारियोंका भी सिलसिला बराबर चलता ही रहता है। पर हिन्दुस्तानकी गरीबीका सबसे बड़ा दोष यह है कि प्राकृतिक प्रकोपोंको एक अनिवार्य वस्तु मानकर हमने सबकुछ भाग्यके भरोसे छोड़ रखा है। और चूंकि हम ऐसा अनजानमें करते हैं, इससे इसकी क्रूरता कोई कम नहीं हो जाती है। अपनी इस बातको स्पष्ट करने के लिए मैं उड़ीसाका ही उदाहरण लेता हूँ। उड़ीसाके राजस्व और लोक-कार्य विभागके मन्त्रीने उड़ीसा बाढ़-पीड़ित-सहायक समितिके अध्यक्षकी हैसियतसे एक अपील जारी की है। चूंकि वे कांग्रेसी मन्त्री हैं, अतः उनमें कांग्रेस और सरकार दोनों आ जाते हैं। पर इस अपीलके साथ भेजे हुए अपने पत्रमें उन्होंने लिखा है कि उनकी अपीलके उत्तरमें लोगोंने कोई उल्लेखनीय योगदान नहीं दिया है। उड़ीसाके गवर्नरने बाढ़-पीड़ित-सहायता कोषकी उद्घाटन-सभामें कहा — "इस बाढ़ने जो तबाही मचाई है उसका मेरे सामने सजीव वर्णन पेश किया गया। मुझे बताया गया कि ६ अगस्तकी रात कटकमें ३०,००० लोग जिन जगहोंपर सो रहे थे या सोने का प्रयत्न कर रहे थे वे नदीके जलके स्तरसे दस फुट नीचे थीं।" बम्बईकी तुलनामें कटक एक मामूली शहर है। वह बम्बईके दसवें हिस्सेके बराबर भी नहीं है। कल्पना कीजिए कि बम्बईके पाससे भी कोई नदी बह रही होती और बाढ़के कारण यहाँके तीन लाख लोग उसी संकटमें पड़ गये होते जिसमें ६ अगस्तकी रात कटकके लोग घिर गये थे, तो उस महानगरका क्या होता! कटक तथा पुरी जिलोंका १५,०० वर्गमील क्षेत्र बाढ़से प्रभावित हुआ है। लेकिन चूंकि भारतके अनेक भागोंमें ऐसी बाढ़ें साल-दर-साल आती ही रहती हैं, इसलिए ऐसी विपत्तियोंसे बम्बई-जैसे उस महानगरकी अन्तरात्मामें भी कोई उद्वेलन नहीं होता जो भारतके किसी भी कोनेसे आई पुकारका उत्तर देनेमें कभी चूका नहीं है। यदि मेरी लेखनीकी प्रेरणापर किन्हींमें उस अपीलका

उत्तर देनेकी इच्छा जागती है तो उनसे जो-कुछ बने, जल्दी भेजें। बम्बईमें अनेक लोकोपकारी संस्थाएँ हैं। मेरा विनम्र सुझाव है कि वे सब मिलकर काम कर सकती हैं — अपने ध्यानमें आनेवाले ऐसे सभी मामलोंकी संयुक्त जाँच कर सकती हैं और तब अपने-अपने कोषके अनुसार अनुपाततः सहायताकी राशियाँ दे सकती हैं। अगर मेरी इस तजवीजपर अमल किया जाये, तो योग्य समर्थकके अभावमें किसी भी पीड़ितकी पुकार अनसुनी नहीं जायेगी। अभी तो यह स्वीकार करना होगा कि इन बड़ी-बड़ी दान-राशियोंके वितरणकी कोई विधि ही नहीं है। लेकिन यह सुझाव तो भविष्यके लिए है। अभी तो "तुरत दान महा कल्याण", इस कहावतके अनुसार जो लोग दान देना चाहते हैं वे किसी संयुक्त प्रयासकी राह देखे बिना तुरन्त दान दें।

दो शब्द मन्त्रियोंसे भी। उन्हें जो राशि प्राप्त होगी, उससे तो आंशिक रूपसे ही राहत मिलेगी। इसलिए उन्हें दो काम करने चाहिए: पहला यह कि उन्हें ऐसे उपाय करने चाहिए जिससे संकटग्रस्त लोग किसी उत्पादक काममें लगकर अपनी सहायता खुद करना सीखें। बिहारमें कताई तथा इसी तरहके अन्य कार्योंको हाथमें लिया गया था। उड़ीसामें अगर लोग चरखा न चलाना चाहते हों तो और कोई धन्धा अपना सकते हैं। मुख्य बात तो श्रमधर्मके गौरवको पहचानना है। खुद मन्त्रियोंको भी चाहिए कि वे हर रोज थोड़ी देरके लिए अपना कुरता उतारकर रख दें और साधारण मजदूरोंकी तरह काम करें। इससे उन लोगोंको प्रोत्साहन मिलेगा जिन्हें काम तथा उससे मिलनेवाली मजदूरीकी जरूरत है। दूसरे, वे कुशल इंजीनियरोंकी तलाश कर उनके शिल्प-कौशलको इस प्रकार काममें लायें जिससे बरसातके मौसममें नदियोंके प्रलयकारी प्रवाहको ऐसा मार्ग दिया जा सके कि वे उपयोगी बन जायें।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २५-९-१९३७

१९९. अव्यावहारिक नहीं

सरदार सर जोगेन्द्रसिंह एक बहुत बड़े समाज-सुधारक, विद्वान् और राजनीतिज्ञ हैं। इसलिए वे जो-कुछ भी लिखते हैं, ध्यान देने लायक होता है। उन्होंने 'टाइम्स ऑफ इंडिया'में पूर्ण शराबबन्दीपर एक लेख लिखा है। उनके लेखोंको जितने ध्यानसे पढ़ना चाहिए उतने ध्यानसे मैंने उसे पढ़ा है। पर मुझे कबूल करना होगा कि उस लेखको पढ़कर मुझे निराशा हुई। इतने बड़े सुधारक ऐसे कारणोंपर कैसे पराजय मान सकते हैं जो तर्कके निष्कर्षपर टिक नहीं सकते? उनकी एकमात्र दलील यही दिखाई देती है कि "लोग निश्चय ही गैर-कानूनी ढंगसे शराब बनायेंगे और छिपकर पियेंगे भी, इसलिए पूर्ण शराबबन्दीके लिए प्रयत्न करना बेकार है।" पंजाबमें स्थानीय संस्थाओंको शराबबन्दी लागू करने की स्वतन्त्रता दी गई थी। पर किसीने उसपर अमल नहीं किया। "इसलिए", वे कहते हैं, "मैं तो इसी नतीजेपर पहुँचा

हूँ कि अगर जनतापर जबरदस्ती शराबबन्दी लादी जायेगी तो हमें उसमें सफलता नहीं मिलेगी और प्रान्तोंको गाँवोंकी पुनर्रचनाके लिए जिस आमदनीकी जरूरत है उससे हाथ धोना पड़ेगा।" शराबबन्दीके सवालको आयके साथ जोड़कर सरदार साहबने एकदम अपनी हार मान ली है, और खुद ही अपनी बातका खण्डन कर दिया है। क्योंकि अपने लेखके चौथे अनुच्छेदमें वे लिखते हैं: "मैंने साफ-साफ कह दिया है कि शराबपर अंकुश रखने की नीतिपर अमल करने में मैं आय-सम्बन्धी किसी विचारको आड़े नहीं आने दूंगा।"परमात्माको धन्यवाद है कि कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलोंने शराबसे होनेवाली आयका त्याग कर उसके जालसे अपने-आपको मुक्त कर लिया है। इस सम्बन्धमें जरा भी ढिलाई रह गई तो इस अनैतिक आयका उपयोग करने का लोभ संवरण करना कठिन हो जायेगा। क्योंकि इस बातसे कोई इनकार नहीं करता कि किसी शराबखोरकी शराबकी आदत आनन-फानन छुड़ाना कितना मुश्किल काम है। और जिन पुराने मन्त्रियोंसे मैं शराबबन्दी लागू करने के लिए कहा करता था उन्होंने कभी इसे अव्यावहारिक नहीं बताया। लेकिन वे शराबसे होनेवाली भारी आयको छोड़ने में अपनी असमर्थता व्यक्त करते थे। उन्हें शिक्षा के लिए इसकी जरूरत थी। ऐसे अनीतियुक्त मार्गसे प्राप्त होनेवाली आयकी सहायतासे जो शिक्षा दी जाये क्या वह कोई ग्रहण करने योग्य वस्तु हो सकती है? क्या उसका कोई वास्तविक मूल्य है? हिन्दुस्तानके स्कूलों और कॉलेजोंमें जिस प्रकारकी शिक्षा दी जाती है उसे प्राप्त कर युवकोंने क्या अपने ऊपर खर्च किये गये धनका कुछ मुआवजा भी चुकाया है?

यों तो चोरी अनन्त कालतक चलती रहेगी। तो क्या इसलिए उसे हम कानून द्वारा मंजूरी दे दें? चीजोंकी चोरीकी अपेक्षा मस्तिष्ककी चोरी करना क्या कम अपराधपूर्ण है। बेशक, कुछ हदतक लोग गैर-कानूनी ढंगसे हमेशा शराब बनाते रहेंगे। पर उसकी मात्रासे हम यह अन्दाज लगा सकेंगे कि सरकार किस हदतक प्रयत्नशील है, और जागरूक जनता शराब पीने व अफीम खानेवाले लोगोंके प्रति सतत और सहानुभूतिपूर्ण व्यवहारके द्वारा किस हदतक सरकारको सहयोग दे रही है। भौतिक या शारीरिक उन्नतिके लिए हमें जो मूल्य चुकाना पड़ता है, नैतिक उन्नतिके लिए उससे कोई कम मूल्य नहीं चुकाना पड़ता। पर मेरा यह निवेदन है कि यदि इस रचनात्मक प्रयाससे पहले हम पूर्ण मद्य-निषेध लागू नहीं करते हैं तो यह प्रयास अवश्य विफल होगा। जबतक राज्य शराबीको शराब पीने की इजाजत ही नहीं बल्कि सुविधाएँ भी देता रहेगा, तबतक सुधारकोंको सफलता मिलना लगभग असम्भव है। जिप्सी स्मिथ मद्य-निषेधका बड़ा जबरदस्त प्रचारक था। हजारोंकी तादादमें लोग उसके भाषण और गीत सुनने के लिए इकट्ठे होते थे और उनमें से बहुत-से उन्हें सुनकर मुग्ध हो जाते और प्रतिज्ञा कर लेते थे कि अब कभी शराब नहीं पियेंगे। लेकिन मैं दक्षिण आफ्रिकाके अपने अनुभवके आधारपर कहता हूँ कि इन गरीब शराबियोंमें से अधिकांश जब शहरके राजमार्गसे होकर गुजरते थे और वहाँ हर जगह महलों-जैसे आलीशान पानगृहोंको देखते अथवा शहरसे बहार जाने पर जब रास्तेमें उन्हें यत्रतत्र शराब सुलभ करानेवाली पान्थशालाएँ दिखाई देती थीं तो ये लोग उनमें

जाकर शराब पीने का लोभ संवरण नहीं कर पाते थे। राज्यकी ओरसे की जानेवाली शराबबन्दी पूर्ण मद्य-निषेधके महान् सुधारका अन्त नहीं, बल्कि अनिवार्य शुरुआत है।

और स्थानीय तौरपर छूट देने के बारेमें जितना कम कहा जाये उतना ही अच्छा है। बुराईके इन अड्डोंको बन्द करने के खिलाफ क्या कभी कोई आन्दोलन हुआ? छूटका सवाल तो वहाँ खड़ा हो सकता है जहाँ सारी-की-सारी जनता शराब पीना चाहती हो।

ईश्वरकी कृपा हुई तो मद्य-निषेध कायम रहेगा। कांग्रेस और कुछ योगदान दे पाये या न दे पाये, इतिहासके पृष्ठोंमें यह बात स्वर्णाक्षरोंमें लिखी जायेगी कि कांग्रेसने सन् १९२० में शराबबन्दीकी प्रतिज्ञा ली थी और पहला अवसर मिलते ही उसने चुकाई जानेवाली कीमतकी परवाह किये बिना अपनी प्रतिज्ञाका पालन किया। मुझे इस बातका पूरा यकीन है कि अन्य प्रान्त भी इसका अनुकरण करेंगे। मैं सरदार जोगेन्द्रसिंहसे अनुरोध करता हूँ कि वे इस अत्यावश्यक सुधारके सम्बन्धमें कांग्रेसको चेतावनी न दें, बल्कि अपने प्रान्तमें और बहादुर सिखोंके बीच इस सुधारको सफल बनाने में अपना पूरा जोर लगा दें।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २५-९-१९३७

२००. चार प्रश्न

एक पत्र-लेखकने मुझसे चार प्रश्न किये हैं, जो निम्न प्रकार हैं:

१. जिन हिन्दुओंने किन्हीं कारणोंसे स्वधर्मका त्याग करके इस्लाम या ईसाई धर्म स्वीकार कर लिया था, वे अब हृदयसे पछताते हैं और पुनः हिन्दू-धर्ममें आना चाहते हैं। हमें उन्हें वापस हिन्दू-धर्ममें लेना चाहिए या नहीं? आप अपने लड़के हरिलालका ही उदाहरण लें।[1]

२. आप जानते हैं कि दक्षिण भारतमें दलित-वर्गोंके लोग सामूहिक रूपसे ईसाई धर्ममें शामिल हो गये हैं। त्रावणकोर दरबारकी घोषणाके[2] बादसे हरिजन-आन्दोलन वहाँ और लोकप्रिय हुआ तबसे कुछ लोग अपने पूर्वजोंके धर्मको फिरसे स्वीकार कर लेना चाहते हैं। उनके बारेमें आप क्या सलाह देंगे?

३. एक हिन्दूको अमुक लोभ देकर दूसरे धर्ममें शामिल कर लिया जाता है। कुछ दिनों बाद उसकी आँखें खुल जाती हैं, और वह हमारे यहाँ आकर हमारा दरवाजा खटखटाता है। उसका हम स्वागत करेंगे या नहीं?

१. देखिए खण्ड ६२, पृ० २३५ और ४९७ खण्ड ६३, पृ० ६-८ भी।
२. देखिए खण्ड ६४, पृ० ५४-५५।

४. छोटे-छोटे हिन्दू बालक-बालिकाओंको अक्सर ये पादरी लोग हथिया लेते हैं और उनका धर्म-परिवर्तन कर देते है। कभी-कभी मुसलमान भी अपने यतीमखानोंका उपयोग इस कामके लिए करते हैं। ऐसे लड़के और लड़कियाँ, अकेले या अपने अभिभावकोंके साथ, अगर हमारे पास आकर अपनी शुद्धि कराना चाहें, तो उस वक्त हमें क्या करना चाहिए?

ये अथवा इसी तरहके दूसरे प्रश्न पहले भी किसी-न-किसी रूपमें पूछे गये हैं और उनका जवाब भी 'हरिजन' में दिया गया है। हर प्रश्नका जवाब अलग-अलग देने की जरूरत नहीं। मेरी रायम ये सच्चे हृदय-परिवर्तनके उदाहरण नहीं हैं। अगर कोई आदमी डरसे, जोर-जबरदस्तीसे, भूखसे या कुछ रुपये-पैसेके लालचमें आकर दूसरे धर्ममें चला जाता है, तो उसे हृदय-परिवर्तनका नाम नहीं दिया जा सकता है। हम सामूहिक धर्म-परिवर्तनके जिन प्रसंगोंके विषयमें इधर दो वर्षसे सुनते आ रहे हैं, उनमें से अधिकतर तो मेरे विचारमें खोटे सिक्के हैं। सच्चा मत-परिवर्तन हृदयसे होता है; किसी अजनबी आदमीकी प्रेरणासे नहीं, बल्कि ईश्वरकी प्रेरणासे होता है। कौन-सी आवाज मनुष्यकी है और कौन-सी ईश्वरकी, इसे तो हम हमेशा पहचान सकते हैं। पत्र-लेखकने जो काल्पनिक दृष्टान्त दिये हैं, मैं मानता हूँ, वे सच्चे मत-परिवर्तनके दृष्टान्त नहीं हैं। इसलिए ऐसे पश्चात्ताप करनेवालों को मैं बगैर किसी शोर-गुलके, और निश्चय ही शुद्धिके बिना, हिन्दू धर्ममें फिरसे दाखिल कर लूँगा। ऐसे लोगोंको शुद्धिकी जरूरत ही नहीं है। और चूँकि मेरी यह मान्यता है कि इस जगत्के सभी महान् धर्म समान हैं, इसलिए यदि कोई आदमी जिस डाल-पर बैठा हो उसे छोड़कर उसी वृक्षकी दूसरी डालपर बैठ जाता है तो इससे वह अपवित्र अथवा दूषित हो जाता है, सो मैं नहीं मानता। वह अगर अपनी मूल डालपर फिरसे बैठना चाहता है, तो उसका स्वागत किया जाना चाहिए। यह कहना उचित नहीं कि जिस कुटुम्बमें वह पहले था उसे छोड़कर वह चला गया, इसलिए उसने कोई पाप किया। और जब वह सच्चे हृदयसे अपनी भूलका प्रायश्चित्त करता है और अपने धर्ममें वापस आ जाता है तो जिस हदतक उसने भूल की थी उस हदतक वह उसका परिष्कार भी कर लेता है। इस तरह प्रायश्चित्त करके वह शुद्ध हो जाता हैं।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २५-९-१९३७

२०१. टिप्पणियाँ

एक अपील

मैं जानता हूँ कि ऐसे बहुत-से शिक्षक हैं जो मेरी बताई प्राथमिक शिक्षाकी विधिमें न्यूनाधिक विश्वास रखते हैं। मुझे यह भी पता है कि इनमें से कुछ शिक्षक किसी-न-किसी उद्योगके जरिये ऐसी शिक्षा देनेका प्रयत्न भी कर रहे हैं। फिर, ऐसे भी बहुत-से लोग हैं, जिनकी इस विषयमें रुचि तो है, किन्तु अपरिहार्य परिस्थितियोंके कारण शिक्षकके कामसे दूर जा पड़े हैं। अब चूँकि कांग्रेसी मन्त्रिमण्डल मेरी योजनाके पक्षमें जान पड़ते हैं, इसलिए ऐसे लोगोंके नामोंकी जरूरत है जो इस प्रयोगको सफल कर दिखाने के लिए अपनी सेवाएँ दे सकते हों। क्या ऐसे मित्र मुझे अपने नाम, योग्यता, आवश्यक वेतन, और अगर कुछ शर्तें हों तो वे भी लिख भेजेंगे?

कानून-सम्मत व्यभिचार

कांग्रेस मन्त्रिमण्डलसे लोग जो बड़ी-बड़ी आशाएँ रखते हैं, उसका एक और प्रमाण डॉ० मुत्तुलक्ष्मी रेड्डीने[1] दिया है। लोगोंको ऐसी आशाएँ रखने का हक भी है। कांग्रेसके विरोधियोंने भी यह स्वीकार किया है कि कांग्रेस मन्त्रिमण्डल कसौटी पर खरे उतर रहे हैं। कांग्रेसी मन्त्रिमण्डल लोक-हितकारी कामोंकी शुरुआत करने में परस्पर एक-दूसरेसे होड़ करते जान पड़ते हैं, जिससे कि उनका शासन-प्रबन्ध सच्चे भारतीय वातावरणके अनुरूप बन सके। डॉ० मुत्तुलक्ष्मी रेड्डीने मद्रासके मन्त्रिमण्डलके नाम एक खुली अपील प्रकाशित की है। उसमें उन्होंने मन्त्रियोंसे एक विधेयक पास करने का अनुरोध किया है, जिसके जरिये देवदासियोंको पतित जीवनके लिए अर्पित कर देने का अनैतिक रिवाज खत्म हो सके। मैंने इस विधेयकको अभी ध्यानपूर्वक नहीं पढ़ा है। लेकिन इसके पीछे जो भाव निहित है वह इतना ठोस है कि आश्चर्य होता है कि मद्रास अहातेकी कानूनकी पुस्तकमें अबतक उसे कैसे स्थान नहीं मिल पाया है। मैं डॉ० मुत्तुलक्ष्मीकी इस बातसे पूरी तरह सहमत हूँ कि यह सुधार भी उतना ही जरूरी है जितना कि शराबबन्दी। उन्होंने इस बातकी भी याद दिलाई है कि वर्त्तमान मुख्य मन्त्रीने[2] बरसों पहले इस बुरे रिवाजकी बड़े कड़े शब्दोंमें निन्दा की थी। मैं जानता हूँ कि आज जब इस बुराईको कानूनसे दूर करने की कुछ सत्ता उनके हाथोंमें आ गई है तो इस बुराईको दूर करने की उनकी उत्सुकता जरा भी कम नहीं हुई है। डॉ० मुत्तुलक्ष्मीके साथ-साथ मैं भी आशा करता हूँ कि चन्द महीनोंमें ही इस बुराईका कानूनी आधार हट जायेगा।

१. मद्रास की एक सामाजिक कार्यकर्त्री।

२. चक्रवर्ती राजगोपालाचारी।

महुएका उपयोग

एक सज्जनने महुएके विषयमें एक लम्बा पत्र लिखा है, और यह इच्छा प्रकट की है कि शराब बनाने के अलावा महुएके अन्य उपयोगोंपर लगाये गये सभी प्रतिबन्ध हटा लिये जाने चाहिए। शराबबन्दीका मैं शत-प्रति-शत हिमायती रहा हूँ, इसलिए मुझे इस तजवीजका समर्थन करने में तनिक भी संकोच नहीं होता। शराबबन्दीकी सारी कल्पनाके पीछे जो उद्देश्य है वह लोगोंको सजा देना नहीं, बल्कि शिक्षा देना है। शराब, अफीम, गाँजा वगैरह नशीली चीजोंको, और जहाँ ये बिकती हैं उन दुकानोंको राज्यकी ओरसे जो स्वीकृति मिली हुई है उसके हटते ही शिक्षणका रास्ता साफ हो जायेगा। मद्य-निषेध कानूनके अन्तर्गत जिन सजाओंका विधान किया जायेगा उनका स्वरूप आजतक प्रचलित सजाओंसे भिन्न रखना होगा। इसलिए अगर मेरी योजना स्वीकार कर ली जाती है, तो यह विश्वास रखकर चलना होगा कि लोग महुएका सदुपयोग करेंगे, और इस भयसे कि वे उसका दुरुपयोग करेंगे, उसके सभी उपयोगोंपर प्रतिबन्ध नहीं लगाया जायेगा। इसलिए शराबबन्दीके कानूनके अनुसार जिस तरह ताड़ीके सदुपयोगपर कोई अंकुश नहीं होगा उसी तरह महुएके सदुपयोगपर भी नहीं होगा। महुएके फूल, महुएके तेल और महुएकी लकड़ीके कुछ उपयोग, जो इन सज्जनने बताये हैं, मैं यहाँ उद्धृत करता हूँ:

१. ताजे महुए स्वादमें मीठे लगते हैं।

२. सुखाये हुए महुएसे अनेक प्रकारकी स्वादिष्ठ चीजें बनाई जाती हैं। गरीब लोगोंके लिए ये चीजें मिठाईका काम देती हैं।

३. पुराना बद्धकोष्ठ दूर करने में महुएका काढ़ा बड़ा गुणकारी होता है।

४. डोलिया कहे जानेवाले महुएके बीजको पेरकर निकाला हुआ तेल खाने के काममें आता है। गरीबोंका यह घी है।

५. महुआ मनुष्य और ढोर दोनोंके लिए पुष्टिकारक माना जाता है।

६. तंगी और अकालमें, जिनका खेड़ा जिलेपर अक्सर प्रकोप होता रहता है, गरीब आदमियोंको महुआ बिलकुल भूखों मरने से बचाने में बहुत मदद करता है।

७. डोलियेका तेल कपड़े धोने का साबुन बनाने के लिए खासकर पसन्द किया जाता है।

८. महुएकी लकड़ीका ईंधन तथा इमारती काम दोनोंमें उपयोग किया जाता है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २५-९-१९३७

२०२. पत्र: सरस्वतीको

सेगाँव
२५ सितम्बर, १९३७

चि० सरस्वती,

तुम्हारा खत मिला। तुम्हारे जरा भी चिन्तीत नहीं रहना है। कांति जैसा कहे वैसा किया करो। अमतुलसलामको खत लिखने की कोई आवश्यकता नहीं है। वह तो मेरे साथ ही है। तुम दोनोंके खुश हालसे वह खुश रह सकती है।

जब यहां आने की सम्मति मामाजी[1] और कांति दे तब आना। तबतक तो तुम्हारे अभ्यासमें ही परायण रहना। मनको स्थिर रक्खो।

अब तो कांतिके खत आते होंगे।

अस्पतालोंका तो जैसा लिखती है वैसा ही है। किसीको किसीकी नहीं पड़ी है। जो हमारे संबंधी नहीं उनको संबंधी समझना और उनकी सेवा करना वही सच्ची अहिंसा है और वही दयाभाव है।

मेरी तबियत अच्छी है। बा की भी अच्छी है।

नीमु, देहरादून हिन्दी और अंग्रेजी सीखने गई है।

लक्ष्मी अब भी मद्रासमें ही है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१६५) से। सी० डब्ल्यू० ३४३८ से भी; सौजन्य: कांतिलाल गांधी

२०३. बम्बईमें प्राथमिक शिक्षा[2]

अबतक मैंने जो चर्चा की है, वह ग्राम-शिक्षाके बारेमें की है, क्योंकि यही सारे हिन्दुस्तानका प्रश्न है। यदि इसको हम सीधी तरहसे हल कर सकें तो शहरोंके सम्बन्धमें कठिनाई नहीं होगी, यह समझकर मैंने शहरोंके बारेमें कुछ नहीं लिखा है। लेकिन बम्बईकी शिक्षामें दिलचस्पी लेनेवाले एक नागरिकने निम्नलिखित प्रश्नका उत्तर माँगा है:

१. जी० रामचन्द्रन्।
२. इस लेखका अंग्रेजी अनुवाद **हरिजन**के ९-१०-१९३७ के अंकमें प्रकाशित हुआ था।

कांग्रेस मन्त्रिमण्डल प्राथमिक शिक्षाके भारी खर्चके प्रश्नको हल करने में व्यस्त दीख पड़ता है। ऐसा सुझाव दिया गया है कि शिक्षाका खर्च उस शिक्षासे ही निकल सकता है। बम्बई-जैसे शहरमें किस तरहसे और किस हदतक इस दिशामें बढ़ा जा सकता है, इस प्रश्नकी चर्चा आवश्यक लगती है। कहा जाता है कि इस वर्ष शिक्षाके पीछे बम्बई कार्पोरेशनको अनुमानतः ३५ से ३६ लाख रुपये खर्च करने पड़ेंगे; और सारे शहरमें शिक्षाको अनिवार्य करने से कई लाख रुपयेका खर्च और बढ़ जायेगा। शिक्षकोंकी तनख्वाहपर २० लाख और किरायेमें ४ लाखसे ज्यादाकी रकम खर्च होती है। प्रति विद्यार्थी औसत सालाना खर्च ४० से ४२ रुपये होता है। विद्यार्थी पढ़ते-पढ़ते इतनी रकमका काम करें, तभी शिक्षाका खर्च शिक्षामें से निकल सकता है। यह कैसे हो सकता है?

मेरा तो दृढ़ विश्वास यही है कि यदि प्राथमिक शिक्षामें उद्योगोंके तत्त्वको लागू कर दिया जाये, तो उससे बम्बईके बालकों और बम्बई शहरको लाभ ही होगा। शहरमें पले-बढ़े बालक तोतेकी तरह कविताएँ रटेंगे और सुनायेंगे, नाचेंगे, अन्य हाव-भाव दिखायेंगे, ढोल बजायेंगे, कूच करेंगे, इतिहास-भूगोलके जवाब देंगे, और कोई थोड़ा अंकगणित जानेंगे; पर उससे आगे नहीं बढ़ेंगे। मैं भूल गया। वे थोड़ी अंग्रेजी जरूर जानते होंगे; पर यदि एक टूटी हुई कुर्सी ठीक करनी हो अथवा फटा हुआ कपड़ा सीना हो, तो वे नहीं कर सकेंगे। ऐसी बातोंमें हमारे शहरोंके लड़के जितने पंगु देखने में आते हैं, उतने पंगु लड़के मैंने दक्षिण आफ्रिका या इंग्लैण्डके अपने प्रवासमें कहीं नहीं देखे।[1] अभी तो अपनी प्राथमिक शिक्षाके बाद वे बच्चे जितनी योग्यताका परिचय दे सकते हैं वह कुछ खास नहीं होती और उन्हें योग्य नागरिक बनाने की दृष्टिसे तो वह बेकार ही होती है।

इसलिए मैं तो यह मानता हूँ कि यदि शहरोंमें भी उद्योगों द्वारा ही शिक्षा दी जाये, तो उससे बालकोंको बेहद लाभ हो सकता है, और यदि ३५ लाख नहीं, तो उसका एक बहुत बड़ा हिस्सा तो अवश्य बच सकता है। ४२ रु० के बजाय यदि वार्षिक खर्च ४० रु० प्रति बालक ही मान लिया जाये, तो कहा जा सकता है कि नगर निगम ८७,५०० बालकोंको पढ़ाता है। यदि दस लाखकी आबादी हो तो बालकोंकी संख्या कमसे-कम डेढ़ लाख होनी चाहिए, अर्थात् लगभग ६२,००० बालक बिना शिक्षाके रहते होंगे। यदि यह मान लें कि ये सब गरीब नहीं होंगे और इसलिए बालक निजी स्कूलोंमें भी जाते होंगे, तो भी ५६,००० बालक बचते हैं। इस हिसाब-से उनके लिए २२ लाख ४० हजार रुपये और चाहिए। इतने पैसे बम्बई कब पैदा करे और कब सब बालकोंको पढ़ाये? और क्या पढ़ाये?

मेरी मान्यता है कि शिक्षा अनिवार्य और मुफ्त होनी ही चाहिए। किन्तु बालकोंको उपयोगी उद्योगोंकी शिक्षा दी जानी चाहिए और उसके जरिये उनके मन और

१. अगला वाक्य **हरिजन**से लिया गया है।

शरीरका विकास किया जाना चाहिए। मैं यहाँ भी पैसोंका हिसाब करता हूँ, उसे अनुचित नहीं मानना चाहिए। अर्थशास्त्र नैतिक और अनैतिक दोनों प्रकारका होता है। नैतिक अर्थशास्त्रमें दोनों पहलू बराबर होंगे। अनैतिकमें ताकतवरके दो भाग होंगे। इसका अनुपात उसकी ताकतपर निर्भर करता है। जैसे अनैतिक अर्थशास्त्र घातक है, वैसे ही नैतिक आवश्यक है। उसके बिना धर्मकी पहचान और उसका पालन मैं असम्भव मानता हूँ।

मेरा नैतिक शास्त्र मुझे यह अवश्य बताता है कि बम्बईके बालक हँसते-खेलते प्रतिमास तीन रुपयेका काम कर सकते हैं। यदि वे ४ घंटे काम करें और हर घंटेके दो पैसे माने जायें, तो महीनेमें २५ दिन खुलनेवाले स्कूलमें वे ५० आने यानी ३-२-० का काम कर सकते हैं।

जब शिक्षाके रूपमें उद्योग सिखाया जायेगा, तब ऐसा मानने का कोई कारण नहीं है कि बालक कामके बोझसे दब जायेंगे। नाममात्रके शिक्षक इतिहास-भूगोल-जैसे सरल और सरस विषयोंको सिखाते हुए शिष्योंको भार-स्वरूप लगते हैं। सच्चे अध्यापक हँसते-खेलते अपने शिष्योंको उद्योग सिखाते हैं, यह मैंने अपनी आँखोंसे देखा है। ऐसे शिक्षक कहाँसे लाये जायें, यह तो कोई नहीं बतायेगा। कोई चीज करने लायक है, ऐसा मानने के बाद उसे करनेवाले लोग तैयार करना तो स्वभावतः उसे मानने-वाले व्यक्ति या संस्थाका धर्म हो जाता है। ऐसे शिक्षकोंको तैयार करने में समय तो लगेगा ही। आजकी अनुपयुक्त शिक्षा-पद्धतिको गढ़ने और उसके लिए शिक्षक तैयार करने में जितना समय लगता है उसका शतांश भी इसमें नहीं लगेगा। खर्च तो अनुपातमें कम ही लगेगा। यदि मेरे हाथमें बम्बई नगर निगम हो, तो मैं अपनी परिकल्पनामें थोड़ी-बहुत श्रद्धा रखनेवाले शिक्षा-शास्त्रियोंकी एक छोटी-सी समिति नियुक्त करके उनसे एक महीनेके भीतर योजनाकी माँग करूँ और उसपर अमल शुरू कर दूँ। इसमें यह मान्यता अवश्य आ जाती है कि मुझे इस परिकल्पनाकी सम्भावनाके बारेमें अचल श्रद्धा है। परायी श्रद्धासे आजतक कोई अच्छा व महान् कार्य नहीं हुआ।

एक प्रश्न बाकी रहता है। कौन-सा उद्योग शहरोंमें सरलतापूर्वक सिखाया जा सकता है? मेरे पास तो उत्तर तैयार ही है। मैं जो चाहता हूँ, वह गाँवोंकी ताकत है। आज गाँव शहरोंके लिए जीते हैं, उनपर निर्भर हैं। यह अनर्थ है। शहर गाँवों पर निर्भर रहें, अपने बलका सिंचन गाँवोंसे करें अर्थात् अपने लिए गाँवोंका बलिदान करने के बजाय खुद गाँवोंके लिए बलिदान और त्याग करें, तो अर्थ सिद्ध होगा और अर्थशास्त्र नैतिक बनेगा। ऐसे शुद्ध अर्थकी सिद्धिके लिए शहरोंके बालकोंके उद्योगोंका गाँवोंके उद्योगोंके साथ सीधा सम्बन्ध होना चाहिए। इसके लिए मेरे खयालमें अभी तो पींजनसे लेकर कताई तकके उद्योग आते हैं। आज भी कुछ हदतक तो ऐसा होता ही है। गाँव कपास देते हैं और मिलें उससे कपड़ा बुनती हैं। इसमें शुरूसे आखिरतक अर्थका नाश किया जाता है। जैसे-तैसे कपास बोई जाती है, जैसे-तैसे चुनी जाती है और जैसे-तैसे साफ की जाती है। इस कपासको किसान कई बार

नुकसान सहकर भी राक्षसी ओटाई मिलोंमें बेचता है। वहाँ वह बिनौलेसे अलग होकर, दबकर, अधमरी बनकर मिलोंमें गाँठोंके रूपमें जाती है। वहाँ उसे पींजा जाता है, काता जाता है और बुना जाता है। ये सब क्रियाएँ इस तरह होती हैं कि कपासका तत्त्व — सार — तो जल जाता है और उसे निर्जीव बना दिया जाता है। मेरी भाषाका कोई बुरा न माने। कपासमें जीव तो है ही। इस जीवके प्रति मनुष्य या तो कोमलतासे बरताव करे या राक्षसकी तरह। आजकलके बरतावको मैं राक्षसी व्यवहार मानता हूँ।

कपासकी कुछ क्रियाएँ गाँवोंमें और शहरोंमें हो सकती हैं। ऐसा होने से शहरों और गाँवोंका सम्बन्ध नैतिक और शुद्ध होगा। दोनोंकी वृद्धि होगी और आजकी अव्यवस्था, भय, शंका, द्वेष सब मिट जायेंगे या कम हो जायेंगे। गाँवोंका पुनरुद्धार होगा। इस परिकल्पनापर अमल करने में थोड़े-से द्रव्यकी ही जरूरत है। वह आसानीसे मिल सकता है। विदेशी बुद्धि या विदेशी यन्त्रोंकी जरूरत ही नहीं रहती। देशको भी अलौकिक बुद्धिकी जरूरत नहीं है। एक छोरपर भुखमरी और दूसरे छोरपर जो अमीरी चल रही है, वह मिट जायेगी और दोनोंका मेल सधेगा; और विग्रह तथा खून-खराबीका जो भय हमको हमेशा लगा रहता है, वह दूर होगा। पर बिल्लीके गलेमें घंटी कौन बाँधे? बम्बई नगर निगमका हृदय मेरी परिकल्पनाकी ओर किस प्रकारसे आकर्षित हो? इसका जवाब मैं सेगाँवसे दूँ, इसकी बजाय प्रस्तुत पत्र लिखनेवाले बम्बईके विद्या-रसिक नागरिक ही ज्यादा अच्छी तरह दे सकते हैं।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, २६-९-१९३७

२०४. टिप्पणियाँ

सामाजिक प्रयत्नकी आवश्यकता

एक सज्जन लिखते हैं:[1]

यह कहा जा सकता है कि हिन्दू धर्मावलम्बियोंमें इस प्रकारकी मान्यता[2] लगभग सभी जगह प्रचलित है। इसके मूलमें जाने की आवश्यकता नहीं। मुझे तो पता भी नहीं। इस युगमें, जबकि स्त्री-पुरुषके अधिकार समान माने जाते हैं और माने जाने चाहिए, दोनोंका मूल्य भी समान आँकना चाहिए। पुत्र-जन्मसे इतना हर्ष क्यों? और पुत्रीके जन्मसे शोक क्यों? दोनोंको जीने का समान अधिकार है। दोनोंके अस्तित्वसे

१. यहाँ पत्रका अनुवाद नहीं दिया गया है। इसमें पत्र-लेखकने गांधीजी का ध्यान एक ५५ वर्षीय खादी-कार्यकर्त्ताके विवाहकी ओर खींचा था, जिनकी एक बार **हरिजनबन्धु**में प्रशंसा की गई थी और जिन्होंने पुत्र-प्राप्तिके लिए एक २० वर्षीय विधवासे विवाह कर लिया था।

२. पुत्रीकी तुलनामें पुत्रकी श्रेष्ठताकी मान्यता।

ही संसार चल सकता है। लेकिन जो मान्यता प्राचीन कालसे जड़ जमाये हुए है, वह एक या अधिक लोगोंके लिखने-मात्रसे एकाएक दूर नहीं हो सकती। हिन्दू-समाजमें जब सारासार विवेकका ज्ञान फैलेगा, स्त्रियोंका सच्चा आदर होने लगेगा, तभी कच्छके इन सज्जनने जिन बातोंका उल्लेख किया है, वे बन्द होंगी। आज तो यह हालत है कि जहाँ लड़कियाँ-ही-लड़कियाँ पैदा होती हैं वहाँ पति और पत्नी दोनों दूसरे विवाहके लिए सहमत हो जाते हैं। यह कहना उचित नहीं है कि इसमें उनकी विषयेच्छा ही प्रबल होती है। इसमें केवल एक विशेष भावना ही प्रबल होती है। भावना एकाएक इच्छा-मात्रसे बदली नहीं जा सकती। इसके लिए अच्छी तरहसे सामाजिक प्रयत्न करने की आवश्यकता होती है।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, २६-९-१९३७

२०५. पत्र : वी० वी० अतीतकरको

सेगाँव, वर्धा
२६ सितम्बर, १९३७

प्रिय अतीतकर,

आप सरकारसे अनुदानकी माँग करें और अनुदान लें, इसमें कांग्रेसकी दृष्टिसे कोई नैतिक या कानूनी दोष नहीं है, लेकिन आपकी इस बातसे मैं सहमत हूँ कि आप ऐसा न करें तो यह ज्यादा अच्छा होगा।

हालमें शिक्षाके सम्बन्धमें मैं जो विचार व्यक्त करता रहा हूँ, उनसे आप देख सकते हैं कि विश्वविद्यालय यदि सरकारके लिए भार-रूप होते हैं तो मैं उनकी संख्या बढ़ाने के पक्षमें नहीं हूँ। लेकिन अगर सरकारसे कोई पृथक् परीक्षा विश्वविद्यालय खोलने को कहा जाता है तो मैं बेझिझक मंजूरी दे दूँगा, क्योंकि ऐसी संस्थाको जो परीक्षा-शुल्क मिलेगा उसके बलपर वह स्वावलम्बनसे भी बेहतर अवस्थामें रहगी। बहरहाल, जो लोग भी विश्वविद्यालय खोलने के लिए परवाना पाना चाहें उन्हें इस बातका ध्यान रखकर चलना होगा कि वह विश्वविद्यालय स्वावलम्बी होना चाहिए। कॉलेजोंको और अगर विश्वविद्यालयमें स्कूलोंको भी शामिल करना हो तो उन्हें भी स्वभावत: विश्वविद्यालय द्वारा निर्धारित पाठ्यक्रम तथा उसके बनाये विनियमोंपर चलना होगा। इसलिए यदि आप विश्वविद्यालयको स्वावलम्बी बना सकते हैं, अर्थात् यदि आप मानते हों कि आपकी परीक्षाओंमें बैठनेवाले काफी विद्यार्थी मिल जायेंगे तो आप लोकमान्य विश्वविद्यालयकी स्थापनाका परवाना पाने के अधिकारी हैं।

मेरी परिकल्पनाके अन्तर्गत तो हर कला तथा दस्तकारीके लिए कॉलेज होंगे, और इसलिए इन शर्तोंपर चाहे जितने भी विश्वविद्यालय खोले जायें, मुझे कोई आपत्ति नहीं होगी।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्रीयुत अतीतकर
तिलक स्मारक विद्यापीठ
पूना

अंग्रेजीकी नकलसे; प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य: प्यारेलाल

२०६. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

सेगाँव
२६ सितम्बर, १९३७

भाई वल्लभभाई,

तुम्हारे पत्र तो मुझे मिलते रहते हैं। तुम पाँच दिनकी यात्रा कर सके, यही बात मुझे आश्चर्यजनक लगती है। यदि समान रूपसे कार्य करनेवाले दो व्यक्ति[१] एक साथ मिल जायें तो दोनोंको परेशानी होने लगती है। दो कमजोर व्यक्तियोंका साथ तो कभी-कभी निभ जाता है। ताकतवर आदमीके मनमें भी कमजोर व्यक्तिके प्रति थोड़ी-बहुत सहानुभूति तो अवश्य होती है, इसलिए कुछ हदतक उनमें निभ सकती है। तुम दोनों ऐसे इकट्ठे हुए हो कि एक यदि सेर है तो दूसरा सवा सेर; इसलिए तुम दोनोंकी यात्रा तो अवश्य देखने लायक रही होगी। ठीक है। तुमने कमला स्मारकका कर्ज तो अदा कर ही दिया। फिर चिन्ता किस बातकी? और आजकलके समयको देखते हुए यह रकम अच्छी कही जायेगी। (अहमदाबाद)के मिल-मालिकोंने क्या ठीक-ठीक चन्दा दिया?

काठियावाड़ परिषद्की बात मैं समझता हूँ।

नरीमान काण्डको[२] भूल जाना। तुमने अपनी चिन्ता मुझे सौंपी है और मैंने बहादुरजी[३]को। वे तो बहुत परिश्रमी व्यक्ति दीख पड़ते हैं। वे रोज समय निकाल कर एक-एक पत्र पढ़ते हैं और उसपर टिप्पणी लेते हैं। इन सबको पढ़ने में ही दो

१. सरदार पटेल और जवाहरलाल नेहरूने कमला नेहरू स्मारक कोषके सिलसिलेमें गुजरातका संयुक्त दौरा किया था।

२. देखिए "वक्तव्य : समाचारपत्रोंको", १६-१०-१९३७।

३. डी० एन० बहादुरजी।

हफ्ते लग जायेंगे। उनके पास ढेरों मामले हैं। इसे भी वे मानों उन्हींमें से एक मानकर समय निकालकर पढ़ते हैं। इसलिए तुम समयकी चिन्ता मत करना और जो होना होगा सो होने देना। अखबारोंमें तुमपर जो आक्रमण किये जाते हैं, तुम उन्हें पढ़ना ही नहीं।

इसके साथ मैं एक पत्र भेज[1] रहा हूँ, उसे पढ़कर वापस भेजना। ऐसा भाषण तुमने कब दिया था?

यदि कांग्रेस-अधिवेशनमें बहुत खर्च होता है तो मेरे विचारसे यह हमारे दिवालियेपनका सूचक होगा। हमारे पास पैसोंकी कमी है; इसमें मुझे हमारी मौत दिखाई देती है। कांग्रेसमें हम जो साज-सज्जा करनेवाले हैं वह साज-सज्जा किरायेकी होगी। यह [कांग्रेस] स्वयंसेवकोंकी लोक-सेवाकी भावनाका परिचायक न होगी। मैं जो यह सब लिख रहा हूँ सो तुम्हारी आलोचना करने के विचारसे नहीं लिख रहा हूँ। यह तो हमारा भविष्य है। हमारी स्थितिका करुणाजनक चित्र है। पाँच-सात दिन पहले मैंने रामदासको एक पत्र भेजा था। उसमें मैंने इन्हीं विचारोंका प्रतिपादन किया है; लेकिन भिन्न रूपसे। चाहे जो हो, तुम इससे यह निष्कर्ष न निकालना कि वहाँका काम बिगड़ता हो तो बिगड़े। तुम इसे यथाशक्ति, यथामति चलाते जाना। चूँकि मैं यह पत्र तुम्हारे लिए ही लिखवाने बैठा हूँ इसलिए यह सब लिखवा रहा हूँ।

महादेवको धूलिया भेजा है। . . . .[2]

मैंने इस पत्रकी शुरुआत दरबार-प्रसंगके सम्बन्धम की थी। लेकिन मैंने ऊपर जो लिखा है वह तो प्रस्तावना ही है। कांग्रेस-नगर न बनवाकर, गाँव बनवाना। उसमें ग्रामीण कला मुखर हो उठे तो अच्छा। कलाके लिए बुद्धि और हृदयकी जरूरत है, पैसेकी कदापि नहीं। इसलिए बनावटी शोभामें तुम किसीको एक पैसा भी खर्च न करने देना। मुझे लगता है कि मिठाईकी दुकानोंमें और चाय-घरोंमें केवल गायके दूध और घीका उपयोग किया जा सकता है। अर्थात् लोगोंको स्टोर हमसे खरीदने चाहिए अथवा बिक्री हम लोगोंकी देख-रेखमें होनी चाहिए और उस देख-रेखमें जो खर्च हो उसके लिए पैसे लेकर (दुकानदारोंको) परवाने दिये जाने चाहिए। मैं यह अवश्य मानता हूँ कि हमें मिठाई और चाय आदिकी सुविधा प्रदान करनी चाहिए।

अब दरबारके सम्बन्धमें। दरबारका गाँव हमें दरबारकी खातिर नहीं, अपितु अपने आत्म-सम्मानके लिए वापस लेना होगा। दरबार तो ढसा की राजधानी छोड़ खेड़ाको राजधानी बना बैठे हैं। ढसा के दरबारसे कोई परिचित न था, खेड़ाके दरबार को सब कोई जानते हैं। इसलिए रावजीभाईके[3] पत्रका मुझपर कोई असर नहीं

१. पत्रमें शिकायत की गई थी कि माण्डवीमें एक भाषणके दौरान सरदार पटेलने यह आरोप लगाया था कि बम्बईके लोगोंको गन्दे नालेका पानी दिया जाता है।

२. साधन-सूत्रके अनुसार।

३. रावजीभाई मणिभाई पटेल।

हुआ। उसपर तो क्रोध आता है। लेकिन बूढ़ेको बुढ़ापेमें क्रोध नहीं करना चाहिए; फिर वे दूर बैठे हैं, इससे अपने क्रोधको दबा देता हूँ। उन्हें ढसा की जितनी चिन्ता है उससे कहीं अधिक हमें हो सकती है और है। और दरबारसे अपनी मित्रताके कारण उन्हें यह चिन्ता है। हमें तो यदि दरबार मित्र न होते बल्कि एक राष्ट्रीय सेवक होते तो भी चिन्ता करनी पड़ती। और यदि न करते तो कांग्रेसम हमारी दो कौड़ीकी भी कीमत न रह जाती। लेकिन यह सब तो इधर-उधरकी बातें हुई। रावजीभाईने जो खबर दी है उसके आधारपर कहा जा सकता है कि हमें अभी तुरन्त काम शुरू कर देना चाहिए। मैंने तो सोचा था कि नया मन्त्रिमण्डल तनिक साँस ले ले तब इसे शुरू करेंगे। अब तो मैं समझता हूँ कि तुम्हें गुजरात कांग्रेस कमेटीके अध्यक्ष के रूपमें अथवा उसके सैक्रेटरीको मुख्य मन्त्रीको[1] लिखना चाहिए कि वे कांग्रेसकी प्रतिष्ठाके लिए दरबारके मामलेको अपने हाथमें लें और गवर्नरको सलाह दें कि वे दरबारको ढसा वापस दिलायें। मुझे लगता है कि गवर्नर उनकी बातको मानेंगे और मुझे इसमें कुछ नहीं करना होगा।

बापूके आशीर्वाद

सरदार वल्लभभाई पटेल
स्वराज्य आश्रम
बारडोली

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० २१०-१४

२०७. पत्र : अमृतकौरको

सेगाँव, वर्धा
२७ सितम्बर, १९३७

प्रिय विद्रोहिणी,

अरी ओ, अविश्वासिनी! जबतक तुम्हारे पत्रोंमें ऐसी कोई बात नहीं होती जिसे मैं किसी अन्य व्यक्तिको पढ़ाना चाहता होऊँ, मैं तुम्हारे सारे पत्रोंको नष्ट कर डालता हूँ और उन्हें कोई नहीं पढ़ पाता। तुम जबसे औजारवाले बक्सेके निकटके उस कोनेको सूना करके गई हो तबसे केवल एक बार किसी ने तुम्हारा पत्र पढ़ा है।

इस बातकी तुम कुछ परवाह मत करो कि लोग ज०[2] या उसके प्रति तुम्हारे पक्षपातपूर्ण रवैयेके बारेमें क्या कहते हैं। जैसे हम यह चाहते हैं कि हमारे पड़ोसी

१. बी० जी० खेर।
२. जवाहरलाल नेहरू।

हमसे प्रेम करें वैसे ही अगर हम भी उनसे प्रेम करना चाहते हैं तो हमें उनके व्यवहारकी विचित्रताओंको सहना पड़ेगा। भला ऐसी कौन-सी स्त्री अथवा पुरुष है जिसके व्यवहारमें विचित्रता न हो? जो इनसे मुक्त हो वही दूसरोंसे कुछ कहे। क्या तुम हो या ऐसे किसीको जानती हो? मैं तो नहीं जानता; और मैं छोटा या बड़ा जैसा भी हूँ, अपनेको भी इसका अपवाद नहीं मानता।

वह तो बड़ा ही महत्त्वपूर्ण दिन होगा जब तुम, विलम्बसे ही सही, खद्दरसे विवाह रचा लोगी। जब तुम ऐसा कर लोगी तब देखोगी कि खद्दर-प्रेमके माध्यमसे ही तुम्हारी अन्य रुचियाँ भी तुष्टि पा लेंगी। अनन्य प्रेम ही विवाहका अर्थ और उसका रहस्य है। और जिस विवाहमें अनन्य प्रेम नहीं है वह व्यभिचार है, कोरी मूर्तिपूजा है। देवता अनेक हैं लेकिन ईश्वर एक। खैर, बहुत उपदेश हो गया।

चार्लीके लिए एक अलग पत्र संलग्न है।

मैंने सु०[1] से पहले ही कह दिया है कि जबतक वह पूर्ण स्वस्थ नहीं हो जाता तबतक उसे कलकत्ता नहीं जाना है, और न किसी कामको सक्रिय रूपसे हाथमें लेना है। पूर्ण स्वस्थ हो जाने पर भी वह ज० का स्थान नहीं ले सकता, क्योंकि ज० के पास शक्तिका अक्षय भण्डार और एकाग्रचित्तता है।

नागपुरमें तुम सफल ही रहोगी।

हाँ, मेरा खयाल है कि दवासे फायदा हुआ है और डाक्टरोंका भी यही विचार है।

साथमें मीराका कलका पत्र है। मेरे भुलक्कड़पनकी वजहसे यह कल भेजा नहीं गया। क्या इसे प्रेममें कमीका द्योतक समझा जाये? प्रेम कभी नहीं भूलता।

आज तो बस इतना ही।

स्नेह।

डाकू, तानाशाह एण्ड कं०

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६१३) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६४२२ से भी

१. सुभाषचन्द्र बोस।

२०८. पत्र : नारणदास गांधीको

सेगाँव, वर्धा
२७ सितम्बर, १९३७

चि० नारणदास

आज तो दायाँ हाथ इस्तेमाल करने का दिन है।[1] नरोत्तमकी कमी तुम्हें वहाँ अवश्य महसूस होगी, जैसे मुझे प्रतिक्षण छोटेलालकी कमी महसूस होती है। जिस उत्साहके साथ तुम सबने रेंटिया बारस के लिए काम किया था वैसा उत्साह सदा बना रहे। यही नरोत्तमका स्मारक कहा जायेगा और तब कह सकेंगे कि रेंटिया बारस भी ठीक तरहसे मनाई गई।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू० /२) से। सी० डब्ल्यू० ८५३९ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

२०९. पत्र : महादेव देसाईको

सेगाँव
२७ सितम्बर, १९३७

चि० महादेव,

सारी सामग्री तो तैयार नहीं है। जो है वह भेजे देता हूँ। इसे जाँच लिया गया है।

मैं इससे जल्दी जानबाको नहीं भेज सका। मीराबहनने तो अच्छी तरहसे जाँच कर ली है। जो सामग्री चन्द्रशंकरको भेज सकते हो सो भेज दो और 'हरिजन सेवक' और 'हरिजनबन्धु' की विषय सामग्रीको कलतकके लिए स्थगित कर। दो इस तरह संशोधनके लिए तुम्हारे पास एक प्रति भी रह जायेगी और डाक भी समय से चली जायेगी। लेकिन जैसा ठीक लगे वैसा करना। मैंने गुरुदेवको[2] जो पत्र लिखा है वह और उसकी दो प्रतियाँ इसके साथ हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५७२) से।

१. देखिए "पत्र : कान्तिलाल गांधीको", पृ० २०० ।
२. देखिए "पत्र : रवीन्द्रनाथ ठाकुरको", पृ० १७४।

२१०. पत्र : गोविन्दराव वी० गुरजलेको

सेगाँव, वर्धा
२८ सितम्बर, १९३७

भाई गुरजले,

तुम्हें तुम्हारे संन्यासाश्रमवाले नामसे सम्बोधित न करूँ, मुझे यह ठीक लगता है, क्योंकि यह नाम अभी तक मेरे जीभ पर नहीं चढ़ा है। मुझे लगता है कि तुमने चायके बारेमें जो-कुछ कहा है, बिना सोचे-समझे कहा है। क्या तुम हजारों परिवारों की आर्थिक बरबादीकी बात सिद्ध कर सकते हो? मैं चाय और काफीकी आदतकी बुराइयोंके बारेमें थोड़ा-बहुत जानता हूँ, और मैंने इसके विरुद्ध लिखा भी है। लेकिन तुमने यह जो कड़ी निन्दा की है, उसे मैं ठीक नहीं मान पा रहा हूँ। चाय-काफी और शराबकी परस्पर कोई तुलना नहीं हो सकती। यदि चाय और काफी बहुत अधिक मात्रामें ली जाये तो उससे स्वास्थ्य पर बुरा असर होता है। लेकिन शराब तो, दवाके सिवा किसी और रूपमें नपी-तुली मात्रामें भी नहीं ली जा सकती। वह शरीर, मन तथा आत्मा सबका नाश करती है। अतएव मैं तो तुम्हें यही सलाह दूँगा कि जो लोग शराब और मादक द्रव्योंका सेवन करते हैं, तुम उनकी इस आदतको छुड़ानेके लिए जी-जानसे जुट जाओ और अन्य सवाल न उठाओ, फिर चाहे वे स्वयंमें कितने ही महत्त्वपूर्ण क्यों न हों।

तुम्हारे पत्रपर लिखे सरनामे और तुम्हारा संन्यासी नाम देखकर क्या मैं समझूँ कि तुम्हें अब शान्ति मिल गई है, तुम अच्छी तरह हो और तुम्हें अपने सन्तोष के योग्य सत्यकी प्राप्ति हो गई है?

हृदयसे तुम्हारा,
बापू

स्वामी निर्मलानन्द भिक्षु
गांधी मिशन सोसाइटी
कृपा आश्रम, गांधी कुप्पम
तिरुवेन्नैनलूर डाकखाना, एस० इंडिया[1]

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४०१)से। प्यारेलाल पेपर्स से भी; सौजन्य प्यारेलाल

१. पता प्यारेलाल पेपर्स की नकल से लिया गया है।

२११. पत्र : मनु सूबेदारको

२८ सितम्बर, १९३७

भाई सूबेदार,

तुम्हारे पत्रोंसे मैं ऊबनेवाला नहीं हूँ। लेकिन तुम्हारी टिप्पणियाँ यदि मैं न छापूं, तो इससे नाराज मत होना। इन टिप्पणियोंमें से कुछ-न-कुछ तो मैं अपने लिए सुरक्षित रख लेता हूँ। लेकिन जनताके सामने तो मुझे जो रुचे वही रखना है न?

कोयाजीके लेख का[1] असर मुझपर होगा, ऐसा सम्भव नहीं लगता, क्योंकि इन दो मामलोंमें मेरी स्थिति ही अलग है। मद्यपान-निषेध तथा आबकारी की आय लगभग बन्द हो जाने पर उसके बदलेमें किसी और स्रोतसे पैसा जुटाने के बारेमें मेरी सलाह यह है कि तुम मद्रासमें पेश किये गये विधेयकका ठीकसे अध्ययन कर जाओ। अगर उसमें कुछ सुझाव देने लायक लगे तो मेरे पास भेजना। तुम्हारा सुझाव मैं राजाजी को भेज दूंगा। मैं समझता हूँ, मद्यपानके सम्बन्धम इस दृष्टिसे जितना विचार हम दोनोंने किया है उतना किसी औरने नहीं किया होगा। और अगर किसीने किया हो तो मैं उसे नहीं जानता।

गुजरातीकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य: प्यारेलाल

२१२. एक पत्र

२८ सितम्बर, १९३७

प्रिय बहन,

गुजरात विद्यापीठके विषयमें आपको आलोचना करने का अधिकार था। फिर, आलोचना मुझे अच्छी भी लगती है। आपने जो तीन बातें लिखी हैं उन्हें मैं स्वीकार करता हूँ। लेकिन आपने विद्यापीठको निष्फल माना है, इसे मैं स्वीकार नहीं करता। गुजरात विद्यापीठ या अन्य राष्ट्रीय विद्यापीठोंने हमारे संघर्षमें जो योगदान दिया है वैसा अन्य विश्वविद्यालयोंने नहीं दिया। और उसका कारण सिर्फ यही नहीं था कि

१. जे० सी० कोयाजीके लेखके कुछ अंश, जो २-१०-१९३७ के **हरिजन**में "एन इकनॉमिस्ट ऐंड हिज़ फिगर्स" (एक अर्थशास्त्री और उसके आँकड़े) शीर्षकसे महादेव देसाई की टिप्पणी के साथ प्रकाशित हुए थे।

वे सरकारी सस्थाए थीं, बल्कि उसका कारण तो यह था कि इन सस्थाओंके विद्यार्थियों और शिक्षकोंका मानस ही भिन्न था। फिर भी जिन बातोंका आपने उल्लेख किया है वे न होतीं तो राष्ट्रीय विद्यापीठोंने जितना योगदान दिया उससे बहुत अधिक दे पाते। लेकिन इनपर तो जब हम मिलेंगे तब विचार करेंगे, क्योंकि प्रस्तुत विषयसे इनका निकट-सम्बन्ध है और इसलिए उसको समझनेमें इनसे सहायता मिलेगी। जो बात जिस रीतिसे मैं आज रख रहा हूँ उसे उसी रीतिसे विश्वविद्यालयकी सभामें नहीं रखा जा सकता।

गुजरातीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

२१३. पत्र : लक्ष्मीदासको

२९ सितम्बर, १९३७

तुम्हारा पत्र मिला। तुम खुले दिलसे लिखते हो, यह मुझे अच्छा लगता है। वल्लभभाईको लिखकर तुमने अच्छा किया। तुम उन्हें लिखते रहना। उस भाषणके समय क्या तुम उपस्थित थे?

तुम किशोरलालभाईके साथ पत्र-व्यवहार कर रहे हो, यह तो बहुत अच्छी बात है।

उपमा उपमेयसे पूरी तरहसे नहीं मिलती। गुरु आदिकी उपमा पितासे दी जाती है, इसका मतलब यह नहीं कि वे सर्वांशतः पिता हैं, बल्कि यह है कि वे पिता-रूप हैं। किशोरलालभाईके कहने का आशय यही हो सकता है कि यदि सरदार गुजरातमें गुजरातियोंके लिए पिता-रूप हैं तो गुजराती चाहे जहाँ हों, सरदारके प्रति उनका यही भाव होना चाहिए। यह बात और है कि उनमें इस रूपमें माने जाने लायक गुण सचमुच हैं या नहीं।

जो-कुछ लिखा है, उसका अर्थ मात्र यही है कि हमें हर वाक्य या वचन तौलकर ही लिखना या बोलना चाहिए।

गुजरातीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

२१४. पत्र : यूसुफ मेहर अलीको

२९ सितम्बर, १९३७

भाई मेहरअली,

कितने ही गुमाश्तोंको सेठ बना देनेवाले सेठ जमनालालजी गुमाश्तोंकी परिषद्का शिलान्यास करें, यह उचित ही है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि गुमाश्तोंके काम का समय लम्बा होता है। गुमाश्ता भाइयोंको इतना याद रखना चाहिए कि उनकी कार्य-सिद्धि विग्रहसे नहीं, बल्कि शान्ति, सत्य और दृढ़तासे ही होगी।

गुजरातीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

२१५. पत्र : शंकरलालको

२९ सितम्बर, १९३७

भाई शंकरलालभाई,

तुम्हारे पत्रमें एक प्रश्न ऐसा है जिसका तुम मुझसे उत्तर चाहते हो। तुम्हारा प्रश्न यह है कि दोष दिख रहा हो, फिर भी उसके प्रति सहिष्णु बने रहें, इसको आचरणमें कैसे उतारा जाये? तुमने अपने मुँहसे कहा और लिखा है कि तुम्हें तो खुद अपनेमें ही ढेरों दोष दिखाई देते हैं। फिर भी तुम खुद अपने प्रति कितने अधिक सहिष्णु हो! मैं अपने ढेरों दोष रोज देखता हूँ, लेकिन अपने प्रति मेरी सहिष्णुताका तो कोई अन्त ही नहीं है। अगर मैं अपने दोष देखकर भी अपने प्रति सहिष्णु न रहूँ तो मुझे तो रोज ही उपवास करने पड़ें, अनेक प्रकारके प्रायश्चितोंकी खोज करनी पड़े और आखिरकार छोटेलाल[1] ने जो मार्ग ग्रहण किया वही मार्ग ग्रहण करना पड़े। लेकिन मैं ऐसा कुछ नहीं करता। मैं मानता हूँ कि मेरी सहिष्णुता अनुचित स्थानपर नहीं है, और इसके द्वारा मैंने दूसरोंके दोष देखकर भी उनके प्रति सहिष्णु रहने की शिक्षा ली। फिर भी, अपने आदर्शतक तो मैं अभी नहीं पहुँच सका हूँ, क्योंकि जितना सहिष्णु मैं स्वयं अपने प्रति हूँ, उससे अधिक या कमसे-कम उतना सहिष्णु तो दूसरोंके प्रति मुझे होना ही चाहिए। लेकिन ऐसा मैं कर नहीं सका हूँ। फिर भी, दिन-प्रति-दिन मैं इस बातका खयाल रखता हूँ कि मुझे इस दिशामें बहुत आगे जाना है, और मैं जानता हूँ कि मैं आगे बढ़ रहा हूँ। इसके बावजूद दोषको दोषके रूपमें तो देखता ही हूँ। इन दोनों बातोंके कारण ऐसी शक्ति भी बढ़ती जाती है और बढ़नी ही चाहिए। यह शिक्षा मने सर्वप्रथम अपने माता-पितासे

१. छोटेलाल जैन, जिसने आत्महत्या कर ली थी देखिए पृ० १९८-९।

ग्रहण की। वे मेरे दोष देखकर भी सहिष्णु बने रहते थे। मैं तो उनका पुजारी था, लेकिन यह नहीं कहा जा सकता कि उनके दोष मैं नहीं देख सकता था। उनके प्रति मेरी सहिष्णुता निरन्तर बढ़ती गई, क्योंकि उनपर मेरी भक्ति ही ऐसी थी। बादमें भाई-बन्धुओंके प्रति भी यही आचरण चलता रहा। मेरा परिवार बढ़ता गया, और मेरा आचार वैसा ही रहा। इसलिए मुझमें न्यूनाधिक सहिष्णुता कायम ही रहती है।

गुजरातीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

२१६. पत्र : भगवानदासको

२९ सितम्बर, १९३७

भाई भगवानदास,

. . .[1] किसी भी कुमारिका विधुरके साथ संबंध करना मुझे अप्रिय भी है। लेकिन काफी अनुभवके बाद मैंने पाया है कि विवाहके बारेमें लड़कियां और लड़के अजीब प्रकारके मार्ग ग्रहण करते हैं। ऐसी हालतमें सुधारककी सब भावनायें निकम्मी हो जाती है। अहिंसक सुधारकके पास अपनी बुद्धिका और अपने हाथके बल सिवाय और कुछ बल तो है ही नहीं।

पत्रकी नकलसे। प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

२१७. पत्र : गोपीनाथको

२९ सितम्बर, १९३७

भाई गोपीनाथ,

दावेके बारेमें जो लिखा है वह सही है। छोटी-सी रकमके दावा करनेमें भी काफी खर्चा हो जाता है। लेकिन जो आदमी पंचायतका कानूनका ही प्रबंध होना चाहिये, वह आज नहीं है। ऐसी स्थितिमें एक सुवर्ण उपाय है, किसीको न उधार देना, किसीसे न उधार लेना। अगर उधार देना तो इस दृष्टिसे कि वह पैसे वापस आनेवाला नहीं। ऐसा करना पड़ता है। और करना पड़े तो ऐसे ही समझकर किया जाय कि यह केवल दान है। इतना ध्यानमें रखा जाय कि जिनका अदालतोंका काम पड़ता है ऐसे लोग करोड़ोंमें से बहुत कम रहते हैं। हम लोग [कर्ज][2] में से निकल

१. साधन-सूत्रके अनुसार।

२. मूलमें ठीक पढ़ा नहीं जाता।

जाय और हिन्दुस्तानी जनसंख्याके समुद्रमें बिंदुरूप बन जाय तो अदालतकी उपाधी हमें नहीं रहती है।

वैद्यके धंधेके बारेमें। प्राचीन कालमें वैद्य लोग अपना ज्ञानका लाभ मुफ्त देते थे। दवाई तक मुफ्त देते थे। साधारण रूपसे उसकी किंमत भी कम रहती। राजवैद्यादि धन्धादीकी औषधियां बनाते थे और बड़ा आडंबर करते थे। आज उन्हींके वर्गके रह गये।

पत्रकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

२१८. पत्र : कान्तिलाल गांधीको

सेगाँव, वर्धा
२९ सितम्बर, १९३७

चि० कान्ति,

क्या तूने मेरा बहिष्कार कर दिया है? मैं रोज तेरे पत्रकी राह देखता हूँ, लेकिन पत्र नहीं मिलता। मैंने तेरी सारी इच्छाओंपर अमल तो किया है। अब तू और क्या चाहता है? मैं तेरी इस चुप्पीको उचित नहीं समझता।

जब मैंने तुझे पत्र लिखा था तभी मैंने नानजप्पाको भी लिखने का विचार किया था; लेकिन अत्यधिक कामकी वजहसे लिखना रह गया। सोमवारके अलावा और किसी दिन मैं दायें हाथसे लिखता ही नहीं; तथा सोमवारको 'हरिजन'का काम और किसी कामका समय नहीं बचने देता।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७३३१)से। सौजन्य : कान्तिलाल गांधी

२१९. पत्र : सैयद बशीर अहमदको[1]

[३० सितम्बर, १९३७ के पूर्व][2]

आपने तथ्यों और तर्कोंका पूरा खयाल रखे बिना जो यह राय जाहिर की है कि जो मुसलमान कांग्रेसमें शामिल होता है वह मुसलमानोंके हितोंके प्रति विश्वासघात करता है, उससे मैं सहमत नहीं हो सकता। इसके वितरीत, मेरा तो विश्वास है कि जो मुसलमान भारतके लिए पूर्ण स्वतन्त्रता चाहते हैं उनके लिए सर्वश्रेष्ठ मार्ग यही है कि वे कांग्रेसके स्वतन्त्रता-संग्रामके कठिन कार्यमें अपना सहयोग दें। यह संस्था तो उन सबके लिए खुली है जो इसमें शामिल होना चाहते हैं। आप यह क्यों नहीं समझते कि यदि हजारोंकी संख्यामें मुसलमान लोग इसमें शामिल हों तो वे उसकी समस्त नीतिको निर्धारित कर सकते हैं? वहाँ जन-संख्याके अनुपातसे प्रतिनिधित्वका प्रश्न नहीं है। कांग्रेस पूर्णतया लोकतान्त्रिक संस्था है, जहाँ कोई साम्प्रदायिक भेद-भाव नहीं है।

मैं स्वयं कांग्रेसमें नहीं हूँ, इसलिए कांग्रेस और कांग्रेसी लोग जो-कुछ करते हैं उस सबके लिए मैं अपने-आपको जिम्मेदार नहीं मान सकता। लेकिन चूंकि मुझे कांग्रेसके ध्येयमें पक्का विश्वास है, इसलिए मुझे कांग्रेसको मन्त्रिपद सँभालने का कार्यक्रम अपनाने की सलाह देने में कोई संकोच नहीं हुआ। मुसलमानोंसे सम्बद्ध सभी सवालोंपर कांग्रेस के एकमात्र पथ-प्रदर्शक हैं मौलाना अबुल कलाम आजाद। मुस्लिम लीगके सदस्योंके कर्त्तव्याकर्त्तव्यके बारेमें मुझे कोई जानकारी नहीं है, लेकिन निःसन्देह मौलाना साहबने इस बातका पूरा-पूरा ध्यान रखा है कि किसी भी मुसलमान द्वारा नैतिक नियमोंका हनन किये जानेमें कांग्रेसका कोई हाथ न हो।

यदि किसी राजनीतिक दलका सदस्य अपने दलको छोड़ किसी अन्य दलके प्रति अपनी निष्ठा व्यक्त करता है तो इसमें सामान्यतया मैं कोई दोष नहीं देखता। यदि कांग्रेस, जितने मुसलमान उसमें शामिल हो सकें, उन सबको हर सम्मान-जनक ढंगसे लेने का प्रयास करती है तो उसमें आपको क्या आपत्ति हो सकती है, यह

१. **इशाअते-तालीम** के सम्पादक बशीर अहमदने पूछा था: "क्या आप मेरी इस बातसे सहमत नहीं हैं कि आप ईमानदारी, स्पष्टवादिता और नैतिक दृढ़ता पर आधारित सही मार्गपर चलकर सत्यको प्राप्त करना चाहते हैं? कांग्रेस उन मुसलमानोंसे, जो मुस्लिम लीगके टिकट पर निर्वाचित हुए हैं, मन्त्रिमण्डलमें शामिल होने को कह रही है, बशर्ते कि वे कांग्रेस प्रतिज्ञापर हस्ताक्षर कर दें। क्या आप यह चाहते हैं कि ये मुसलमान सदस्य, जिन्होंने चुनावसे पहले खुदा और पवित्र 'कुरान' को साक्षी मानकर लीगके प्रति निष्ठाकी शपथ ली थी, अपनी पवित्र शपथ तोड़ दें?"

२. यह और अगला शीर्षक दिनांक "तालेगाँव, ३० सितम्बर" के अन्तर्गत छपा था।

बात मेरी समझमें नहीं आती। मुझे लगता है कि यदि कांग्रेस हिन्दुओंके अतिरिक्त मुसलमानों तथा समाजके अन्य वर्गोंका प्रतिनिधित्व करने का प्रयत्न नहीं करती तो उसे जो अखिल भारतीय संगठनके नामसे पुकारा जाता है उसे वह खो बैठेगी। कांग्रेसकी शुरूसे ही यही पारम्परिक नीति रही है, यही उसकी शक्ति है। कांग्रेसके चुनाव-घोषणापत्र में[1] भारतकी पूर्ण स्वाधीनताका लक्ष्य रखा गया है। इस लक्ष्यकी प्राप्तिके लिए जो साधन बताये गये हैं वे हैं साम्प्रदायिक एकता, खादी, मद्य-निषेध, अस्पृश्यता-निवारण आदि आदि। अब जो मुसलमान पूर्ण स्वाधीनताका और इसे प्राप्त करने के लिए कांग्रेस द्वारा अपनाये गये तरीकोंका समर्थन करते हैं, यदि कांग्रेस उन मुसलमानोंको अपनाती है तो इसमें वह सत्यसे कैसे विचलित होती है, यह बात मेरी समझमें नहीं आती।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २-१०-१९३७

२२०. पत्र : सैयद बशीर अहमदको

[३० सितम्बर, १९३७ के पूर्व]

मैं चकित हूँ कि मुसलमान मन्त्री चुनने के महत्वपूर्ण मामलेमें एक ही मुसलमानको[2] निरंकुश अधिकार देकर कांग्रेसने जो महान् कार्य किया है उसे आप समझ नहीं पाये हैं। बेशक मौलानासे गलती हो सकती है, लेकिन यहाँ यह बात अप्रासंगिक है। बड़ी और प्रासंगिक बात तो यह है कि कांग्रेसने आजतक जो अधिकार कभी किसी एक व्यक्तिको नहीं दिये वे आज एक मुसलमानको दिये हैं।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २-१०-१९३७

२२१. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

सेगाँव, वर्धा

१ अक्तूबर, १९३७

प्रिय जवाहरलाल,

जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, पट्टाभिका[3] चुनाव अच्छा है। लेकिन मेरा खयाल है कि इस बारेमें तुम्हें समितिके सदस्योंकी राय भी जान लेनी चाहिए।

१. अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीने २२-२३ अगस्त, १९३७ को अपनी बैठकमें इस घोषणापत्रके मसौदे पर अपनी स्वीकृति दी थी; देखिए खण्ड ६५, परिशिष्ट ३।

२. अबुल कलाम आजाद; देखिए पिछला शीर्षक।

३. कांग्रेसके अध्यक्ष-पदके लिए पट्टाभि सीतारामय्याका नाम विचाराधीन था।

मुझे मालूम नहीं कि तुम वर्धामें होनेवाले शिक्षा-सम्मेलनमें[1] शामिल हो सकोगे अथवा नहीं। इसके लिए तुम्हें निमन्त्रण भेजा गया है। यदि समय निकाल सको तो मैं चाहता हूँ कि तुम आ जाओ, परन्तु मैं यह नहीं चाहता कि अधिक महत्त्वपूर्ण कार्यके कारण यदि अन्यत्र तुम्हारी उपस्थिति आवश्यक हो तो भी तुम इस सम्मेलनके लिए जरूर समय निकालो। बेशक, उन दो दिनोंमें तुमपर काफी जोर पड़ेगा, लेकिन यदि तुम आ सको तो उससे मुझे तो बहुत शान्ति मिलेगी।

स्नेह।

बापू

[पुनश्च:]

सैयद हबीबके साथ हुए मेरे पत्र-व्यवहारके फलस्वरूप एक चेक और पत्रकी प्राप्ति हुई है, जो संलग्न हैं। मैंने तुम्हारे साथ हुई अपनी बातचीतकी चर्चा किये बिना, इधर-उधरसे तथा कहींसे भी पैसा इकठ्ठा करने के लिए उसे अच्छी डाँट बताई।

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३७; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

२२२. पत्र : अमृतकौरको[2]

सेगाँव
१ अक्तूबर, १९३७

आज तुम्हें केवल प्यार भेजता हूँ; अधिक लिखने का समय नहीं है।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६१६) से; सौजन्य: अमृतकौर।
जी० एन० ६४२५ से भी

१. २२ और २३ अक्तूबर को।

२. यह पंक्ति गांधीजी ने अमृतकौरको लिखे मीराबहनके पत्रके अन्तमें लिखी थी।

२२३. पत्र : प्रभावतीको

सेगाँव, वर्धा
१ अक्तूबर, १९३७

चि० प्रभा,

तेरा पत्र मिला। तुझे दूध नहीं छोड़ना चाहिए था। शोक[1] मनाने के लिए मनुष्य स्वाद छोड़ सकता है, लेकिन [स्वास्थ्यके लिए] जो आवश्यक हो वह तो उसे खाना ही चाहिए। अस्वादका व्रत लेने के बाद यदि मनुष्य उसका बराबर पालन करता रहे तो और स्वादकी चिन्ता न करता हो तो उस मनुष्यको किसी चीजका त्याग करने की कोई जरूरत नहीं होती। इसके अलावा यदि जन्म और मृत्यु दोनों एक ही चीज हों, और दोनों एक ही चीज हैं भी, तो फिर प्रियजनोंकी मृत्युमें शोक काहेका? प्रियजनोंके जन्मपर हर्ष क्यों? इसलिए इस पत्रके मिलते ही दूध पीना शुरू कर देना। यदि तू इस पत्रका उपयोग करना चाहे तो कर सकती है। मरने-वालोंके बाद उनके कार्यको स्वयं हाथमें ले लेना हमारा धर्म अवश्य है और वह तुम सब यथाशक्ति कर रहे हो। यह बोझ कोई अकेले तुझपर नहीं है। तू चाहे तो भी उसे नहीं उठा सकती। लेकिन दूध छोड़ने पर यदि तू कमजोर हो जाती है तो इससे तेरी कार्य करनेकी शक्ति कम हो जायेगी और उस हदतक तुम लोगोंपर जो बोझ आ पड़ा है तू उसे पूरी तरहसे न उठा पायेगी और इस तरह तू ठीक तरहसे अपना योगदान नहीं दे सकेगी। इसलिए समझदारीके साथ काम लेना और दूध, फल आदि लेना शुरू कर देना।

जब तू वहाँसे निकल सके तब आना। लेकिन इतनी देर न होनी चाहिए कि मैं यहाँ रहूँ ही न। फिर भी यदि कामकी वजहसे देर हो जाये तो कोई हर्ज नहीं। और जब भगवानकी इच्छा होगी तब मिलेंगे।

तू जितना समझती है, मुझे तो उतनी कमजोरी नहीं है। सामान्यतया सब कार्य ठीक-ठीक हो रहे हैं। मैं खाना भी ठीक तरहसे खा पाता हूँ। शारीरिक कार्य कम करता हूँ।

यहाँ आजकल मरीजोंके दो बिस्तर तो बराबर लगे रहते हैं। और भी थोड़ी-बहुत बीमारी चलती रहती है। पारनेरकर और चिमनलाल बिस्तरपर पड़े हुए हैं। पारनेरकरकी तबीयत तो ठीक है। थोड़े समयमें बिस्तरसे उठ बैठेंगे। लेकिन चिमन-लालकी किश्ती मझधारमें है। मोतीझरा है। आज १४वाँ दिन है, बुखार अभी

१. जुलाई, १९३७ में प्रभावतीके श्वसुर हरखू दयालका स्वर्गवास हो गया था।

उतरा नहीं है। इसलिए २१ दिन तो लगेंगे ही। मुख्य रूपसे शारदा और भणसाली भाई उसकी सेवामें हैं।

बा का पाँव अभी पूरी तरहसे ठीक नहीं कहा जा सकता। लीलावतीका स्वास्थ्य ढीला रहता है। बहुत सम्भव है कि उसके टांसिल्सका कल आपरेशन हो।

अमतुस्सलाम तो हमेशा की तरह बीमार चलती है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५०६) से।

२२४. पत्र : नरहरि द्वा० परीखको

सेगाँव, वर्धा
१ अक्तूबर, १९३७

चि० नरहरि,

चिमनलाल बहुत सख्त बीमार है। टायफाइडका आज १४ वाँ दिन है। बुखार अभी उतरा नहीं है। इसलिए ७ दिन और लग जायेंगे। कमजोर तो खूब हो गया है, लेकिन बीमार होते हुए भी वह जिस शान्तिसे रहता है वह शान्ति अद्भुत है। किसीको कोई तकलीफ नहीं, कोई भाग-दौड़ नहीं। तीन दिनोंसे बवासीरके उसके मस्से बढ़ गये हैं, काफी खून भी जाता है, लेकिन वह सबकुछ शान्तिपूर्वक सहन कर रहा है। अधीर नहीं होता। यह समाचार शकरीबहन[1] को देना। शकरीबहनकी उपस्थितिके सम्बन्धमें मैंने उससे पूछा था। वह स्वयं शकरीबहनको नहीं बुलाना चाहता। सार-सम्भालके लिए भी शकरीबहनकी उपस्थिति आवश्यक नहीं है। उसकी सेवा भणसालीभाई और शारदा कर रहे हैं।

क्या शकरीबहनको जगहकी तंगीके कारण एक-दो महीनेके बाद आश्रम छोड़ना पड़ेगा? उसे कोई मदद दी जाती है या नहीं?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९१११) से।

१. चिमनलाल शाहकी पत्नी।

२२५. पत्र : नारणदास गांधीको

[१] अक्तूबर, १९३७ [के पश्चात्][1]

चि० नारणदास,

तुम्हारा कार्यक्रम तो ठीक तरहसे पूरा हुआ जान पड़ता है। जितना सोचा था उसके अनुसार पैसे भी ठीक मिले हैं और सूत भी।[2]

स्कूलमें जो पूनियाँ काती गईं, मेरा खयाल है, उनकी रुई भी स्कूलसे ही दी गई होगी। इस तरह जो खर्च हुआ उसको अलग करने पर यदि हम सूतकी कीमत लगायें तो हमें कितना मिला? जिन गण्य-मान्य लोगोंके नाम तुमने दिये हैं उनके काम करने के दिनों और घंटोंका हिसाब यदि तुम दे सको तो देना।

रामेश्वरी देवीकी सभामें जो लोग उपस्थित थे, उनकी संख्या कितनी रही होगी? तुम्हारे ऊपर उनका [रामेश्वरी देवीका] क्या प्रभाव पड़ा? क्या तुम उनके निकट-सम्पर्कमें आये?

१५,००० रुपयेकी रकममें से क्या बाहरसे भी कुछ पैसे आये अथवा सारी रकम तुमने काठियावाड़से ही इकट्ठी की है। तुम १०,००० रुपये "हरिजन" में और बाकी खादी-कार्यमें लगाना।

विट्ठलकी, जो कातनेवालों में शामिल हुआ था, उम्र कितनी है? कातनेवालों में सबसे कम उम्र किसकी थी? क्या कोई तकलीपर कातनेवाला भी था?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू० /२) से। सी० डब्ल्यू० ८५४१ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

१. १ अक्तूबरको पड़नेवाले "रेंटिया बारस" के कार्यक्रम के उल्लेखसे।

२. नारणदास गांधीकी देख-रेखमें राजकोट राष्ट्रीय शालामें रेंटिया बारसके उपलक्ष्यमें विशेष कार्यक्रमका आयोजन किया गया था। उसमें लोगोंने ६८ दिनोंतक कुछ घंटे नित्य कताई की, जिसके फलस्वरूप २८,३४,००० गज सूत काता गया और खादी-कार्यके लिए उसमें पैसा भी इकट्ठा किया गया।

२२६. एक पत्र[1]

[२ अक्तूबर, १९३७ के पूर्व]

आपकी सुझाई हुई बहुत-सी दस्तकारियोंमें से कुछका उपयोग करने की मैं कोशिश करूँगा। आप तो इतने प्रतिभा-सम्पन्न हैं कि आप चाहें तो नये काम भी हाथमें ले सकते हैं। लेकिन ऐसा करने से पहले कुछ खास बातोंकी जरूरत है। आपको अपने बड़प्पनको भुलाकर अपने हाथ-पैरोंका उपयोग करना होगा। इसके लिए आपको अपने काम-काजके समयका कुछ भाग बचाना पड़ेगा। कपास और तकली लेकर कताई शुरू कीजिए और इस पूरे कामके प्रति बौद्धिक दृष्टिकोण रखते हुए इसे कीजिए। इस विषयपर मैं ग्रेगकी तथा स्वर्गीय मगनलाल गांधीकी पुस्तकें[2] आपके पास भेजता हूँ। श्री गुलजारीलाल नन्दा बड़ी खुशीके साथ आपको यह सब बतायेंगे। लेकिन आपके लिए इससे भी ज्यादा महत्त्वकी बात यह होगी कि आप शहरके नजदीकके किसी गाँवमें जाकर जम जायें और इस बातका अध्ययन करें कि टोकरी और रस्सी आदि बनानेवाले गरीब दस्तकार किस तरह अपना निर्वाह करते हैं। उनके हाथकी बनी छोटी-मोटी चीजोंमें भी आपको कुछ कला दिखाई देगी, लेकिन अपने बौद्धिक दृष्टि-कोणके कारण आप यह पता लगा सकेंगे कि काम करने का उनका जो तरीका है, उसमें सुधारकी बहुत गुंजाइश है, और आप देखेंगे कि बरसोंसे इन अज्ञान लोगोंको किसीने यह नहीं बताया कि उन्हें अपने तरीकोंमें क्या सुधार करने चाहिए, और फलतः वे उसी पुराने ढर्रेसे काम किये जा रहे हैं। साथ ही आप यह भी महसूस करेंगे कि उनका अज्ञान मध्यम वर्गके हमारे पूर्वजों और आपके व मेरे द्वारा की गई इन गरीबोंकी उपेक्षाका ही परिणाम है। शायद इसपर आप सच्चे मनसे दुःखी भी हों। तभी आप यह जान सकेंगे कि दस्तकारियों द्वारा शिक्षा देने से मेरा क्या अभिप्राय है। सम्भव है, इन सब बातोंका आपपर कुछ और असर पड़े, और आज जो-कुछ चल रहा है, उसीको आप कायम रखना चाहें। यह भी हो सकता है कि आप मौजूदा और प्रस्तावित दोनों ही स्थितियोंको पसन्द न करें और एक तीसरी ही बिलकुल नई स्थितिकी खोज करें। यह आप निश्चित जानिए कि उससे मुझे

१. महादेव देसाई द्वारा अनूदित यह पत्र "ऐन ओपेन माइण्ड" (खुला दिमाग) शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था। इसकी प्रस्तावनामें महादेव देसाईने लिखा है: "गांधीजीके अनुरोधपर एक अर्थ-शास्त्री उन्हें मद्य-निषेध और शिक्षापर अपनी टिप्पणियाँ भेजते रहे हैं। उन्होंने इस प्रश्नपर विशुद्ध आर्थिक दृष्टिसे विचार किया है और इससे शैक्षणिक दृष्टिकोणका महत्त्व गौण हो गया है, जबकि गांधीजी इसके शैक्षणिक दृष्टिकोणको प्रमुख स्थान देना चाहते हैं।"

२. रिचर्ड बी० ग्रेग की पुस्तक **इकनॉमिक्स ऑफ खद्दर** और मगनलाल गांधीकी पुस्तक **चरखा-शास्त्र**।

कोई रंज नहीं होगा। क्योंकि मेरा एकमात्र उद्देश्य तो मन, वचन और कर्मसे सत्यकी शोध करना ही है। इसीके लिए मैं पागल हो रहा हूँ, इसीके लिए मैं जिन्दा हूँ, इसीके लिए मरने की आशा रखता हूँ। यही वजह है कि मैं आप-जैसे मित्रोंको चुनौती देता हूँ और उन्हें अपनेको चुनौती देने के लिए आमन्त्रित करता हूँ। अगर वे मुझे यह विश्वास करा दें कि मेरे तरीके गलत हैं, तो मैं अपनी गलती मंजूर करने में जरा भी संकोच नहीं करूँगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २-१०-१९३७

२२७. कहीं भूल न जायें

एक हरिजन-सेवक मुझे याद दिलाते हैं कि आजकल हरिजनोंको, जिनके लिए यह साप्ताहिक पत्र शुरू किया गया था, पृष्ठभूमिमें डाल दिया गया है, और इसके पृष्ठ अन्य सब प्रकारके विषयोंसे भरे रहते हैं। इनका कथन अर्धसत्य है। अब मैंने इस साप्ताहिकके अन्दर ऐसे सवालों पर भी चर्चा करना शुरू कर दिया है जिन्हें अबतक जान-बूझकर छोड़ रखा था। अब उन्हें छोड़ रखने का कोई कारण नहीं रह गया है। बल्कि अब तो ठीक इसके विपरीत स्थिति है। भारतके अधिकांश प्रान्तोंमें कांग्रेसके हाथोंमें आज सत्ता और पद दोनों हैं। हाँ, यह सही है कि यह सत्ता परिमित है। पर वह मर्यादित तो पूर्ण स्वाधीनताकी दृष्टिसे ही है; अन्यथा नहीं। हिन्दुस्तान मानों एक विशाल कैदखाना है और अत्याचारकी ऊँची-ऊँची दीवारें उसके शरीर और मनका गला घोंट रही हैं। लेकिन उस कैदखानेके अधीक्षकने इन कैदियोंके एक बड़े हिस्सेको अपने ही लोगोंमें से शासनाधिकारी नियुक्त करने का अधिकार दे दिया है, जिन्हें पूरे प्रशासनिक अधिकार प्राप्त हैं — कमसे-कम इतने तो अवश्य कि जबतक उन्हें इस बातका भान है कि वे अब भी कैदी हैं तबतक वे अधिकाधिक शक्ति अर्जित करते रह सकते हैं। इन कैदियोंने इस आशासे इस छूटका लाभ उठाने का निश्चय किया है कि अधीक्षकके निर्विवाद रूपसे श्रेष्ठतर शारीरिक बलकी जरूरत वे कभी पैदा नहीं होने देंगे और इस तरह उसे यकीन करा देंगे कि उसकी अब कोई जरूरत नहीं है।

जो हो, भारत सरकार अधिनियम और पद-ग्रहणकी मेरी यही व्याख्या है, और इसलिए मुझे अपने उन साथियोंको, जो अब मन्त्री बन गये हैं, यह बताने की चेष्टा करनी होगी कि मेरे विचारानुसार वे किस प्रकार अपने ध्येयको प्राप्त कर सकते हैं। और अगर मैं अपने इस प्रयत्नमें कामयाब हो जाता हूँ तब तो समझ लेना चाहिए कि अस्पृश्यता-निवारणकी लड़ाईमें भी हम लगभग विजयी हो गये हैं।

लेकिन कहने की जरूरत नहीं कि साम्प्रदायिक एकताकी तरह हिन्दुओंके हृदयसे अस्पृश्यता की भावनाका लोप भी, पद-ग्रहणमें जो अहिंसात्मक नीति निहित है, उसके

माध्यमसे सफलता प्राप्त करने की अनिवार्य शर्त है। इसलिए हरिजन-सेवकोंको सवर्णों तथा हरिजनोंको प्रभावित करने के विचारसे दुगुने उत्साहसे अपनी कोशिशें जारी कर देनी चाहिए और इसलिए २५ सितम्बर, १९३२ को बम्बईमें पं० मदनमोहन मालवीयकी अध्यक्षतामें हिन्दू-समाजके प्रतिनिधियोंकी सभामें जो गम्भीर प्रतिज्ञा[1] ली गई थी, उसका हमें कट्टरपंथी सवर्ण हिन्दुओंको बार-बार स्मरण कराना चाहिए। वह प्रतिज्ञा यह है:

> **इस सम्मेलनका संकल्प है कि आजसे हिन्दुओंमें किसीको जन्मके कारण अछूत नहीं समझा जायेगा; और जिन्हें अभी तक अछूत समझा गया है, उन्हें सार्वजनिक कुओंसे पानी भरने तथा सार्वजनिक सड़कों और अन्य सार्वजनिक संस्थाओंका उपयोग करने के वे सभी अधिकार होंगे जो अन्य हिन्दुओंको हैं। इस अधिकारको पहला मौका मिलते ही वैधानिक मान्यता प्रदान कर दी जायेगी और यदि इसे स्वराज्य सरकारकी स्थापनासे पहले ही मान्यता नहीं मिली तो यह स्वराज्य पार्लियामेंटके सर्वप्रथम कार्योंमें से एक होगा।**
>
> **यह सम्मेलन इस बातको भी स्वीकार करता है कि सभी हिन्दूनेता समस्त वैधानिक और शान्तिपूर्ण तरीकोंसे — मन्दिर-प्रवेश-सहित — उन सभी सामाजिक निर्योग्यताओंको यथाशीघ्र दूर करवायेंगे जो प्रचलित रिवाजने आज तथाकथित अछूत वर्गपर लाद रखी हैं।**

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २-१०-१९३७

२२८. विद्यार्थी और हड़तालें

बंगलोरसे एक कॉलेजका विद्यार्थी लिखता है:

> **मैंने 'हरिजन' में आपका लेख पढ़ा है।[2] अंडमान-दिवस, बूचड़खाना-विरोधी दिवस[3] आदि हड़तालोंमें विद्यार्थियोंको भाग लेना चाहिए या नहीं, इस विषयमें मैं आपकी राय जानना चाहता हूँ।**

विद्यार्थियोंकी वाणी और आचरणपर लगे हुए प्रतिबन्धोंको हटानेकी पैरवी मैंने जरूर की है, पर राजनीतिक हड़तालों या प्रदर्शनोंमें उनके भाग लेने का समर्थन मैं नहीं कर सकता। विद्यार्थियोंको अपनी राय रखने और उसे जाहिर करने की पूरी-पूरी आजादी होनी चाहिए। वे चाहे किसी भी राजनीतिक दलके प्रति खुले तौर

१. देखिए खण्ड ५१, पृ० १४८-४९।
२. देखिए "शिक्षा-मन्त्रियोंके लिए", पृ० १५६-५८।
३. देखिए "तार: देशबन्धु गुप्तको", पृ० १२१।

पर सहानुभूति प्रकट कर सकते हैं। लेकिन मेरी रायमें, अपने अध्ययन-कालमें उन्हें किसी भी राजनीतिक आन्दोलनमें सक्रिय रूपसे भाग लेनेकी स्वतन्त्रता नहीं होनी चाहिए। विद्यार्थी राजनीतिमें सक्रिय भाग लें, और साथ-साथ अपना अध्ययन भी जारी रखें, यह नहीं हो सकता। राष्ट्रीय उत्थानके समय इन दोनोंके बीच स्पष्ट भेद करना मुश्किल हो जाता है। उस समय विद्यार्थी हड़ताल नहीं करते, या, ऐसी परिस्थितियोंमें "हड़ताल" शब्दका उपयोग किया जा सकता है तो, वह पूरी सामूहिक हड़ताल होती है; उस समय वे अपनी पढ़ाईको स्थगित कर देते हैं। इसलिए जो प्रसंग अपवाद-स्वरूप दिखाई देता है, वह असलमें अपवाद-रूप नहीं है।

वास्तवमें इस पत्र-लेखकने जो प्रश्न उठाया है वह कांग्रेस-शासित प्रान्तोंमें तो उठना ही नहीं चाहिए। क्योंकि वहाँ तो ऐसा एक भी अंकुश नहीं हो सकता जिसे विद्यार्थियोंका श्रेष्ठ वर्ग स्वेच्छासे स्वीकार न करे। अधिकांश विद्यार्थी कांग्रेस मनोवृत्तिके हैं, और होने चाहिए। उन्हें ऐसा कोई भी काम नहीं करना चाहिए जिससे मन्त्रियोंकी स्थिति विषम हो जाये। वे हड़ताल करें तो केवल इसी कारणसे करें कि मन्त्री उनसे ऐसा कराना चाहते हैं। लेकिन कांग्रेस जब पदोंका त्याग कर दे, और जब कांग्रेस तत्कालीन सरकारके विरुद्ध शायद अहिंसात्मक लड़ाई छेड़ दे तो उस प्रसंगके अलावा जहाँतक मैं कल्पना कर सकता हूँ, कांग्रेसी मन्त्री विद्यार्थियोंसे कभी भी हड़ताल करने के लिए नहीं कहेंगे। और तब भी, मैं समझता हूँ कि प्रारम्भमें ही विद्यार्थियोंसे हड़तालके लिए पढ़ाई स्थगित करनेकी बात कहना मानों अपना दिवाला पीटना होगा। यदि हड़ताल-जैसे किसी भी प्रदर्शनमें आम जनता कांग्रेसका साथ देती है तो विद्यार्थियोंसे तबतक उसमें शामिल होने के लिए नहीं कहा जायेगा जबतक ऐसा करना बिलकुल जरूरी न हो जाये। पिछले संघर्षमें विद्यार्थियोंसे, जहाँतक मुझे याद है, सबसे पहले लड़ाईमें शामिल होने के लिए नहीं कहा गया था, बल्कि सबसे अन्तमें कहा गया था — और वह भी केवल कॉलेजके विद्यार्थियोंसे।

मैं चाहूँगा कि पत्र-लेखक १८ सितम्बरके 'हरिजन' में एक अध्यापकके पत्रके उत्तरमें लिखे मेरे लेखको पढ़ जायें और यदि पहले पढ़ा हो तो एक बार फिर पढ़ जायें। विद्यार्थियों और अध्यापकोंकी राजनीतिक स्वतन्त्रताके विषयमें मेरे विचार उन्हें इस लेखमें मिल जायेंगे।

पर एक अन्य सज्जन इसी सम्बन्धमें लिखते हैं:

> **अगर हम सरकारके वेतन-भोगी अध्यापकों और दूसरे मुलाजिमोंको राजनीतिमें भाग लेने देंगे, तो सब चौपट हो जायेगा। सरकारकी नीतियों पर जिन सरकारी अफसरोंको अमल कराना है वे ही अगर उस नीतिके सम्बन्धमें वाद-विवाद करने लग जायें, तो कोई भी सरकार नहीं चल सकती। आपकी यह इच्छा कि राष्ट्रकी आशाओं, आकांक्षाओं और देशभक्तिके विचारोंको प्रकट करने की पूरी स्वतन्त्रता मिलनी चाहिए, उचित है। लेकिन मुझे ऐसी आशंका**

है कि आप अपनी स्थितिको अगर बिलकुल स्पष्ट नहीं करेंगे, तो आपके इस लेखसे गलतफहमी पैदा हो सकती है।

मेरा खयाल था कि मैंने अपने विचारोंको बिलकुल स्पष्ट रूपसे बता दिया है। जहाँ राष्ट्रीय सरकार होती है वहाँ उसके तथा उसके अधिकारियों और विद्यार्थियोंके बीच शायद ही कोई संघर्ष होता हो। मेरे उक्त लेखमें इस बातकी पूरी सावधानी बरती गई है कि उससे किसी प्रकारकी अनुशासनहीनताको प्रोत्साहन न मिले। उन अध्यापक महोदयको रोष तो इस बातपर है कि अब भी विद्यार्थियोंके पीछे जासूस रखे जाते हैं और उनके स्वतन्त्र विचारोंको कुचला जाता है। यह रोष उचित ही है। कांग्रेसके मन्त्री खुद प्रजाके हैं, और प्रजामें से ही आये हैं। उन्हें कोई बात गुप्त नहीं रखनी है। उनसे हरएक सार्वजनिक प्रवृत्तिके साथ व्यक्तिगत सम्पर्क रखने की अपेक्षा की जाती है, विद्यार्थियोंकी मनोवृत्तिसे भी अपनेको व्यक्तिगत रूपसे अवगत रखने की आशा की जाती है। कांग्रेसका सारा तन्त्र उनके हाथमें है; और चूँकि यह तन्त्र प्रजाकी इच्छाका व्याख्याता है, अतः इसकी शक्ति कानून, पुलिस और फौजी ताकतकी अपेक्षा निश्चय ही प्रबल है। जिन्हें इस प्रकारके तन्त्रका समर्थन प्राप्त नहीं है, वे काममें लाये हुए बन्दूकके खाली कारतूस के समान हैं। जिन मन्त्रियोंके पीछे कांग्रेसका बल है, कहा जा सकता है कि उनके लिए कानून, पुलिस और फौज बेकार और ऊपरकी शोभाकी चीजें हैं। और यदि कांग्रेस अनुशासनकी प्रतिमूर्ति नहीं है तो फिर उसमें और रखा ही क्या है? इसलिए कांग्रेसके शासन-कालमें अनुशासनका पालन सर्वत्र मजबूरन नहीं, बल्कि स्वेच्छासे ही होना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २-१०-१९३७

२२९. विचार नहीं, ठोस कार्य

डॉ० जी० एस० अरंडेलने 'ओरियन्ट इलस्ट्रेटेड वीकली' में प्रकाशित होनेवाले अपने एक लेखकी अग्रिम प्रति निम्नलिखित पत्रके साथ भेजी है:

आपने यह इच्छा व्यक्त की है कि इस देशमें इतने वर्षोंसे जो कृत्रिम शिक्षा दी जाती रही है अब उसके स्थानपर असली शिक्षा दी जानी चाहिए। एक ऐसे आदमीकी हैसियतसे, जिसने तीससे भी अधिक सालतक शिक्षाके क्षेत्रमें कार्य किया है, मैं आपको अपना एक लेख भेज रहा हूँ, जो 'ओरियन्ट इलस्ट्रेटेड वीकली' में छपने जा रहा है। सम्भव है, यह कुछ अंशोंमें आपके ही विचारोंका प्रतिनिधित्व करता हो। मैं भी यह अनुभव करता हूँ कि हमें शिक्षाकी एक राष्ट्रीय योजना बनानी चाहिए, जिसे प्रत्येक मन्त्री अपने प्रान्तमें सफल बनाने के लिए शक्ति-भर प्रयत्न करे। इस दिशामें छिटपुट प्रयत्न तो

काफी हुए हैं। पर मुझे ऐसा लगता है कि अब तो शिक्षाके उन महान् सिद्धान्तोंकी घोषणा अविलम्ब होनी चाहिए, जिससे सर्वत्र एक सर्वसामान्य ढंगका प्रयत्न किया जा सके और उस प्रयत्नमें सरकार तथा जनता दोनों शामिल हो सकें।

इस लेखमें मैं सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण और कामके अवतरण नीचे दे रहा हूँ। काम कैसे शुरू किया जाना चाहिए, इसकी चर्चा करने के बाद डॉ० अरंडेल लिखते हैं:

राष्ट्रीय शिक्षाके मूलभूत सिद्धान्त क्या हैं, इसका प्रतिपादन करने के लिए यहाँ मेरे पास स्थान नहीं है। लेकिन जहाँतक लड़के और लड़कियोंकी शिक्षाका सम्बन्ध है, मैं आशा करता हूँ कि हम धीरे-धीरे स्कूल और कालेजका अनर्गल भेद मिटा देंगे। शुरूसे आखिरतक शिक्षाका एक ही उद्देश्य रहेगा — कार्य।

विचार चाहे कितने ही जाग्रत क्यों न हों, लेकिन जबतक हम कार्य-प्रवृत्त नहीं होते, वे निरर्थक ही हैं। यही बात भावनाओं और मनोवेगोंके विषयमें भी कही जा सकती है। आधुनिक शिक्षा-प्रणालियोंमें इनकी भयंकर रूपसे अवहेलना की गई है। आज हिन्दुस्तानको कार्यकर्त्ताओंकी जरूरत है — ऐसे कार्यकर्त्ताओंकी जिनके चरित्रका शिक्षा द्वारा इस प्रकार निर्माण हुआ हो कि वह अपने-आप कार्यमें, व्यावहारिक योग्यतामें, सेवामें परिणत हो जाये। हिन्दुस्तानको ऐसे नौजवान नागरिकोंकी जरूरत है, जो परिवेश और विरासतके कारण प्राप्त जिस-किसी क्षेत्रमें जायें, उसमें कुछ करके दिखा सकें। पाठ्य-क्रमके प्रत्येक विषयका उद्देश्य सदाचार होना चाहिए। प्रत्येक विषय जीवनके धर्म, व्यवस्था और उद्देश्यको प्रकाशमें लाता है। तथाकथित तथ्योंकी कठोरताका मुकाबला करते समय शिक्षकोंको इन बातोंको कभी नहीं भूलना चाहिए। वे यह स्मरण रखें कि हमारे बुद्धि-जगत्में तथ्य नहीं, केवल रूढ़ मान्यताएँ ही हैं। सर आर्थर एडिंगटनने[१] बिलकुल ठीक कहा था कि विज्ञानने हमें निश्चयसे अनिश्चयकी ओर ले जाने का महान् कार्य किया है। इसलिए बच्चोंको पढ़ाया इस तरह जाये कि उनके मस्तिष्क तथ्योंको सहज रीतिसे ग्रहण करें और वे तथ्य उनके चरित्र-निर्माणमें सहायक हों, क्योंकि राष्ट्र और व्यक्ति दोनोंके लिए यही सबसे अधिक सुरक्षित आधार है।

एक बार चरित्रके जागृत हो जाने पर स्वावलम्बन और आत्म-त्यागकी दिशामें कुछ करने की इच्छा प्रबल हो उठेगी। हममें जमीन अर्थात् भूमाताकी ओर अधिकसे-अधिक बढ़ने की, खेतीके द्वारा उसकी पूजा करने की तथा सादगी और शुद्ध आचरण द्वारा हम उसपर जितना कम बोझ बन सकें उतना कम बोझ बनने की इच्छा जगेगी। मैं मानता हूँ कि भूमाताका कोई भी बालक ऐसा नहीं होना चाहिए जो किसी-न-किसी रूपमें अपनी आजीविका खुद उसीसे

१. सर आर्थर स्टेनली एडिंगटन, एक ब्रिटिश खगोलवेत्ता।

प्राप्त न कर सकता हो, और हर प्रकारकी शिक्षामें, शहरकी शिक्षण-संस्थाओंमें भी, मैं चाहूँगा कि किसी-न-किसी अंशमें भूमिसे हमारा सम्पर्क बना रहे।

आज हमें उन सब रूढ़ियोंसे एकबारगी अपना नाता तोड़ लेना चाहिए जिन्होंने शिक्षाको इतना अधिक निरर्थक बना दिया है। राष्ट्रीय मन्त्रिमण्डलोंके संरक्षणमें हमें सच्ची शिक्षाका शुभारम्भ कर देना चाहिए, और सच्ची शिक्षा बच्चोंके दिमागमें कोरी और अनुपयोगी जानकारी ठूँसने से बिलकुल अलग चीज है। हम तो शिक्षा-सम्बन्धी उन रूढ़ियों और ढकोसलोंके अन्दर बुरी तरह कैद कर दिये गये हैं जो अब पुराने और बेकार साबित हो चुके हैं। मैं गांधीजी द्वारा प्रतिपादित स्वावलम्बी शिक्षा-पद्धतिका हृदयसे स्वागत करता हूँ। वे जितनी दूर हमें ले जाना चाहते हैं उतनी दूर हम जा सकेंगे या नहीं, इसके बारेमें मैं निश्चित रूपसे कुछ नहीं कह सकता। मैं उनकी इस बातसे पूरी तरह सहमत हूँ कि सात वर्षकी शिक्षाके बाद हर विद्यार्थीको कुछ कमा सकने योग्य होना चाहिए। मुझे खुद यही लगता है कि प्रत्येक मनुष्यको, कुछ हदतक शिक्षा द्वारा, अपनी सृजन-शक्तिका एहसास होना चाहिए, क्योंकि वह भी तो विकासोन्मुख ईश्वरीय अंश है और ईश्वरकी जो परम शक्ति अर्थात् सृजन-शक्ति है वह उसमें भी है। यदि मनुष्यकी यह शक्ति जाग्रत नहीं होती तो शिक्षा किस कामकी है? फिर तो वह तथ्योंकी जानकारी देना है, शिक्षा नहीं।

दिमाग जितना मस्तकमें है उतना ही हमारे हाथोंमें भी है। लम्बे अर्सेसे हम निष्क्रिय बुद्धिको ईश्वर समझते आये हैं। उसने हमपर बड़ा जुल्म किया है। वह हमारी शासिका और स्वामिनी रही है। वर्तमान व्यवस्थामें बुद्धि हमारी एक सेविका होनी चाहिए, और जो भी बातें हमारे जीवनको सरल और सादा बनानेवाली हों, और हमें प्रकृतिकी सादगीके निकट ले जाती हों, हमें हाथके सहारे जीने में सहायता देनेवाली हों उन्हें — अर्थात् शिल्पकार, किसान आदि सबके शारीरिक कार्यको — हमें ऊँचीसे-ऊँची प्रतिष्ठा देनी सीखनी चाहिए।

मैं जानता हूँ कि अगर मुझे इस तरहकी शिक्षा मिली होती तो मेरा जीवन अधिक सुखी और सफल होता।

अबतक मैं जो बात साधारण आदमीकी हैसियतसे साधारण पाठकोंके लिए कहता आया हूँ, वह बात डॉ० अरंडेलने एक शिक्षा-शास्त्रीकी हैसियतसे शिक्षा-शास्त्रियोंके लिए तथा उन लोगोंके लिए कही है, जिनके हाथोंमें देशके युवकोंके चरित्र-निर्माणकी बागडोर है। स्वावलम्बी शिक्षाके प्रश्नपर विचार करते समय डॉ० अरंडेलने जो सावधानी बरती है, उससे मुझे आश्चर्य नहीं होता है। मेरे लिए तो वही सबसे कठिन समस्या है। मुझे अफसोस तो इस बातका है कि जो चीज मुझे पिछले ४० वर्षोंसे धुँधली-धुँधली दिखाई देती थी वह आज परिस्थितिवश स्पष्ट दिखाई देती है।

सन् १९२० में मैंने वर्तमान शिक्षा-पद्धतिकी काफी कड़े शब्दोंमें निन्दा की थी। आज मुझे देशके सात प्रान्तोंके मन्त्रियोंपर चाहे जितने भी थोड़े अंशमें हो, असर डालने का मौका मिला है, क्योंकि इन मन्त्रियोंने किसी समय मेरे साथ देशकी स्वाधीनताके महान् संग्राममें काम किया है और मेरे साथ तरह-तरहकी मुसीबतें उठाई हैं। इसीलिए आज मुझे अपने इस आरोपको सिद्ध करके दिखा देने की एक दुर्दमनीय प्रेरणा अनुभव हो रही है कि वर्तमान शिक्षा-पद्धति नीचेसे लेकर ऊपरतक मूलतः गलत है। और 'हरिजन' में जिस बातको व्यक्त करने का मैं अबतक असफल प्रयास करता रहा हूँ वही बात अब मेरे सामने एकाएक बिजलीकी तरह कौंध गई है और मुझे दिन-ब-दिन उस सत्यकी प्रतीति होती जा रही है। इसलिए देशके जिन शिक्षा-शास्त्रियोंका अपना कोई स्वार्थ नहीं है और जिनका हृदय नये विचारोंके लिए हमेशा खुला है उनसे मेरा यह कहना है कि वे मेरे इन दोनों सुझावोंपर विचार करें और विचार करते हुए वर्तमान शिक्षा-पद्धतिके बारेमें एक लम्बे अरसे से उनके मनमें जो धारणा बनी है उसे अपनी तर्क-बुद्धिके आड़े न आने दें। चूँकि मैं शिक्षाके तकनीकी और पारम्परिक स्वरूपसे अनभिज्ञ हूँ, इसलिए मैं जो लिख और कह रहा हूँ उसके बारेमें वे पहलेसे ही कोई धारणा न बना लें, उसपर अच्छी तरहसे विचार करें। कहा जाता है कि ज्ञान अक्सर बच्चों और शिशुओंके मुँहसे प्रकट होता है। "बालादपि सुभाषितम्", इसमें कविकी अत्युक्ति हो सकती है, पर इसमें कोई शक नहीं कि ज्ञान कभी-कभी बच्चोंके मुँहसे प्रकट होता है। विद्वान् लोग परिष्कृत कर उसे शास्त्रीय रूप देते हैं। इसलिए मेरा अनुरोध है कि वे मेरे सुझावोंपर केवल गुण-दोषकी दृष्टिसे विचार करें। ये सुझाव मैं एक बार फिर दे रहा हूँ, लेकिन उन्हें उस रूपमें नहीं दे रहा हूँ जिस रूपमें मैं पहले दे चुका हूँ, बल्कि ये पंक्तियाँ लिखाते समय मुझे जो शब्द सूझ पड़ते हैं, उन शब्दोंमें दे रहा हूँ:

(१) आज प्राथमिक, माध्यमिक और उच्च विद्यालयोंकी शिक्षाके नामसे जो शिक्षा दी जाती है उसके स्थानपर सात अथवा सात वर्षसे अधिक की प्राथमिक शिक्षा दी जानी चाहिए। उसमें अंग्रेजीको छोड़कर मैट्रिकतक के तमाम विषय पढ़ाये जाने चाहिए और साथ ही किसी उद्योगकी इस तरह शिक्षा दी जानी चाहिए कि ज्ञानकी तमाम शाखाओंमें लड़के-लड़कियोंका आवश्यक मानसिक विकास हो सके।

(२) ऐसी शिक्षा समग्रतः स्वावलम्बी हो सकती है और होनी ही चाहिए। वस्तुतः स्वावलम्बन ही उसकी वास्तविकताकी सच्ची कसौटी है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २-१०-१९३७

२३०. शिक्षा-परिषद्‌के समक्ष उपस्थित प्रश्न

मारवाड़ी विद्यालय, जिसका नाम हाल में ही बदलकर नवभारत विद्यालय कर दिया गया है, अपनी रजतजयन्ती मनाने जा रहा है। विद्यालयके संचालकोंको यह विचार आया कि इस अवसरपर राष्ट्रीय विचारधाराके शिक्षा-शास्त्रियोंका एक छोटा-सा सम्मेलन बुलाया जाये और 'हरिजन'के स्तम्भोंमें मैं जिस शिक्षा-योजनाको प्रतिपादित करने का प्रयत्न कर रहा हूँ, उसपर परिचर्चा की जाये। यह सम्मेलन बुलाया जाना ठीक होगा या नहीं, इस सम्बन्धमें विद्यालयके मन्त्री श्रीमन्नारायण अग्रवालने मेरी सलाह माँगी और कहा कि यदि मुझे यह विचार पसन्द हो तो मैं उसकी अध्यक्षता करूँ। मुझे दोनों ही सुझाव पसन्द आये। इसलिए यह सम्मेलन आगामी २२ और २३ अक्तूबरको वर्धामें हो रहा है। इसमें केवल वही लोग भाग लेंगे जिन्हें इसके लिए निमन्त्रित किया जायेगा। अगर कुछ ऐसे शिक्षा-शास्त्री हों जो इस सम्मेलनमें भाग लेना चाहते हों, किन्तु जिन्हें निमन्त्रण नहीं मिला हो, तो वे मन्त्रीको पत्र लिख सकते हैं और उसमें अपना नाम तथा पता लिखने के साथ-साथ ऐसी विशेष जानकारी भी दे सकते हैं जिसके आधारपर प्रबंध-मण्डलको यह निर्णय करने में सुविधा हो कि उन्हें निमन्त्रण भेजा जा सकता है या नहीं। यहाँ तो केवल ऐसे थोड़े-से लोगोंके लिए ही व्यवस्था की जा रही है जो इस विषयमें गहरी दिलचस्पी रखते हैं और जो इस परिचर्चामें उपयोगी योगदान दे सकते हैं। इस सम्मेलन में कोई तड़क-भड़क करने का विचार नहीं है। इसमें प्रेक्षकोंके लिए कोई स्थान नहीं होगा। यह तो केवल एक काम-काजी सम्मेलन होगा। पत्र-प्रतिनिधियोंको थोड़े-से टिकट जारी किये जायेंगे। अखबारवालोंको मेरी सलाह है कि वे आपसमें एक-दो प्रतिनिधि चुन लें और सम्मेलनकी खबरें सब समाचारपत्रोंको भेज दें।

इस कार्यमें मैं विश्वासपूर्वक, किन्तु पूरी नम्रताके साथ, खुले दिमागसे और मनमें कुछ सीखने तथा जहाँ जरूरी हो वहाँ अपने विचारोंमें संशोधन-परिवर्तनकी इच्छा लेकर हाथ डाल रहा हूँ।

मैं सम्मेलनके सम्मुख विचारार्थ जो प्रस्ताव रखना चाहता हूँ वे मुझे फिलहाल निम्न रूपमें सूझ रहे हैं :

१. शिक्षाकी वर्तमान पद्धति किसी भी तरह देशकी आवश्यकताओंकी पूर्ति नहीं कर सकती। उच्च शिक्षाकी तमाम शाखाओंमें अंग्रेजी भाषाको माध्यम बना देने के कारण उच्च शिक्षा-प्राप्त मुट्ठी-भर लोगों तथा अपढ़ जनसमुदायके बीच एक स्थायी दीवार-सी खड़ी हो गई है। इसके कारण ज्ञान सर्वसाधारणतक नहीं पहुँच सका है। अंग्रेजीको इस तरह अत्यधिक महत्त्व देने के कारण शिक्षित लोगोंपर जो बोझ

पड़ा है उसने उन लोगोंको जीवन-भरके लिए मानसिक रूपसे पंगु बना दिया है, और वे अपने ही देशमें अजनबी बन गये हैं। धन्धोंके शिक्षणके अभावने शिक्षित वर्गको उत्पादक कामके सर्वथा अयोग्य बना दिया है और शारीरिक दृष्टिसे भी उनका बड़ा नुकसान हुआ है। प्राथमिक शिक्षापर आज जो खर्च हो रहा है, वह बिलकुल निरर्थक है; क्योंकि जो-कुछ भी सिखाया जाता है उसे पढ़नेवाले बहुत जल्दी भूल जाते हैं और शहरों तथा गाँवोंके सन्दर्भमें उसका बहुत कम अथवा कोई भी मूल्य नहीं है। वर्तमान शिक्षा-पद्धतिसे जो-कुछ भी लाभ होता है उससे देशका मुख्य कर-दाता तो वंचित रह ही जाता है, क्योंकि उसके बच्चोंको इसका भाग सबसे कम मिल पाता है।

२. प्राथमिक शिक्षाका पाठ्यक्रम कमसे-कम सात सालका कर दिया जाना चाहिए। इसमें बच्चोंको इतना सामान्य ज्ञान मिल जाना चाहिए जो उन्हें साधारण-तया मैट्रिकतक की शिक्षामें मिल जाता है। इसमें अंग्रेजी नहीं रहेगी। उसकी जगह किसी ठोस धन्धेकी शिक्षा दी जायेगी।

३. लड़के और लड़कियोंके सर्वतोमुखी विकासके लिए सारी शिक्षा, जहाँतक हो सके, किसी-न-किसी ऐसे धन्धेके माध्यमसे दी जानी चाहिए, जिससे कुछ उपार्जन भी किया जा सके। दूसरे शब्दोंमें इस धन्धे द्वारा दो हेतु सिद्ध होने चाहिए — एक तो विद्यार्थी अपने परिश्रमके फलके द्वारा अपनी पढ़ाईका खर्च अदा कर सकें और इसके साथ ही, स्कूलमें सीखे हुए धन्धेके द्वारा उस लड़के या लड़कीके व्यक्तित्वका पूर्ण विकास हो सके।

पाठशालाकी जमीन, इमारतें और अन्य जरूरी सामानका खर्च विद्यार्थीके परि-श्रमकी कमाईसे निकालने की कल्पना नहीं की गई है।

कपास, रेशम और ऊनकी चुनाईसे लेकर सफाई, (कपासकी) ओटाई, पिंजाई, कताई, रँगाई, माँड़ लगाना, ताना लगाना, दुसूती करना, डिजाइन (नमूने) बनाना तथा बुनाई, कसीदा काढ़ना, सिलाई आदि तमाम क्रियाएँ, कागज बनाना, कागज काटना, जिल्दसाजी, आलमारी आदि तैयार करना, खिलौने बनाना, गुड़ बनाना, आदि निस्सन्देह ऐसे धन्धे हैं जिन्हें आसानीसे सीखा जा सकता है और जिनके करने के लिए बहुत बड़ी पूँजीकी भी जरूरत नहीं होती।

इस प्राथमिक शिक्षासे लड़के और लड़कियाँ इस लायक हो जायें कि वे अपनी रोजी कमा सकें, इसके लिए यह जरूरी है कि जिन धन्धोंकी शिक्षा उन्हें दी गई हो उन धन्धोंमें राज्य उन्हें रोजगार दे अथवा वह अपनी मुकर्रर की गई कीमतोंपर उनकी बनाई हुई चीजोंको खरीद लिया करे।

४ उच्च शिक्षाको खानगी प्रयत्नों तथा राष्ट्रकी आवश्यकतापर छोड़ दिया जाये, चाहे उस शिक्षाका सम्बन्ध विभिन्न प्रकारके उद्योगों और उनसे जुड़े शिल्प-कौशलोंसे हो या साहित्यसे अथवा ललित कलाओंसे।

सरकारी विश्वविद्यालय केवल परीक्षा लेनेवाली संस्थाएँ ही रहें और वे अपना खच परीक्षा-शुल्कसे ही निकालकर स्वावलम्बी बनें।

विश्वविद्यालय शिक्षाके समस्त क्षेत्रका ध्यान रखेंगे और उसके विभिन्न विभागोंके लिए पाठ्यक्रम तैयार करेंगे तथा उनपर अपनी स्वीकृति देंगे। कोई भी खानगी स्कूल सम्बन्धित क्षेत्रके विश्वविद्यालयसे पहलेसे मंजूरी लिये बिना शुरू नहीं किया जाना चाहिए। विश्वविद्यालयका अधिकार-पत्र किसी भी ऐसी संस्थाको उदारतापूर्वक दिया जाना चाहिए, जिसके सदस्योंकी योग्यता और प्रामाणिकताके विषयमें कोई सन्देह न हो। यह समझ रखना चाहिए कि अपने केन्द्रीय शिक्षा विभागका खर्च उठाने के अलावा राज्यपर खर्चका कोई भार नहीं होगा।

राज्यकी विशेष आवश्यकताओंकी पूर्तिके लिए शिक्षा-संस्थाएँ या विद्यालय खोलने की जरूरत पड़ जाये, तो यह योजना राज्यको इस जिम्मेदारीसे मुक्त नहीं कर रही है।

अगर यह सारी योजना स्वीकृत हो जाये, तो मेरा दावा है कि जिसकी राज्यको सबसे अधिक चिन्ता है वह समस्या — अर्थात् राज्यके युवकोंको, अपने भावी निर्माताओंको प्रशिक्षित करनेकी समस्या — हल हो जायेगी।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २-१०-१९३७

२३१. टिप्पणियाँ

एक धर्माचार्यका समर्थन

अखबारोंमें एसोसिएटेड प्रेस द्वारा कालिकटसे भेजा गया निम्नलिखित समाचार प्रकाशित हुआ है:[1]

स्वामीजी सत्य और प्रगतिके पक्षमें साहसपूर्वक खड़े हुए हैं, इसके लिए मैं उन्हें बधाई देता हूँ। यदि वे "वर्णव्यवस्था-सम्बन्धी सभी विषयोंके अन्तिम निर्णायक" हैं तो आशा है, उनकी सम्मतिको अन्यत्र नहीं तो केरलमें तो रूढ़िवादी वर्ग अवश्य आदर देगा और उसके अनुसार चलेगा भी।

शिमलामें हरिजन-सेवा

शिमलामें गत पाँच वर्षोंसे वाल्मीकि (हरिजन) युवक-संघ काम कर रहा है। इस संघके अवैतनिक संचालक पण्डित सी० वी० विश्वनाथन् हैं। अवैतनिक मन्त्री

१. इसका अनुवाद यहाँ नहीं दिया जा रहा है। समाचारमें बताया गया था कि केरलके ब्राह्मणोंके सबसे बड़े धर्माचार्य अझवनचेरी थम्पुरक्कलने त्रावणकोर महाराजकी मन्दिर-प्रवेश राजघोषणा (देखिए खण्ड ६४, पृ० ५४-५५और परिशिष्ट) की प्रशंसा करते हुए कहा है कि उसने हिन्दू धर्मके समस्त आदर्शोंकी रक्षा करते हुए उसमें नवजीवनका संचार किया है तथा हिन्दुओंके बीचसे अस्पृश्यता, विभेद और असमानताकी बुराइयोंको मिटा दिया है। समाचारमें यह सूचना भी दी गई थी कि केरलके इतिहासके लेखक पद्मनाभ मेननने अझवनचेरी थम्पुरक्कलको "वर्ण-व्यवस्था-सम्बन्धी सभी विषयोंका अन्तिम निर्णायक" बताया है।

लाला बी० लछमन सिंह सभोत्रा हैं, जो खुद वाल्मीकि हरिजन हैं। संघकी तरफसे गर्मीके मौसममें एक रात्रि-पाठशाला चलती है, जिसमें सब कौमोंके बालक दाखिल हो सकते हैं। पाठशालाके २१ विद्यार्थियोंमें ८ सवर्ण हिन्दू हैं। इस पाठशालामें तीन हरिजन अध्यापक हैं, जो सब वर्णोंके विद्यार्थियोंको पढ़ाते हैं। इनके अतिरिक्त दो सवर्ण हिन्दू और सिख अध्यापक भी हैं। आचार्य हरिजन हैं। संघ केवल सेवा-भावसे, बिना फीस लिये, काम करनेवाले चिकित्सकोंके सौजन्यसे मुफ्त डाक्टरी सहायता भी देता है। एक आपसी सहकारी कोष भी है। इसमें से एक पैसा प्रति रुपया ब्याज पर कर्ज दिया जाता है। इस हिसाबसे सूद की दर १८ प्रतिशत हुई। यह बहुत ज्यादा है। यह दर ६ प्रतिशतसे अधिक नहीं होना चाहिए, या ज्यादासे-ज्यादा ८ प्रतिशत। इसका अर्थ यह तो है ही कि रुपया उधार देने में अधिक सावधानी रखी जायेगी। इससे लाभ ही होगा। उधार दिये हुए रुपयेका उपयोग किस प्रकार हो रहा है, इसकी देखभाल रखनी चाहिए। संघका एक वाचनालय भी है। संघके मकानमें अक्सर गरीब निराश्रित हरिजनोंके कुछ रात ठहरने का भी प्रबन्ध रहता है। मैं चाहता हूँ कि इस संघको अपने सेवा-कार्यमें पूरी सफलता मिले।

उड़ीसा-बाढ़-संकट-निवारणके लिए

मुझे यह कहते हुए हर्ष होता है कि श्रीयुत् ए० बी० पण्डित ऐंड कम्पनीका ५०० रुपयेका चेक और श्री मणिलाल बुलाखीदासका १०० रुपयेका चेक उड़ीसा-बाढ़-संकट-निवारणके लिए प्राप्त हुआ है। यह मेरी अपीलके[1] उत्तरमें बड़ी तत्परता से भेजी गई प्रथम राशियाँ हैं। दोनों चेक मैंने सीधे उड़ीसाके मन्त्री श्री कानूनगो के पास, कटकके पतेपर भेज दिये हैं।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २-१०-१९३७

२३२. पत्र: अवन्तिकाबाई गोखले और गौरीबाई खाडिलकरको[2]

[२ अक्तूबर, १९३७ के आसपास][3]

तुम्हारा गहरा प्रेम तो मेरे लिए जानी-बूझी बात है। लेकिन जिनसे मेरा प्रत्यक्ष परिचय कभी नहीं हुआ, ऐसे अन्य असंख्य लोगोंका प्रेम मुझे कभी कर्त्तव्यपथसे विचलित नहीं होने देता।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ९-१०-१९३७

१. देखिए "उड़ीसामें जलप्रलय", पृ० १७८-७९।

२ और ३. महादेव देसाईके "नोट्स" (टिप्पणियाँ) से उद्धृत। अवन्तिकाबाई गोखले और गौरीबाई खाडिलकर गांधीजी के हर जन्म-दिनपर उन्हें अपने हाथोंसे काते सूतसे बनी धोतियाँ भेजा करती थीं।

२३३. पढ़े-लिखे बनाम अनपढ़

बम्बईसे एक सज्जन लिखते हैं:

वर्त्तमान सरकारने निगमसे यह अनुरोध किया है कि उसे अपने मताधिकारका क्षेत्र बढ़ाना चाहिए। आज यह उन बालिगोंतक ही सीमित है जो कमसे-कम ५ रुपये किराया देते हैं। अब यह सिफारिश की गई है कि सब पढ़े-लिखे लोगोंको मत देनेका अधिकार दिया जाये। प्रश्न यह है कि विधान-परिषद्के चुनावके लिए वयस्क मताधिकारका जो प्रस्ताव है, उसपर इसका क्या प्रभाव पड़ेगा। अब यदि कांग्रेसके सदस्य शिक्षा-मताधिकार स्वीकार कर लेते हैं तो क्या इससे कांग्रेसका सिद्धान्त भंग नहीं होगा? मुझ-जैसे कुछ लोग यह मानते हैं कि फिलहाल शिक्षा-मताधिकारको स्वीकार कर लेना उचित होगा। इन परिस्थितियोंमें हमारा क्या कर्त्तव्य है?

कांग्रेसके अनुशासनके साथ इस प्रश्नका जहाँतक सीधा सम्बन्ध है, वहाँतक तो मुझे कोई राय देनेका अधिकार नहीं है। एक पत्रकारकी हैसियतसे यदि कुछ अर्थ लगाऊँ तो पत्र-लेखक इसका जितना मूल्य आँकेगा, मैं उससे अधिक नहीं आँक सकता। उसके लिए तो कांग्रेस अध्यक्ष जो कहे वही पर्याप्त है और मान्य है। लेकिन एक दीर्घकालिक अनुभवीके रूपमें इस विषयमें मैं जो राय रखता हूँ उसे मैं पत्र-लेखक तथा उन-जैसे दूसरे लोगोंको बताता हूँ। मैं मानता हूँ कि कांग्रेस द्वारा सुझाई सभी तजवीजोंको अमलमें लानेकी जिनमें शक्ति न हो, या जो यह मानते हों कि सभी तजवीजों के लिए यह समय नहीं है, वे कांग्रेसकी दिशामें जाते हुए जितने कदम उठा सकें उतने बिना किसी हिचकिचाहटके उठायें। ऐसा करना उनका फर्ज है, और इसमें वे अनुशासनको तनिक भी भंग नहीं करते।

गुण और दोषों पर विचार करते हुए मुझे ऐसा लगता है कि मताधिकारका क्षेत्र बढ़ाने में इसे साक्षरोंतक ही सीमित रखना कतई ठीक नहीं। हो सकता है कि २१ वर्षका पढ़ा-लिखा नवयुवक मताधिकारके बिलकुल योग्य न हो, और सम्भव है कि ५० वर्षका अनुभवी और समझदार अपढ़ आदमी मताधिकारका मूल्य समझ सकता हो। उसके मतका अपना महत्त्व होगा; और ऐसा होता ही है। कांग्रेसने जो वयस्क मताधिकारका समर्थन किया है, उसमें भी बहुत अध्याहार है। मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि बहरे-गूँगे, जाने-माने मूरख, पागल, गुप्त अपराध करनेवाले और असाध्य रोगसे पीड़ित व्यक्ति यदि बालिग हों, तो भी वे मताधिकारका उपभोग नहीं कर सकते।

और जिन्होंने लिखना-पढ़ना सीख लिया, उन्होंने स्वयं कोई पुरुषार्थ किया है, ऐसा क्यों माना जाये? जो लोग आजतक पढ़ नहीं सके वे अपने अज्ञानके लिए खुद

जवाबदेह हैं, यह मानने के लिए मैं तैयार नहीं हूँ। असलमें देखा जाये तो करोड़ों आदमियोंके अज्ञानकी जड़ मध्यम वर्गके लोगोंकी लापरवाही है। उन्होंने आजतक अपने कर्त्तव्यका पालन नहीं किया, इसीसे हिन्दुस्तानमें निरक्षरोंकी बहुत बड़ी संख्या रही। इसलिए जिन्होंने सरकारकी कृपासे शिक्षा प्राप्त की है उन्हें मताधिकार देना, और जो सरकारकी अकृपासे शिक्षा प्राप्त नहीं कर सके उन्हें मताधिकार न देना, मेरी दृष्टिमें दोहरा दोष है। सत्ताधीशोंका यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वे उन निरक्षरों को तुरन्त शिक्षा प्रदान करें जिन्हें मताधिकार दिया गया हो। इसलिए एक ओर तो जिसे मताधिकार पहले ही मिल जाना चाहिए था उसे मताधिकार न देने का यह प्रायश्चित्त होगा तथा दूसरी ओर मतदाताको जो अधिकार मिला है, उसको अच्छी तरह काममें ला सकने के प्रयोजनसे उसे पढ़ा-लिखाकर तैयार करनेके लिए प्रोत्साहन मिलेगा।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, ३-१०-१९३७

२३४. पत्र : अमृत कौरको[1]

सेगाँव
३ अक्तूबर, १९३७

बिलकुल समय नहीं है।
स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६१७)से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६४२६से भी

२३५. पत्र : महादेव देसाईको

३ अक्तूबर, १९३७

चि० महादेव,

कह सकते हैं, चिमनलालकी नाव तो अभी मझधारमें है। वह सारी रात सोया ही नहीं, वह सारी रात काँपता रहा। उसका स्वभाव भी काफी बदल गया है। टेम्परेचर तो ठीक है, ९८। आज डाक्टर आयेगा तो सही न? मेरे लिए यदि उसने आने का विचार स्थगित कर दिया हो तो चिमनलालके लिए तो आयेगा ही। जितनी जल्दी आये उतना अच्छा है। लीलाका क्या हुआ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५७४)से।

१. यह गांधीजी ने अमृतकौरको लिखे मीराबहनके पत्रके अन्तमें जोड़ दिया था।

२३६. पत्र : अमतुस्सलामको

३ अक्तूबर, १९३७

चि० अमतुल सलाम,

हम तो बहूत कुछ करना चाहते हैं लेकिन हमारी वहेतरी किसमें हैं वह तो रामजी जानें। अब रह गई है तो रहो। कल लीलावतीके साथ आ जाओ और शामकी गाड़ीमें जमनालालजी के साथ जाओ या ऐसे ही। आज रातको जानेकी कोई ज़रूरत नहीं।

बापुकी दुआ[1]

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९२) से।

२३७. पत्र : अमृतकौरको

सेगाँव

४ अक्तूबर, १९३७

मूर्खा रानी,

इस सप्ताह खुद लिख सकना मेरे लिए असम्भव रहा है। बायाँ हाथ धीमे चलता है और दायेंसे रविवारके अलावा सप्ताहके दूसरे दिन काम नहीं लिया जा सकता।

लीलावतीने मेरा पूरा एक दिन लिया, लेकिन वह हकदार भी थी। बेचारीको आपरेशनके समय और उसके बाद भी काफी तकलीफ रही। चिमनलालका जीवन भी मानों अधरमें लटकता है; उसको लेकर मन सबसे अधिक चिन्तित है। कल पहली बार उसका तापमान कुछ घंटोंके लिए सामान्यपर आया, लेकिन वह बहुत कमजोर हो गया है। उसका दिमाग ठीक काम नहीं करता। पारनेरकरका बुखार उतर गया है और शक्ति वापस आ रही है।

सर जोगेन्द्रसिंहने मेरा लेख[2] पढ़कर एक मधुर पत्र भेजा है, जो संलग्न है। उसे पढ़ने के बाद बेशक नष्ट कर देना।

१. ये शब्द उर्दूमें हैं।

२. देखिए "अव्यावहारिक नहीं", पृ० १८०-८१।

ज०[1] का बड़ा आग्रह है कि मैं कलकत्ता जाऊँ[2] और मुझे लगता है कि जाना ही पड़ेगा। एक प्रकारसे यह ठीक भी होगा, क्योंकि मुझे नजरबन्दोंके[3] सम्पर्कमें आना ही चाहिए।

उड़ीसाके लिए तुमने जो चेक दिया है वह कटक भेज दिया गया है। तुम्हारा बहुमूल्य पार्सल, जिसमें कम्बल, बीज और चप्पलें थीं, पहुँच गया है, और तार भी। अभी तो पहला कम्बल भी कामके लायक है।

चूँकि तुम्हारी इच्छा है कि तुम्हारे पत्र पढ़ते ही फाड़ दिये जायें और मैं ऐसा ही करता हूँ; अतः मुझे याद नहीं कि किन-किन बातोंका उत्तर देना था। इसलिए तुम्हें हर सोमवारको लिखे जानेवाले मेरे अधूरे पत्रोंसे ही सन्तोष करना पड़ेगा।

स्नेह।

तानाशाह

[पुनश्च:]

बेशक मैं जानता हूँ कि यह शाल कितने प्रेमसे बुना गया है, कितने प्रेमके साथ चप्पलें बनाई गई हैं और बीजोंमें कितना प्रेम उँड़ेला गया है। आज अपने नकली दाँतोंसे तुम्हारा भेजा सेव खाया।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८१३) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६९६९ से भी

२३८. पत्र: प्यारेलालको

४ अक्तूबर, १९३७

चि० प्यारेलाल,

मैं इसके साथ दाँत भेज रहा हूँ। इनका जो करना हो सो करना। मैंने इन्हें सारी रात और सारे दिन पहनकर देख लिया है। कल तुम्हारी प्रतीक्षा करूँगा। फिर भी जरूरी हो तो रुक जाना। सबकुछ निपटा कर आना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फ़ोटो-नकल (जी० एन० ८०२) से।

१. जवाहरलाल नेहरू।

२. कार्य-समितिकी बैठकके लिए, जो २६ अक्तूबरसे होनेवाली थी।

३. अंडमानके कैदियोंसे; गांधीजी उनसे ३० अक्तूबरको मिले थे; देखिए "बातचीत: अंडमानके कैदियोंसे", ३०-१०-१९३७, और "वक्तव्य: समाचारपत्रोंको", १-११-१९३७।

२३९. तार : राजेन्द्र प्रसादको

वर्धा
५ अक्तूबर, १९३७

राजेन्द्रप्रसाद
सदाकत आश्रम
पटना

आशा है आप अच्छे होंगे और २२ तथा २३ तारीखको यहाँ होनेवाले शिक्षा सम्मेलनमें शामिल हो सकेंगे। उसी समय कानपुरमें श्रम समिति की बैठक होगी। आशा है, उसकी तिथि आगे बढ़ाई जा सकती है।

गांधी

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९८७८) से; सौजन्य : राजेन्द्रप्रसाद

२४०. पत्र : मुन्नालाल जी० शाहको

सेगाँव
५ अक्तूबर, १९३७

चि० मुन्नालाल,

मैं कितने ही दिनोंसे तुम्हें बुलाकर तुमसे बातचीत करना चाहता था, लेकिन समय ही नहीं मिलता। इसलिए जो-कुछ तुमसे कहना है, उसे लिखकर ही कह दूँ तभी मुझे सन्तोष होगा। मैं यहाँके कार्योंको पूरा नहीं कर पाता, इसलिए यह बात मनको सालती रहती है और अगर मैं किसी तरह उन्हें पूरा करने का प्रयत्न करता हूँ तो बिगड़ी हुई सेहत और बिगड़ने लगती है।

तुम्हारा मीराबहनके साथ वैमनस्य क्यों है? उसके साथ बातचीतका जी क्यों नहीं होता? मैंने उसे बच्चोंका मुआयना करने और पींजने आदिकी जाँच करने के लिए कहा था। मेरे कहने के मुताबिक उसने जो टिप्पणी मुझे भेजी है, वह इस पत्रके साथ नत्थी है। इसे मिले ६-७ दिन हो गये होंगे। इसमें अतिशयोक्ति हो सकती है, इस बातको जाने दें तो भी इससे हमें कुछ-न-कुछ सोचनेको तो मिलता ही है। उसके काममें व्यवस्था तो रहती है। मैं चाहता हूँ कि तुम उसकी देख-रेख में काम करो, उसे सहन करो। यदि तुम उसके मुखसे अपनी आलोचना नहीं सुन सकते तो

मैं उससे लिखवाकर तुम्हें देता जाऊँगा। लेकिन यदि उसका मूक निरीक्षण भी तुम्हें पसन्द न हो तो मैं उसे यह भी नहीं करने दूंगा। जो काम तुम आजकल कर रहे हो, उससे क्या तुम्हें पूरा आत्म-सन्तोष मिलता है?

स्कूलके बारेमें क्या तुम्हें कुछ कहना है? क्या तुम उसका कब्जा लेने को तैयार हो? क्या गाँवके लोग भी काम देने और लेने के लिए तैयार हो गये हैं? उसमें क्या तुम कुछ करना चाहते हो? समय है? करने की सामर्थ्य है?

जो काम तुम कर रहे हो, यदि उसीमें सम्पूर्णता लाओगे तो भी मुझे सन्तोष होगा। छोटेसे-छोटे काममें भी सम्पूर्णता लानेवाला व्यक्ति आत्म-सन्तोष पा सकता है।

जब तुम मुझे खाली देखो तब इसका जवाब ज़बानी या लिखकर दे देना। आजसे मैंने इस तरह लिखकर भी काम पूरा करने का निश्चय किया है। अतः नानावटी और डाह्याभाईको भी लिख रहा हूँ।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८५७७)से। सी० डब्ल्यू० ७०२२ से भी; सौजन्य: मुन्नालाल जी० शाह

२४१. पत्र: अमृतलाल टी० नानावटीको

सेगाँव
५ अक्तूबर, १९३७

चि० अमृतलाल,

चूंकि मुझे बातचीतका समय नहीं मिलता इसलिए लिखकर निपटा रहा हूँ। मैं बहुत समयसे तुम्हारे साथ बातचीत करना चाह रहा था। आज तो इतना ही लिखूँगा। तुमसे तो मुझे मौलिक काम लेना है। इसके लिए यदि तुम्हें और सब काम छोड़ना पड़े तो मैं छुड़वानेके लिए तैयार हूँ।

कानमके[1] ऊपर जो प्रयोग किया जा रहा है उससे कानमको तो लाभ होगा ही, लेकिन यदि यह प्रयोग ज्ञानपूर्वक किया जाता है तो इससे तुम्हें भी बहुत लाभ होगा और मेरा काम भी खूब आसान हो जायेगा।

मैं चाहता हूँ कि तुम बुनाई-शास्त्रका आरम्भसे लेकर अन्ततक सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्त करो। अब तुम्हारी अपनी इच्छा क्या है, सो मुझे बताना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०७३७) से।

१. रामदास गांधीके पुत्र।

२४२. पत्र : अमृतकौरको[1]

६ अक्तूबर, १९३७

प्यार। तुम्हारे घोषणा-पत्रका मसौदा कल।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८१५)से। सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६९७१ से भी

२४३. पत्र : विद्या आनन्द हिंगोरानीको

सेगाँव, वर्धा
६ अक्तूबर, १९३७

चि० विद्या,

तुम्हारा खत मिला। बहुत दिनोंके बाद आया। नैनीतालमें और भी रह-कर तबियत बिलकुल अच्छी बना लो। तुम्हारा प्रथम कर्तव्य शरीरको मजबूत बनाने का है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी माइक्रोफिल्मसे; सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार और आनन्द तो० हिंगोरानी

१. यह अमृतकौरको लिखे मीराबहनमें पुनश्चके रूपमें लिखा गया था।

२४४. पत्र : आनन्द तो० हिंगोरानीको

६ अक्तूबर, १९३७

चि० आनंद,

तुम्हारा खत मिला। तुम्हारे अक्षर विद्यासे अच्छे हैं। हिन्दी भी अच्छी है। थोड़ा और प्रयत्न करेगा तो हिन्दीका ज्ञान बिलकुल अच्छा हो जायगा। नैनीतालमें हिन्दी बोलने का अभ्यास भी काफी हो जाना चाहिए। कुछ हिन्दी पढ़ने का भी अभ्यास रक्खो। हिन्दी अखबार और रामायण पढ़ो। 'हरिजनसेवक' पढ़ने से दो गूना फायदा पहुंचेगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी माइक्रोफिल्मसे; सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार और आनन्द तो० हिंगोरानी

२४५. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको

वर्धा

६ अक्तूबर, १९३७

संसारके और भारतके लगभग सब भागोंसे मेरे जिन बहुत-से मित्रोंने समुद्री तार तथा पत्र भेजे हैं उन सबको अलगसे धन्यवाद देना मेरे लिए असम्भव है। मैं देखता हूँ कि प्रतिवर्ष इनकी संख्या बढ़ती ही जाती है। मैं तो केवल यह आशा कर सकता हूँ कि समस्त संसारमें फैले मेरे असंख्य मित्र मेरे जीवनके अन्तिम अध्यायकी अन्तिम पंक्तिमें यह कह सकें कि उन्होंने मुझे जो स्नेह दिया उसके योग्य बनने के लिए मैं सदैव प्रयत्नशील रहा।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ७-१०-१९३७

२४६. पत्र: माधवदास और कृष्णा कापड़ियाको

सेगाँव वर्धा
७ अक्तूबर, १९३७

चि० माधवदास[1] और कृष्णा,[2]

तुम दोनोंके पत्र और हार मिले। मैं पत्र लिखकर तुम्हें आशीर्वाद दूँ या न दूँ, मेरा आशीर्वाद तो तुम्हारे पास है ही।

बाकी सब कुशल है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू० / २२) से।

२४७. पत्र: चन्दन पारेखको

७ अक्तूबर, १९३७

चि० चन्दू,

तेरे पत्रके बिना ही मैं यह पत्र लिख रहा हूँ। तू वहाँ अकेली है; वह परदेश है और वहाँ सब-कुछ विचित्र है। तिसपर तेरे मनपर . . .[3] के मामलेका बोझ है। इसलिए शंकरकी ऐसी इच्छा है कि यदि मैं समय-समयपर लिखता रहूँ तो तुझे उससे सान्त्वना मिलेगी। यह बात मुझे पसन्द आई। तेरे बारेमें वह इतनी चिन्ता करता है, यह तेरे लिए शुभ है। लेकिन इतनी दूर चले जानेके बाद किसीकी ओरसे सान्त्वना की क्या जरूरत है? जो व्यक्ति हजारों मील दूर विदेशमें जाता है उसमें आन्तरिक शान्ति प्राप्त करने की शक्ति होनी चाहिए। और वह तुझमें है, मैंने ऐसा मान लिया है। न हो तो इस प्रकारकी शान्तिका विकास करना। जो लोग ईश्वरमें विश्वास करते हैं, उनसे वह कभी दूर नहीं होता। वह अँगुलीके नाखूनकी अपेक्षा ज्यादा करीब है, क्योंकि वह तो हमारी रग-रगमें वास करता है। हृदयसे निकले गुह्यतम उद्गारोंका वह साक्षी है। हम उसके अस्तित्वमें विश्वास करते हैं अथवा नहीं, इसकी उसे कोई परवाह नहीं। हम उससे दूर भागें, इसकी भी उसे कोई चिन्ता नहीं। क्योंकि हमारी बागडोर तो उसीके हाथमें है।

. . .[4] के मामलेमें तो तुझे चिन्ता करनी ही नहीं चाहिए, क्योंकि इस चिन्ताको तो तूने मुझे सौंप दिया है। मुझे उम्मीद है कि मुझे तुझसे अब कोई प्रश्न

१ और २. कस्तूरबा गांधी के भाई और उनकी पत्नी।

३ और ४. नाम छोड़ दिया गया है।

नहीं पूछना पड़ेगा। लेकिन यदि पूछना हुआ तो मैं निस्संकोच पूछूँगा। और तू मुझे निस्संकोच उत्तर देना।

आशा है, तेरा स्वास्थ्य ठीक होगा। तेरा अध्ययन खूब जोरोंसे चल रहा होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९४४) से; सौजन्य : सतीश द० कालेलकर

२४८. पत्र : नरहरि द्वा० परीखको

७ अक्तूबर, १९३७

चि० नरहरि,

तुम्हारा पत्र मिला।

यदि हम बाहरसे हलवाई आदि बुलाते हैं और उनपर यह नियन्त्रण नहीं रख पाते कि उन्हें गायके घी-दूधका ही इस्तेमाल करना होगा, तो यह निश्चय ही बुरी बात है। यदि घी बाहरसे भी इकट्ठा किया जा सके तो ठीक है। अगर हम हलवाइयों आदिको आनेकी अनुमति देते हैं तो हमें उनकी चीजोंके भावोंपर अंकुश रखना होगा। और यदि उन्हें दूध आदिके दाम ज्यादा देने पड़ें तो हमें उसी अनुपातमें मिठाईके भाव भी बढ़ा देने चाहिए। [कांग्रेस] शिविरमें प्रतिस्पर्धा तो हो ही नहीं सकती। इसलिए हम जो उचित भाव तय करेंगे, लोग अवश्य उन्हें मानेंगे। हमें ज्यादा मुश्किल तो कदाचित् मांसाहारको लेकर होगी। मुझे मालूम नहीं कि फैजपुर-कांग्रेसमें[1] क्या हुआ था। यदि कांग्रेस-शिविरमें मांसकी सुविधा नहीं थी तो खास फैजपुरमें तो अवश्य रही होगी। हम तो ऐसे स्थानपर गये हैं कि जो चीज हम शिविरमें नहीं रखेंगे वह बाहर भी उपलब्ध नहीं होगी। इसपर विचार करना। सरदारके साथ भी इसकी चर्चा करना।

शिक्षा-परिषद्की बैठकके समय यदि तुम बैठकके बाद नहीं ठहरोगे तो हम बात ही नहीं कर पायेंगे। और २५ तारीखकी सुबह मुझे कलकत्ताके लिए रवाना होना होगा। इसलिए कोई समय नहीं मिलेगा। यदि तुम एक-दो दिन पहले आ जाओ तो विचारोंका कुछ आदान-प्रदान हो सकेगा। मेरा खयाल है कि तुम परिषद्में काफी योगदान करोगे।

बापूके आशीर्वाद

श्रीयुत नरहरि द्वा० परीख
हरिजन आश्रम
साबरमती, बी० बी० एण्ड सी० आई० रेलवे

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९११४) से।

१. दिसम्बर, १९३६ के कांग्रेस-अधिवेशनमें।

२४९. पत्र : महादेव देसाईको

सेगाँव
७ अक्तूबर, १९३७

चि० महादेव,

वह शराबके ठेकेका मालिक अपने हककी रूसे ताड़ी तो बनाये ही जा रहा है। बाबासाहबके दीवानजी भी उसे नहीं रोकते। इसलिए जैसे ही उत्तर आये वैसे ही तुम एक पत्र नागपुर अवश्य लिख देना। लेकिन इसके अतिरिक्त तुम स्वयं जिला आयुक्त अथवा आबकारी आयुक्तके पास पहुँच जाना और कहना कि शराब बनाने के इस कामको रोका ही जाना चाहिए।

टार्चका बल्ब बिगड़ गया है। खरीदकर कल भेज देना। टार्च तो ठीक होगी, ऐसा मैं मान लेता हूँ।

लीलावतीके बारेमें मैं समझता हूँ। जबतक वह अधीर नहीं होती तबतक मैं अधीर होनेवाला नहीं हूँ। वह बिलकुल ठीक हो जाये तो समझूँगा कि सब कुछ पा लिया।

मालूम हुआ है कि गोमती[1] बुखारमें पड़ी हुई है। किशोरलालको[2] खाँसी है। यदि उनके पास जा सको तो जाना। यहाँसे यदि किसी व्यक्तिकी मदद की जरूरत हो तो भेजा जा सकता है। यदि आवश्यक हो तो ईश्वरदासकी मदद ले सकते हो। किशोरलाल स्वयं तो किसीसे कुछ नहीं कहेगा। यदि सिविल सर्जनको ले जाना तुम्हें उचित जान पड़े तो ले जाना। उसे बार-बार दौरा पड़ता है, यह बात मुझे अच्छी नहीं लगती।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

उन सौ रुपयोंकी बात विनोबाके कानमें डालना ठीक होगा।[3]

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५७५) से।

१ और २. गोमती मशरूवाला तथा किशोरलाल मशरूवाला।

३. यह "बापूकी ओरसे" कनु गांधीने लिखा था।

२५०. पत्र : एस० अम्बुजम्मालको

सेगाँव, वर्धा
८ अक्तूबर, १९३७

चि० अम्बुजम,[१]

तुमने मुझे हिन्दीमें लिखा, यह देखकर खुशी हुई। तुम्हारी लिखावट अच्छी — पूरी तरह सुवाच्य और भाषा काफी अच्छी है। अभी यह लिखवाते समय मैं तुम्हारी लिखावट पाससे देख रहा हूँ तो मुझे लगता है कि यद्यपि वह अच्छी और सुवाच्य है, फर भी उसमें शुद्धि और सुधारकी गुंजाइश है।

जब कभी तुम माता-पिताकी अनुमति और उनके आशीर्वाद लेकर वहाँसे कुछ दिनोंके लिए निकल सको, बीमार पड़ने के डरसे यहाँ आनेमें आगापीछा मत करो। मुझे तुम्हारे बीमार पड़ जानेका कोई भय नहीं है। तुम जैसा चाहोगी वैसा खा सकोगी। अपना कुकर साथ ले आना और खुद भोजन बना लेना। मुझे लगता है, नवम्बरके समाप्त होनेके पहले तुम यहाँ नहीं आ सकोगी, क्योंकि नवम्बरमें मेरे सीमाप्रान्त में रहने की सम्भावना है। मुझे शारीरिक आरामकी अपेक्षा लम्बे मानसिक आरामकी जरूरत है। जितना आराम सम्भव है उतना मैं ले रहा हूँ, लेकिन और अधिक लूँ तो भी कोई हर्ज नहीं।

राघवनका विकल्प ढूँढ़ने के बारेमें खूब विचार कर रहा हूँ। मैंने खुद ही तुम्हारे बारेमें सोचा था। तुम हमेशा बहुत संकोच करती रही हो — अपनी योग्यता तुमने सदा कम आँकी है, लेकिन यदि तुम खूब साहससे काम लो तो बहुत अच्छी संचालिका[२] साबित हो सकती हो। कोशिश करके देखो — यदि काम बूतेसे बाहरका लगेगा तो त्यागपत्र दे देना। कठिनाइयाँ आनेपर तुम मेरा सहारा तो लोगी ही — और मैं तुमको सहारा न केवल एक मार्गदर्शकके रूपमें, बल्कि इस संस्थाके अधिकृत प्रधानके तौरपर भी दूँगा। तुम्हें हिन्दीका पर्याप्त ज्ञान है, यह काम तुम्हें पसन्द भी है, ज्यादातर काम तुम जानती हो, तुममें बहुत अधिक ईमानदारी है, लगन है और जब चाहो तब स्वतन्त्र रूपसे निर्णय लेनेकी शक्ति भी है, इसलिए संकोचका तो कोई कारण ही नहीं है। तुम्हें झूठी विनम्रताका त्याग कर देना चाहिए। इसलिए यदि तुम इस कामको संभालनेके बारेमें विचार कर सको तो अच्छा होगा। उस हालतमें तुम सीधे राजगोपालाचारीके पास जाकर सलाह लो। अगर किसी कारणसे उन्हें मेरा विचार ठीक नहीं लगता तो मैं नहीं चाहता कि तुम यह पद स्वीकार करो।

१. सम्बोधन देवनागरीमें है।

२. हिन्दी प्रचार सभाकी।

तुम्हारी भेजी हुई फलोंकी विशेष टोकरी मिली। लेकिन जिन फलोंको मैं आसानीसे स्वीकार कर सकता हूँ वे तुम्हारे भेजे ये खास तौरसे महँगे फल नहीं, बल्कि संतरे और नींबू हैं। यहाँ वर्धामें बहुत उम्दा संतरे तो कभी मिलते ही नहीं और जैसे नींबू तुम्हें वहाँ मिलते हैं, वैसे नींबू भी नहीं मिलते। आजकल मैं तीन दर्जन संतरे और कमसे-कम एक दर्जन नींबू रोज उपयोगमें लाता हूँ। इसलिये ये दोनों जब भी सस्ते मिलें तुम लेकर भेज सकती हो। मुझे रेलभाड़ा बड़ा खटकता है। अगली टोकरी भेजो तो मेरी उत्सुकता शान्त करनेके लिए बताओ कि भाड़ा कितना आया।

महादेवने तुम्हें खबर नहीं दी होगी, पर पचास रुपये मिल ही गये होंगे।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजीसे। अम्बुजम्माल पेपर्स; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

२५१. पत्र : अमृतकौरको[1]

८ अक्तूबर, १९३७

आजकल सोमवारके अतिरिक्त और किसी दिन मुझसे प्रेम-पत्रोंकी आशा मत रखो। सांस्कृतिक संघों आदिके बारेमें तुम्हारे जो विचार हैं, मैं उनसे सर्वथा सहमत हूँ। यह अतुल भी जानता है।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८१६) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६९७२ से भी

१. यह अमृतकौरको लिखे मीराबहनके पत्रमें पुनश्चके रूपमें लिखा था। मीराबहनके पत्रमें और बातोंके अतिरिक्त गांधीजी के ये सन्देश भी भेजे गये थे:

(क) नरीमान-प्रकरण अभी चल रहा है।

(ख) बड़ी अच्छी बात है कि नवीबख्श स्वस्थ है — बापू उसको प्यार भेजते हैं।

(ग) बापूने गोविन्ददासको पत्र और तार भी भेजा था कि वे ११ या १२ तारीखको यहाँ आ जायें।

२५२. पत्र : खुर्शेदबहन नौरोजीको[1]

८ अक्तूबर, १९३७

तुम तो मुझसे उत्तरकी अपेक्षा नहीं रखतीं, लेकिन मैं अपनेको रोक नहीं सकता। तुम चाहो तो उन लोगोंसे भी दूर भाग सकती हो जो तुम्हें चाहते हैं, लेकिन उनका क्या होगा? और क्या तुम्हें पूरा यकीन है कि तुम अपने और दूसरे मनुष्योंके बीच कोई दीवार खड़ी कर सकती हो? जिस प्रकार तुम अपने शरीरसे दूर नहीं जा सकतीं उसी प्रकार मनुष्योंसे भी परे नहीं जा सकतीं। जहाँ भी जाओगी शरीरधारी जीव तुम्हारा पीछा करते रहेंगे। शरीरधारी जीव शरीरधारी जीवके माध्यमसे ही उसमें समाये सत्के दर्शन कर सकता है। वह इससे परे नहीं है। उपनिषद् सच्चे मानवीय अनुभवोंके अंश हैं। क्या तुम 'ईशोपनिषद्' का मनन करोगी? और जब ईसाने यह कहा था कि "आप मेरे पिताको मेरे (शरीरधारी जीवके) माध्यमसे ही देख सकते हैं" तब उनका क्या अभिप्राय रहा होगा? अरे, अपनी इस निद्रासे जागो। तुम मुझे भूल जाओ, अस्वीकार कर दो, किन्तु मेरे लिए तो तुमको भूलना बिलकुल असम्भव है, भला मैं क्या करूँ?

स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी। सौजन्य : नारायण देसाई

२५३. पत्र : प्रभावतीको

सेगाँव, वर्धा
८ अक्तूबर, १९३७

चि० प्रभा,

मुझे यहाँसे २५ तारीखको जाना होगा। २६ से ३० तारीख तक कदाचित् कलकत्ता रहना होगा। वहाँसे वापस तो आऊँगा, लेकिन आनेके तुरन्त बाद सीमा-प्रान्त जाना होगा। इसलिए यदि तू आ सकती हो तो अभी आ जाना। बादमें तो कौन जाने, कब मिलना हो? यदि तू कलकत्ता आये भी तो उसका क्या फायदा? वहाँ तो मुझे तुझे देखने तककी भी फुर्सत न होगी।

१. दादाभाई नौरोजीकी पौत्री।

चिमनलाल अब ठीक है। अभी वह खटियामें पड़ा है; लेकिन बुखार लगभग उतर गया है।

मैं ठीक हूँ। कामका बोझ काफी है।

अमतुस्सलाम अभी बम्बईमें ही है। इस पत्रके पहुँचने तक भी वह कदाचित् वहीं हो। लेकिन निश्चित रूपसे नहीं कहा जा सकता।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५२८) से।

२५४. पत्र : द० बा० कालेलकरको

सेगाँव
८ अक्तूबर, १९३७

चि० काका,

साथके पत्र तो तुम्हें दिखाना भूल ही गया। शंकरका पत्र बहुत मधुर है। पिछली स्मृतियोंके प्रति उसके मनमें आदर-भाव है। यह अच्छा लगता है। शंकरका पत्र याद करके बालको देना। बालको तो अब एक-दो दिनोंमें पहुँच जाना चाहिए।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७७०५) से।

२५५. पत्र : अमृतलाल टी० नानावटीको

सेगाँव
८ अक्तूबर, १९३७

चि० नानावटी,

मीराबहनको जो अनेक बातें टीका-टिप्पणी करने लायक जान पड़ीं वे सब मैंने उसे लिखने के लिए कहा था। वह टिप्पणी इसके साथ है। वस्तुतः देखा जाये तो इनमें से कुछ तो डाह्याभाईके कार्य-क्षेत्रमें आती हैं और कुछ विजयाके। इनमें तुम कहीं भी प्रत्यक्ष रूपसे जिम्मेदार नहीं ठहरते हो। लेकिन जिस हदतक तुम व्यवस्थापक हो उस हदतक इन सब बातोंपर अमल करवाने की जिम्मेदारी भी तुम्हारे हाथमें होनी ही चाहिए। मीराबहनने तो यह सुझाव दिया था कि वह खुद ही तुम्हें बतायेगी, लेकिन मैंने उसे मना कर दिया। यदि तुम्हारे किसी उत्तरसे उसे सन्तोष न हुआ तो मुझे वह बात फिर सुननी पड़ेगी। उसकी किसी बातसे तुम्हें आघात पहुँचे और तुम वह

बात मुझतक न पहुँचाओ तो भी तुम्हारे मनको आघात तो पहुँचेगा ही। इस दुविधासे निकल जानेकी खातिर मैंने यह रास्ता पकड़ा है। मीराबहनके अधिकांश सुझाव उपयोगी और विचारणीय हैं। वे सारे सुझाव अच्छे हैं; हो सकता है उसमें कुछ अतिशयोक्ति हो, लेकिन उसे मैं क्षम्य मानता हूँ। मीराबहन ऐसी बातोंको मेरे सामने लाये, इसके लिए मैं उसे प्रोत्साहन देनेकी बात सोचता हूँ। लेकिन चूँकि वह केवल मुझे ही बतायेगी, इसलिए क्षोभकी स्थिति उत्पन्न होनेकी कोई सम्भावना न होगी। उसके आधारपर मुझे जो-कुछ कहना होगा अथवा जो कार्यवाही करनी होगी सो मैं किया करूँगा। तुम इस बारेमें डाह्याभाईसे बातचीत कर लेना। यदि कोई बात विजयाको बताने लायक हो तो बता देना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०७३८) से।

२५६. पत्र : हीरालाल शर्माको

सेगाँव, वर्धा
८ अक्तूबर, १९३७

चि० शर्मा,

तुमारे प्रयोग मैं ध्यानसे देख रहा हूं। चाहता हूं कि तुमको सफलता मिले। आंखोंसे देखना तो असम्भव-सा लगता है लेकिन ईश्वर असम्भवसे भी सम्भव पैदा कर सकता है।

खुर्जेके कांग्रेसके बारेमें तुमने मुझको हकीकत तो कुछ भी नहीं दी, इस हालतमें मैं क्या कर सकता हूं? नाम और निशानके साथ कुछ हकीकत भेज दोगे तो मैं वह खत अवश्य जहां जाना चाहिये वहां भेज दूंगा।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० २६८

२५७. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

सेगाँव, वर्धा
[९ अक्तूबर, १९३७ के पूर्व][१]

भाई वल्लभभाई,

मैं नहीं समझता कि मैं इस समय जिन्नासे मिल सकूँगा। जवाहरलाल नहीं चाहते कि मैं उनसे मिलूँ।

लगता है, मुझे कलकत्ता जाना पड़ेगा। जवाहरलालका विशेष आग्रह है। बंगालसे भी ऐसा ही आग्रह किया गया है। सुभाषने भी लिखा है। और यदि मैं गया तो कैदियोंसे भी मिल सकूँगा। इसलिए वहाँ जाते हुए यदि रास्तेमें नहीं तो वहाँ पहुँचने पर तो हम दोनोंकी मुलाकात होगी न?

अच्छा तो यह होगा कि नरीमान-काण्डके सम्बन्धमें तुम स्वयं बहादुरजीको लिखो कि अब इसका जितनी जल्दी फैसला हो जाये उतना अच्छा है।

इस समय जो तूफानी हवा चल रही है उसपर यदि हम काबू नहीं पा लेते तो मेरे विचारसे बाजी हमारे हाथसे जाती रहेगी। इसपर काबू पानेके लिए हमसे जो बने सो हमें करना चाहिए। यदि लोग हमारी बात नहीं मानते तो हमें पीछे हट ही जाना होगा। थोड़ी-सी जगहोंपर थोड़े लोगोंका अधिकार होनेकी जो वर्त्तमान व्यवस्था है वह हमारे लिए बेकार है। यदि हमारा समस्त संगठनपर अधिकार होगा तभी काम आगे बढ़ेगा, अन्यथा नहीं। इसके लिए हमसे जो बन सके सो करना होगा।

सदानन्दके[२] बारेमें तुम्हें लिखना भूल ही गया। वह आया था। वह फिरसे अखबार चलाना चाहता था और एक समाचार एजेंसीका संगठन करना चाहता था। मैंने तो उसमें किसी प्रकारका प्रोत्साहन देनेसे साफ इन्कार कर दिया। उसे झमेलेमें न पड़नेकी सलाह दी। वह झमेलेमें पड़े अथवा न पड़े, लेकिन मुझे भूल जाये, ऐसा मैंने उससे कहा। उसने मुझे भूल जानेकी बातको स्वीकार किया। उसे किसी तरहका पश्चात्ताप हुआ हो, ऐसा नहीं लगा। मेरा खयाल तो यह है कि बम्बईमें नया अंग्रेजी अखबार निकालनेका काम हाथमें लेना ठीक नहीं है।

१. साधन-सूत्रके अनुसार पत्र अक्तूबरके पहले पखवाड़ेमें लिखा गया था। देखिए "पत्र : वल्लभभाई पटेलको", पृ० २३९।

२. **फ्री प्रेस जर्नल** के सम्पादक एस० सदानन्द।

निम्बकरको[1] जवाब तो देना चाहिए। मेरे कहने का तात्पर्य तो इतना ही था कि अखबारकी रिपोर्टके आधारपर मैं कुछ नहीं कर सकता।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० २१५-१६

२५८. मन्त्रियोंको जरा मौका तो दो

एक मुलाकातीसे हुई मेरी बातचीतका निचोड़ इस प्रकार है:

> आपको शायद इसका पता न हो कि मन्त्रियोंकी आज क्या दशा हो रही है। कांग्रेसी अपने-आपको सत्रह सालतक सरकारी पदोंसे अलग रखने के बाद अब अचानक देखते हैं कि जिस सत्ताका उन्होंने पहले अपनी इच्छासे परित्याग कर दिया था, वह सत्ता उनके चुने हुए प्रतिनिधियोंके हाथोंमें आ गई है। उन्हें यह नहीं सूझ पड़ रहा है कि अपने इन प्रतिनिधियोंके साथ किस तरह बरताव करना चाहिए। वे मानपत्रों और स्वागत-सत्कारोंसे उनकी नाकमें दम कर देते हैं, और चाहते हैं कि वे उनसे मुलाकात करें, क्योंकि उनका यह हक है। उनके सामने वे तरह-तरहकी तजवीजें रखते हैं, और कभी-कभी छोटी-छोटी मेहरबानियोंकी भी माँग करते हैं।

मन्त्रियोंको मुल्ककी सच्ची सेवा करने के लिए अशक्त बना देनेका यह सबसे अच्छा तरीका है। इन मन्त्रियोंके लिए यह काम अभी नया है। ईमानदारीसे काम करनेवाले मन्त्रीके पास मानपत्र तथा स्वागत-सत्कार ग्रहण करने अथवा अतिशयोक्ति-पूर्ण या उचित प्रशंसात्मक भाषणोंका जवाब देनेके लिए समय नहीं हो सकता; न उनके पास ऐसे मुलाकातियोंके साथ बैठकर बातें करने का ही वक्त हो सकता है, जिन्हें उन्होंने मिलने के लिए न बुलाया हो या जिनसे उन्हें अपने काममें कोई मदद मिलती मालूम नहीं होती हो। सिद्धान्तकी दृष्टिसे देखते हुए तो प्रजातन्त्रका नेता हमेशा प्रजाके बुलाने पर उससे मिलने या चाहे जहाँ जानेके लिए तैयार रहेगा। वह अगर ऐसा करे तो उचित ही है। किन्तु प्रजाने उसको जो कर्त्तव्य सौंप रखा है, उसे क्षति पहुँचाकर वह ऐसा करने की धृष्टता कदापि नहीं कर सकता। मन्त्रियोंको जो काम सौंपा गया है उसमें अगर वे पारंगत नहीं होते या प्रजा उन्हें पारंगत नहीं होने देती तो मन्त्रियोंकी फजीहत ही होनेको है। शिक्षा-मन्त्रीको अगर ऐसी नीति ढूंढ़ निकालनी है जो देशकी आवश्यताओंको पूरा कर सके तो उसे अपना सारा बुद्धि-बल इस काममें लगा देना पड़ेगा। आबकारी विभागका मन्त्री यदि मद्य-निषेधके

१. एक साम्यवादी कार्यकर्त्ता।

रचनात्मक अंगके प्रति ध्यान न देगा, तो वह अपने कर्त्तव्यपालनमें बिलकुल असफल रहेगा। यही बात वित्त-मन्त्रीके बारेमें है। और इसी तरह भारत [सरकार] अधिनियमने वित्त-मन्त्रीके मार्गमें जो बाधा खड़ी कर रखी है तथा स्वयं वित्त-मन्त्रीने आबकारी करका स्वेच्छासे त्याग करके अपने लिए जो कठिनाई पैदा कर ली है उसके बावजूद अगर वह अपना बजट सन्तुलित नहीं कर पाता है तो नाकामयाब माना जायेगा। इस कामको करने के लिए तो आँकड़ोंके जादूगरकी जरूरत है। ये तो केवल उदाहरण हैं। जिन तीन विभागोंके मन्त्रियोंका मैंने उल्लेख किया है लगभग उतनी ही सतर्कता, सावधानी और अध्ययन-मननकी हरएक मन्त्रीको जरूरत है।

स्थायी अधिकारी मन्त्रियोंके आगे जो कागज-पत्र रख दें उन्हें पढ़कर उनपर दस्तखत कर देने-भरका ही काम अगर इन मन्त्रियोंके पास होता, तो यह आसान काम था। पर हरएक कागज-पत्रका अध्ययन करना और विचारपूर्वक नई-नई नीतियोंका निर्धारण और उद्भावन करना कोई आसान काम नहीं है। मन्त्रियोंने जो सादगी अख्तियार की, वह शुरुआतके तौरपर आवश्यक थी। किन्तु यदि वे आवश्यक उद्योगशीलता, योग्यता, प्रामाणिकता, निष्पक्षता और प्रत्येक तफसीलपर अधिकार रखने की अगाध शक्तिका परिचय नहीं देंगे, तो उनकी इस कोरी सादगीसे उन्हें कुछ मिलनेवाला नहीं है। इसलिए अगर जनता अपने मन्त्रियोंको मानपत्र देने, उनसे मुलाकातें माँगने या उन्हें लम्बे-लम्बे पत्र लिखने में संयमसे काम लेगी, तो इससे लाभ ही होगा।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ९-१०-१९३७

२५९. सफलताकी शर्तें

श्री भाऊसाहब लवाटे[1] शराबबन्दीके बारेमें मेरे साथ बात करने के लिए पूनासे आये थे। यह काम जितना मुझे प्रिय है उतना ही उन्हें भी है। हम दोनों नीचे लिखे निर्णयपर पहुँचे हैं:

१. अबसे शराबसे होनेवाली तमाम आमदनीका उपयोग शराबबन्दीके लिए ही किया जाये, और किसी कामके लिए नहीं।

२. जहाँ शराबकी दूकानोंपर शराब पीनेके लिए जानेवालोंकी कमसे-कम ७५ फीसदी संख्या दूकानें बन्द कर देनेकी स्पष्ट माँग रख रही हो, वहाँ दूकानोंका लाइसेंस खत्म होने पर नया लाइसेंस न दिया जाये, और शराबकी सब दूकानें फौरन बन्द कर दी जायें।

३. जहाँ-जहाँ शराब बेचने की जरूरत हो, वहाँ वह सीधी सरकारी एजेन्सीके मार्फत ही बिकनी चाहिए।

१. पूनाके।

४. जहाँ-जहाँ हो सके वहाँ शराबकी दुकानोंको उपहारगृहों और मनोरंजनके स्थानोंमें बदल दिया जाये।

५. जिन जगहोंमें शराबकी विशेष रूपसे खपत होती हो, वहाँ इस व्यसनके मूल कारणोंका अच्छी तरह पता लगाया जाये, और उसका इलाज किया जाये।

६. मान्यता-प्राप्त व्यक्ति या समूह शान्तिमय, चुपचाप और शिक्षाप्रद पिकेटिंगका काम हाथमें ले लें। हेतु यह है कि वे इस दुर्व्यसनमें फँसे हुए लोगोंके सम्पर्कमें आयें, और इस बुरी लतको छुड़ाने में उनकी मदद करें। इस वैज्ञानिक पिकेटिंगके साथ यह होना चाहिए कि जो इस व्यसनके चंगुलमें फँसे हुए हैं उनके घर जाकर उनसे मिलने का कार्यक्रम रखा जाये। इस कामके लिए सरकारको चाहिए कि वह स्वयंसेवकों और सेविकाओंको आमन्त्रित करे, और उन्हें इस सेवा-प्रवृत्तिके लिए प्रोत्साहन दे।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ९-१०-१९३७

२६०. प्राइमरी अध्यापकोंके उम्मीदवारोंसे

प्राइमरी शिक्षा-सम्बन्धी अपनी योजनाके बारेमें प्रति सप्ताह मैं इन स्तम्भोंमें लिखता रहा हूँ, और इस योजनाका समर्थन करनेवाले शिक्षकोंसे मैंने जो अपील[1] की थी उसके जवाबमें मेरे पास रोज अनेक खत आ रहे हैं। यह सन्तोषकी बात है। इन पत्रोंसे मैं देखता हूँ कि इन्हें लिखनेवालों ने मेरी अपीलका ठीक-ठीक अर्थ नहीं समझा। जिन्हें किसी लाभदायक दस्तकारी द्वारा शिक्षा देनेके विषयमें पूर्ण श्रद्धा न हो और जो इस कामको केवल प्रेमभावसे और सिर्फ जीविका लायक पैसा लेकर करने के लिए तैयार न हों उनकी जरूरत नहीं। उन्हें मेरी यह सलाह है कि वे कातने की कलामें और उसके पहलेकी तमाम क्रियाओंमें पूर्ण निष्णात बन जायें। इस बीच मैं उन सबके नाम दर्ज करके रख लेता हूँ। मेरी योजनाके अमलमें जो प्रगति होगी उसकी इन पत्र-लेखकोंको यथासमय खबर दे दी जायेगी। सातों प्रान्तीय सरकारें अगर मेरी योजनाको मंजूर कर लें और उसका प्रयोग करने के लिए तैयार हो जायें, तो उनकी माँग पूरी करने के लिए मेरा यह प्रयत्न है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ९-१०-१९३७

१. देखिए पृ० १८३

२६१. पत्र : गोविन्दराव वी० गुरजलेको

सेगाँव, वर्धा
९ अक्तूबर, १९३७

भाई गुरजले,

तुम्हारे पत्रके अन्तिम अंशकी स्पष्टवादिताकी मैं सराहना करता हूँ। मुझे खुशी है कि तुम मित्रोंका ध्यान नशाबन्दीपर केन्द्रित कर रहे हो।

तुम्हें पता है कि चाय और काफी बुरी चीजें हैं, किन्तु जबतक तुम अपने तर्कोंकी[1] पुष्टिमें मुझे तथ्य और आँकड़े नहीं देते तबतक मैं इस विषयमें कुछ नहीं कर सकूँगा।

हृदयसे तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४०२)से।

२६२. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

सेगाँव, वर्धा
९ अक्तूबर, १९३७

भाई वल्लभभाई,

निम्बकरको तुमने जो उत्तर दिया है उसे मैंने अभी-अभी पढ़ा। वह मुझे बिलकुल नहीं जँचा। इसमें बहुत असहिष्णुता दिखाई देती है। निम्बकरके बारेमें तुमने जो लिखा है, उसे सिद्ध करना मैं मुश्किल समझता हूँ। यह सब लिखनेकी जरूरत भी क्या थी? और [बॉम्बे] 'क्रॉनिकल' पर तुमने जो आक्षेप किया है, वह तनिक भी शोभा नहीं देता। 'ऑब्वियस रीजन्स' (सुस्पष्ट कारण) वे होते हैं जिन्हें सब जानते हैं। 'क्रॉनिकल' हमेशा तुम्हारा विरोध ही करता है, यह बात मैं नहीं जानता। और यदि करता भी है तो वह कारण क्या हो सकता है जो सबको मालूम हो? ऐसा कहने के पीछे तुम्हारा क्या हेतु था? मुझे तो लगता है कि तुमने स्वयं विरोध भड़काया है।

१. देखिए पृ० १९५।

वैकुण्ठ (मेहता)के बारेमें तुम्हें मुंशी बतायेंगे। मोरारजीको चाहिए कि उसे मोरेटोरियम[1] और सहकारिताके कार्यसे तीन महीनेके लिए मुक्त कर दे और यदि समितिका काम इससे आगे जानेवाला न हो तो तुम खुशीके साथ वैकुण्ठको ले सकते हो।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० २१४-१५

२६३. पुर्जा : नरहरि द्वा० परीखको

[१० अक्तूबर, १९३७ के पूर्व][2]

तुमने पहले आकर ठीक ही किया। मैं तो बड़ी मुश्किलसे टिका हुआ हूँ। दिमागको बहुत आरामकी जरूरत है। २२ तारीखको कहीं मैं बिस्तरपर ही न पड़ जाऊँ, इस भयसे जितनी देरतक मौन रहकर सोया जा सकता है उतनी देरतक मैं मौन सोता रहता हूँ। लेकिन यहाँ सबका ध्यान रखना। नालवाड़ीके प्रयोगको मेरी दृष्टिसे देखना। काकाके साथ बात करना। [आर्य] नायकम्ने भी इस विचारको अच्छी तरह समझ लिया है। और सबसे अधिक विनोबाने। वे तो लिखते हैं कि उन्हें मेरे लेखोंमें कोई आपत्तिजनक बात दिखाई नहीं देती। उनके पत्रका एक अंश मैंने प्रकाशनके लिए 'हरिजनबन्धु'[3] में भेजा है। प्रकाशित हुआ या नहीं, सो मालूम नहीं।

* * *

वनमाला वगैरह ठीक बच गई।

* * *

विद्यार्थीकी उम्र क्या है?

* * *

गाँवकी किसी पाठशालामें बहुत छोटे बच्चे तो शायद ही होंगे। ऐसे बच्चे गाँवोंमें होते तो जरूर हैं लेकिन वे पाठशाला नहीं जाते। यहाँकी पाठशालामें बहुत

१. किसानों आदिको ऋणोंकी अदायगीके बारेमें मुहलत दिलाने का काम।

२. विनोबाके पत्र की चर्चाके आधारपर यह तारीख निश्चित की गई है। विनोबाका यह पत्र **हरिजनबन्धु**, १०-१०-१९३७ के अंकमें छपा था।

३. देखिए अगला शीर्षक।

छोटे बच्चोंको माता-पिता भेजते नहीं हैं। शिक्षक लोग उनम दिलचस्पी नहीं लेते। वे न आयें, ऐसा मैं नहीं चाहता। मैं तो जो वस्तुस्थिति देखता हूँ, सो कहता हूँ।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९११२) से।

२६४. उद्योग द्वारा शिक्षणके दो आधार

यद्यपि विनोबा और मैं सिर्फ पाँच मीलके ही फासलेपर रहते हैं, फिर भी दोनोंके अपने-अपने काममें डूबे रहने और दोनोंकी तबीयत कुछ ढीली रहने के कारण हम एक-दूसरेसे कदाचित् ही मिल पाते हैं। इसलिए कुछ-एक कामोंको हम चिट्ठी-पत्री द्वारा निबटा लेते हैं।

उक्त विचार[1] मैंने उनके ऐसे ही एक पत्रसे उद्धृत किये हैं। इन विचारोंको मैं बहुत महत्त्व देता हूँ, क्योंकि इस दिशामें जितने-कुछ प्रयोग विनोबाने किये हैं उतने मैंने या मेरे अन्य साथियोंम से किसी औरने किये हों, ऐसा मुझे याद नहीं पड़ता। तकलीकी गतिमें जो क्रान्तिकारी वृद्धि हुई है उसके मूलमें विनोबाकी प्रेरणा और उनका अपार श्रम है। एक बड़ी संस्थाका संचालन करते हुए भी उन्होंने आठ-आठ, दस-दस घंटे चरखे और तकलीको चलाया है। और शिक्षामें इस उद्योगको उन्होंने शुरूसे ही महत्त्वपूर्ण स्थान दे रखा है। इसलिए जिसे मैं अपनी मौलिक शोध मान रहा हूँ—अर्थात् उद्योग द्वारा स्वावलम्बी शिक्षण—उसके साथ विनोबा स्वभावतः पूर्णतया सहमत हैं, यह मेरे लिए तो निश्चय ही बहुत उत्साहजनक बात है। और जो लोग विनोबाको जानते हैं, इससे उनकी श्रद्धा भी दृढ़ होगी। अथवा जिनमें श्रद्धाका अभाव होगा उनके हृदयमें श्रद्धा जागेगी, इस आशासे उनके मतको मैंने यहाँ उद्धृत किया है।

श्री विनोबाका समर्थन मेरे लिए कोई नयी वस्तु नहीं है। और 'हरिजनबन्धु' के पाठकोंको भी यह कोई नयी-सी बात मालूम नहीं पड़ेगी। लेकिन यदि मुझे उनका समर्थन न मिले तो मैं सोचमें पड़ जाऊँगा। अपने पुरानेसे-पुराने साथियोंको जो बात मैं नहीं समझा सकता उसे जनताको समझाने की हिम्मत बाँधू, यह मेरी मूर्खता ही समझी जायेगी, या मेरे उस प्रयासकी गिनती धृष्टतामें तो होगी ही। मगर श्री मनु सूबेदारका निम्नलिखित पत्र[2] जब मिला, तो उससे मुझे अवश्य आनन्द

१. इसका अनुवाद यहाँ नहीं दिया गया है। विनोबा भावेने गांधीजी के शिक्षा-विषयके नवीनतम विचारोंसे अपनी पूर्ण सहमति व्यक्त करते हुए लिखा था कि उन्हें तो उद्योग और शिक्षाका द्वैत भी स्वीकार नहीं था। वे दोनोंको एक-दूसरेसे सर्वथा अभिन्न मानते थे और इसलिए उन्होंने उद्योग-शिक्षणकी दिशामें प्रयोग भी आरम्भ कर दिया था।

२. इसका अनुवाद यहाँ नहीं दिया गया है। पत्र-लेखकने आर्थिक आधार पर बुनियादी शिक्षाका अनुमोदन किया था और यह सुझाव दिया था कि हर जिलेमें स्थानीय रूपसे उपलब्ध कच्चे मालका सर्वेक्षण किया जाये, तथा आवश्यक उपकरणोंके साथ कच्चा माल स्कूलोंमें ही लाकर दिया जाये।

और आश्चर्य हुआ। शिक्षा, मद्यनिषेध आदिके सम्बन्धमें मेरे जो विचार हैं उनके विषयमें मेरा उनके साथ पत्र-व्यवहार चल रहा है, जिसके परिणामस्वरूप यह पत्र आया है। इसे देखकर पाठकोंको भी प्रसन्नता होगी। उन्होंने इस पत्रके साथ अंग्रेजीमें कुछ सुझाव भी भेजे थे, जिन्हें मैं 'हरिजन' में प्रकाशित कर चुका हूँ।[१]

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, १०-१०-१९३७

२६५. टिप्पणी

अहमदाबादमें मद्य-निषेध

बम्बई सरकारने १ अप्रैलसे अहमदाबादमें पूर्ण मद्यनिषेधपर अमल करने का शुभ निश्चय किया है। यह उचित ही है। इस सम्बन्धमें जिन क्षेत्रोंमें प्रयोग किया गया है उनमें से अहमदाबाद एक है और वहाँ यह प्रयोग सहज ही सफल होना चाहिए। मद्यनिषेधका उद्देश्य यह है कि लोग शराब पीना बन्द कर दें। यदि लोगोंकी यह आदत दूर नहीं होती और चोरी-छिपे शराब बनती रहे और लोग पीते रहें तो मद्यनिषेध-सम्बन्धी कानून निष्फल हो जायेगा। इसलिए यद्यपि शराबकी दुकानें बन्द हुए बिना लोगोंसे शराब नहीं छुड़वाई जा सकती, लेकिन शराबकी दुकानें बन्द होनेके बाद जबतक शराबसे होनेवाले नुकसानसे लोगोंको अवगत नहीं करवाया जायेगा तबतक दुकानोंको बन्द करने से कोई फायदा नहीं होगा। अहमदाबादमें शराब पीने वालोंमें सबसे बड़ी संख्या मजदूरोंकी है। मजूर-महाजन संस्थाने लोक-शिक्षणका कार्य अपने हाथमें ले लिया है और इस बारेमें उसने प्रस्ताव भी पास किया है। इसके लिए वह बधाईकी पात्र है। यदि सब स्त्रियाँ और पुरुष इस कामको हाथों-हाथ उठा लें तो सफलता अवश्य मिलनी चाहिए। और यदि अहमदाबाद-जैसे केन्द्रमें इस प्रयासमें सफलता मिलती है तो हिन्दुस्तानके अन्य भागोंको प्रोत्साहन मिलेगा और सफलता कैसे प्राप्त की जा सकती है, इसका ज्ञान भी मिलेगा।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, १०-१०-१९३७

१. यह **हरिजन**के २-१०-१९३७ के अंकमें "यूजफुल हिन्ट्स ऑन एजुकेशन" (शिक्षाके सम्बन्धमें कुछ उपयोगी सुझाव) शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था।

२६६. पत्र : श्रीमन्नारायण अग्रवालको

सेगाँव
१० अक्तूबर, १९३७

चि० श्रीमन्,

कल ही सूना कि तुमको चार दिनसे अविच्छिन्न बुखार आ रहा है। यह सब कैसे? क्या शादी की इसलिए? मैंने ऐसे ही मान रक्खा था कि तुम्हें कभी बीमारी हो ही नहीं सकती। यह सब बात कहाँ गई? आशा करता हूँ कि आज ही अच्छी खबर मिलेगी। यह खत तो प्रातःकालकी प्रार्थनाके बाद पाँच बजे लिखवा रहा हूँ। याद रक्खो कि तुम्हारी प्रेरणासे तुम्हारे पर विश्वास रखकर मैंने परिषद[1] भरने दी है और मैंने सभापतित्व स्वीकार किया है।

इतना बड़ा बोझ उठाने की मेरी बिलकुल शक्ति नहीं थी लेकिन तुम्हारे उत्साह से उत्साहित होकर मैंने स्वीकार किया। अब मुझको धोखा नहीं दोगे। निश्चित होकर जल्दी अच्छे हो जाओ। क्या परिषद्के बोझने तो तुम्हें बिमार नहीं कर दिया है? यदि यही कारण है तो 'गीता' माताका आश्रय लेकर अनासक्त और निश्चित बनो। अंतमें जो कुछ होता है वह ईश्वरसे ही।

बापुके आशीर्वाद

पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० २९९-३००

२६७. पत्र : अमृतकौरको[2]

सेगाँव, वर्धा
१० अक्तूबर, १९३७

मेरे पत्रके लिए तुम्हें कलतक प्रतीक्षा करनी होगी।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८१७) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६९७३ से भी

१. अखिल भारतीय शिक्षा परिषद्।

२. यह अमृतकौरको लिखे मीराबहनके पत्रमें पुनश्चके रूपमें लिखा गया था।

२६८. पत्र : सी० एफ० एण्ड्रयूजको

सेगाँव, वर्धा
१० अक्तूबर, १९३७

प्रिय चार्ली,

तुम्हारे दो पत्र मिले। मेरा यह निश्चित मत है कि होरेस से[1] यह कहना ठीक नहीं है कि वह आलिव को[2] छोड़कर अफीम-निषेधके सिलसिलेमें यहाँ आये। बेशक नशाबन्दी शराब और मादक द्रव्यों दोनोंपर लागू होती है। उन सात प्रान्तों में तो सरकारको इस बातपर राजी करने के लिए समझाने-बुझाने की कोई जरूरत ही नहीं है। मन्त्रियोंको स्वयं ही यह बात मालूम हो जायेगी कि इस विषयमें क्या करना चाहिए। होरेसका इस समय यहाँ की अपेक्षा इंग्लैंडमें रहना अधिक उपयोगी है। आज जरूरत इस बातकी है कि इस आन्दोलनको संसारके श्रेष्ठतम विचारकोंका नैतिक समर्थन प्राप्त हो।

आशा करता हूँ, तुम अपने स्वास्थ्यका ध्यान अवश्य रखते होगे।

सप्रेम,

मोहन

[पुनश्च :]

तुम्हारा लेख[3] छपने जा रहा है।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४२६) से।

२६९. पत्र : अमतुस्सलामको

१० अक्तूबर, १९३७

चि० अ० सलाम,

खत मिला। सब अच्छे हैं। वहां खतम होने तक रहो।[4] आज विजिया अपने घर जाती है। क्या किया जाय। लीलावती आ गई है आराम तो चाहीये। डाह्या-लालको रसोड़ा दिया है। दवा शुरू कर दो।

बापुकी हजारों दुवा

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९३) से।

१ और २. होरेस अलेक्जैंडर और उनकी पत्नी, जो बीमार थीं।

३. यह लेख **हरिजन**के २३-१०-१९३७ के अंकमें "ओपियम टू" (अफीम भी) शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था।

४. अमतुसलाम अपने भाइयोंके आपसी मतभेदोंको दूर करनेके सिलसिलेमें बम्बईमें थीं।

२७०. पत्र : विजया एन० पटेलको

१० अक्तूबर, १९३७

चि० विजया,

मैं तेरे आँसू नहीं देख सकता था। माता-पिताका आशीर्वाद लेकर जल्दी आना। रास्तेमें सँभलकर जाना। मुझे बराबर पत्र लिखती रहना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७०७३) से। सी० डब्ल्यू० ४५६५ से भी; सौजन्य : विजयाबहन एम० पंचोली

२७१. तार : अमतुस्सलामको

वर्धागंज
११ अक्तूबर, १९३७

अमतुल सलाम
मार्फत यूरोट्रेड
बम्बई

तुम्हें आपरेशनके लिए वहाँ ठहरने की जरूरत नहीं है, लेकिन यदि जरूरी हो तो भाइयोंके लिए रह सकती हो। प्यार।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०६) से।

२७२. पत्र : अमृतकौरको

दुबारा नहीं पढ़ा

सेगाँव
११ अक्तूबर, १९३७

प्रिय विद्रोहिणी,

तुम्हारे मीठे उपालम्भके बावजूद सप्ताहके दूसरे दिनोंमें तुम्हें पत्र लिखने में मैं असमर्थ रहा हूँ। मुझे दायें हाथसे लिखना नहीं चाहिए और बायाँ बड़ी मुश्किलसे धीमेधीमे चलता है। मेरे पास बायें हाथसे लिखने का अभ्यास करने का भी समय नहीं है, और मैं प्रत्येक मिनटका सदुपयोग करना चाहता हूँ। जब तुम्हारा आग्रह यह है कि मैं तुम्हारा पत्र पढ़ते ही फौरन फाड़ डालूँ तब तुम्हें मुझसे यह आशा भी नहीं रखनी चाहिए कि मैं पूरे सात दिनोंतक तुम्हारे प्रश्नोंको याद रखूँ और रविवारको उनका उत्तर दूँ।

कहने की जरूरत नहीं कि तुमने भूलाभाईके[1] विषयमें जो लिखा उसपर मेरा ठीक ध्यान गया। इतना ही नहीं, मैंने उसके बारेमें उन्हें लिखा भी है, हालाँकि मुझे यह जानकारी कहाँसे मिली सो नहीं बताया है। अभी तक उनका उत्तर नहीं आया है। वैसे अबतक तो आ जाना चाहिए था। यह बात मैंने पहले भी सुनी थी, लेकिन मैं केवल अफवाहके आधारपर कोई कदम नहीं उठा सकता था। तुम्हारी सूचना तो पक्की सूचना थी।

मुझे खुशी है कि नबीबख्श वापस आ गया है। उसे मेरा प्यार कहना। जब यहाँ आओ तो उसे अवश्य लाना।

तुम्हारा चेक दिल्ली भेज दिया है। तुम्हें वहाँसे बाकायदा रसीद मिल जानी चाहिए। साधारण हिसाब लिखने में कोई भूल न होनेसे ही तो कोई मुनीम नहीं बन जाता। निरक्षर नबीबख्श भी अपने हरएक खर्चका ठीक-ठीक हिसाब देता है। तुम चाहो तो इस बातसे खुश हो सकती हो कि आय-व्ययका सामयिक हिसाब-किताब रखने में तुम भी उतनी ही अच्छी हो जितना कि वह। वाह री निष्ठावान् मुनीमजी ! ! !

यह तो एक रहस्य है कि सर जे०का पत्र[2] तुम्हारे लिफाफेमें क्यों नहीं मिला। मीरा ढूँढ़ रही है। याद रखो, न तो वह किरानी है और न मूर्खा है। मूर्खोंको चीजोंकी बहुत याद रहती हैं। मीरा पर्वतों और मेघोंका चित्रांकन कर सकती है, इसीलिए चीजोंको यथास्थान रखने-जैसी छोटी-मोटी बातोंका वह ध्यान नहीं रखती। लेकिन

१. भूलाभाई देसाई।
२. देखिए पृ० २२१-२२ और २५२।

ऐसा कहने से तुम्हारा और मेरा कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं होता। मुझे बड़ी उत्कंठा थी कि तुम वह श्रेष्ठ पत्र देख पातीं। वे इस दिशामें बड़ी लगनसे काम कर रहे हैं। आशा है, वह पत्र मिल जायेगा।

साथके कागजपर हिन्दीमें 'बापू' हस्ताक्षर करके वापस भेजता हूँ। ठीक है ना?

विजयाके माता-पिता उसको घर बुलाना चाहते थे, इसलिए भेजना पड़ा। वह तो बहुत खिन्न थी और उसके आँसू रोके नहीं रुक रहे थे।[1] मुझे उसकी याद आती रहती है, क्योंकि वह बड़े कामकी लड़की थी, हमेशा खुशीसे काम करने को तत्पर रहती थी। वह वापस आना चाहती है।

अमतुस्सलाम अब भी बम्बईमें है और भाइयोंके आपसी मतभेदको दूर करने में मदद दे रही है। वह किसी भी दिन वापस आ सकती है। लीलावती काममें लगभग पूरी तरह जुट गई है। प्यारेलालकी बहन बुखार लिये शनिवारको पहुँची। इसलिए वह मगनवाड़ीमें है, जहाँ प्यारेलाल उसकी देखभाल कर रहा है। श्रीमन् तंद्रिक ज्वरमें पड़ गया है। मालूम नहीं, परिषद्का अब क्या होगा। शायद स्थगित कर देनी पड़े। वह तो एक विरल रत्न है।

२५ तारीखको कलकत्ताके लिए निकलूँगा; वहाँका पता होगा मार्फत कांग्रेस। आशा है, ज्यादासे-ज्यादा २ नवम्बर तक वापस आ जाऊँगा और खान साहबके बुलावेकी प्रतीक्षा करूँगा। वे चाहते हैं कि मैं नवम्बरके पहले हफ्तेमें उनके पास पहुँच जाऊँ।

स्नेह।

डाकू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८१८) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६९७४ से भी

२७३. पत्र : सीता गांधीको

सेगाँव, वर्धा
११ अक्तूबर, १९३७

चि० सीता,[2]

तेरी लिखावट तो बहुत सुन्दर है।

गुजराती भी ऐसी ही सुन्दर लिखना। दोनों भाषाओंमें लिखना। किसी दिन तो तू हमें अपना चेहरा दिखायेगी न? तू यहाँ रहती तो कानमको साथ मिलता और मैं तुझे नये तरीकेसे सिखाता। क्या तू नया तरीका जानती है? सुशीलासे पूछना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८६८) से।

१. देखिए "पत्र : विजया एन० पटेलको," पृ० २४५।
२. मणिलाल गांधी की पुत्री।

२७४. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

११ अक्तूबर, १९३७

चि० मणिलाल और सुशीला,

तुम्हारे पत्र बराबर आते हैं और वर्णनात्मक होते हैं। मुझे कोई शिकायत नहीं है। तुम शिकायत कर सकते हो। मैं काममें इतना व्यस्त रहता हूँ कि पिछली डाक पड़ी रह गई। आज निपटाये दे रहा हूँ। रामदासको मैं अलगसे जोहानिसबर्ग लिख रहा हूँ। वह तुम्हारे साथ नहीं रह सका, यह दुःखकी बात तो है। लेकिन कैलेनबैकने[1] तो रामदासका ही विचार किया था। उनका व्यवहार फौजी [अनुशासन] जैसा तो है ही। इसका हमें दुःख नहीं मानना चाहिए। एजेन्टके बारेमें तुमने जो कहा है सो मैं समझता हूँ। हमें तो ऐसी बहुत-सी बातें सहन करनी पड़ती हैं और यदि इन सबसे हम अलिप्त रह सकें तो समझना कि हमने धर्मका पालन किया है और हमने इस दुनियामें जीने की कला सीख ली है। जो कड़वे-मीठे अनुभव तुम्हें वहाँ होते रहते हैं, वैसे ही अनुभव हम सबको यहाँ होते हैं। इसीमें संसारकी विचित्रता है। यदि रोज फूलोंकी शय्या हो तो उसकी कद्र कौन करे? इसीसे मनसा, वाचा, कर्मणा धर्मकी भारी आवश्यकता महसूस होती है। यदि तुम दोनों अथवा दोनोंमें से कोई भी आ सके तो आना। आना सम्भव न हो तो कोई हर्ज नहीं। वहाँके कामको खतरेमें डालकर न आना। सीताको लिखा पत्र[2] इसके साथ है। और अधिक समाचार देने-जितना समय मेरे पास नहीं है। समय मिला तो पूरी एक जिल्द लिखकर भेज दूँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८०९) से।

१. जर्मन वास्तुकार हरमन कैलेनबैक, जो दक्षिण आफ्रिकामें गांधीजी के सहयोगी बन गये थे।

२. देखिए पिछला शीर्षक।

२७५. पत्र : महादेव देसाईको

११ अक्तूबर, १९३७

चि० महादेव,

'हरिजन'की सामग्री तैयार की जा रही है। उम्मीद है, तुम श्रीमन्के पास जाते रहते होगे। सुशीलाके बारेमें चिन्ता होती है। सुनता हूँ कि अभी बुखार नहीं गया। इससे तुम्हारा काम भी खूब बढ़ गया है और २२ तथा २५ तारीख नजदीक आती जा रही है। तुम स्वयं अपनी सामर्थ्यसे बाहर जाकर काम न करना। शान्ता पर अंकुश रखना। यदि वह अपनी तबीयत बिगाड़ बैठी तो बहुत मुश्किल होगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५७७) से।

२७६. पत्र : महादेव देसाईको

११ अक्तूबर, १९३७

चि० महादेव,

टीकाके उत्तरमें लिखे गये अंशको[1] मैं फिरसे पढ़ नहीं पाया हूँ। मीरा भी देख नहीं सकी है। तुम अच्छी तरहसे देख जाना। मैं यहाँ जानबाको नहीं रोकूँगा।

राजकुमारीको लिखे एक पत्रके साथ मैंने सर जोगेन्द्रका पत्र भी भेजा था। वह उसे नहीं मिला। मीरा डालना भूल गई, या वहीं रह गया? इसकी जाँच करना।

श्रीमन्के पास मुझे अवश्य ले जाना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५७६) से।

१. देखिए पृ० २६४-६७।

२७७. पत्र : प्रभावतीको

११ अक्तूबर, १९३७

चि० प्रभा,

तेरा पत्र मिला। तू रहने के लिए आ सकती है। डाक अभी-अभी जानेवाली है? चिन्ता किस बातकी? मैं २५ तारीखको कलकत्ता जाऊँगा। उम्मीद है, पहली तारीखको वापस आ जाऊँगा।

जल्दी आना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५०७) से।

२७८. पत्र : जमनालाल बजाजको

सेगाँव, वर्धा
१२ अक्तूबर, १९३७

चि० जमनालालजी,

तुम्हारा पत्र मिला।

बहादुरजी आ सकते हैं।

श्रीमन्के बुखारके बारेमें मालूम हुआ। उसका बुखार खराब है। हठीला मालूम होता है। आज उसे देख आने की आशा रखता हूँ। यह पत्र मैं सुबह प्रार्थनाके बाद लिखवा रहा हूँ। श्रीमन्की बीमारीके कारण महादेव और किशोरलालने शिक्षा-परिषद् को स्थगित करने का सुझाव दिया है। वह मेरे गले नहीं उतरा। सौ लोगोंकी व्यवस्था करने की जिम्मेदारी तुम्हारे ऊपर नहीं होनी चाहिए। पैसे तुम्हारे होंगे, यह मैं मान लेता हूँ। इसकी मुझे चिन्ता भी नहीं। परन्तु मैं यह मानता हूँ कि यदि काम-काजका बोझ तुम्हारी सहायताके बिना दूसरे लोग न उठा सकें तो ऐसे काम करने ही नहीं चाहिए। और इतनी शक्ति दूसरोंमें भी आ जाये, तभी हमारे काम शोभान्वित होंगे। इसी कारण मैंने आर्यनायकम्को कहलवाया है कि उसकी अपनी श्रद्धा और लगन हो तभी परिषद् होने दे, अन्यथा भले स्थगित कर दी जाये। परिषद्की कल्पना ही श्रीमन्की थी और श्रीमन्के ऊपर ही मैं निर्भर था। और जबतक वह तन्दुरुस्त था तबतक मैं निश्चिन्त था। उसके बारेमें मैंने मान लिया था कि वह कभी बीमार नहीं पड़ेगा। इसलिए जब उसकी बीमारी के बारेमें सुना तब मैं व्याकुल हो गया। तुम्हारी श्रीमन्-

को खोजको मैंने अत्यन्त आश्चर्यजनक माना है। उसमें विद्वत्ता, प्रौढ़ता और नम्रताका असाधारण मिश्रण है। उसकी गैरहाजिरीमें परिषद् मुझे अटपटी लगेगी। परन्तु हाथमें लिये कामको अधूरा नहीं छोड़ना चाहिए, इस सिद्धान्तको मानते हुए मैंने परिषद् करने का आग्रह रखा है, बशर्ते कि [आर्य]नायकम् की श्रद्धा कम न हो और तुम्हारी ओरसे परिषद्के आयोजनका कोई विरोध न हो। मैं समझता हूँ कि यदि तुम विरोध करते हो तो वह उचित होगा; क्योंकि मुझे तुम्हारी व्यवहार-बुद्धिमें श्रद्धा है। तुम्हारे बिना, तुम्हारे बँगलेके बिना परिषद्का काम सांगोपांग हो सकेगा या नहीं, इसकी पूरी जानकारी तो तुम्हींको होगी। इसलिए अगर तुम चाहते हो कि परिषद् स्थगित की जानी चाहिए तो मुझे तुरन्त तारसे खबर देना; मैं परिषद् स्थगित कर दूँगा।

उम्मीद है, तुम्हारी तबीयत ठीक होगी। सावित्रीका काम ठीक चल रहा होगा।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

पाँचवे पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० १९०-९१

२७९. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

१२ अक्तूबर, १९३७

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। मैं कलकत्ता आने की कोशिश कर रहा हूँ; २५ तारीखको यहाँसे निकलूँगा। तब तुम मुझे कांग्रेसी प्रान्तोंमें मन्त्रि-मण्डलोंके कार्य-कलापके बारेमें सब-कुछ बताना। मैं तो आशा करता हूँ कि गलेकी खराबी और जुकामने तुम्हें ज्यादा दिन परेशान नहीं किया होगा और तुम्हें पंजाबमें जो श्रम पड़ा होगा उसे तुम मजेमें झेल गये होगे। सीमा-प्रान्तकी आबोहवा तो खूब सुखद रही होगी। मेरी कितनी इच्छा है कि तुम कमसे-कम कुछ समय तो शान्तिसे बिताओ?

स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३७; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

२८०. पत्र : अमृतकौरको

१२ अक्तूबर, १९३७

प्रिय विद्रोहिणी,

यदि हिन्दू लोग देवनागरी लिपि और (फारसी शब्दोंकी बहुलतासे युक्त उर्दूसे भिन्न) हिन्दीके ज्ञानपर जोर देते हैं तो इसमें कोई हर्ज नहीं है। फिर भी यदि तुम परिषद्की समाप्ति तक इस सिलसिलेमें कोई सक्रिय कार्य न करो तो बुद्धिमत्ता होगी। यह सब अनुभवकी बात है और आसपासके वातावरण तथा स्थानीय परिस्थितियोंके ज्ञानके बिना कोई सलाह देना कठिन है। यदि किसी ऐसे नाजुक प्रश्नका निर्णय करना हो जिसके लिए वातावरण और परिस्थितियोंका ज्ञान नितान्त आवश्यक हो तो मैं इनका प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करना पसन्द करता हूँ। आशा है, इससे तुम्हें कुछ मार्ग-दर्शन मिलेगा। चाहे जो हो, मेरे लिए इतना तो स्पष्ट है कि प्रत्येक पंजाबीको यह समझना चाहिए कि पंजाबी और उर्दू दोनों उसकी भाषाएँ हैं, लेकिन एक हिन्दूको, चाहे वह कहीं भी हो, देवनागरी लिपिके माध्यमसे ही हिन्दीका ज्ञान प्राप्त करना चाहिए जिससे कि वह सर्वोत्तम श्रेणीका भक्ति-साहित्य पढ़ सके। ऐसा साहित्य अन्य किसी प्रान्तीय भाषामें उपलब्ध नहीं है।

इस सम्बन्धमें हिन्दी प्रचारिणी सभाका दृष्टिकोण क्या है, सो मैं नहीं जानता। हो सकता है, वह मेरे दृष्टिकोणसे बिलकुल भिन्न हो। यदि ऐसा हो तो प्रचार-कार्यके औचित्यसे सम्बन्धित निर्णय, जैसा मैंने बताया, उससे कुछ भिन्न होगा।

तुम्हें सरदार जोगेन्द्रसिंहका पत्र कहाँसे मिल गया? क्योंकि तुमने अपने कलके पत्रमें लिखा था कि वह तुम्हें नहीं मिला है।

यह पत्र मैं आज मौन तोड़नेके बाद लिखवा रहा हूँ। हालाँकि मैं अपनी पूरी गतिसे काम कर रहा हूँ, फिर भी मैं थकावट महसूस नहीं करता। थकावट तो मुझे बातोंसे होती है। दायें हाथमें सिर्फ इतनी शक्ति बची है कि मैं सोमवारका काम ही निपटा सकता हूँ। मेरी बड़ी इच्छा होती है कि मैं प्रतिदिन बायें हाथसे लिखनेका अभ्यास करनेके लिए कुछ समय निकालूँ, लेकिन दैनिक पत्रोंपर हस्ताक्षर करनेके अलावा मुझे और समय नहीं मिल पाता।

स्नेह।

डाकू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६१८) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६४२७ से भी

२८१. पत्र : अमृतकौरको

१३ अक्तूबर, १९३७

प्रिय विद्रोहिणी,

कल रात मैंने तुम्हें एक लम्बा पत्र बोलकर लिखवाया। अब सवेरेके सवा चार बजे हैं और मैं यह पत्र खुर्शेदसे शुरू करता हूँ। उसके और तुम्हारे पत्रोंको पढ़ते ही मैंने फाड़ डाला। उसका मामला बड़ा दुःखद है। उसने मुझे दूसरे ही ढंगसे पत्र लिखा है, मानों वह मनुष्योंकी बस्तीसे दूर निर्जनमें जाना चाहती हो। मैंने उसे एक नरम-सा उत्तर दिया है।[1] वह मुझे ऐसे ढंगसे पत्र लिखती है जैसे कि मैं कोई अपरिचित हूँ, लेकिन मैं तो उसको लिखे पत्रमें हस्ताक्षर 'बापू'के रूपमें ही करता हूँ और उससे कहता हूँ कि चाहे वह मुझे छोड़ दे, मैं उसे नहीं छोड़ूंगा।

गोविन्ददास मेरे साथ एक घंटा रहा।[2] उसकी अपने मुँहसे कही हुई बातें ही उसके विपरीत बैठती हैं। मैंने उससे कहा कि उसके विरुद्ध मेरे पास जो शिकायतें आई हैं वे कहाँतक सच हैं, इसके बारेमें वह जाँच-पड़ताल करे। किन्तु उसके सम्बन्धमें मेरी प्रतिकूल धारणाओंका कोई असर तुम्हारे अनुकूल विचारोंपर नहीं होना चाहिए। यदि याद दिलाओगी तो मिलने पर और चर्चा करूँगा।

आशा है, तुम्हारा जुकाम बहुत पहले ठीक हो गया होगा। जिस समय तुम सर्दीसे ठिठुर रही हो उस समय बैठे रहने की आवश्यकता ही क्या है? तुम्हें हम ग्रामीणोंकी तरह पालथी मारकर और ओढ़-लपेटकर बैठने में संकोच नहीं करना चाहिए। और जब ठंड लगे तब लम्बे-लम्बे श्वास लो।

मुझे फिलस्तीनके स्कूलोंके बारेमें मालूम है। इस विषयपर कै[लेनबैक] बहुत साहित्य छोड़ गये थे।

स्नेह।

डाकू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८२०)से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६९७६ से भी

१. देखिए पृ० २३२।

२. देखिए पृ० २३१ की पाद-टिप्पणी १।

२८२. पत्र: अमृतकौरको[1]

१३ अक्तूबर, १९३७

शिक्षा-सम्बन्धी तुम्हारे विचार बिलकुल ठीक हैं। किन्तु तुम मेरी योजनाको अच्छी तरह समझ नहीं पाई हो। मैंने कल[2] सुबह चार बजे एक पत्र शुरू किया था, जो अब भी अधूरा पड़ा है।

बापूका प्यार

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८१९) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६९७५ से भी

२८३. पत्र: जानकीदेवी बजाजको

१३ अक्तूबर, १९३७

चि० जानकीबहन,

मुझे आचार्य रामदेवका एक पत्र मिला है, जिसमें लिखा है कि तुम्हें देहरादून जाना अवश्य स्वीकार कर लेना चाहिए। तारीख मेरे पास नहीं है। श्रीमन् तो अच्छा हो ही जायेगा। अगर न जा सको तो उन्हें तार दे देना। जा सको तो अच्छा ही है। पतिदेवसे पूछने की जरूरत है क्या?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९८९) से।

१. यह अमृतकौरको लिखे मीराबहनके पत्रमें पुनश्चके रूपमें लिखा गया था।

२. लगता है यह चूक है। यहाँ जिस पत्रका उल्लेख है वह सम्भवत: पिछला पत्र है।

२८४. पत्र : प्रभाशंकर पट्टणीको

१३ अक्तूबर, १९३७

सुज्ञ भाईश्री,

बोटादके राजकीय दवाखानेमें हरिजनोंको दवा देने के लिए जो डाक्टर और कम्पाउण्डर आदि आते हैं, जान पड़ता है कि वे अस्पृश्यतामें विश्वास रखते हैं। और यदि उनका स्पर्श करके कोई उपचार करना हो तो या तो उनका उपचार होता ही नहीं और यदि होता भी है तो बहुत संकोचके साथ होता है। उदाहरणके तौरपर, यदि किसीके कानसे पीप बहती हो और उसे पिचकारीसे साफ करने की जरूरत हो तो वैसा न करके उसके आगे थोड़ी-सी रुई फेंक दी जाती है और उससे कहा जाता है, 'जाओ, इससे कान साफ कर लो।' इस तरह उसे वहाँसे भेज दिया जाता है। इस सम्बन्धमें मुझे बहुत-से पत्र मिले हैं और वे विश्वास करने लायक हैं, ऐसा मुझे लगा है। यह बात तो मैं भी मानता हूँ कि जहाँ अधिकांश सरकारी नौकर अस्पृश्यताके मलसे लिप्त हों वहाँ सरकार भी क्या कर सकती है? तथापि यदि इस बारेमें राज्यकी ओरसे स्पष्ट रूपसे और समय-समयपर अस्पृश्यताके विरोधमें कुछ कहा जाये, उसपर अमल किया जाये तथा एक-दो कर्मचारियोंको अस्पृश्यता बरतने पर दण्ड दिया जाये तो थोड़ा-बहुत सुधार अवश्य होगा। दवाखानोंमें इस तरह भेदभाव करना असम्भव माना जाना चाहिए। इस समय तो मैं 'हरिजनबन्धु' अथवा 'हरिजन'में इस बारेमें कोई टिप्पणी नहीं लिखना चाहता।

मेरा विश्वास है कि आप आगामी शिक्षा परिषद्में आयेंगे अथवा ऐसे किसी व्यक्तिको भेजेंगे जिसे इसमें दिलचस्पी हो।[1]

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५९५५)से। सी० डब्ल्यू० ३२७२ से भी; सौजन्य : महेश पट्टणी

१. इसके बाद पुनश्चके रूपमें महादेव देसाईने आभार व्यक्त करते हुए लिखा है कि आपका (प्रभाशंकर पट्टणीका) मद्यनिषेध-सम्बन्धी पत्र मिल गया है।

२८५. पत्र : डॉ० एम० जयसूर्य नायडूको

सेगाँव, वर्धा
१४ अक्तूबर, १९३७

प्रिय विपथगामी — किन्तु ईमानदार शिष्य,

मुझे मालूम था कि तुम्हें अपनेको सिर्फ जयसूर्य कहलाना अच्छा लगता था, लेकिन महादेवने मुझसे पूछा कि भला बताइए तो कि पत्र-लेखक कौन हो सकता है। वह मुझे छकाने की कोशिश कर रहा था। वह जानता है कि बढ़ती हुई उम्रके साथ मेरी स्मृति कमजोर पड़ती जा रही है, इसीलिए उसने मुझे यह बताने की चुनौती दी कि लेखक कौन है। अन्तिम वाक्य पढ़ा तब याद आया और तब मनमें सोचा कि तुम जयसूर्य कबसे बन गये हो। अब मुझे लगा कि धीरे-धीरे मुझे सब-कुछ याद आ रहा है, और मनमें कहा कि तुम नाइट्सब्रिजमें अपनेको जोशीले नौजवान बतानेवालों के शिष्टमण्डलमें मुझसे मिलने आये थे तब तुमने अपना नाम जयसूर्य लिखकर मेरे पास भेजा था। लेकिन उस अवसरपर तो माताजी[1] ने मुझे दाढ़ी रखनेवाले और अद्भुत आत्मविश्वासी युवकके रूपमें तुम्हारी पहचान पहले ही बता दी थी।

तुम्हारे पत्रसे प्रकट होता है कि बाहरी तौरपर तुम अब भी वैसेके-वैसे ही हो, लेकिन पुराने लोगोंके प्रति अपने उपेक्षा-भावके बावजूद मन-ही-मन तुम उनका सम्मान करते हो, और यह जानते हो कि जिस तरह तुम बचपनके अत्यन्त मूर्खतापूर्ण दौरसे गुजरे बिना आजकी स्थितिमें नहीं पहुँच सकते थे उसी प्रकार हम पुराने लोगोंके योगदानके बिना भी तुम इस हदतक विकास नहीं कर पाते। इसलिए यद्यपि मुझसे तुम्हारा बहुत मतभेद है और इस मतभेदको तुम अपने लिए गर्वकी बात मानते हो, तथापि मैं तुम्हारी तैयार की गई इस रूपरेखाकी उपेक्षा नहीं करने जा रहा हूँ। लेकिन मैं इसे बहुत ध्यानसे पढ़कर ही इसपर अपनी राय दूँगा। तुम्हें जरा धीरजसे काम लेना होगा।

फिलहाल तो इस पत्रके साथ स्वयं तुम्हारे और तुम्हारे परिवारके लिए तुम लोग जितना चाहो या जितनेकी तुम्हें जरूरत हो उतनी सारी शुभकामनाएँ भेज रहा हूँ। श्वेतकेशी भारत कोकिला-सहित पूरे परिवारको ढेर-सा स्नेह।

१. सरोजिनी नायडू।

प्यारेलाल मेरे साथ है — जिस अपरिवर्तित रूपमें तुमने उसे आश्रममें देखा था उसी रूपमें।

पुराना शिक्षक

डॉ० एम० जयसूर्य, एम० डी०
गोपाल क्लिनिक
स्टेशन रोड
हैदराबाद (दक्षिण)

अंग्रेजीकी नकलसे। प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

२८६. पत्र : अमृतकौरको[1]

१४ अक्तूबर, १९३७

मेरी चिन्ता मत करो। भगवान् सबसे बड़ा वैद्य है। वही मुझे राह दिखाता है। यदि वह घातक औषध देता है तो भी अच्छा ही है। तुमने बिक्री अच्छी की।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८२१)से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६९७७ से भी

२८७. टिप्पणी : नरीमान-सरदार विवादपर

[१४ अक्तूबर, १९३७][2]

नरीमान-सरदारके मामलेमें श्री बहादुरजी अपना फैसला[3] लेकर मेरे पास आये हैं, जो साथमें नत्थी है। बहुत सोच-विचार करने के बाद जब मैंने उस काममें उनका सहयोग माँगा, जिसे मैंने लोकहितको देखते हुए अपने हाथमें लिया है, तो वे तुरन्त मान गये।

१. यह अमृतकौरको लिखे मीराबहनके पत्रमें पुनश्चके रूपमें लिखा गया था।

२. यह टिप्पणी १६ अक्तूबरसे पहलेवाले बृहस्पतिवारको लिखी गई थी, जब डी० एन० बहादुरजी सेगाँवमें थे। वह बृहस्पतिवार १४ तारीखको पड़ा था; देखिए पृ० २७५-६।

३. इस फैसलेके अनुसार "के० एफ० नरीमानके विरुद्ध १९३४ में हुए चुनावोंके सिलसिलेमें लगाये गये अभियोग सिद्ध हो गये थे और के० एफ० नरीमान द्वारा वल्लभभाईके खिलाफ लगाये गये अभियोग सिद्ध नहीं हुए थे।"

उन्हें सम्भवतः इस बातका पूरा-पूरा अन्दाज नहीं था कि इस कार्यको करने में कितना श्रम करना पड़ेगा। मैं नहीं जानता कि उनके अमूल्य सहयोगके बिना मेरा क्या हाल होता। हम दोनोंने उनके फैसलेको साथ-साथ पढ़ा और मैंने उसमें जो परिवर्तन सुझाये — जो कि बहुत थोड़े थे — उनको उन्होंने तुरन्त स्वीकार कर लिया। यह फैसला उनका निजी फैसला है और इसके सम्बन्धमें उन्होंने मुझसे कोई सलाह-मशविरा नहीं किया है। लेकिन उन्होंने जो तर्क दिये हैं और जो फैसला दिया है उससे मैं पूर्णतया सहमत हूँ।

लोग देखेंगे कि यह फैसला विशुद्ध रूपसे न्यायिक है। दोनों पक्षोंको साक्षीके बयान और कागजात देखने की पूरी-पूरी सुविधा दी गई थी, उनकी नकल लेने की और गवाहोंसे बहस और जिरह करने की स्वतन्त्रता प्राप्त थी। लेकिन वे लोग कोई जाँच अथवा जिरह नहीं करना चाहते थे और इसकी कोई आवश्यकता भी नहीं थी। हालाँकि ८० गवाह थे और गवाहियाँ भी बहुत ज्यादा थीं, लेकिन साक्ष्यका अधिकांश भाग प्रस्तुत समस्याके सन्दर्भमें असंबद्ध था। श्री नरीमानको ज्यादासे-ज्यादा सुविधा दी गई थी, ताकि अगर उनके पास कोई प्रमाण हो तो उसे वे मेरे सामने पेश कर सकें। उन्होंने गवाहोंके रूपमें जिन लोगोंके नाम मुझे भेजे थे उन्हें मैंने स्वयं पत्र लिखे। मैंने प्रमाणके लिए जो सार्वजनिक अपील की थी उसके उत्तरमें अधिकांश कांग्रेसी विधायकोंने अपने बयान भेजे हैं।[1]

यदि इस सम्बन्धमें मेरा कुछ और कर्त्तव्य न होता तो मेरे लिए कहने को कुछ नहीं रह जाता। लेकिन मुझे जो प्रमाण भेजे गये हैं उनसे ऐसी बातें प्रकाशमें आई हैं जिनकी मुझे चर्चा करनी ही होगी। श्री नरीमानने मुझे अखबारोंकी कतरनें भेजी हैं। उन्हें पढ़कर मुझे दुःख हुआ। इस बातका कहीं कोई प्रमाण नहीं मिलता कि सरदारका कार्य किसी प्रकारके साम्प्रदायिक द्वेषसे प्रेरित था। जिन अखबारोंने ऐसा मत व्यक्त किया है कि श्री नरीमानको साम्प्रदायिक द्वेषवश अस्वीकार किया गया था, उन्होंने बम्बईके सार्वजनिक जीवनका बहुत अनिष्ट किया है। और मुझे खुशी है कि स्वयं श्री नरीमानने ऐसे किसी निष्कर्षको मानने से इनकार कर दिया है।

वास्तवमें सरदारके विरुद्ध नरीमानकी शिकायतें कुल मिलाकर निम्न प्रकार प्रतीत होती हैं: सरदारने नरीमानको ३ मार्चको बताया था कि वे उनके पक्षका समर्थन नहीं करेंगे और उन्होंने समर्थन किया भी नहीं। और यह स्पष्ट है कि जब सरदार-जैसा प्रभावशाली व्यक्ति निष्क्रिय रहे, तो उनके इस रुखका असर नरीमानके हकके खिलाफ पड़ना लाजिमी था। लेकिन इसके लिए सरदारको दोषी नहीं ठहराया जा सकता। मुझे ऐसा लगता है कि श्री नरीमान भूल गये थे कि बम्बई शहर बम्बई प्रेसिडेन्सी नहीं है। और यदि उन्हें सचमुच महाराष्ट्र और कर्नाटकका समर्थन प्राप्त होता तो सरदारकी निष्क्रियताका कोई असर नहीं होता। बेशक, विधायक लोग चाहें तो अब भी श्री खेरसे[2] त्यागपत्र देने के लिए कह सकते हैं और

१. देखिए पृ० ६२-३।
२. बी० जी० खेर।

उनके स्थानपर श्री नरीमानको चुन सकते हैं। यह कहना कि सरदारका प्रभाव इतना जबरदस्त है कि ऐसा परिवर्तन करना सम्भव नहीं होगा, विचारहीनता है। कोई व्यक्ति चाहे कितना ही शक्तिशाली क्यों न हो, लेकिन ९० व्यक्ति बहुत समय तक उससे आतंकित नहीं रह सकते।

मैंने स्थितिका जो विश्लेषण किया है वह यह है कि श्री नरीमानने विधायकों-के ऊपर अपने प्रभावको जरूरतसे ज्यादा आँका था और उन्हें अपनी असफलता पर बहुत गहरी निराशा हुई। उनका विवेक कुंठित हो गया। उन्होंने मेरे सामने जो बयान दिये हैं उनसे भी यही बात प्रमाणित होती है। उनके सलाहकारोंने और अख-बारोंने उनके भ्रमको बनाये रखा। मुझे यह सब लिखते हुए कोई खुशी नहीं हो रही है। लेकिन मैं इसलिए लिख रहा हूँ कि मैं श्री नरीमानका मित्र और शुभ-चिन्तक रहा हूँ और कांग्रेस मन्त्रिमण्डलमें उनके सम्मिलित किये जाने के लिए मैं कुछ हदतक जिम्मेदार था। अतः यदि मेरे जैसा व्यक्ति अपने हृदयकी व्यथा खोल-कर रख दे तो शायद श्री नरीमानकी आँखें खुल जायें।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ३-११-१९३७

२८८. पत्र : एम० विश्वेश्वरय्याको[1]

सेगाँव, वर्धा
१५ अक्तूबर, १९३७

प्रिय सर एम० विश्वेश्वरय्या,

आपकी पुस्तकके लिए धन्यवाद। मैं उसे अपने सामने ही रखे हुए हूँ और अवसर पाते ही उसे पढ़ डालूँगा। यदि मैं आपसे सहमत हो सकूँ तो मेरे लिए इससे बढ़कर प्रसन्नताकी बात और क्या होगी?

उड़ीसाकी बाढ़-समस्याके समाधानका काम हाथमें लेने के लिए धन्यवाद। बेशक इसमें आपको जितना समय लगे उतना समय लीजिए।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ९८३७)से। सौजन्य : मैसूर सरकार

१. यह पत्र १९६९-७० में दिल्लीमें हुई गांधी-दर्शन प्रदर्शनीके मैसूर पण्डालमें प्रदर्शित किया गया था।

२८९. पत्र : नारायण भास्कर खरेको

१५ अक्तूबर, १९३७

प्रिय डॉ० खरे[1],

मेरे विचारमें प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी द्वारा जनरल आवारीको चेतावनी दी जानी चाहिए और यदि वे फिर भी न मानें तो निस्सन्देह उनके विरुद्ध कानूनी कार्रवाई की जानी चाहिए। लेकिन यदि स्वयं आपके मनमें ही कुछ शंका हो तो मेरे कथन को अधिकृत न माना जाये। इस सिलसिलेमें एकमात्र अधिकरण तो कार्य-समिति या अध्यक्ष है।

आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
हितवाद, २-४-१९३९

२९०. पत्र : जगन्नाथ दासको

१५ अक्तूबर, १९३७

प्रिय जगन्नाथ दास,

काकासाहबने मुझे आपका १५ सितम्बरका पत्र भेजा है। मेरे पास वह १२ अक्तूबरको आ पाया। इसे पढ़कर दुःख हुआ। आपको इस बातका कभी कोई आश्वासन नहीं दिया गया था कि उत्तरसे[2] और भी धन प्राप्त होगा। तथापि ५,००० (पाँच हजार) रुपये आपके नाम भेज दिये गये हैं। राघवनसे इस कार्यके लिए पैसा जुटाने की अपेक्षा कभी नहीं की गई; वे तो सिर्फ व्यवस्थाकी देखरेख करनेवाले थे। मगर मैं इस बातको ठीक नहीं मानता कि इस कारण वे किश्तीको मँझधारमें छोड़ सकते हैं। वे शिकायत कर सकते हैं, असन्तोष व्यक्त कर सकते हैं, आप तथा सहयोगियों पर जिम्मेदारी डाल सकते हैं और आपसे साधन जुटाने के लिए कह सकते हैं। आप चाहें तो, बेशक, मुझे तंग कर सकते हैं, जमनालालजी और राजाजीको परेशान कर सकते हैं। चूंकि उन्होंने अपने ऊपर एक बहुत बड़ी जिम्मेदारी ले ली है, इस कारण

१. मध्य प्रान्तके तत्कालीन मुख्य मन्त्री।

२. दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभाके कार्यके लिए; देखिए पृ० ७८।

वे अपने पुराने दायित्वोंको पूरा करने के अपने कर्त्तव्यसे पीछे नहीं हट सकते। केवल एक जुआरी ही वर्त्तमान दायित्वको पूरा किये बिना और इस बातपर विचार किये बिना कि वह पुराने दायित्वोंको कैसे पूरा करेगा नये दायित्वोंको अपने ऊपर ले सकता है। सर आर० सी० ऐसे व्यक्ति नहीं हैं। यदि हम यह सोचते हैं कि पुराने कामसे बचने की खातिर वे नये कामका बहाना बनायेंगे तो हम उनके साथ अन्याय करेंगे। उनसे मिलने के बजाय उन्हें पत्र लिखें। मैं खुद भी उन्हें लिख रहा हूँ। आप चाहें तो यह पत्र उन्हें दिखला सकते हैं।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७७०८) से।

२९१. पत्र : नारणदास गांधीको

१५ अक्तूबर, १९३७

चि० नारणदास,

मैंने तुम्हारे आँकड़ोंका उपयोग किया है। तुम अच्छी सेवा कर रहे हो। लेकिन तुम्हें बहुत आगे जाना है। उद्योगके द्वारा बुद्धिका सच्चा विकास किया जा सकता है, इस प्रश्नपर विचार करना।

साथमें कुमीका[१] पत्र है। इसके बारेमें तुम्हारा क्या विचार है? यदि तुम उसे नहीं रख सकते तो बेशक मत रखना। तुम्हारी प्रगतिमें उसे बाधा नहीं बनना चाहिए। उसे पैसा तो मुझे देना ही पड़ेगा, ऐसा मुझे लगता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२)से। सी० डब्ल्यू० ८५४० से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

१. कुमीबहन टी० मणियार, हरिलाल गांधीकी साली।

२९२. पत्र : द० बा० कालेलकरको

१५ अक्तूबर, १९३७

चि० काका,

जमनालालजीके साथ जरूर बात करना। यदि वे जायें तो यह बहुत अच्छी बात होगी। क्या वे जायेंगे? जा सकेंगे? कब जायेंगे?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७७०६)से।

२९३. पत्र : शरतचन्द्र बोसको

[१६ अक्तूबर, १९३७ के पूर्व][1]

आपका स्नेहमय पत्र मिला। ईश्वरकी इच्छा हुई तो निस्सन्देह मैं कलकत्ता आ रहा हूँ। मेरा स्वास्थ्य अभी इस योग्य नहीं कि मैं सभाओं या चर्चाओंमें भाग ले सकूँ। मुझमें अभी सीमित शक्ति ही है, जिसका उपयोग मैं वहाँ कैदियोंके हितमें और कार्य-समितिकी बैठकोंमें उठनेवाले प्रश्नोंके सम्बन्धमें ही करना चाहूँगा। रही बात मेरी, सो मैं प्रसन्नतासे आपका आतिथ्य स्वीकार करूँगा और आपको मुझे बहुत सारे मुलाकातियों और निरर्थक भेंटोंसे बचाना होगा। कृपया सार्वजनिक प्रदर्शनों और सभाओंसे मेरी रक्षा कीजिएगा।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १८-१०-१९३७

१. यह रिपोर्ट "खरसियांग, १६ अक्तूबर" की तिथि-पंक्तिके अन्तर्गत प्रकाशित हुई थी।

२९४. टिप्पणियाँ

खादी-कार्यके लिए दान

डॉ० पट्टाभि लिखते हैं:

> **अनन्तपुर जिले (मद्रास प्रान्त-आन्ध्र)के ताड़पत्री गाँवके मूल लक्ष्मी-नारायणस्वामिगारुने खादी-कार्यके लिए ५,००० रुपयेका दान दिया है, और अपने जिलेमें रचनात्मक कार्यके लिए ४५,००० रुपयेकी रकम ३ प्रतिशत ब्याजपर उधार देने का भी वचन दिया है।**

मैं दाताको उनके इस दानके लिए तथा जो रकम उधार देने का उन्होंने वचन दिया है उसके लिए भी बधाई देता हूँ। इसमें मुझे कोई सन्देह नहीं कि अपने पैसेका इससे अच्छा उपयोग वे नहीं कर सकते थे। मैं आशा करता हूँ कि यह जिला इस दानसे और उधारकी रकमसे पूरा-पूरा लाभ उठायेगा, और कितना लाभ मिलेगा, यह बात स्थानीय कार्यकर्त्ताओंपर और खादीको प्राप्त होनेवाले स्थानीय संरक्षण पर निर्भर होगी।

रोमन कैथलिक और मद्य-निषेध

कुछ दिन पूर्व इस पत्रमें रोमन कैथलिक लोगोंके विषयमें श्री फिलिपकी कुछ उक्तियाँ प्रकाशित हुई थीं।[1] लाहौरके श्री एफ० ए० प्लेअरने उन उक्तियोंपर आपत्ति उठाई है। वे लिखते हैं कि रोमन कैथलिक पादरी तो अति प्राचीन कालसे मद्य-निषेधका उपदेश देते आ रहे हैं। अपने पत्रके अन्तमें वे लिखते हैं: "हम सभी रोमन कैथलिक लोग आपके मद्य-निषेधके आन्दोलनसे सहमत हैं, और उसमें हार्दिक समर्थन देते हैं।"

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १६-१०-१९३७

१. देखिए पृ० १३१-३३।

२९५. कुछ आलोचनाओंका जवाब

मेरी प्राथमिक शिक्षाकी योजनापर एक उच्च शिक्षाधिकारी ने हमारे एक मित्र द्वारा अपनी विस्तृत और विचारपूर्ण आलोचना भेजी है। वे अपना नाम प्रकट नहीं करना चाहते। स्थानाभावके कारण मैं उनकी सारी दलीलें नहीं दे सकता, और न उनमें कोई ऐसी नई बात ही है। फिर भी और नहीं तो लेखकने इस पत्रपर जो परिश्रम किया है उसीकी खातिर, उन्हें जवाब तो देना ही चाहिए।

लेखकने अपने शब्दोंमें मेरी तजवीजोंका आशय इस प्रकार दिया है:

(१) प्राथमिक शिक्षाका प्रारम्भ और अन्त दस्तकारियों और उद्योगोंकी तालीमके साथ हो, और सामान्य जानकारीकी दृष्टिसे जो-कुछ भी सिखाने-पढ़ाने की जरूरत हो वह सहायक शिक्षाके रूपमें शुरू-शुरूमें बता दिया जाये, और लिखाई-पढ़ाई द्वारा इतिहास, भूगोल और अंकगणित-जैसे विषयोंकी विधिवत पढ़ाई बिलकुल आखिरमें हो।

(२) प्राथमिक शिक्षा शुरूसे ही स्वावलम्बी होनी चाहिए और यदि राज्य स्कूलोंमें बच्चोंकी बनाई चीजोंको लेकर जनताको बेच दिया करे, तो प्राथमिक शिक्षा स्वावलम्बी हो सकती है—और उसे होना चाहिए।

(३) प्राथमिक शिक्षामें वह सब पढ़ाई हो जाये जितनी मैट्रिकतक आज होती है—बेशक अंग्रेजीको छोड़कर।

(४) प्रोफेसर के० टी० शाहकी इस योजनाकी अच्छी तरह जाँच की जाये कि देशके नवयुवक और युवतियाँ प्राथमिक शालाओंमें लाजिमी तौरपर आकर पढ़ायें। यदि सम्भव हो तो इसपर अमल भी किया जाये।[1]

इसके फौरन बाद ही लेखकने लिखा है:

यदि हम उपर्युक्त कार्यक्रमका विश्लेषण करेंगे तो यह दिखाई देगा कि इसकी मूलभूत कल्पनाएँ कुछ अंशोंमें मध्य कालीन हैं, और कहीं-कहीं तो ऐसी मान्यताओंपर आधारित हैं जो बुद्धिकी कसौटीपर टिक नहीं सकतीं। शायद संख्या (३)में सुझाया गया स्तर बहुत ऊँचा होगा।

अच्छा होता अगर मेरे सुझावोंका मतलब अपने शब्दोंमें देने के बजाय वे मेरे ही शब्दोंको उद्धृत कर देते। क्योंकि सं० (१)में जितनी भी बातें कही गई हैं, उनका सचाईसे कोई सम्बन्ध नहीं है। मेरा कहना यह तो हरगिज नहीं है कि शिक्षाका आरम्भ दस्तकारियोंसे किया जाये और अन्य बातें गौण रूपमें सहायक विषयोंके तौर-

१. प्रोफेसर के० टी० शाहका लेख **हरिजन**, ३१-७-१९३७ के अंकमें छपा था।

पर सिखाई जायें। इसके विपरीत, मैंने तो यह कहा है कि विद्यार्थीकी प्रायः सारी सामान्य पढ़ाई दस्तकारियोंके जरिये और दस्तकारियोंमें उनकी प्रगतिके साथ-साथ ही हो। लेखकके शब्दोंसे जो भाव निकलता है वह और यह बिलकुल अलग-अलग चीजें हैं। मुझे पता नहीं कि मध्य युगमें क्या होता था। हाँ, मैं यह जरूर जानता हूँ कि मध्य या किसी भी युगमें यह उद्देश्य तो कभी नहीं रहा है कि दस्तकारियोंकी सहायतासे मनुष्यका पूर्ण विकास किया जाये। यह कल्पना सर्वथा मौलिक है। अगर यह गलत भी साबित हो तो भी उसकी मौलिकतामें कोई अन्तर नहीं पड़ता। और जबतक हम किसी नई कल्पनाको अच्छी तरह आजमा नहीं लेते, उसपर बिलकुल सीधा आक्रमण करना उचित नहीं है। किसी चीजको आजमाने से पहले उसे असम्भव बना देता कोई दलील नहीं है।

मैंने यह भी नहीं कहा है कि लेखन और पठनके द्वारा नियमित पढ़ाई बिलकुल आखिरमें की जाये। इसके विपरीत, असलमें सच्ची पढ़ाई तो शुरू-शुरूमें ही आ जाती है। वस्तुतः वह सामान्य शिक्षणका एक अभिन्न अंग है। हाँ, मैंने यह तो जरूर कहा है और फिर कहता हूँ कि वाचन कुछ देरसे सिखाया जाये और लेखन सबसे अन्तमें। पर यह सब क्रियाएँ पहले वर्षके अन्दर समाप्त कर देनी चाहिए, जिससे मेरी कल्पनाकी पाठशालामें सात सालका बच्चा, वर्तमान प्राथमिक शालाओंमें साधारण लड़के-लड़कियोंको एक सालमें जितना सामान्य ज्ञान होता, उससे कहीं अधिक प्राप्त कर लेगा। वह सही-सही पढ़ेगा और आज बच्चे आम तौरसे जैसे टेढ़े-मेढ़े और भद्दे अक्षर लिखते हैं उसके बजाय साफ-सुन्दर अक्षर लिखेगा। वह मामूली जोड़बाकी तथा पहाड़े भी सीख लेगा। और यह सब वह अपनी रुचिकी एक उत्पादक दस्तकारी — मसलन कताई — के जरिये और उसके साथ-साथ सीख लेगा।

दूसरा अनुच्छेद भी पहलेकी ही तरह भद्दे ढंगसे लिखा गया है। मैंने दावा तो यह किया है कि दस्तकारियोंकी सहायतासे जब शिक्षा दी जायेगी तो मेरी बताई कुल अवधिमें, अर्थात् सात वर्षमें, उसे स्वावलम्बी हो जाना चाहिए। मैंने यह साफ कह दिया है कि पहले दो वर्षमें तो उसमें कुछ अंशोंमें नुकसान भी होगा।

मध्यकाल भले ही बुरा हो, पर मैं किसी चीजकी महज इसलिए निन्दा करनेके लिए तैयार नहीं हूँ कि वह मध्यकालकी है। निःसन्देह चरखा एक मध्य-कालीन चीज है। पर आज तो वह वर्तमान जीवनमें अपना स्थान पा चुका है। यद्यपि वस्तु तो वही है किन्तु एक समय ईस्ट इंडिया कम्पनीके आगमनके बाद जहाँ वह गुलामीका चिह्न था, वहाँ आज वह स्वतन्त्रता और एकताका प्रतीक बन गया है। नवीन भारतको आज उसके अन्दर वे गहन और सच्चे रहस्य नजर आने लग गये हैं जिनकी कल्पना हमारे बुजुर्गोंको सपनेमें भी नहीं होगी। इसी प्रकार ये हस्तशिल्प भी भले ही किसी समय शोषक व्यापारिक पेढ़ियों द्वारा कराये जानेवाले श्रमके प्रतीक रहे हों, आज उन्हें सम्पूर्ण और सच्चेसे-सच्चे अर्थमें शिक्षाका प्रतीक और वाहन बन जाना चाहिए। अगर मन्त्रियोंके अन्दर पर्याप्त साहस और सूझबूझ होगी, तो उच्च

शिक्षाधिकारियों तथा अन्य लोगों द्वारा, निस्सन्देह सद्हेतुसे प्रेरित होकर, की कई आलोचनाके बावजूद वे निश्चय ही इस योजनाको कार्यमें परिणत करके देखेंगे — विशेषकर इसलिए कि इस तरहकी आलोचना काल्पनिक आधारपर खड़ी है।

यद्यपि लेखकने प्रोफेसर के० टी० शाह द्वारा सुझाई हुई अनिवार्य सेवाकी योजनाकी व्यावहारिकताको कुछ अंशमें स्वीकार करने का सौजन्य बताया है, किन्तु आगे चलकर उन्हें इसपर अफसोस होता है और कहते हैं:

> **देशके नवयुवकों और युवतियोंको पाठशालाओंमें आकर पढ़ाने के लिए मजबूर करने की बात तो अत्याचारपूर्ण मालूम होती है। पाठशालाओंमें, जहाँ छोटे-छोटे बच्चे एकत्र होते हैं, ऐसे स्त्री-पुरुषोंको ही होना चाहिए जिन्होंने, इस संसारमें जिस हदतक स्वार्पण सम्भव है, उस हदतक अपनेको शिक्षण-कार्यके लिए अर्पित कर दिया हो और जो पाठशालाओंमें उमंग और उत्साहका वातावरण उत्पन्न कर सकें। हमने अपने देशके युवकों और युवतियोंपर अबतक जरूरतसे ज्यादा प्रयोग किये हैं। पर यह तो एक ऐसा प्रयोग है जिसका इतना बड़ा अनर्थकारी परिणाम होगा कि उससे हम कमसे-कम आधी शताब्दीतक उबर नहीं पायेंगे। इस सबके पीछे कल्पना यह रही है कि अध्यापन एक ऐसी कला है जिसके लिए किसी प्रकार के प्रशिक्षणकी जरूरत नहीं है और हरएक आदमी जन्मजात शिक्षक होता है। बड़े आश्चर्यकी बात है कि श्री के० टी० शाह-जैसे विद्वान्के दिमागमें कैसे यह बात बैठ गई! यह तो एक शुद्ध सनक है और इसपर कहीं अमल होने लगा तो इसके भयंकर दुष्परिणाम निकलेंगे। और फिर हर शिक्षक बच्चोंको दस्तकारी आदिकी शिक्षा कैसे देगा?**

प्रोफेसर शाह अपनी योजनाका बचाव करने में पर्याप्त समर्थ हैं। पर मैं लेखक को याद दिला देना चाहता हूँ कि वर्त्तमान शिक्षक स्वयंसेवक नहीं हैं। वे भी (शुद्ध अर्थमें) किरायेपर अर्थात् रोटीके लिए काम कर रहे हैं। प्रोफेसर शाह अपनी योजनामें यह मानकर अवश्य चले हैं कि जो शिक्षक नियुक्त किये जायेंगे उनमें अपने देशके लिए प्रेम, स्वार्थत्याग की भावना, कुछ सुसंस्कार और एकाध दस्तकारीका ज्ञान भी होगा। उनकी कल्पनामें सार है; वह व्यावहारिक है और बहुत ध्यान देने योग्य है। अगर हम इस बात की राह देखते रहें कि हमें जन्मजात अध्यापक मिलें तब तो कयामतके दिनतक ठहरना पड़ेगा। मैं यह स्वीकार करता हूँ कि हमें बड़े पैमानेपर शिक्षकोंको तैयार करना पड़ेगा — और सो भी थोड़ेसे-थोड़े समयमें। यह तबतक सम्भव नहीं है जबतक कि देशके मौजूदा शिक्षित नौजवानों और बहनोंकी सेवाएँ इस कामके लिए प्रेमपूर्वक प्राप्त नहीं होतीं। जबतक इस कामके लिए वे स्वेच्छापूर्वक आगे नहीं आते तबतक यह नहीं होगा। सविनय अवज्ञा आन्दोलनमें उन्होंने, चाहे जितने सीमित प्रमाणमें, इसी प्रकार स्वेच्छासे सहयोग दिया था। अपनी गुजरके लिए थोड़ा-सा पारिश्रमिक लेकर इस रचनात्मक सेवामें क्या वे योग नहीं देंगे?

अब लेखक पूछते हैं :

(१) जब छोटे-छोटे बच्चे काम करेंगे, तो क्या कच्चे मालकी बरबादी नहीं होगी ?

(२) इन चीजोंकी बिक्री क्या कोई केन्द्रीय संगठन करेगा ? उसका खर्च कहाँसे आयेगा ?

(३) क्या लोगोंको ये चीजें खरीदने पर मजबूर किया जायेगा ?

(४) और उन जातियोंकी क्या दशा होगी जो आजकल ये चीजें बना रही हैं। उनपर इस पद्धतिकी क्या प्रतिक्रिया होगी ?

मेरे उत्तर ये हैं :

(१) कुछ बरबादी तो जरूर होगी, पर पहले ही वर्षके अन्तमें प्रत्येक विद्यार्थीके जरिये कुछ लाभ भी जरूर होगा।

(२) तैयार चीजोंमें से राज्य अपनी जरूरतोंकी पूर्तिके लिए खुद ही काफी हिस्सा रख लेगा।

(३) देशके बच्चों द्वारा बनाई चीजें खरीदने के लिए किसीको मजबूर नहीं किया जायेगा। लेकिन देशके लोगोंसे यह अपेक्षा जरूर रखी जायेगी कि वे बच्चों द्वारा बनाई गई अपनी जरूरतकी इन चीजोंको अभिमानके साथ और देश-प्रेमकी भावनासे खरीदें।

(४) गाँवोंकी बनी चीजों और इन दस्तकारियोंमें तो मुश्किलसे कोई होड़ होगी। फिर, इस बातका खास तौरपर ध्यान रखा जायेगा कि इन पाठशालाओंमें ऐसी चीजें नहीं बनाई जायें जिससे इनकी गाँवमें बनाई जानेवाली चीजोंके साथ कोई अनुचित होड़ हो। मसलन, खादी, गाँवका बना कागज, खजूरका गुड़ आदि चीजोंमें किसी प्रकारकी प्रतिस्पर्धाकी सम्भावना है ही नहीं।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १६-१०-१९३७

२९६. मद्य-निषेध और शिक्षा

श्रीयुत जे० जी० गिलसन बालासोरके क्रिश्चियन हाई ऐण्ड टेक्निकल स्कूलके मन्त्री तथा इण्डस्ट्रियल आर्ट्स ऐण्ड वोकेशनल एजुकेशन फॉर ए० बी० बी० ओ० मिशनके निदेशक हैं। "गाँवोंमें गन्दे पानी, मलमूत्र आदिके निकासकी व्यवस्था" पर कुछ मूल्यवान साहित्य भेजते हुए उन्होंने लिखा है:[1]

. . . सामान्य रूपसे मैं आपके निष्कर्षोंसे काफी हदतक सहमत हूँ। शारीरिक कार्य यदि ठीक तरहसे कराया जाये तो वह बौद्धिक विकासका सर्वश्रेष्ठ साधन है, यह बात आपने जैसी स्पष्ट रीतिसे बताई है वह मुझे विशेष रूपसे पसन्द आया। मुझे शिक्षकोंको यह विश्वास दिलाना बहुत कठिन लगा है कि पाठ्य पुस्तकों, व्याख्यानों तथा परीक्षाके लिए पाठ रटने के अलावा कोई और भी चीज इस दिशामें सहायक हो सकती है। आपने यह बात जिस तरह समझाई है उससे यह सबको स्पष्ट हो जानी चाहिए।

दूसरी ओर मैं आपकी इस बातसे सहमत नहीं हो सकता कि शिक्षण-संस्थाएँ विद्यार्थियोंके उद्यमसे स्वावलम्बी बन सकती हैं या बननी चाहिए। . . . यदि कुशल व्यक्तियोंकी देख-रेखमें विद्यार्थियोंको प्रति-दिन चार घंटे ऐसे काममें लगाये रखा जाये तो वे निस्सन्देह अपना और शायद देखरेख करनेवाले लोगोंका खर्च भी निकाल सकते हैं, किन्तु ऐसे कार्यका शिक्षाकी दृष्टिसे कोई महत्त्व नहीं है। उससे तो उनकी बुद्धि वैसे ही कुण्ठित हो जायेगी जैसे लगातार पाठ्य पुस्तकें पढ़ने अथवा व्याख्यान सुनने से हो जाती है।

यदि आप यह चाहते हैं कि बच्चोंको कार्य द्वारा शिक्षा दी जाये तो उन्हें भिन्न-भिन्न प्रकारके कार्य दिये जाने चाहिए और एक कामको अच्छी तरह सीख लेने के बाद उन्हें दूसरा काम दिया जाना चाहिए। . . . किन्तु उनके उद्यमसे तैयार की गई वस्तुओंसे शालाका खर्च निकल आये, यह मुझे सम्भव नहीं दीखता। हाँ, उनसे कुछ सहायता मिल सकती है।

लेकिन मुझे कोई कारण दिखाई नहीं देता कि पाठशालाओंसे आत्म-निर्भर होने की आशा क्यों की जाये। बच्चोंकी शिक्षा तथा वयस्कोंकी शिक्षा जारी रखना समाजकी जिम्मेदारी है और मुझे लगता है कि भारतकी वर्त्तमान स्थितिको देखते हुए सार्वजनिक धन-राशिपर इसका पहला और सबसे ज्यादा अधिकार होना चाहिए।

१. यहाँ केवल कुछ अंशोंका ही अनुवाद दिया जा रहा है।

यह बड़े दुर्भाग्यकी बात है कि चर्चामें मद्य-निषेध तथा शिक्षा दोनोंको एक साथ रख दिया गया है और उसमें मद्य-निषेधके सम्बन्धमें अमेरिकाके अनुभवकी बात इस तरह उठाई गई है जिससे साफ पता चलता है कि लोग वहाँकी परिस्थितियोंसे पूरी तरह अवगत नहीं हैं। . . . यदि अमेरिकाका उदाहरण दिया जाता है तो यह भी कहना होगा कि अमेरिकामें मद्य-निषेधके दौरान शिक्षाके लिए धनकी कोई कमी नहीं थी, बल्कि उस अवधिमें पाठशालाओंमें खूब तेजीके साथ सुधार हुआ।

जहाँतक आम जनताकी दशा सुधारने का प्रश्न है, अमेरिकामें मद्य-निषेध का प्रयोग असफल नहीं हुआ। अलबत्ता उन बड़े-बड़े शहरोंमें, जहाँ ज्यादातर यूरोपमें जन्मे लोग रहते हैं और जहाँ लोकमतके कारण इस कानूनको लागू नहीं किया जा सका, मद्य-निषेध सफल नहीं हुआ। शहरोंसे बाहरका विशाल अमेरिकी जन-समुदाय बिलकुल मद्यपान नहीं करता है और वहाँ मद्यपानको भारतके समान ही सामाजिक तथा नैतिक बुराई समझा जाता है, अथवा यों कहिए कि कमसे-कम १९३३ तक ऐसा समझा जाता था। पिछले चार वर्षोंके दौरान इस मामलेमें जितनी अति की गई उसके खिलाफ अब प्रतिक्रिया आरम्भ हो चुकी है।

अमेरिकामें मद्य-निषेधकी राजनीतिक विफलताका कारण बड़े-बड़े नगरोंकी राजनीतिक शक्ति थी और यह बात थी कि जहाँ शराबकी बिक्रीसे लाभ उठाने की आशा रखनेवाले मद्य-निर्माता तथा अन्य लोग अखबारी प्रचारपर लाखों-करोड़ों डालर खर्च करने को तैयार थे, आम लोग, जिनके लिए अब यह समस्या अत्यन्त गम्भीर नहीं रह गई थी, इसकी ओरसे उदासीन थे। यह तो शहरके धनवानों द्वारा देशका शोषण करने का उदाहरण है। भारतमें मद्य-निषेधको सफल बनाने में आपको भी इसी समस्याका सामना करना पड़ेगा। . . .

यदि किसी उद्योगके माध्यमसे दी जानेवाली शिक्षाके द्वारा विद्यार्थीके मस्तिष्कका भी विकास करना है तो उस शिक्षाके स्वावलम्बी बनाये जा सकने के बारेमें श्री विल्सनके मनमें जो शंका है, उसपर मुझे कोई आश्चर्य नहीं होता। इस समस्यापर मैंने इसी अंकमें अन्यत्र विचार किया है।[1] अमेरिकाके मद्य-निषेध-विषयके अनुभवके विषयमें उन्होंने जो-कुछ बताया है उसे पाठक रुचिपूर्वक पढ़ेंगे।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १६-१०-१९३७

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२९७. समर्थनमें

बच्चेको शास्त्रीय और संस्कारी ढंगसे किसी उपयोगी दस्तकारीकी शिक्षा देने तथा जिस क्षणसे उसका शिक्षण आरम्भ हो उसी क्षणसे उसे किसी वस्तुका सृजन करने योग्य बनाने के आपके सुझावसे मैं सहमत ही नहीं हूँ, बल्कि विनम्र रीतिसे उसका समर्थन भी करता हूँ। निस्सन्देह, यह एक क्रान्तिकारी सुझाव है, किन्तु मैं इससे पूर्णतः सहमत हूँ। व्यक्ति तथा राष्ट्र दोनोंके लिए यह नैतिक, सांस्कारिक तथा आर्थिक सभी दृष्टियोंसे प्रचुर लाभदायक होगा। इससे बच्चे न केवल शरीर-श्रमकी गरिमा समझने लगेंगे, वरन उन्हें स्वावलम्बनकी भी शिक्षा मिलेगी और उनके अन्दर सृजनके महत्त्वका बोध जगेगा। हमारा ध्येय बच्चोंकी बौद्धिक, शारीरिक, नैतिक तथा औद्योगिक आवश्यकताओंकी पूर्ति तथा इन सब दृष्टियोंसे उनकी शक्तिका विकास करना होना चाहिए। उद्योगकी शिक्षासे बच्चे उत्पादनकी सभी क्रियाओंके सामान्य सिद्धान्त सीखेंगे, और साथ ही यह चीज बच्चों या युवाओंको सभी उद्योगोंसे सम्बन्धित सरलतम औजारोंके उपयोगका व्यावहारिक प्रशिक्षण देगी। हमारा आदर्श यह होना चाहिए कि नई पीढ़ीको पढ़ने-लिखने के साथ-साथ किसी उत्पादक कार्यकी भी शिक्षा दी जाये। इसका मतलब है सामान्य शिक्षाके साथ शारीरिक कार्यका जोड़ दिया जाना और इसका लक्ष्य यह है कि जिसके साथ शारीरिक कार्यका मेल बैठे ऐसे उद्योग की सभी शाखाओंका साधारण ज्ञान बच्चोंको दिया जाये। बौद्धिक तथा नैतिक प्रयासके साथ संयोजित शरीर-श्रम, यह हमारी शिक्षाकी प्रमुख प्रवृत्ति होनी चाहिए। बौद्धिक कार्य तथा शारीरिक कार्यका एक-दूसरेसे अलगाव न हो।

अपनी प्राथमिक शिक्षा-प्रणालीमें हमें निम्न विषयोंका समावेश करना चाहिए :

१. मातृभाषा
२. अंकगणित
३. प्राकृतिक विज्ञान
४. समाजशास्त्र
५. भूगोल तथा इतिहास
६. शरीर-श्रम तथा उद्योग-शिल्पका काम
७. व्यायाम

८. कला तथा संगीत

९. हिन्दुस्तानी

लेकिन यहाँ सवाल यह उठता है कि बच्चेकी शिक्षा किस उम्रमें शुरू होनी चाहिए। अगर ५-६ सालकी उम्रमें शुरू की जाये तो क्या इस उम्रमें उसे कोई उपयोगी दस्तकारी सिखाना शुरू किया जा सकता है? उस दस्तकारीकी शिक्षा देने के खर्चकी व्यवस्था कैसे की जायेगी? यह चीज साक्षरताके प्रचारसे अधिक आसान और कम व्ययसाध्य नहीं होगी। मैं तो ८-१० सालकी उम्रमें दस्तकारीकी शिक्षा देना आरम्भ करना चाहूँगा, क्योंकि औजारोंका उपयोग करने के लिए हाथमें शक्ति और ठीक पकड़ होनी चाहिए। किन्तु प्राथमिक शिक्षा पाँच-छः सालकी उम्रसे तो आरम्भ ही कर दी जानी चाहिए। बच्चेसे इससे अधिक प्रतीक्षा नहीं करवाई जा सकती। हम बच्चेको उद्योगकी जो शिक्षा देने का इरादा रखते हैं उसके अतिरिक्त उसे मैट्रिकुलेशन स्तरका ज्ञान भी दिया जाये, इसके लिए दस सालका पाठ्यक्रम रखना आवश्यक है। किन्तु इन बच्चों द्वारा — खासकर प्रारम्भिक अवस्थामें — तैयार की गई चीजोंके आर्थिक मूल्यमें मुझे शंका है। जिस देशमें स्वतन्त्र व्यापार चलता हो और जहाँ तरह-तरहके नितनवीन फैशन निकलते रहते हों वहाँ ऐसी चीजोंकी — विशेष रूपसे जब वे टिकाऊ और सफाईसे बनी हुई न हों — बिक्री नहीं हो सकती। यदि राज्य उन्हें खरीद ले अथवा वह ऐसी पाठशालाओंको जो सेवा-सहायता दे उसके एवजमें उन्हें ले ले तो वह उनका करेगी क्या? इस पद्धतिको अपनाने की अपेक्षा यह कहीं अधिक अच्छा होगा कि राज्य बच्चोंकी शिक्षापर सीधे खर्च करे। कहने की जरूरत नहीं कि बड़ी उम्र — जैसे कि १२ से १६ के बीच की उम्र — के बच्चों द्वारा बनाई गई चीजोंकी खपत हो सकती है और इस तरह ये चीजें आमदनीका एक जरिया बन सकती हैं।

मैं साक्षरताकी समस्याका विचार कुछ दूसरे ढंगसे करना चाहूँगा और उसके लिए कर लगाने तथा आवश्यक राशि खर्च करने में कोई संकोच नहीं करूँगा।

उपयोगी दस्तकारीकी परिकल्पनाको प्राथमिक शिक्षाकी आगेकी अवस्था (या माध्यमिक शिक्षाकी अवस्था) में विकसित किया जा सकता है। इस शिक्षाके दौरान जो उत्पादन हो उसकी कीमतसे इसे प्रारम्भमें कमसे-कम अंशतः और अनुभवके बाद यदि सम्भव हो तो पूर्णतः स्वावलम्बी बनाने का प्रयत्न किया जाना चाहिए। एक ही खतरेकी ओरसे सावधान रहना होगा; वह यह कि कहीं ऐसा न हो कि शरीर, मन और आत्माके संस्कारकी शिक्षा आर्थिक हेतु तथा पाठशालाकी आर्थिक व्यवस्थाके समक्ष सर्वथा गौण हो जाये।

आपके इस सुझावसे भी मैं सहमत हूँ कि प्राथमिक शिक्षाको, अंग्रेजीको छोड़कर और (मैं अपनी ओरसे कहूँगा) हिन्दुस्तानीको शामिल करके, मैट्रि-कुलेशनके स्तरका बना देना चाहिए। इसका मतलब यह हुआ कि आप प्राथमिक शिक्षामें माध्यमिक शिक्षाको भी शामिल कर रहे हैं। आपका विचार स्कूली शिक्षाको — समझ लीजिए कि दस वर्षकी स्कूली शिक्षाको — एक सम्पूर्ण घटक बनाने का है। अपनी ओरसे इतना और कहूँगा कि यह शिक्षा मातृभाषाके अतिरिक्त और किसी भाषाके माध्यमसे नहीं दी जानी चाहिए। इससे बच्चे का मन मुक्त हो जायेगा और उसमें ज्ञान तथा जीवनकी समस्याओंके प्रति रुचि पैदा होगी और उसे सृजननात्मक शक्ति तथा दृष्टि प्राप्त होगी।

मैं यह स्वीकार करता हूँ कि मध्य युगमें शिक्षा मुख्यतः स्वावलम्बी थी, और यदि हमारी सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक व्यवस्था और दृष्टि मध्य युगीन होती, अर्थात् वर्ग तथा वर्णपर आधारित अर्थ-व्यवस्था, समाज-व्यवस्था और राज्य-व्यवस्थाके पुराने एवं संकुचित मूल्योंमें हमारा विश्वास होता, तो हम अपनी शिक्षाको सामान्यतः स्वावलम्बी बना सकते थे। लेकिन आज जब हममें लोकतान्त्रिक, राष्ट्रवादी और समाजवादी जीवन-दृष्टि व्याप्त है, शिक्षा स्वावलम्बी नहीं हो सकती। आज समाजमें जिसके पास अपने आदेशों का पालन करवाने की शक्ति है और कोई काम करवाने के लिए आवश्यक साधन हैं वह एकमात्र संगठित सत्ता राज्य ही है। इसलिए उसीको यह कार्य अपने हाथमें लेना है। जाति, वर्ग, धर्मसंघ आदि सभी पुराने शक्ति-समूह अपनी शक्ति, सत्ता और साधन खो चुके हैं और पुराने समयमें जिस व्यापक अर्थमें इनका अस्तित्व था उस अर्थमें इनका कोई अस्तित्व नहीं रह गया है। उनमें लोगोंकी भी आस्था नहीं रह गई है। सारी सामाजिक शक्ति राजनीतिक संगठनके हाथोंमें सिमट आई है। यही संगठन आज आर्थिक और सामाजिक शक्तिका भी स्वामी है। भारतमें भी यही स्थिति है। इसलिए दो आदर्श — जिनमें से एक मध्य युगीन और दूसरा आधुनिक है, एकका आधार विविधता तथा अलग-अलग पेशे हैं तो दूसरेका एकत्व और प्रदेश हैं — साथ-साथ नहीं चल सकते हैं।

अतीतमें सार्वत्रिक शिक्षा नहीं थी, लोक-शासनवाला एकतन्त्री राज्य नहीं था, समतावादी राष्ट्रीय दृष्टि नहीं थी।

शिक्षा-कार्यके लिए युवा वर्गकी सेवा अनिवार्य रूपसे ली जाये, यह अब कोई नया विचार नहीं रह गया है और इसे कार्य-रूप दिया जाना चाहिए। कांग्रेस तथा उसके कांग्रेसी प्रान्तोंके मन्त्री अपने अधिकारकी रूसे देशके बौद्धिक वर्गसे अनुरोध करके देखें और जिनके हृदयमें जनताको शिक्षित देखने की लालसा

हैं उनका आह्वान करें कि साक्षरता, संस्कार और शिक्षाके प्रचारके निमित्त वे नयी सरकारोंकी सहायताके लिए आगे आयें। इससे जनसाधारणके साथ मात्र आर्थिक तथा राजनीतिक आधारपर ही नहीं, बल्कि एक नये आधारपर सम्पर्क स्थापित होगा। इससे जनताकी सामूहिक शक्ति और बुद्धिको जाग्रत, संगठित और व्यवस्थित करने के उच्चतर लक्ष्य की भी सिद्धि होगी।

किसी उद्योगके आधारपर स्थित स्वावलम्बी प्राथमिक शिक्षाके विषयमें जब मैंने पहले-पहल लिखा था उस समय शिक्षाके क्षेत्रमें काम करनेवाले अपने साथियोंसे अपनी-अपनी राय भेजने का आग्रह किया था। प्रोफेसर एस० वी० पुणताम्बेकर उन लोगोंमें से थे जिन्होंने मुझे अपने विचार सबसे पहले भेजे थे। उन्होंने मुझे एक लम्बा और तर्कपूर्ण उत्तर भेजा था। लेकिन स्थानाभावके कारण मैं उसे अबसे पहले नहीं प्रस्तुत कर सका। ऊपर जो-कुछ दिया गया है वह उनकी रायका सर्वाधिक प्रासंगिक अंश है। संक्षेप करने के विचारसे मैंने वे अंश निकाल दिये हैं जिनका सम्बन्ध साक्षरता और कालेजकी शिक्षासे है। कारण इसी महीनेकी २२ और २३ तारीखको जो शिक्षा परिषद् होनेवाली है उसमें चर्चाका मुख्य विषय किसी उद्योगके माध्यमसे दी जानेवाली स्वावलम्बी प्राथमिक शिक्षा होगी।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १६-१०-१९३७

२९८. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

सेगाँव, वर्धा
१६ अक्तूबर, १९३७

चि० अमला,

खुर्शेदबहनसे मालूम हुआ, तुम्हें यह शिकायत है कि मैं पत्र नहीं लिखता। तुम्हारा खयाल मुझे बराबर रहता है। मैंने तुम्हें यह सोचकर पत्र नहीं लिखा कि तुम्हें मेरे पत्रोंकी अभी जरूरत नहीं है। मुझे पता था कि तुम्हारा काम ठीक चल रहा है। लेकिन अब तुम मुझे अपने बारेमें सब-कुछ लिखना। यहाँ तो वैसा ही चल रहा है जैसा तुम्हारे सामने था। यदि आ सको तो किसी समय जरूर आ जाना। अपनी मातासे मेरा अभिवादन कहना।

स्नेह।

बापूके आशीर्वाद[1]

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल पेपर्स; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. हस्ताक्षर गुजराती लिपिमें है।

२९९. पत्र : अमृतकौरको[1]

१६ अक्तूबर, १९३७

नागपुरसे मुझे अभीतक कोई निमन्त्रण[2] नहीं मिला है; तुम खुद कहकर मुझे निमन्त्रण मत भिजवाना। तुम इस पत्रसे पहले ही नरीमान-काण्डका निर्णय[3] देख लोगी।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८२२) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६९७८ से भी

३००. एक पत्र

१६ अक्तूबर, १९३७

प्रिय बहन,

धन्यवाद। मैं ठीक हूँ। बोलने से सिर्फ थकावट हो जाती है। मैं कुछ ऐसा सोचता हूँ कि भगवान् यह नहीं चाहता कि मेरे खयालसे जो काम उसने मुझे सौंपा है उसे मैं अधूरा छोड़ जाऊँ। यदि मैं अपने अहंकारके कारण विश्राम नहीं ले पाता तो मुझे उसका उचित दण्ड अवश्य भोगना पड़ेगा।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी; सौजन्य : नारायण देसाई

१. यह अमृतकौर को लिखे मीराबहनके पत्रमें पुनश्चके रूपमें लिखा गया था।

२. अखिल भारतीय महिला सम्मेलनके लिए।

३. देखिए पृ० २७५-७६।

३०१. पत्र : महादेव देसाईको

१६ अक्तूबर, १९३७

चि० महादेव,

यदि तुम्हें सफलता न मिली तो यह मेरी कलाके लिए लज्जाकी बात होगी। अपने-अपने क्षेत्रमें विनोबा, मगनलाल, छोटेलाल, पंडितजी, काका और देवदास मुझसे आगे बढ़ गये। तुम तो पहले कदमसे ही मुझसे आगे हो। अन्य अनेक नाम भी मुझे याद आते हैं। मेरा काम तो सत्य-अहिंसाका मन्त्र फूँकना है। जो इस मन्त्रको आत्मसात् कर लेते हैं वे फिर अपने क्षेत्रमें खूब उड़ान भर सकते हैं और मैं उनसे अलग खड़ा रहता हूँ। यदि तुम साप्ताहिक टिप्पणियाँ न लिखो तो कोई हर्ज नहीं। तुम्हें अपने बायें हाथसे लिखने की आदत डालनी चाहिए। मेरी अपेक्षा तुम उससे जल्दी काम ले सकोगे। प्रेमाका पोस्टकार्ड वापस भेजता हूँ। पेरीनबहनके लिए कल १ बजे बैलगाड़ी अथवा मोटरकी जरूरत होगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५७८) से।

३०२. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको

वर्धागंज

१६ अक्तूबर, १९३७

मुझे प्रसन्नता है कि नरीमान-सरदार प्रकरणके सम्बन्धमें मैं और डी० एन० बहादुरजी स्वतन्त्र रूपसे जिस निर्णयपर पहुँचे थे उस निर्णयके बजाय मैं श्री के० एफ० नरीमानका वक्तव्य[1] जनताके सामने रख रहा हूँ। यह कार्य, जिसका मैंने और मेरी इच्छा व आग्रहपर डी० एन० बहादुरजीने बीड़ा उठाया था, बहुत कष्ट-कर था। यदि वे इस कार्यमें अपना बहुमूल्य सहयोग न देते और उन्होंने जो असाधारण परिश्रम किया है वह न करते तो इस समय मेरा जैसा स्वास्थ्य है, उसे देखते हुए इस बोझके कारण मैं शायद खाट पकड़ लेता। मेरे सामने जो प्रमाण पेश किये गये वे विस्तृत थे। मैं उनका एक-एक वाक्य पढ़ गया, किन्तु बहादुरजीने, जिन्हें

१. देखिए परिशिष्ट ६।

मैंने ये सारे कागजात सौंप दिये थे, उस मोटे पुलिन्देकी न केवल एक-एक पंक्तिको पढ़ा बल्कि उसपर लम्बी टिप्पणियाँ भी तैयार कीं; १९३४ के चुनावके पेचीदा मामलेके विषयमें कानूनका अध्ययन किया और उन्होंने मुझसे बिलकुल स्वतन्त्र रूपसे उपयुक्त निर्णय तैयार किया। इसमें तथ्यों और तर्कोंको बहुत बारीकीसे और संक्षिप्त रूपमें पेश किया गया है, फिर भी यह पूरे १४ पृष्ठोंमें दिया गया है। यह उनकी मेहरबानी थी कि वे उक्त निर्णयको लेकर सेगाँव आये और बृहस्पतिवारको पूरा दिन मेरे साथ रहे। फिर मैंने अपनी सहमति देते हुए एक टिप्पणी[1] लिखी। मुझे आशा थी कि उस दिन श्री के० एफ० नरीमान भी हमारे साथ होंगे, किन्तु वे न आ सके। इसपर मैंने यह सुझाव दिया कि बम्बई लौटकर बहादुरजी श्री नरीमानको बुलाकर अपना निर्णय तथा मेरी टिप्पणी दिखा दें। यदि श्री नरीमान उस निर्णय और मेरी टिप्पणी दोनोंको सही मानकर स्वीकार कर लेते हैं और स्वयं एक वक्तव्य प्रकाशित करते हैं तो हम सिर्फ दोनों पक्षोंको अपने निर्णयकी प्रतियाँ दे देंगे, लेकिन उसे जनताके सम्मुख रखने के बजाय श्री नरीमानके वक्तव्यको प्रकाशित होने देंगे। मेरा सुझाव बहादुरजीको जँच गया। बृहस्पतिवारकी रातको मैंने महादेव देसाईको अपनी टिप्पणियाँ देकर बहादुरजी तथा श्री नरीमानसे मिलने बम्बई भेजा। श्री नरीमान अपने वकीलको साथ लेकर बहादुरजीके कार्यालय गये और हमारा निर्णय पढ़ा और मुझे इस बातपर बहुत खुशी हो रही है कि मैं जनताके सम्मुख उनके वक्तव्यको रख सका हूँ। मुझे पूरी उम्मीद है कि जनता और समाचारपत्र उस अप्रिय और अशोभनीय विवादको भूल जायेंगे जिसने बम्बईकी सार्वजनिक प्रवृत्तियोंको, सामान्यतया उनमें जो उत्साह और आनन्द देखने को मिलता रहा है, उससे रिक्त कर दिया था। श्री नरीमानने विचारपूर्वक और पूरे हृदयसे जो स्वीकारोक्ति की है, उसके लिए मैं उन्हें धन्यवाद देता हूँ। बहादुरजीने लोकसेवाकी आत्यन्तिक कर्त्तव्य-भावना से तथा मेरे प्रति अविचल प्रेमसे प्रेरित होकर इस कार्यमें मुझे जो योगदान दिया है उसके लिए मैं उनका हृदयसे आभारी हूँ।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, १७-१०-१९३७

१. देखिए २५७-५९

२०३. स्वावलम्बी शिक्षा

सरकारका अर्थ सात प्रान्तोंमें कांग्रेस-सरकार समझना चाहिए। पर कांग्रेस-सरकार बन गई, इसलिए यह मानने का कोई कारण नहीं है कांग्रेसी विचारधारा के लोगोंका मन एकाएक वदल जायेगा। यद्यपि कांग्रेसका रचनात्मक कार्यक्रम १९२० के महापरिवर्तन कालसे चलता आ रहा है, तो भी यह नहीं कहा जा सकता कि इसके लिए कांग्रेसियोंमें जीवन्त वातावरण तैयार हो गया है। फिर जो लोग कांग्रेससे बाहर हैं, उनके बारेमें तो कहना ही क्या? यद्यपि संहारक (यदि अहिंसक कार्यक्रममें इस विशेषणका उपयोग करना अनुचित न हो तो) या निषेधात्मक कार्यक्रम जितना लोकप्रिय बना, उतना रचनात्मक अथवा उत्पादक कार्यक्रम नहीं बन सका, तथापि कांग्रेस उसे १९२० से सहन करती आ रही है। कांग्रेसने उसे कभी रद नहीं किया और उसे अच्छी संख्यामें कांग्रेसजनोंने अपना लिया है; इससे इस क्षेत्रमें जो-कुछ हो सका है, वह कांग्रेसवालोंसे ही हो सका है और प्रगति होने की आशा भी जहाँ कांग्रेस-सरकार बनी है, वहीं रखी जा सकती है। लेकिन कांग्रेस-सरकार बन गई, इसलिए रचनात्मक कार्यमें श्रद्धा रखनेवाले सुस्त न हो जायें, गफलतमें न रहें। कांग्रेस-सरकार बनने से उनका धर्म अधिक जाग्रत, अधिक उद्यमी और अधिक अध्यवसायी बनना है। और जब ऐसा होगा तभी कांग्रेस सरकारसे की जानेवाली आशा फलीभूत होगी। कांग्रेस-सरकारका अर्थ है, जनताके प्रति जिम्मेदार लोकतन्त्र सरकार। इस सरकार को यदि जनता आज हटाना चाहे तो हटा सकती है। जनताकी इच्छा और सत्ता पर ही यह सरकार निर्भर है। इसलिए कांग्रेसी लोग चाहें तो रचनात्मक कार्यक्रम को स्वीकार भी कर सकते हैं और उसपर अमल भी करा सकते हैं, और यह कार्यक्रम तभी सम्पन्न भी हो सकता है। सरकारके पास स्वतन्त्र ताकत यानी तलवार की ताकत नहीं है। उसका कांग्रेसने इच्छापूर्वक त्याग किया है। यह ताकत तो ब्रिटिश सरकारके पास है। जब कांग्रेस-सरकारको ब्रिटिश सत्ताका यानी तलवारकी ताकतका उपयोग करना पड़े, तब समझना चाहिए कि तिरंगा झण्डा नीचे गिर गया। कांग्रेस-सरकारको उस दिनसे खत्म हुआ समझना चाहिए। लेकिन यदि लोग कांग्रेसकी अर्थात् कांग्रेस-सरकारकी बात नहीं मानेंगे या उनमें अहिंसाका प्रवेश नहीं होगा, तो आज तेजस्वी लगनेवाली सरकार कल निस्तेज हो जायेगी।

अतः रचनात्मक कार्यक्रममें श्रद्धा रखनेवाले कांग्रेसी सावधान ही हो जायें। मेरा पेश किया हुआ शिक्षाक्रम भी रचनात्मक कार्यका ही एक बड़ा अंग है। जो रूप उसे मैं आज दे रहा हूँ, उसे कांग्रेसने अपना लिया है, यह कहने का मेरा आशय नहीं है। पर मैं जो लिख रहा हूँ, वह १९२० से राष्ट्रीय शालाओंके सम्बन्धमें जो-कुछ मैंने

कहा है या लिखा है, यह उसके मूलमें ही निहित था। आज समय आने पर वह मेरे सामने एकाएक प्रकट हुआ है, ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है।

अब यदि प्राथमिक शिक्षा उद्योग द्वारा ही देनी है, तो यह काम फिलहाल तो खासकर चरखे और दूसरे ग्रामोद्योगोंके बारेमें विश्वास रखनेवालों के द्वारा ही हो सकता है; क्योंकि ग्रामोद्योगोंमें मुख्य वस्तु चरखा है। चरखा उद्योगके बारेमें चरखा संघने काफी जानकारी प्राप्त कर ली है और दूसरे उद्योगोंके बारेमें ग्रामोद्योग संघ जानकारी प्राप्त कर रहा है। इसलिए मुझे लगता है कि इस सम्बन्धमें जो तात्कालिक व्यवस्था की जा सकती है, वह चरखे आदि ग्रामोद्योगों द्वारा ही की जा सकती है। पर जिनको चरखेमें श्रद्धा है, वे सब शिक्षक नहीं होते। हरएक बढ़ई बढ़ईगिरीका शास्त्री नहीं होता। जो व्यक्ति उद्योगका शास्त्र नहीं जानता, वह उद्योगकी सामान्य शिक्षा नहीं दे सकता। इसलिए जिन लोगोंको शिक्षाशास्त्रमें दिलचस्पी है और चरखे इत्यादि-में दिलचस्पी है, वे लोग ही प्राथमिक शिक्षामें मेरा सुझाया हुआ क्रम लागू कर सकते हैं। मेरे पास आया हुआ श्री दिलखुश दीवानजीका पत्र ऐसे लोगोंकी मदद करेगा, यह मानकर उसे नीचे दे रहा हूँ।[१]

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, १७-१०-१९३७

३०४. एक श्रेष्ठ हरिजन-सेवकका देहान्त[२]

हरिजन-आन्दोलनके इतनी तेजीसे शुरू होने के पहलेसे ही मैं मणिलाल कोठारीको जानता था। और जब मेरा उनसे परिचय हुआ तभी मैंने यह देख लिया था कि उनमें छूतछातकी जरा भी गन्ध नहीं है। हरिजनोंकी सहायता करते हुए जो जोखिम उठानी चाहिए उसे उठाने को वे हमेशा तत्पर रहते थे। यदि यह कहा जाये कि अच्छे कार्योंके लिए पैसा इकट्ठा करने की उनमें लगभग अद्वितीय शक्ति थी, तो इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। उनमें यों तो बहुत-सी शक्तियाँ थीं, लेकिन पारमार्थिक कार्योंके लिए धन-संग्रह करने की उनमें जो शक्ति थी, उसके लिए तो लोग उन्हें हमेशा याद करेंगे। हरिजन-सेवाके लिए उन्होंने प्रचुर धन इकट्ठा किया था, और इस बातके लिए मुझसे हामी भरी थी कि यदि वे अच्छे हो गये तो मुझे जितना पैसा चाहिए उतना वे ला देंगे। चन्दा इकट्ठा कर देने के लिए जहाँ-तहाँसे उनके पास माँगें आती ही रहती थीं। मणिलाल उत्कट लगनवाले आदमी थे। कोई भी पारमार्थिक काम हो, वह उन्हें अपनी तरफ खींच सकता था। सेवा करने का उनका

१. अनुवाद यहाँ नहीं दिया गया है। पत्र-लेखक पिछले दो वर्षोंसे उद्योगपर आधारित एक छोटा-सा स्कूल चला रहे थे। उन्होंने अपने अनुभवके आधारपर गांधीजी के प्राथमिक शिक्षा-सम्बन्धी विचारोंका पूर्ण समर्थन किया था।

२. यह "नोंध" (टिप्पणियाँ) शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

लोभ उन्हें चाहे जिस जोखिममें उतार सकता था। उनकी कमी उनके कुटुम्बको तो खटकेगी ही, हरिजनोंको भी खटकेगी; लेकिन इसमें सन्देह नहीं कि अन्य अनेक सेवा-क्षेत्रोंमें भी उनके अभावको बहुत समयतक महसूस किया जायेगा।

ईश्वर उनकी आत्माको शान्ति प्रदान करे।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, १७-१०-१९३७

३०५. पत्र : किर्बी पेजको

सेगाँव, वर्धा, म० प्रा०
१७ अक्तूबर, १९३७

प्रिय मित्र,

भक्ति-साहित्यके अपने संग्रहमें आप एन्ड्रयूजकी रचनाओंके अंशोंको पुष्कल प्रमाण-में शामिल कर रहे हैं, इस बातसे मुझे बड़ी खुशी हुई। क्योंकि चार्ली एन्ड्रयूज परम श्रद्धालु और प्रार्थनाशील व्यक्ति हैं। वे सच्चे ईसाई हैं, लेकिन उनका ईसा किसी संकीर्ण सम्प्रदायका ईसा नहीं है। उनका ईसा सम्पूर्ण मानवताका ईसा है। वे उसके दर्शन रामकृष्णमें करते हैं, चैतन्यमें करते हैं तथा अन्य बहुत-से धर्मगुरुओंमें भी करते हैं, जो ईसाई धर्मसे इतर धर्मोंसे सम्बद्ध हैं। हम भारतवासी उन्हें बहुत अच्छी तरह जानते हैं — उन्हें दीनबन्धु कहते हैं। हमारी मैत्री बहुत पुरानी है, हम सगे भाइयोंकी तरह हैं। हम दोनोंका कुछ भी एक-दूसरेसे छिपा हुआ नहीं है। चार्लीमें बच्चेकी सरलता है। क्षमाशील और उदार तो इतने हैं कि इन गुणोंके अतिरेकको उनका एक दोष कहा जा सकता है। स्नेही और प्यारे ऐसे हैं मानों कोई पवित्रताकी प्रतिमूर्ति स्त्री हों। उन्हें विनोदपूर्वक अर्धनारीश्वर कहता हूँ, लेकिन वास्तवमें उन्हें मानता भी वैसा ही हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्री किर्बी पेज
ला हैब्रा
केलीफोर्निया

अंग्रेजीकी नकल से । प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

३०६. पत्र : प्रभावतीको

सेगाँव, वर्धा
१७ अक्तूबर, १९३७

चि० प्रभा,

३१ तारीखको सेगाँवमें तेरा इन्तजार किया जायेगा — मैं वहाँ न पहुँचा तब भी। १-२ तारीख तक तो मैं अवश्य पहुँच जाऊँगा। सेगाँव वापस आये बिना, सीमा-प्रान्त जाना नहीं होगा।

तू जितना वजन खो चुकी है, यहाँ उसे फिरसे प्राप्त करना है। जयप्रकाशकी अनुमति — यहाँ रहने के लिए — ले लेना। यहाँ सर्दी शुरू हो गई है। रातको ओढ़नेके लिए कुछ-न-कुछ अवश्य ले आना, नहीं तो तेरा जो कम्बल मेरे पास है वह तुझे वापस मिल जायेगा। लेकिन अब तो वह काफी पुराना हो गया है।

चिमनलाल अच्छा हो गया है; हालाँकि अबी भी वह बिस्तर में पड़ा है। प्यारेलालकी बहन सुशीला यहीं है। सुरेन्द्र भी कल आया। आज प्रेमा[1] आ रही है। जब तू आयेगी तब ये सभी लोग जा चुके होंगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५०८) से।

३०७. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको

वर्धा
१७ अक्तूबर, १९३७

अंडमानके कैदियोंको भुलाया नहीं जा सकता। मैंने उनको रिहा करवाने के लिए एड़ी-चोटीका जोर लगाने का जो वचन दिया था उसकी याद दिलाने के लिए मुझे तीन प्रान्तोंसे तीन पत्र मिले हैं। इनमें कहा गया है कि अंडमानसे आये हुए कैदियोंकी दशा वहाँसे भी बदतर है तथा उनके जल्द ही रिहा होने की कोई आशा नहीं दिखती, और यदि रिहाई न हुई तो उन्हें अपने एकमात्र शस्त्रका सहारा लेना पड़ेगा, अर्थात् भूख-हड़ताल करनी पड़ेगी। मैं आशा करता हूँ कि जबतक वे यह जानते हैं कि जनता उनके कल्याणके प्रति उदासीन नहीं है तबतक वे भूख-हड़तालका सहारा नहीं लेंगे। जहाँतक मेरा सवाल है, मैं उन्हें यह विश्वास दिलाना चाहता हूँ कि मैं इस विषयमें निष्क्रिय नहीं बैठा हूँ। और मैं जनता तथा समाचार-पत्रोंसे अनु-

१. प्रेमाबहन कंटकको।

रोध करूँगा कि वे इस अत्यन्त आवश्यक मामलेके प्रति जागरूक रहें। मैं प्रान्तीय सरकारोंसे भी अपील करूँगा कि वे इन बन्दियोंके साथ वैसा ही व्यवहार करें जैसे व्यवहारकी राष्ट्र उनसे अपेक्षा करता है। प्रान्तीय सरकारें, जो अब ऐसे मामलोंमें जनताके प्रति उत्तरदायी हैं, लोकमतकी उपेक्षा न करें। मुझे उम्मीद है कि इस सबन्धमें कांग्रेस तथा अन्य संस्थाओंमें कोई मतभेद नहीं है।

[अंग्रेजीसे]

अमृत बाजार पत्रिका, १८-१०-१९३७

३०८. पत्र : अमृतकौरको

सेगाँव, वर्धा
१८ अक्तूबर, १९३७

प्रिय अस्पृश्या,

कुछ लोग ऐसे होते हैं जो उपाधियोंके लिए धीरजके साथ प्रतीक्षा कर सकते हैं और उनके पास उपाधियाँ अपने-आप चलकर जाती हैं। तुम्हारे अन्दर धीरज है ही नहीं, इसलिए तुम्हारी उपाधियाँ सामान्यतः सटीक ही होती हैं। केवल पहली उपाधि ही ठीक नहीं थी। तुम्हें विद्रोहिणी कौन कहेगा? मैं तो नहीं कहूँगा। मूर्खा अवश्य कहूँगा। लेकिन मैं भूल गया। वह उपाधि तो तुम्हें प्रदान की गई थी। तुमने खुशीसे उसे स्वीकार भी किया था। अस्पृश्या तुम हो, जैसाकि राजवंशके सभी लोग हैं। पता नहीं, तुम अगली उपाधि क्या चुनोगी।

आज मैं इत्मीनानमें हूँ। ज्यादा लिखाई-विखाई करने के बजाय मैं नींद ले रहा हूँ। लेख मैंने पिछली रातको ही लिख डाला था।

मुझे याद नहीं पड़ता कि कोई प्रश्न अनुत्तरित रहा हो। एक पत्रका कुछ भाग मैंने रख लिया है, लेकिन उसे निकालने में आलस लग रहा है।

रामेश्वरीका काठियावाड़का दौरा बहुत अच्छा रहा। उसके विवरणात्मक पत्र सब बहुत अच्छे हैं। इन पत्रोंकी हिन्दी अत्यन्त सुपाठ्य है। मुझे जिन लोगोंने पत्र लिखे हैं उन्होंने उसकी बहुत तारीफ की है। उसका दौरा अब लगभग समाप्त हो चुका है।

नरीमानकी स्वीकारोक्ति तुमने देखी ही होगी।

सभी मरीज ठीक हैं।

स्नेह।

तानाशाह

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८२३) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६९७९ से भी

३०९. पत्र : अमृतकौरको

सेगाँव

दिनके साढ़े चार बजे, १८ अक्तूबर, १९३७

मूर्खा रानी,

मैं आज तुम्हें यह दूसरा पत्र लिख रहा हूँ। यह पत्र, हिन्दीमें तुमने जो प्रगति की है, उसके सम्बन्धमें तुम्हें बधाई देने के लिए है। मेरे पास तुम्हारा हिन्दीमें लिखा जो पत्र आया है उससे पता चलता है कि तुम इस दिशामें खूब तरक्की कर रही हो। शीघ्र ही तुम्हारी शैली भी प्रांजल हो जायेगी। तुम्हें नियमपूर्वक रामायण पढ़नी चाहिए और हो सके तो हिन्दी अखबार भी पढ़ना चाहिए। लेकिन यदि अखबार न पढ़ो तो कोई हर्ज नहीं। अंग्रेजीमें शेक्सपीयरका जो महत्त्व है वही हिन्दीमें तुलसीदासका है। इसलिए अगर तुम केवल तुलसीदास ही पढ़ो तो भी मुझे सन्तोष होगा। बेशक, तुम्हें व्याकरणकी एक अच्छी पुस्तकका अध्ययन भी जरूर करना चाहिए।

हाँ, शम्मीकी बातका विरोध न करो और अगर उसे इससे खुशी मिलती है तो वह तुम्हें जबतक रोकना चाहता है तबतक वहीं रहो।

तुम वहाँ अपना भाषण[1] भी खूब चैनके साथ तैयार कर सकोगी। भाषण मौलिक और संक्षिप्त होना चाहिए और उसमें इधर-उधरकी बातें नहीं होनी चाहिए। तुम अपने विषयसे भटकना नहीं। अतीतमें जो काम किया है उसका ज्यादा बखान मत करना, बल्कि भविष्यके कार्यक्रमपर ध्यान देना। यह कार्यक्रम साहसपूर्ण, सार्वजनीन और रचनात्मक होना चाहिए। लेकिन इन सब बातोंके अलावा कार्यक्रम व्यावहारिक होना चाहिए और ऐसा होना चाहिए कि उसे गाँवोंपर लागू किया जा सके और फिर भी तुम्हारी संस्थाकी सदस्याएँ उसपर अमल कर सकें। वे गाँवोंमें जाकर काम नहीं करेंगी, लेकिन गाँवोंके लिए तो काम कर सकती हैं। क्या यह एक अच्छा पत्र नहीं है?

स्नेह।

डाकू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६१९) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६४२८ से भी

१. नागपुरमें होनेवाले अखिल भारतीय महिला सम्मेलनके लिए अध्यक्षीय भाषण।

३१०. पत्र : विजया एन० पटेलको

सेगाँव
१८ अक्तूबर, १९३७

चि० विजया,

तुम्हारे पोस्टकार्डके बाद और कोई पत्र नहीं आया। ऐसा क्यों? मृदुलाबहनने[1] तुम्हारी माँग की है। मैंने लिखा है कि यदि तुम शामिल होने के लिए राजी हो तो मैं नहीं रोकूँगा, किन्तु जबरदस्ती नहीं करूँगा। कदाचित् वह तुमसे मिली भी होगी। प्रेमाबहन कल आई। सारे मरीज अच्छे हैं।

बापूके आशीर्वाद

श्रीमती विजयाबहन
मार्फत — नारणभाई पटेल
वारोड, बारडोली तालुका
ताप्ती वैली रेलवे

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७०७४) से। सी० डब्ल्यू० ४५६६ से भी; सौजन्य : विजयाबहन एम० पंचोली

३११. पत्र : महादेव देसाईको

१८ अक्तूबर, १९३७

चि० महादेव,

बलवन्तसिंहके बारेमें देखूँगा।

आज तो मैं आराम ही कर रहा हूँ। और भी लिखना चाहता हूँ, मगर शायद न लिख पाऊँ। फिर भी तुम्हें सामग्रीकी कमी तो नहीं होगी। शारदा यहाँ हमारे पास जो गाड़ी है उसमें आयेगी। उसीमें उसे कल वापस भेज देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५७९) से।

१. मृदुला साराभाई।

३१२. पत्र : द० बा० कालेलकरको

१८ अक्तूबर, १९३७

चि० काका,

तीनोंको[1] बुला तो लेना ही। उन्हें दाखिल कर लेंगे। गोपालरावके बारेमें बात तो मुझे भी पसन्द आई है। लेकिन तुमने ठीक लिखा है। मैं नायकम्‌को लिख रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

वोराके सुझावको मान लेना। आर्मस्ट्रॉंगके[2] बारेमें मैंने पहले पढ़ा है। उसका उपयोग करूँगा।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७७०७) से।

३१३. पत्र : नारणदास गांधीको

[१८][3] अक्तूबर, १९३७ [के पश्चात्]

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला।

जो खादी तैयार हुई है, तुम उसका क्या करोगे?

शायद तुम्हारे पास नालवाड़ीका 'सेवावृत्त'[4] नहीं आता होगा; मैं आज भेज रहा हूँ। इसमें तुम तकलीके आश्चर्यजनक आँकड़े देखोगे।

रामेश्वरीबहनका पत्र आया था। वह हिन्दीमें पत्र लिख सकती है। वहाँ [सौराष्ट्र]की यात्राके बारेमें मुझे कल उसका चौथा पत्र मिला। उसने अपनी पूरी यात्राका वर्णन लिखा है। यह सारा वर्णन दिलचस्प और पढ़ने योग्य है।

१. हाशियेमें यह टिप्पणी लिखी हुई है: "ये तीन कौन हैं? एक तो गोपालराव है; अन्य दो कौन हैं? तीनोंके नाम नायकम्‌जी को भेजना।"

२. हेम्पटन संस्थानके संस्थापक जनरल आर्मस्ट्रॉंग; देखिए "भाषण: शिक्षा-परिषद्‌में–१," पृ० २९३-२९८।

३. रामेश्वरी नेहरूकी सौराष्ट्र-यात्राके उल्लेखके आधारपर; देखिए "पत्र: अमृतकौरको", पृ० २८१।

४. ग्रामसेवावृत्ति।

नानालाल यहाँ आ गया था। उसने भी तुम्हारे कामकी बहुत प्रशंसा की।

मैं आजकल शिक्षापर जो लेख लिख रहा हूँ उनको देखते हुए जो परिवर्तन किये जा सकते हों, सो करना। क्या तुम उनमें से कुछ चीजें बाल-मन्दिरके लिए लेना उचित समझते हो? बाल-मन्दिरके बच्चोंकी उम्र क्या है?

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

मैंने तुम्हें यहाँ आने के लिए तार दिया है।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८५४२ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

२१४. पत्र : अमृतकौरको

१९ अक्तूबर, १९३७

प्रिय विद्रोहिणी,

मैं आजकल ज्यादातर मौन ही रहता हूँ, जिससे मैं २२ और २३ तारीखको ताजगी महसूस कर सकूँ। और चूँकि मैं दाहिना हाथ चला ही रहा हूँ, इसलिए सोचा, तुमको भी दो-चार पंक्तियाँ लिख डालूँ।

संलग्न पत्रसे देखोगी कि सर जोगेन्द्र करीब आते जा रहे हैं। चाहो तो पत्रको बेशक फाड़ डालना। मैं प्रस्तावना नहीं लिख रहा हूँ, लिखना उचित भी नहीं।

तुमने चार्लीके बारेमें मुझे जो समाचार दिया है वह बुरा है। यदि तुम मेरे सम्पर्कमें आनेवाले सभी व्यक्तियोंके — जिनमें मूर्ख, विद्रोही, अस्पृश्य तथा और भी कई तरहके लोग शामिल हैं — दोषोंके लिए मुझे जिम्मेदार ठहराओगी तो तुम्हें मुझमें और भी कमियाँ दिखाई देंगी।

मेरा खयाल है, तुम्हारे महमूदाबादको[1] पत्र लिखनेसे कोई फायदा नहीं। इस तरह कीचड़ उछालनेका क्या परिणाम होगा सो ईश्वर ही जाने।

स्नेह।

डाकू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८२४) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६९८० से भी

१. महमूदाबादके नवाब।

३१५. पत्र : मुहम्मद अली जिन्नाको

सेगाँव, वर्धा
१९ अक्तूबर, १९३७

प्रिय मित्र,

मैंने आपके लखनऊके भाषणको[१] ध्यानपूर्वक पढ़ा है, और मेरे दृष्टिकोणको लेकर आपको जो गलतफहमी हुई है उससे मेरे मनको बहुत आघात पहुँचा है। मेरा पत्र[२] आपके भेजे हुए एक विशेष गुप्त सन्देशके उत्तरमें था। उसमें मैंने अपने हृदयकी गहनतम भावनाओंको अभिव्यक्त किया था। वह पत्र तो बिलकुल व्यक्तिगत था। उसका आपने जैसा उपयोग किया, क्या वह उचित था?

निस्सन्देह आपका पूरा भाषण, जैसाकि मैं समझ पाया हूँ, युद्धकी घोषणा है। मैंने तो यह उम्मीद की थी कि आप मुझ गरीबको दोनों पक्षोंके बीच सेतुके रूपमें मानेंगे। मैं देखता हूँ कि आपको ऐसे किसी सेतुकी जरूरत नहीं, और मुझे इसका खेद है। झगड़ा हमेशा दो पक्षोंके बीच होता है और आप देखेंगे कि चाहे मैं शान्ति स्थापित न कर सकूँ, लेकिन मैं झगड़ा करनेवालों में से नहीं हूँ।

वैसे तो यह पत्र प्रकाशनके लिए नहीं है, लेकिन आपकी इच्छा प्रकाशित करनेकी ही हो तो बात और है।[३] यह सब मैं पूरे सद्भावके साथ और दु:खी मनसे लिख रहा हूँ।[४]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, १६-६-१९३८

१. १५ से १८ अक्तूबर तक होनेवाले अखिल भारतीय मुस्लिम लीगके पच्चीसवें अधिवेशनके सभापति-पदसे दिया गया भाषण; देखिए परिशिष्ट ७ (क)।

२. देखिए खण्ड ६५, "पत्र: मु० अ० जिन्नाको", पृ० २४५।

३. गांधी-जिन्ना पत्र-व्यवहार १५-६-१९३८ को प्रकाशनके लिए प्रेस-प्रतिनिधियोंको दिया गया था।

४. जिन्नाके उत्तरके लिए देखिए परिशिष्ट ७ (ख)।

३१६. पत्र : परीक्षितलाल एल० मजमूदारको

सेगाँव, वर्धा
१९ अक्तूबर, १९३७

भाई परीक्षितलाल,

गिडवानी-स्मारक-कोषका सदुपयोग ही हुआ है। और अब धनतेरसके दिन भंगी विद्यार्थी-निवासके उद्घाटनकी क्रिया आचार्य श्री आनन्दशंकरभाईके[1] कर-कमलोंसे सम्पन्न होगी। छात्रावासके लिए इस बातको मैं शुभ लक्षण मानता हूँ। मैं आशा करता हूँ कि खेड़ाके निवासी इस छात्रावासको अपना लेंगे और उसको अनेक प्रकारसे प्रोत्साहन देते रहेंगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९६५) से।

३१७. पत्र : महादेव देसाईको

१९ अक्तूबर, १९३७

चि० महादेव,

आनन्दशंकरभाईकी पाण्डुलिपि मैं फिरसे पढ़ गया हूँ। इसमें मैंने जो संशोधन-परिवर्धन किये हैं, उन्हें एक नजर देख जाना। इसके बारेमें यदि तुम्हें कोई सुझाव न देना हो तो एक अच्छे कागजमें लपेटकर इसे रजिस्टर्ड बुकपोस्टसे रवाना कर देना। पत्र भी इसके साथ है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५८१) से।

१. आनन्दशंकर बापूभाई ध्रुव।
२. यह उपलब्ध नहीं है।

३१८. पत्र : ठाकोरदास नानावटीको

१९ अक्तूबर, १९३७

भाई ठाकोरदास,

चि० अमृतलालको ऐसा कोई रोग नहीं है जिसके लक्षण बाहरसे दिखाई पड़ें। वह काम-काज करता है, बुखार बिलकुल नहीं है। लेकिन वजन नहीं बढ़ता। घी-दूध ठीक मात्रामें लेता है। वहाँसे आने के समय उसका जो वजन था उसमें से कुछ खोया ही है। शक्ति अलबत्ता वहाँकी अपेक्षा बढ़ गई है। चिन्ता करने का तो कोई भी कारण नहीं है। वहाँ जाने के लिए तो मैंने अनेक बार कहा है लेकिन उसका जाने का मन ही नहीं करता, इसलिए मैं उसके साथ जबरदस्ती नहीं करता। अतः अमृतलालने तुम्हें जो लिखा सो झूठ नहीं था, तथापि मेरा मन कहता है कि उसने सभी तथ्य नहीं दिये। उसे तुम्हें वजन आदिके बारेमें सच-सच बताना चाहिए था। ऐसी बातोंको छिपाने से कोई फायदा नहीं होता। अलबत्ता सिर दुःखने-जैसी छोटी-मोटी बातें नहीं लिखी जानी चाहिए। तुम भी ऐसी हकीकतें तो नहीं माँगते। इतना सब लिखने के बाद मेरी तुमको यह सलाह है कि तुम चिन्ता न करना। चिन्ता करने का कतई कोई कारण नहीं है। वह जो करना चाहे सो करने देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०७३९) से।

३१९. पत्र : डॉ० विलियम एच० टैंडीको[1]

सेगाँव, वर्धा
२० अक्तूबर, १९३७

प्रिय डॉ० टैंडी,

अस्पताल खोलने के बारेमें आपने आज मुझे अपनी योजना समझाने की कृपा की है। उससे यह मालूम होता है कि आप अस्पतालके साथ रोगियोंके परिवारके ठहरने के लिए भी मकानका प्रबन्ध करना चाहते हैं ताकि उनको रोगियोंके लिए खाना बनाने में सुभीता रहे। अस्पतालके कामके साथ मेरा जो-कुछ थोड़ा-बहुत संबंध रहा है उससे

१. यह पत्र मूलतः अंग्रेजीमें लिखा गया था, किन्तु रोगियों तथा उनके रिश्तेदारोंके लाभके लिए गांधीजी ने उसका हिन्दी अनुवाद भी साथमें भेज दिया था। हिन्दी अनुवादपर भी गांधीजी के हस्ताक्षर थे। यहाँ वही अनुवाद प्रस्तुत किया गया है।

मेरा यह अनुभव है कि इस प्रकार स्वतंत्र भोजन बनाने की व्यवस्था करना एक बुरी आदतको पुष्टि देना है। क्योंकि इस तरह बनाये हुए भोजनमें आम तौरपर डाक्टरी मशवरोंका ख्याल नहीं किया जाता। रिश्तेदार लोग अक्सर अपने प्रेमके वश होकर मुमानियतोंका भंग करते हैं, रोगीसे लाड़-प्यार करते हैं और इससे उसके अच्छा होने में रुकावट डालते हैं। कभी-कभी यह अंध-प्रेम रोगीके लिए घातक भी साबित होता है। इसलिए रोगियोंके हितको देखते हुए मेरी आपको यह सख्त हिदायत है कि जिस प्रकार आप अपने रोगियोंको मनपसंद दवाइयाँ लेने नहीं देंगे उसी प्रकार आप उनको व्यक्तिगत रूपसे भोजन बनवाने में भी प्रोत्साहन न दें। अगर रोगियोंके साथ उनके रिश्तेदार भी आ जायें तो उनकी रोगियोंसे मुलाकात निश्चित समयपर और उचित मर्यादाओंके अनुसार ही होनी चाहिए।

मैं जानता हूँ कि बदकिस्मतीसे समाजमें ऐसी उच्च कहलानेवाली जातियाँ हैं जो खान-पानके विषयमें छुआछूत पालती हैं। मेरी रायमें आपको ऐसे वहमोंको आश्रय न देना चाहिये, खास तौरपर जबकि छुआछूतके कलंकका तेजीसे अन्त आ रहा है।

मेरी यह आपसे आशा है कि जो लोग किसी हालतमें भी मांस-मछली नहीं खाना चाहते उनके लिये आप एक चुस्त निरामिष भोजनालयका प्रबंध करेंगे।

आपका,

मो० क० गांधी

पत्रकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४४४४) से। सौजन्य : डॉ० विलियम एच० टैंडी

३२०. पत्र : महादेव देसाईको

२० अक्तूबर, १९३७

चि० महादेव,

पट्टणीने[1] तो गजब कर दिया। मैं आज कुछ नहीं भेज रहा हूँ। टैंडी आ गये। हमने आधे घंटेमें [सारा काम] खत्म कर दिया। मुझे वे बहुत सज्जन जान पड़े। हाँ, आज मैं कुछ नहीं भेज रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५८२) से।

१. प्रभाशंकर पट्टणी।

३२१. पत्र : अमृतकौरको

सेगाँव
२०/२१ अक्तूबर, १९३७

प्रिय विद्रोहिणी,

तुम्हारा पत्र मिला।

मेरे पास रहने की इच्छाको तुम यों जीत सकती हो तो निर्धारित समयतक मेरे पास रहो और बाकी समय अन्यत्र। जिसका कोई इलाज नहीं उसको सहन तो करना ही पड़ता है।

ठंडे मौसममें तुम्हें अपने-आपको अच्छी तरह लपेटकर रखना चाहिए, चाहे फैशनकी दृष्टिसे उसमें तुम जितनी अटपटी दिखो। नमक या सोडाके साथ गरम पानी, अलसीके बीज और भापके बारेमें क्या विचार है?

यदि तुम आग्रह करती रही कि खुर्शेद तुम्हारे साथ रहे तो वह मान जायेगी।

तुमने लड़कियोंके बारेम जो-कुछ कहा सो मैं समझ गया हूँ। इस विषयपर मेरे अपने भी कुछ विचार ह, जिनकी चर्चा हम मिलने पर करेंगे।

आशा है, तुम्हारा जुकाम बिलकुल ठीक हो गया होगा।

अनसूया[1] और इन्दुमती[2] आज ही अहमदाबादसे यहाँ आई हैं। और भी कई लोग आये हैं।

स्नेह।

डाकू

[पुनश्च :]

तुम्हारा आजका पत्र मिला। यदि मुझे नागपुरसे कोई आमन्त्रण नहीं आया तो निश्चय ही तुम यह नहीं चाहोगी कि मैं केवल तुम्हारी खातिर वहाँ आऊँ। थोड़ा इन्तजार करो। वह आने में अपना समय लेगा। इसमें जल्दबाजी न करो। हाँ, ग्रेस लंकास्टर तुम्हारी उपस्थितिमें यहाँ आयेगी। लेकिन 'यदि' क्यों कहें? तुम्हारे नागपुर जाने पर 'यदि'का प्रश्न कहाँ उठता है?

डाकू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८२५) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६९८१ से भी

१. अनसूया साराभाई, अहमदाबाद की मजदूर नेता।

२. इन्दुमती चिमनलाल सेठ।

३२२. पत्र : महादेव देसाईको

२१ अक्तूबर, १९३७

चि० महादेव,

तुमसे बन सके उतना ही काम करना। बीमार न पड़ना। जो मुसलमान भाई आ रहे हैं उन्हें काफी समय देना। मैंने शंकरलालसे भी कहा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५८३) से।

३२३. पत्र : सुभाषचन्द्र बोसको

[२२ अक्तूबर, १९३७ या उसके पूर्व][1]

मैं कलकत्ता जा सकूँ, इसके लिए अपने-आपको स्वस्थ रखने की कोशिश कर रहा हूँ और भगवानसे प्रार्थना भी कर रहा हूँ। मेरे वहाँ पहुँचने के बाद तुम्हें इस बातका ध्यान रखना होगा कि अंडमानके कैदियों और कार्य-समितिके सिलसिलेमें जो-कुछ करना पड़े उसके अलावा मुझे किसीसे मिलना-जुलना न पड़े, किसी और कार्यक्रममें शरीक न होना पड़े।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २२-१०-१९३७

१. यह रिपोर्ट दिनांक "वर्धा, २२ अक्तूबर" के अन्तर्गत छपी थी।

३२४. पत्र : एस० अम्बुजम्मालको

सेगाँव, वर्धा
२२ अक्तूबर, १९३७

चि० अम्बुजम,[1]

कितना अच्छा होता, अगर शिक्षा परिषद्के सिलसिलेमें तुम आज यहाँ होती! लेकिन यह कमलाकी खातिर लिखा गया है। अपनी माँ की खातिर मद्रास जाने की उसकी इच्छा नहीं है, लेकिन वह यह अवश्य चाहती है कि मैं ऐसी व्यवस्था करूँ जिससे उसकी माँ को अपनी गरीबीके कारण चिकित्साके बिना नहीं रहना पड़े। मैं चाहता हूँ कि तुम इसकी व्यवस्था करो और पता करो कि उसे सचमुच इसकी जरूरत है या नहीं। अगर जरूरत है तो जिस हदतक है उस हदतक उसकी सहायता करो। यह सब काम मैं तुम्हें यह मानकर सौंपता हूँ कि जितना तुम खर्च करोगी वह सब मुझसे ले लोगी।

हिन्दी प्रचारके निदेशकका क्या हुआ?

आशा है, तुम सब मजेमें हो। २५ को कलकत्ताके लिए रवाना होऊँगा। नव-म्बरके आसपास लौटूँगा।

बापूके आशीर्वाद[2]

मूल अंग्रेजीसे: अम्बुजम्माल पेपर्स। सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

३२५. पत्र : प्रभावतीको

२२ अक्तूबर, १९३७

चि० प्रभावती,

तेरा पत्र मिला। मैंने फाड़ डाला है। मैं ७ तारीखतक सीमा प्रान्त जा सकूँगा, यह कतई सम्भव नहीं है। मुझे उम्मीद है कि पहली अथवा दूसरी तारीखको मैं वर्धा अवश्य पहुँच जाऊँगा। इसलिए तू पूर्वनियोजित कार्यक्रमके अनुसार अवश्य आ जाना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५०४) से।

१ और २. यह हिन्दी में है।

३२६. भाषण : शिक्षा-परिषद्में – १[१]

[२२ अक्तूबर, १९३७]

तमाम आमन्त्रित सज्जनोंको धन्यवाद देने के पश्चात् गांधीजी ने कहा कि मैं आप लोगोंके सामने परिषद्के अध्यक्षकी हैसियतसे उपस्थित होऊँ या एक सदस्यकी हैसियतसे, मैंने तो आप लोगोंको यहाँ आने का कष्ट इसलिए दिया है कि मैंने विचार करने के लिए जो मुद्दे[२] तैयार किये हैं, उनपर आपकी और खासकर जो इनका विरोध करते हैं उनकी राय सुनूँ और उनसे सलाह लूँ। मैं चाहता हूँ कि आप मेरी इन तजवीजों पर स्वतन्त्र रूपसे स्पष्टताके साथ पूरी-पूरी चर्चा करें, क्योंकि मुझे अफसोस है कि मैं अपने कमजोर स्वास्थ्यकी वजहसे पंडालके बाहर आप सज्जनोंसे नहीं मिल सकता।

उन्होंने आगे कहा, जो बातें मैंने विचारार्थ रखी हैं, उनमें प्राथमिक शिक्षा और कॉलेजकी शिक्षा दोनोंका ही समावेश है। पर आप लोग तो अधिकतर प्राथमिक शिक्षाके बारेमें ही अपने विचार जाहिर करें। माध्यमिक शिक्षाको मैंने प्राथमिक शिक्षामें शामिल कर लिया है, क्योंकि प्राथमिक कही जानेवाली शिक्षा ही हमारे गाँवोंके कुछ थोड़े-से लोगोंको मयस्सर होती है। १९१५ से शुरू किये हुए अपने कई दौरोंमें मैंने सैकड़ों गाँव देखे हैं। मैं महज गाँवोंके ही लड़कों और लड़कियोंकी जरूरतोंके बारेमें कह रहा हूँ, जिनका बहुत बड़ा भाग बिलकुल निरक्षर है। मुझे कॉलेजकी शिक्षाका अनुभव नहीं है, हालाँकि कॉलेजके हजारों लड़कोंके सम्पर्कमें मैं आया हूँ, उनके साथ दिल खोलकर मैंने बातें की हैं और खूब पत्र-व्यवहार भी किया है। उनकी आवश्यकताओंको, उनकी नाकामयाबियोंको और उनकी तकलीफोंको मैं जानता हूँ। पर अच्छा हो कि आप अपनेको प्राथमिक शिक्षातक ही महदूद रखें। कारण यह है कि मुख्य प्रश्नके हल होते ही कॉलेजकी शिक्षाका गौण प्रश्न भी हल हो जायेगा।

मैंने खूब सोच-समझकर यह राय कायम की है कि प्राथमिक शिक्षाकी यह मौजूदा प्रणाली न केवल धन और समयका अपव्यय करनेवाली है, बल्कि नुकसानदेह भी है। अधिकांश लड़के अपने माँ-बापके तथा अपने खानदानी पेशा-धन्धेके कामके

१. यह और इससे अगला शीर्षक महादेव देसाई के "द प्राइमरी क्वेश्चन" (प्राथमिक प्रश्न) शीर्षक लेखमें से लिये गये हैं। परिषद्का आयोजन मारवाड़ी शिक्षा मण्डलकी रजत-जयन्तीके अवसरपर गांधीजी की अध्यक्षतामें किया गया था। सुबहका सत्र प्रातः साढ़े ८ बजेसे साढ़े ११ बजेतक चला था।

२. देखिए "शिक्षा-परिषद्के समक्ष उपस्थित प्रश्न", पृ० २१५-१७।

नहीं रह जाते। वे बुरी-बुरी आदतें सीख लेते हैं, शहरी तौर-तरीकोंके रंगमें रँग जाते हैं और थोड़ी-सी ऊपरी बातोंकी जानकारी ही उन्हें हासिल होती है, जिसे और चाहे जो नाम दिया जाये, पर शिक्षा तो हरगिज नहीं कहा जा सकता। इसका इलाज मेरे खयालमें यह है कि उन्हें उद्योग या दस्तकारीकी तालीमके जरिये शिक्षा दी जाये। मुझे इस प्रकारकी शिक्षाका कुछ व्यक्तिगत अनुभव है। मैंने दक्षिण आफ्रिकामें खुद अपने लड़कोंको और दूसरे बच्चोंको भी, जो अलग-अलग जातियों और धर्मोंके थे और जिनमें से कुछ बड़े कुशाग्र बुद्धि, कुछ मन्द और कुछ साधारण बुद्धिके थे, टॉल्स्टॉय फार्ममें किसी-न-किसी दस्तकारी, जैसे कि बढ़ईगिरी या जूते बनाने के कामके जरिये, इस प्रकारकी शिक्षा दी थी।[1] जूते बनाने का काम मैंने कैलेनबैकसे सीखा था और उन्होंने एक ट्रेपिस्ट मठमें इस हुनरकी शिक्षा प्राप्त की थी। मेरे लड़कोंने और उन सब बच्चोंने, मुझे विश्वास है, कुछ गँवाया नहीं, यद्यपि मैं उन्हें ऐसी शिक्षा नहीं दे सका जिससे कि खुद मुझे या उन्हें सन्तोष हुआ हो। कारण, समय मेरे पास बहुत कम रहता था और काम इतने अधिक रहते थे कि जिनका कोई शुमार नहीं।

मैं असल जोर धन्धे या उद्यमपर नहीं, बल्कि हाथ-उद्योग द्वारा शिक्षणपर दे रहा हूँ — साहित्य, इतिहास, भूगोल, गणित, विज्ञान इत्यादि सभी विषयोंके शिक्षण-पर। शायद इसपर यह आपत्ति उठाई जाये कि मध्ययुगमें तो दस्तकारीके अलावा और कोई चीज नहीं सिखाई जाती थी। मगर उस समय पेशे-धन्धेकी तालीम शैक्ष-णिक प्रयोजनके लिए नहीं होती थी। इस युगमें यह हुआ है कि लोग उन पेशोंको, जो उनके घरोंमें होते थे, भूल गये हैं, पढ़-लिखकर उन्होंने क्लर्कोंका काम हाथमें ले लिया है और इस तरह वे आज देहातके कामके नहीं रहे हैं। इसका यह नतीजा हुआ है कि किसी भी औसत दर्जेके गाँवमें हम जायें, तो वहाँ अच्छे, निपुण बढ़ई या लोहारका मिलना असम्भव हो गया है। दस्तकारियाँ करीब-करीब लुप्त हो गई हैं, और कताईका उद्योग, जो उपेक्षाकी नजरसे देखा जा रहा था, लैंकशायर चला गया, जहाँ कि उसका विकास हुआ। धन्यवाद है अंग्रेजोंकी अनोखी प्रतिभाको कि ऐसे हुनरोंको उन्होंने आज इस हदतक विकसित कर दिया है। यह बात मैं अपने औद्योगीकरण-सम्बन्धी विचारोंके बावजूद कहता हूँ।

इलाज इसका यह है कि हरएक दस्तकारीकी कला और विज्ञान व्यावहारिक शिक्षण द्वारा सिखाया जाये और फिर उस उद्योग द्वारा शिक्षा दी जाये। उदाहरणके लिए, तकलीपर की कताई-कलाको ही ले लीजिए। इसके प्रशिक्षणके लिए और भी कई तरहकी बातोंका ज्ञान कराना आवश्यक है — जैसे कपासकी अलग-अलग किस्मोंका और हिन्दुस्तानके विभिन्न प्रान्तोंकी तरह-तरहकी जमीनोंका ज्ञान, दस्तकारीके विनाशके

१. देखिए खण्ड ३९, पृ० २५५-६०।

इतिहास और उसके राजनीतिक कारणोंका ज्ञान, जिसमें भारतमें अंग्रेजी राज्यका इतिहास भी आ जायेगा। इसी तरह गणित इत्यादि कई विषयोंकी भी शिक्षा आवश्यक होगी। मैं अपने छोटे पोते पर[1] इसका प्रयोग कर रहा हूँ, जो शायद ही यह महसूस करता हो कि उसे कुछ सिखाया जा रहा है; क्योंकि वह तो हमेशा खेलता-कूदता, हँसता-गाता रहता है।

खास तौरसे तकलीका उदाहरण इसलिए दे रहा हूँ कि इसके विषयमें आप लोग मुझसे सवाल पूछें, क्योंकि मुझे इसके विषयमें बहुत-कुछ ज्ञान है। इसकी शक्ति और इसमें निहित काव्य मैंने देखा है। एक कारण यह भी है कि वस्त्र-निर्माणकी दस्तकारी ही ऐसी चीज है, जो सबको सिखाई जा सकती है, और तकलीपर कुछ खर्च भी नहीं होता। जितनी आशा की जाती थी, तकलीका मूल्य और महत्त्व उससे कहीं ज्यादा साबित हो चुका है। जिस हदतक भी हमने रचनात्मक कार्यक्रम पूरा किया है, उसीके परिणामस्वरूप सात प्रान्तोंमें आज कांग्रेसी मन्त्रिमण्डल बने हैं; और जिस हदतक इस कार्यक्रमपर अमल होगा, उसी हदतक इन मन्त्रिमण्डलोंको सफलता मिलेगी।

मैंने सोचा है कि अध्ययन-क्रम सात सालका रखा जाये। जहाँतक तकलीका सम्बन्ध है, इस अवधिमें विद्यार्थी बुनाई तकके व्यावहारिक ज्ञानमें (जिसमें रँगाई, डिजाईनिंग आदि भी शामिल हैं) निपुण हो जायेंगे। हम जितना कपड़ा पैदा कर सकेंगे, उसके लिए ग्राहक तो तैयार हैं ही।

मैं इसके लिए बहुत उत्सुक हूँ कि विद्यार्थियोंकी दस्तकारीकी चीजोंसे शिक्षाका खर्चा निकल आना चाहिए, क्योंकि मेरा यह विश्वास है कि हमारे देशके करोड़ों बच्चोंको तालीम देने का दूसरा कोई रास्ता ही नहीं है। जबतक सरकारी खजानेसे आवश्यक पैसा न मिल जाये, या वाइसराय फौजी खर्चको कम न कर दें, या ऐसा ही कोई कारगर जरिया न निकल आये, तबतक रास्ता देखते हम बैठे नहीं रह सकते। आप लोगोंको याद रखना चाहिए कि इस प्राथमिक शिक्षामें सफाई, आरोग्य और आहार-शास्त्रके प्रारम्भिक सिद्धान्तोंका समावेश भी हो जाता है। अपना काम खुद कर लेने तथा घरपर अपने माँ-बापके काममें मदद देने वगैरहकी शिक्षा भी इसमें शामिल है। वर्त्तमान पीढ़ीके लड़कोंको न तो सफाईका ज्ञान है, न वे यह जानते हैं कि आत्म-निर्भरता क्या चीज है; और वे शरीरसे भी काफी दुर्बल होते हैं। इसलिए उन्हें मैं लाजिमी तौरपर गाने और बाजेके साथ कवायद वगैरहके जरिये शारीरिक व्यायामकी भी तालीम दूँगा।

मुझपर यह दोषारोपण किया जा रहा है कि मैं साहित्यिक शिक्षाके खिलाफ हूँ। नहीं, यह बात नहीं है। मैं तो केवल वह तरीका बता रहा हूँ जिससे साहित्यिक

१. अनुमानत : कानम; देखिए "पत्र : अमृतलाल नानावटीको", पृ० २२४।

शिक्षा देनी चाहिए। और मेरे स्वावलम्बनके पहलूपर भी हमला किया गया है। यह कहा गया है कि प्राथमिक शिक्षापर जहाँ हमें करोड़ों रुपये खर्च करने चाहिए, वहाँ हम उलटे बच्चोंका ही शोषण करने जा रहे हैं। यह आशंका भी व्यक्त की जाती है कि इसमें भारी बरबादी होगी। लेकिन अनुभवने इस भयको गलत साबित कर दिया है। जहाँतक बच्चेपर बोझ डालने या उसका शोषण करने का सवाल है, मैं यह जानना चाहूँगा कि बच्चेको सर्वनाशसे बचाना क्या उसपर बोझ डालना है। तकली बच्चोंके खेलने के लिए एक काफी अच्छा खिलौना है। चूँकि यह एक उत्पादक खिलौना है, इसलिए यह नहीं कहा जा सकता कि यह खिलौनेसे किसी तरह कम है। आज भी बच्चे किसी हदतक अपने माँ-बापकी मदद करते ही हैं। हमारे सेगाँवके बच्चे खेती-बाड़ीकी बातें मुझसे कहीं ज्यादा जानते हैं, क्योंकि उन्हें अपने माँ-बापके साथ खेतोंपर काम करना पड़ता है। जहाँ बच्चेको इस बातका प्रोत्साहन दिया जायेगा कि वह काते और खेतीके काममें अपने माँ-बापकी मदद करे, वहाँ उसे ऐसा भी महसूस कराया जायेगा कि उसका सम्बन्ध सिर्फ अपने माँ-बापसे ही नहीं, बल्कि अपने गाँव और देशसे भी है और उसे उनकी भी कुछ सेवा करनी चाहिए। यही एकमात्र रास्ता है। मैं मन्त्रियोंसे कहूँगा कि खैरातमें शिक्षा देकर तो वे बच्चोंको असहाय ही बनायेंगे; लेकिन उनसे अपने पसीनेकी कमाईसे अपनी शिक्षाका खर्च निकलवाकर वे उन्हें बहादुर और आत्म-विश्वासी बनायेंगे।

यह पद्धति हिन्दू, मुसलमान, पारसी, ईसाई, सभीपर समान रूपसे लागू होगी। मुझसे पूछा गया है कि मैं धार्मिक शिक्षापर कोई जोर क्यों नहीं देता। इसका कारण यह है कि मैं उन्हें सच्चा धर्म, स्वावलम्बनका धर्म सिखा रहा हूँ।

इस तरह जो विद्यार्थी शिक्षित किये जायेंगे, उन्हें जरूरत पड़ने पर रोजी देने के लिए राज्य बँधा हुआ है। जहाँतक अध्यापकोंका प्रश्न है, प्रोफेसर शाहने अनिवार्य सेवाका उपाय सुझाया है।[1] इटली तथा अन्य देशोंके उदाहरण देकर उन्होंने इसका महत्त्व बताया है। उनका कहना है कि अगर मुसोलिनी इटलीके तरुणोंको देशकी सेवामें जुटा सकता है, तो हमें हिन्दुस्तानके तरुणोंको ऐसी सेवामें क्यों नहीं लगाना चाहिए? हमारे नौजवानोंको अपना रोजगार शुरू करने से पहले एक या दो सालके लिए अनिवार्य रूपसे अध्यापनका काम करना पड़े, तो उसे गुलामी क्यों कहा जाये। पिछले सत्रह सालोंमें आजादीके हमारे आन्दोलनने जो सफलता प्राप्त की है, उसमें नौजवानोंका योग कुछ कम नहीं है। इसलिए मैं उनसे अपने जीवनका एक साल राष्ट्र-सेवाके लिए अर्पण करने को कह सकता हूँ। इस सम्बन्धमें कानून बनाने की भी जरूरत हुई, तो वह जबरदस्ती नहीं होगी, क्योंकि हमारे प्रतिनिधियोंके बहुमतकी रजामन्दीके बिना वह कभी मंजूर नहीं हो सकता।

१. प्रोफेसर के० टी० शाहका लेख ३१-७-१९३७ के **हरिजन**में प्रकाशित हुआ था।

इसलिए मैं आपसे पूछूँगा कि शारीरिक परिश्रम द्वारा दी जानेवाली शिक्षा आपको रुचती है या नहीं? मेरे लिए तो इसे स्वावलम्बी बनाना ही इसकी उपयुक्त कसौटी होगी। सात सालके अन्तमें बालकोंको ऐसा तो हो ही जाना चाहिए कि अपनी शिक्षाका खर्च वे खुद उठा सकें और परिवारके कमाऊ सदस्य बन सकें।

कॉलेजकी शिक्षा मुख्यतः शहरोंकी चीज है। यह तो म नहीं कहूँगा कि यह भी प्राथमिक शिक्षाकी तरह बिलकुल असफल रही है, लेकिन इसका जो परिणाम हमारे सामने है, वह काफी निराशाजनक है। अन्यथा कोई ग्रेजुएट भला बेकार क्यों रहे?

तकलीको मैंने निश्चित उदाहरणके रूपमें सुझाया है, क्योंकि विनोबाको इसका सबसे ज्यादा व्यावहारिक अनुभव है, और इस सम्बन्धमें कोई एतराज उठाये जायें, तो उनका जवाब देने के लिए वे यहाँ मौजूद हैं। काका साहब भी इस बारेमें कुछ कह सकेंगे, हालाँकि उनका अनुभव व्यावहारिकके बनिस्बत सैद्धान्तिक अधिक है। उन्होंने जनरल आर्मस्ट्रांगकी लिखी हुई 'एजुकेशन फॉर लाइफ' (जीवनकी शिक्षा) पुस्तककी तरफ और उसमें भी खास तौरसे "हाथकी शिक्षा" वाले अध्यायकी ओर मेरा ध्यान खींचा है। स्वर्गीय मधुसूदन दास थे तो वकील, लेकिन उनका यह विश्वास था कि अगर हम अपने हाथ-पैरोंसे काम न लेंगे, तो हमारा दिमाग कुन्द पड़ जायेगा और अगर वह काम करेगा भी तो वह शैतानका ही घर बनेगा। टॉल्स्टॉयने भी हमें अपनी बहुत-सी कहानियोंके द्वारा यही बात सिखाई है।

भाषणके अन्तमें गांधीजी ने स्वावलम्बी प्राथमिक शिक्षाकी अपनी योजनाके मूलभूत तत्त्वपर उपस्थित जनोंका ध्यान आकर्षित करते हुए कहा:

हमारे यहाँ साम्प्रदायिक झगड़े होते रहते हैं, लेकिन यह कोई हमारी ही खासियत नहीं है। इंग्लैण्डमें भी ऐसी ही लड़ाइयाँ हो चुकी हैं और आज ब्रिटिश साम्राज्यवाद सारे संसारका शत्रु हो रहा है। अगर हम साम्प्रदायिक और अन्तर्राष्ट्रीय संघर्षको समाप्त करना चाहें, तो हमारे लिए यह जरूरी है कि जिस शिक्षाका मैंने प्रतिपादन किया है, उससे अपने बालकोंको शिक्षित करके शुद्ध और दृढ़ आधारके साथ इसकी शुरुआत करें। अहिंसासे इस योजनाकी उत्पत्ति हुई है। पूर्ण मद्य-निषेधके राष्ट्रीय निश्चयके सिलसिलेमें मैंने इसे सुझाया है। लेकिन मैं कहता हूँ कि राजस्वमें कोई कमी न हो और हमारा खजाना भरा हुआ हो, तो भी अगर हम अपने बालकोंको शहरी न बनाना चाहें, तो यह शिक्षा अत्यन्त आवश्यक है। हमें तो उनको अपनी संस्कृति, अपनी सभ्यता और अपने देशकी सच्ची प्रतिभाका प्रतिनिधि बनाना है; और यह उन्हें स्वावलम्बी प्राथमिक शिक्षा देने से ही हो सकता है। यूरोपका उदाहरण हमारे लिए कोई उदाहरण नहीं है, क्योंकि वह हिंसामें विश्वास करता है और इसलिए उसकी सब योजनाओं और उसके सभी कार्यक्रमोंका आधार हिंसा ही होती है। रूसने जो सफलता हासिल की है, उसको मैं कम महत्त्वपूर्ण नहीं

समझता, लेकिन उसका सारा ढाँचा पशुबल और हिंसाके आधारपर खड़ा है। अगर हिन्दुस्तानने हिंसाके परित्यागका निश्चय किया है, तो उसे जिस अनुशासनमें से होकर गुजरना पड़ेगा, यह शिक्षा-पद्धति उसका एक अभिन्न अंग बन जाती है। हमसे कहा जाता है कि इंग्लैण्ड शिक्षापर लाखों रुपया खर्च करता है और यही हाल अमेरिकाका भी है; लेकिन हम यह भूल जाते हैं कि यह सब धन शोषणसे ही प्राप्त होता है। उन्होंने शोषणकी कलाको विज्ञानका रूप दे दिया है, जिससे उनके लिए अपने बालकोंको ऐसी महँगी शिक्षा देना सम्भव हो गया है। लेकिन हम तो शोषणकी बात न सोच सकते हैं और न सोचेंगे ही। इसलिए हमारे पास शिक्षाकी इस योजनाके सिवा, जिसका आधार अहिंसापर है, और कोई मार्ग ही नहीं है।[1]

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ३०-१०-१९३७

३२७. भाषण: शिक्षा-परिषद्में – २

२२ अक्तूबर, १९३७

तीसरे पहरके सत्रमें[2] गांधीजी ने अपने भाषणका आरम्भ कुछ आलोचनाओंका उत्तर देते हुए किया। उन्होंने कहा कि तकली एकमात्र साधन नहीं है, लेकिन वही एकमात्र ऐसी चीज है जिसे सार्वत्रिक बनाया जा सकता है। और भी चीजें हैं, जैसे कागज बनाना, ताड़का गुड़ बनाना आदि। यह पता लगाना मन्त्रियोंका काम है कि किस स्कूलके लिए कौन-सी दस्तकारी सर्वोत्तम रहेगी। जो लोग मशीनोंके पक्षपाती हैं, उन्हें मैं चेतावनी देना चाहता हूँ कि मशीनपर बहुत ज्यादा जोर देने से इस बातका खतरा है कि मनुष्य भी मशीन बन जायें। जो लोग मशीन-युगमें रहना चाहते हैं उनके लिए मेरी योजना बेकार है, लेकिन मैं उन्हें यह भी बता देना चाहता हूँ कि मशीनोंके जरिये गाँववालोंको जीवित रख सकना असम्भव होगा। जिस देशमें ३० करोड़ जिन्दा मशीनें हैं वहाँ नई मुर्दा मशीनें लाने का विचार व्यर्थ है। डॉ० जाकिर हुसैनका यह कहना ठीक नहीं है कि यह योजना सैद्धान्तिक दृष्टिसे ठीक हो या न हो, शैक्षणिक दृष्टिसे ठीक है।[3] एक महिला, जिन्हें [अमेरिकाकी] "प्रोजेक्ट"

१. उसके बाद जो चर्चा हुई उसमें निम्नलिखित लोगोंने भाग लिया: सर्वश्री जाकिर हुसैन, मौलवी अब्दुल हक, सौदामिनी मेहता, के० टी० शाह, तिजारे, खामगाँव राष्ट्रीय शालाके प्रिंसिपल, भागवत, डॉ० सैयद महमूद और बालूभाई ठाकोर।

२. यह तीसरे पहर २-३० से ५ बजेतक चला था।

३. डॉ० जाकिर हुसैनने सुबहके सत्रमें चर्चामें भाग लेते हुए कहा था कि गांधीजी की योजनाको एक सही शैक्षणिक योजना मानता हूँ, भले ही कोई शहरी सभ्यतामें विश्वास करता हो या ग्रामीण सभ्यतामें, हिंसामें करता हो या अहिंसामें।

पद्धतिका ज्ञान है, पिछले दिनों मेरे पास आई थीं। उन्होंने कहा कि "प्रोजेक्ट"-पद्धति और मेरी योजनामें जबरदस्त अन्तर है। लेकिन मैं यह नहीं चाहता कि बिना अच्छी तरह कायल हुए आप मेरी योजनाको स्वीकार करें। अगर हमारे अपने लोग ही ईमानदारीसे काम करें तो इन स्कूलोंसे गुलाम नहीं बल्कि कुशल कारीगर तैयार होकर बाहर आयेंगे। बच्चोंसे जो भी श्रम कराया जाये वह निश्चय ही दो पैसे प्रति-घंटेके मूल्यका होना चाहिए।

लेकिन मैं यह नहीं चाहता कि आप लोग मेरा खयाल करके कोई चीज स्वीकार कर लें। मैं तो मौतके दरवाजेपर खड़ा हूँ, और मैं यह नहीं चाहता कि जबरदस्ती कोई चीज लोगोंके गले उतार दूँ। इस योजनाको पूरी तरह विचार करने के बाद ही स्वीकार किया जाना चाहिए, ताकि इसे कुछ समयके बाद ही छोड़ न देना पड़े। मैं प्रोफेसर शाहकी इस बातसे सहमत हूँ कि वह राज्य किसी कामका नहीं है जो अपने बेरोजगार लोगोंके लिए ठीक व्यवस्था नहीं कर सकता। लेकिन भीख देना बेरोजगारीकी समस्याका हल नहीं है। मैं हरएक आदमीको काम दूँगा और अगर पैसा नहीं दे सकता तो खाना दूँगा। ईश्वरने हमें खाने, पीने और मौज करने के लिए नहीं पैदा किया है, बल्कि पसीना बहाकर अपना भोजन प्राप्त करने के लिए पैदा किया है।[1]

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ३०-१०-१९३७

३२८. नागरिक स्वतन्त्रता

गुरुदेवने नागरिक स्वतन्त्रताका काव्य-गान[2] किया है। यद्यपि उनका वह वक्तव्य समस्त संसारमें प्रसिद्धि पा चुका है, फिर भी 'हरिजन'-जैसे साप्ताहिक पत्रमें उद्धृत करना अनुचित न होगा। वह इसी अंकमें अन्यत्र दिया जा रहा है। "उद्धरेदात्मनात्मानं"[3] अथवा "आत्मैव ह्यात्मानो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः"[4] को ही उन्होंने अपनी सुललित भाषामें कहा है।

१. इसके बादके वक्ताओंमें अन्य लोगोंके अलावा विनोबा भावे, प्रफुल्ल चन्द्र राय, काकासाहब कालेलकर, के० टी० शाह, देव शर्मा, एम० एस० हुसैन, नाना आठवले, एन० आर० मलकानी, नानाभाई भट्ट, बी० जी० खेर, सुब्बरायन और विश्वनाथ दास थे। पहले दिनकी कार्यवाहीके बाद परिषद्ने गांधीजी की योजनापर विचार करनेवाली समितिका रूप ले लिया।

२. रवीन्द्रनाथ ठाकुरने १७ अक्तूबर, १९३७ को "भारतमें नागरिक स्वतन्त्रता" पर लन्दनमें होनेवाले सम्मेलनके लिए अपना एक सन्देश भेजा था।

३ और ४. भगवद्गीता, ६, ५।

नागरिक स्वतन्त्रताका अर्थ अपराध करने की आजादी नहीं है। जब कानून और व्यवस्था लोक-नियन्त्रणमें हो, तब जिन मन्त्रियोंके अधीन यह विभाग होता है, वे यदि लोक-मतके खिलाफ कुछ करने लगें तो एक दिन भी नहीं टिक सकते। यह सच है कि विधान-सभाएँ अभी समस्त जनताका प्रतिनिधित्व नहीं कर रही हैं, फिर भी मताधिकार इतना व्यापक तो जरूर हो गया है कि कानून और व्यवस्थाके विषयमें ये सभाएँ राष्ट्रके मतका प्रतिनिधित्व कर सकती हैं। आज देशके सात प्रान्तोंमें कांग्रेसका शासन चल रहा है। मालूम होता है, इसका अर्थ कुछ लोगोंने यह समझ रखा है कि कमसे-कम इन प्रान्तोंमें तो आदमी जो चाहे सो कह और कर सकता है। पर जहाँतक मैं कांग्रेसके मानसको समझता हूँ, वह इस प्रकारकी स्वच्छन्दताको बर्दाश्त नहीं करेगी। नागरिक स्वाधीनताका अर्थ यह है कि साधारण कानूनकी मर्यादाके अन्दर रहते हुए आदमी जो चाहे कहे और करे। "साधारण" शब्दका प्रयोग यहाँ जान-बूझकर किया गया है। विशेषाधिकार देनेवाले कानूनोंकी बात तो छोड़ ही दें, दण्ड-संहिता और दण्ड-प्रक्रिया-संहिताके अन्दर भी विदेशी शासकोंने अपनी रक्षाके लिए कितनी ही धाराएँ डाल रखी हैं। इन धाराओंको हम बड़ी आसानीसे ढूँढ़ सकते हैं और उन्हें रद कर दिया जाना चाहिए। किन्तु सच्ची कसौटी कानून और व्यवस्थाके लिए जिम्मेदार मन्त्रियोंके अधिकारोंकी कार्य-समिति द्वारा की गई व्याख्या है। इसलिए कार्य-समिति कांग्रेसी मन्त्रियोंके मार्ग-दर्शनके लिए जो निर्देश जारी करे उन्हें ध्यानमें रखते हुए मन्त्रिगण, मेरी बताई मर्यादाओंके अन्दर, अपनी सत्ताका उपयोग उन लोगोंके खिलाफ कर सकते हैं जो नागरिक स्वाधीनताके नाम-पर अराजकताका प्रचार करते हैं।

कुछ लोगोंका कहना है कि कांग्रेसी मन्त्री तो अहिंसाके लिए प्रतिज्ञाबद्ध हैं। इसलिए वे ऐसे कानूनका उपयोग नहीं कर सकते जिसमें सजाका विधान हो। कांग्रेस द्वारा स्वीकृत अहिंसाका मैं ऐसा अर्थ नहीं करता। मैं खुद अभी कोई ऐसा मार्ग नहीं खोज पाया हूँ जिसका अनुसरण करके हर तरहकी कल्पनीय परिस्थितिमें हम सजाओं और दण्डात्मक प्रतिबन्धोंके बगैर काम चला सकें। अगर इस प्रसंगमें कहा जा सके तो कहूँगा कि निःसन्देह सजाएँ भी अहिंसक ही होनी चाहिए। जिस प्रकार हिंसाका, सैनिक शास्त्रके नामसे ज्ञात, अपना एक अलग शास्त्र है, जिसमें संहारके ऐसे-ऐसे तरीके तथा साधन ढूँढ़े गये हैं जिनके बारेमें पहले कभी किसीने सुना भी नहीं था, उसी प्रकार अहिंसाका भी एक शास्त्र और कला है। राजनीतिके क्षेत्रमें अहिंसा एक नया शस्त्र है, जिसका अभी विकास हो रहा है। उसमें निहित व्यापक सम्भावनाओंका अभी अनुसन्धान नहीं हो पाया है। अनेक क्षेत्रोंमें और बड़े पैमानेपर जब अहिंसाका प्रयोग होने लगेगा तब इस विषयमें अन्वेषण भी हो सकेंगे। अगर कांग्रेसके मन्त्रियोंको अहिंसामें विश्वास होगा, तो वे इस अन्वेषण-कार्यको आगे बढ़कर अपने हाथोंमें ले लेंगे। लेकिन वे यह अन्वेषण-कार्य कर रहे हों, उस दौरान — बल्कि वे यह काम करें या न करें तब भी — इसमें कोई शक नहीं कि वे ऐसे कार्योंको या भाषणोंको कभी बर्दाश्त नहीं कर सकते जिनसे हिंसाको उत्तेजना मिलती हो, भले ही

उन्हें लोग इस कारण हिंसावृत्तिवाला ही क्यों न बतायें। जब लोग देखें कि उन्हें ऐसे मन्त्रियोंकी सेवाओंकी जरूरत नहीं है, तो वे अपने प्रतिनिधियोंके जरिये अपनी असम्मति प्रकट कर दें। अगर कांग्रेसकी ओरसे मन्त्रियोंको कोई निश्चित निर्देश न मिले हों तो मन्त्रियोंके लिए यह उचित होगा कि वे अपनी प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीको या कार्य-समितिको सूचित कर दें कि उनकी रायमें जनतामें से अमुक लोगोंका व्यवहार हिंसोत्तेजक है, और उसके सम्बन्धमें वे आवश्यक निर्देश माँगें। अगर उनके उच्चाधिकारी उनकी सिफारिशोंको मंजूर न करें तो मन्त्री अपने इस्तीफे पेश कर दें। उन्हें परिस्थितिको यहाँतक बिगड़ने नहीं देना चाहिए कि फौजको बुलाने की नौबत आ जाये। मेरी रायमें तो यदि किसी मन्त्रीको फौजको —— जिसपर जनताका नियन्त्रण नहीं है —— बुलाना पड़े तो यह राजनीतिक दिवालियापन होगा। अहिंसाकी किसी भी योजनामें देशकी आन्तरिक शान्तिके लिए तो फौजकी जरूरत होनी ही नहीं चाहिए।

मैं तो इस भारत अधिनियमका अर्थ यह लगाता हूँ कि उसमें कांग्रेसवादियोंको अनजाने ही यह चुनौती दी गई है कि वे अहिंसाकी महत्ता और उसमें अपनी अटल श्रद्धा साबित करें। अगर कांग्रेस इस बातको साबित कर दे तो अधिकांश सुरक्षात्मक पूर्वोपाय (सेफगार्ड्स) अपने-आप बेकार हो जायेंगे, और अहिंसात्मक संघर्ष अथवा सविनय अवज्ञाके बिना भी कांग्रेस अपने लक्ष्यकी सिद्धि कर लेगी। अगर कांग्रेस जनताके अन्दर अहिंसाकी भावना इतनी पूर्णताके साथ न भर सकी हो तो उसे अल्पसंख्यक बनकर विरोध-पक्षमें रहना चाहिए। यदि वह अपना सिद्धान्त बदल दे तो बात और है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २३-१०-१९३७

३२९. भारतीय उद्योग

अक्सर यह प्रश्न पूछा जाता है कि भारतीय उद्योगसे क्या मतलब है? यह प्रश्न आम तौरपर हमारी स्वदेशी प्रदर्शनियोंके सम्बन्धमें पूछा जाता है। पहले यह दावा किया जाता था कि हिन्दुस्तानमें चलनेवाले किसी भी उद्योगको हम हिन्दुस्तानी उद्योग कह सकते हैं। इस तरह, ऐसा उद्योग भी हिन्दुस्तानी ही समझा जाता था जिसे भारतमें अस्थायी तौरपर बसे हुए यूरोपीय लोग विदेशसे पूँजी, कुशल इंजीनियर तथा कारीगर और मशीनें लाकर यहाँ चलाते थे। यह साबित हो जाने पर भी कि देशकी आम जनताके लिए वह हानिकारक है, उसे भारतीय उद्योग ही माना जाता था। इस व्याख्यासे हम अब बहुत आगे बढ़ गये हैं। किसी भी उद्योगको भारतीय तभी कहा जा सकता है जब यह सिद्ध हो जाये कि वह जन-साधारणके लिए हितकारी है और उसमें काम करनेवाले कुशल कारीगर व मजदूर, दोनों भारतीय हैं। उसकी पूँजी और यन्त्र भी भारतीय होने चाहिए; और उस उद्योगमें जो मजदूर काम करते हों उन्हें उससे पेट भरने लायक मजदूरी मिलनी चाहिए, उनके

रहने के लिए साफ-सुथरे और सुविधाजनक मकान होने चाहिए, और मजदूरोंके बच्चोंके लिए भी मिल-मालिकोंको पर्याप्त सुविधा कर देनी चाहिए। यह भारतीय उद्योगकी आदर्श व्याख्या है। सिर्फ अ० भा० चरखासंघ और अ० भा० ग्रामोद्योग संघ ही शायद कुछ हदतक इस परिभाषाके दायरेमें आते हैं। इन दोनों संघोंको भी इस दिशामें अभी काफी लम्बी मंजिल तय करनी है। फिर भी, इस व्याख्याका शत-प्रति-शत अनुसरण करना इन संघोंका तात्कालिक ध्येय है।

पर इस व्याख्याके, और कांग्रेसमें भी सन् १९२० के पहले जो व्याख्या प्रचलित थी उसके बीच दूसरी कई व्याख्याओंका समावेश हो जाता है। साधारणतया मिलके कपड़ेके अलावा भारतमें बनी हुई सब चीजें कांग्रेस द्वारा की गई स्वदेशीकी व्याख्यामें आ जाती हैं। सामान्यत: यह दावा किया जा सकता है कि कपड़ा मिल-उद्योग भारतीय उद्योग है। पर जापान और लैंकशायरके साथ टक्कर लेने की शक्तिसे युक्त होते हुए भी यह उद्योग जितने अंशोंमें खादीपर हावी होता है उतने ही अंशोंमें जन-साधारणका शोषण करता है और उसकी दरिद्रताको बढ़ाता है। आजकल सारे देशमें भारी-भारी यान्त्रिक उद्योग खड़े कर देने की धुनमें मेरे इस विचारको बिल्कुल ठुकराया भले न गया हो, लेकिन इसके विषयमें शंका तो उठाई ही गई है। यह कहा गया है कि यान्त्रिक उद्योगोंकी प्रगतिके कारण यदि जन-साधारणकी दरिद्रता बढ़ती जाती है तो यह चीज अनिवार्य है, और इसलिए इसको सहन करना ही चाहिए। इस अनिष्टको सहन करना तो दूर, मैं तो यह भी नहीं मानता कि यह अनिवार्य है। अखिल भारतीय चरखासंघने सफलतापूर्वक यह बता दिया है कि लोगोंके सिर्फ फुर्सतके समयका उपयोग अगर कातने और उससे सम्बन्धित अन्य क्रियाओंमें किया जाये, तो मात्र इतनेसे ही गाँवोंमें भारतकी जरूरतके लायक कपड़ा तैयार हो सकता है। कठिनाई तो जनतासे मिलका कपड़ा छुड़वाने में है। यह कैसे हो सकता है, इसकी चर्चा करने का यह प्रसंग नहीं है। इस समय मेरा हेतु करोड़ों ग्रामवासियोंको ध्यानमें रखकर मैंने भारतीय उद्योगकी जो व्याख्या की है उसको और उस व्याख्याके लिए अपने कारणोंको प्रस्तुत करने का था। और इतना तो सभीको स्पष्ट समझ लेना चाहिए कि राष्ट्रीय प्रदर्शनियाँ केवल ऐसे ही उद्योगोंके लिए आयोजित की जानी चाहिए, जिनको हर तरहसे जनताके समर्थनकी जरूरत है। जो उद्योग बिना किसी प्रदर्शनी आदिकी सहायताके ही खूब तरक्की कर रहे हों, और जो खुद ही अपनी प्रदर्शनियोंका आयोजन कर लेते हों उनके लिए राष्ट्रीय संस्थाओंको किसी प्रदर्शनीका आयोजन करने की आवश्यकता नहीं है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २३-१०-१९३७

३३०. पत्र : प्राणजीवनको

२३ अक्तूबर, १९३७

भाई प्राणजीवन,

यदि वर्षोंसे चला आ रहा हर विद्यालय अपने इतिहासपर दृष्टि डाले तो [उसमें पढ़े हुए लोगोंमें से] कोई-न-कोई व्यक्ति ऐसा मिल ही जायेगा जो अन्तमें प्रसिद्धिको प्राप्त हुआ हो। इसलिए मैं तो ऐसी चीजोंको संयोग ही मानता हूँ। जैसा आपका है वैसे पुराने विद्यालयके लिए तो पुलकित होने का अवसर तब होगा जब वह सुधार आदि करके इतनी प्रगति कर ले कि अपने क्षेत्रमें अद्वितीय माना जाये। संयोगपर अभिमान कैसा?

मोहनदासके वन्देमातरम्

[राष्ट्रीय] शाला, राजकोट

गुजरातीकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य: प्यारेलाल

३३१. पत्र : द० बा० कालेलकरको

सेगाँव

२३ अक्तूबर, १९३७

चि० काका,

इसके साथ म वे पत्र वापस भेज रहा हूँ जो कबितको पढ़ाये जाने चाहिए। इनके उत्तरमें उसे जो लिखना हो सो लिख भेजे, क्योंकि तुम देखोगे कि उसने आनन्द-बाबूपर काफी जोरोंसे प्रहार किया है। यदि वह स्वीकार करता है कि उसने अति-शयोक्तिसे काम लिया है तो उसने जिस उत्साहके साथ उनपर आरोप लगाया है और उसका प्रचार किया है, उसी उत्साहके साथ उसे उस आरोपको वापस ले लेना चाहिए और यदि वह ऐसा नहीं करता तो उसे उस आरोपको साबित करने के लिए तैयार रहना चाहिए। ऐसी शिकायतें उसने मुझसे क्यों नहीं कीं? यह भी जानने लायक बात है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७७०९) से।

३३२. पत्र : तुलसी मेहरको

सेगाँव, वर्धा
२३ अक्तूबर, १९३७

चि० तुलसी मेहर,

तुम्हारा खत मिला। ऐसे ही लिखा करो।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६५५३) से।

३३३. पत्र : भगवान देवीको[1]

२३ अक्तूबर, १९३७

प्रिय बहन[2]

तुम्हारे एक हजार रूपीये मिल गये थे। वह हरिजन कार्यमें लगाये जायेंगे। जिसको ईश्वरने धन दिया है उनका धर्म तो यह है कि अपने लिए जितना आरोग्यको सुरक्षीत रखते हुए कमसे-कम ले सकते है उतना ले कर नियमबद्ध दान करते जाय। नियमित रूपसे जो थोड़ा-सा भी किया जाता हो वह अनियमित रूपसे बहुत करने से कई गुना अधिक फल देता है। ईश्वरकी सारी सृष्टि अगर नियमबद्ध न होती तो एक दिन भी चलनेवाली नहीं थी।

बापूके आशीश

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे; सौजन्य : नारायण देसाई

१. घनश्यामदास बिड़लाकी बहन।
२. सम्बोधन प्यारेलाल पेपर्समें लिया गया है।

३३४. भाषण : शिक्षा-परिषद्‌में[1]

२३ अक्तूबर, १९३७

गांधीजी ने चर्चाका उपसंहार करते हुए कहा कि आप सब लोग यहाँ आये, और इस काममें योग दिया, इसके लिए मैं आपका आभारी हूँ। आप लोगोंसे मैं अभी और भी अधिक सहयोग की आशा रखूँगा, क्योंकि यह परिषद् तो अभी पहली ही है, और ऐसी तो कई परिषदें हमें करनी पड़ेंगी। मालवीयजी ने मुझे चेतावनीका तार भेजा है, पर उन्हें मैं तसल्ली दे सकता हूँ कि इस परिषद्‌में कोई अन्तिम फैसला नहीं होना है, क्योंकि यह तो शोधकोंकी परिषद् है, और हरएक व्यक्तिको अपना सुझाव रखने और आलोचना करने को आमन्त्रित किया गया है। किसी भी चीजको जैसे-तैसे जल्दीमें करा डालने का मेरा कोई विचार नहीं है। राष्ट्रीय शिक्षा और मद्य-निषेधकी कल्पनाएँ तो असहयोगकी-जितनी ही पुरानी हैं, पर यह चीज इस रूपमें तो मुझे आज देशकी बदली हुई परिस्थितियोंमें सूझी है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ३०-१०-१९३७

१. गांधीजी ने समिति द्वारा तैयार किये गये प्रस्ताव विचारके लिए प्रस्तुत किये। पास किये प्रस्ताव इस प्रकार थे:

१. परिषद् की रायमें राष्ट्रव्यापी स्तरपर सात वर्षतक निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा दी जानी चाहिए।

२. शिक्षाका माध्यम मातृ-भाषा हो।

३. परिषद् महात्मा गांधी द्वारा रखे गये इस प्रस्तावका अनुमोदन करती है कि सात वर्षकी इस अवधिमें शिक्षा किसी-न-किसी उद्योग और उत्पादक कार्यके जरिये दी जानी चाहिए और बच्चोंमें जिन अन्य योग्यताओंका विकास करना हो या उन्हें जो अन्य प्रशिक्षण देना हो वह सब बच्चोंके वातावरणको ध्यानमें रखते हुए किसी चुनी हुई दस्तकारीके साथ जुड़ा होना चाहिए।

४. परिषद् यह आशा करती है कि यह शिक्षा-पद्धति धीरे-धीरे शिक्षकोंका पारिश्रमिक चुका सकने में समर्थ हो जायेगी।

३३५. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

[२५ अक्तूबर, १९३७ के पूर्व][1]

चि० मणिलाल और सुशीला,

यदि तुम दोनों स्वदेश लौट आओगे तो वहाँके कामको कौन देखेगा? वहाँ ऐसा कौन है जो सम्पादकके पदको सम्भाल सके? गुजरातीमें तेरी मदद कौन करता है? क्रिस्टोफर किस धर्मका पालन करता है? विवाह-विधि किसने सम्पन्न करवाई थी? दोनोंके धर्मोंकी रक्षा हुई है अथवा धर्म तो नाम-मात्रको ही है? यहाँ भी इसी तरहका एक प्रसंग उठ खड़ा हुआ है, इसीसे मैं इस तरहके प्रश्न पूछा रहा हूँ।

रामदास यदि वहाँ स्थायी रूपसे रहने लगे तब तो बहुत अच्छा हो।

देवदास दो-तीन दिनोंके लिए यहाँ आया है। मुझे ४-५ दिनोंके लिए कार्य-समितिकी बैठकमें भाग लेनेके लिए कलकत्ता जाना पड़ेगा। वहाँ देवदास साथ होगा और वहाँसे लक्ष्मीको लेने मद्रास जायेगा और वहाँसे वर्धा होता हुआ दिल्ली जायेगा।

तेरे कितने ग्राहक हैं? उसमें कितने मुसलमान हैं, कितने हिन्दू हैं और कितने ईसाई हैं? क्या कोई अंग्रेज ग्राहक भी है?

स्लोसबर्ग मुझसे आकर मिल गया। मुझे वह सज्जन जान पड़ा।

रिचका क्या हाल है? क्या वे तुझसे कोई सम्पर्क रखते हैं? एन्ड्रयूज फिलहाल हिन्दुस्तानमें हैं। शिमलामें रहते हैं; बहुत बीमार हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४७६३) से।

१. पत्रमें कलकत्तामें होनेवाली कार्य-समितिकी बैठकमें भाग लेनेके लिए गांधीजीके वहाँ जानेके उल्लेखके आधारपर।

३३६. पत्र : के० एफ० नरीमानको

१ वुडबर्न पार्क
कलकत्ता
२९ अक्तूबर, १९३७

भाई नरीमान,

तुमने मसूरमें जो असाधारण वक्तव्य दिया है उसे पढ़कर मुझे बड़ा दुःख हुआ। मैंने तुम्हें अभीतक इसलिए पत्र नहीं लिखा कि मैंने महादेवसे तुमसे यह पूछने के लिए कहा था कि अखबारोंमें वक्तव्यको जिस रूपमें पेश किया गया है, क्या वह सही है। उसने मुझे कल बताया कि तुमने अखबारमें छपे वक्तव्यकी पुष्टि कर दी है। क्या तुम यह महसूस नहीं करते कि इसमें तथ्योंको बहुत ज्यादा तोड़ा-मरोड़ा गया है? तुम्हारी स्वीकारोक्तिसे[1] मेरे स्वास्थ्यका निश्चय ही कोई ताल्लुक न था, क्योंकि मेरा काम खत्म हो चुका था और मेरे तारमें, जिसका तुमने जिक्र किया है, मेरे स्वास्थ्यका उल्लेख तुमने मुझसे जो निर्णय स्थगित रखने का आग्रह किया था उसके सन्दर्भमें हुआ था। मैंने और श्रीयुत बहादुरजीने जिस समय तुम्हें यह सुझाव दिया था कि यदि तुम्हें निर्णयमें सचाई दिखाई देती हो तो हम उस निर्णयको प्रकाशित करें, इसके बजाय तुम ही स्वीकारोक्ति कर लो तब हमारे मनमें तुम्हारे हितकी बात ही थी। उस समय तुम्हारा वकील भी साथ था। तुम्हें निर्णयका जो मसौदा दिया गया था उसमें तुमने कुछ फेर-बदल करने की भी माँग की थी, जिसे हमने स्वीकार कर लिया था। क्या तुम्हें याद है कि तुम्हारी स्वीकारोक्तिके साथ निम्नलिखित पत्र भी था?

बम्बई
१५ अक्तूबर, १९३७

पूज्य गांधीजी,

महादेवभाईके हाथ आपने जो मसौदा भेजा है और जिसमें श्रीयुत बहादुरजीकी लिखावटमें कुछ परिवर्तन भी हैं, वह मैं पढ़ गया हूँ। उसपर मैंने हस्ताक्षर कर दिये हैं, इसलिए मैं आशा करता हूँ कि निर्णय प्रकाशित नहीं किये जायेंगे। आपको मेरी वजहसे इतनी चिन्ता और परेशानी उठानी पड़ी, इसका मुझे सचमुच बड़ा अफसोस है और इसके लिए मैं आपसे क्षमा चाहता हूँ। आशा है, आप मुझे क्षमा कर देंगे।

आपका,
के० एफ० नरीमान

१. देखिए परिशिष्ट ६।

तुमने मैसूरमें जो वक्तव्य दिया है उससे पता चलता है कि तुमपर कतई भरोसा नहीं किया जा सकता। मुझे यह बताने की कोई आवश्यकता नहीं कि तुम्हें उस निर्णयको प्रकाशित करने की पूरी स्वतन्त्रता थी और है जिसकी प्रतियाँ तुम्हें १६ अक्तूबर, १९३७ को डाक द्वारा भेजी गई थीं। मैंने कार्य-समितिके सम्मुख सारे तथ्य पेश कर दिये हैं और मैं अब निर्णयकी प्रतियाँ भी उसके आगे रखने जा रहा हूँ।

हृदयसे तुम्हारा,

[अंग्रेजीसे]

ए० आई० सी० सी० फाइल सं० ७४७-ए, १९३७। सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

३३७. पत्र: टंडनजीको

२९ [अक्तूबर][1], १९३७

भाई टंडनजी,

मेरे बारेमें भी आपका तार मिला। उसके सिवाय मैंने और कुछ नहीं देखा था। उस बारेमें मुझको रिपोर्ट भेज दिया यह भी अच्छा हुआ। तारका उत्तर मैंने जानबूझकर नहीं दिया। इस वर्ष इतने तार आ गये, दुनियाके सब विभागसे, कि मुझको आश्चर्य हुआ। और मैंने ईश्वरका अनुग्रह जाना। आभार-प्रदर्शनके लिए छोटा-सा संदेश मैंने अखबारोंमें भेज दिया। किसीको व्यक्तिगत उत्तर नहीं देने का निश्चय किया। मुखसे उत्तर देना भी क्या? इतने प्रेमका उत्तर केवल कृतिसे ही दिया जा सकता है। देखें, ईश्वर मुझको किस बातमें अपना निमित्त बनायेगा।

पत्रकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य: प्यारेलाल

१. साधन-सूत्रमें "सितम्बर" है, जो स्पष्टतः चूक है; देखिए "वक्तव्य: समाचारपत्रोंको", पृ० २२६।

३३८. भेंट : राजनीतिक पीड़ितोंको[1]

·कलकत्ता
२९ अक्तूबर, १९३७

खबर है, गांधीजी ने शिष्टमण्डलसे कहा कि मैंने इस मामलेको बहुत गम्भीरतासे हाथमें लिया है और मुझसे जो-कुछ बन सकेगा सो करने के लिए मैं कटिबद्ध हूँ। उन्होंने आगे कहा कि मैं यदि पूरी तरहसे नहीं तो मुख्यतया इसी उद्देश्यसे बंगालमें आया हूँ और इस प्रश्नको लेकर मैं वाइसरायसे भी मिलने के लिए तैयार हूँ। उन्होंने शिष्टमण्डलसे अनुरोध किया कि वे लोग ऐसा कोई कार्य न करें जिसके कारण समस्याके समाधानमें कठिनाई हो।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ३०-१०-१९३७

३३९. ताड़ी नहीं, नीरा

कुछ लोग जाने-अनजाने यह कहने लगे हैं कि मैंने खट्टी ताड़ी (ताड़ीकी शराब) पीने की छूट दे दी है। मैंने यह बिलकुल स्पष्ट कर दिया है कि मद्य-निषेध तमाम मादक पेयों तथा वस्तुओंपर लागू होता है, और इसमें एक भी चीज अपवाद-रूप नहीं है। इसलिए सम्पूर्ण मद्य-निषेधकी किसी भी योजनामें ताड़ीकी शराबकी छूट कभी हो ही नहीं सकती। पर मैंने यह जरूर कहा है और फिर कहता हूँ कि ताजी मीठी ताड़ीका, जिसे "नीरा" कहते हैं, निषेध नहीं होना चाहिए, और खट्टी ताड़ीकी जगह नीरा पीने के रिवाजको प्रोत्साहन भी देना चाहिए। यह कैसे हो सकता है, इसका निर्णय तो मद्य-निषेधके लिए जिम्मेदार मन्त्री ही करेंगे।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ३०-१०-१९३७

१. बंगाल और पंजाबके राजनीतिक पीड़ितोंका एक शिष्टमण्डल· गांधीजी से· शामको मिला। ऐसा मालूम होता है कि प्रतिनिधियोंने गांधीजीसे अनुरोध किया कि वे राजनीतिक बन्दियोंकी रिहाईके प्रश्नको देशके सम्मुख एक प्रमुख समस्याके रूपमें पेश करें और आगे कहा कि इस प्रश्नको लेकर सरकारपर दबाव डालने की आवश्यकता हो तो कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलोंको पद-त्याग तक करना चाहिए।

३४०. समाज-सेवकोंकी अनिवार्य भरती

इस महत्त्वपूर्ण प्रबन्धका[१] मतलब यह नहीं है कि समाज-सेवकोंकी भरतीकी जो योजना इसमें प्रस्तुत की गई है उसके अलावा इसकी और कोई योजना हो ही नहीं सकती। इसमें समाज-सेवकोंकी भरतीकी व्यावहारिकता दिखाई गई है। यह योजना उस भरतीका एक रास्ता सुझाती है।

. . . आधुनिक स्वतन्त्र समाजोंमें अनिवार्य भरतीका उपयोग अबतक आम तौरपर राष्ट्रीय प्रतिरक्षा या साम्राज्यवादी आक्रमणसे बचावके लिए किया गया है। यदि इस देशमें हम सार्वजनिक अनिवार्य भरतीको – जिसमें स्त्री-पुरुष सभी शामिल होंगे – अपनायेंगे तो उसमें हमारा कोई विध्वंसक उद्देश्य नहीं होगा; बल्कि वह भरती राष्ट्रकी शुद्ध सेवा और सामाजिक पुर्निर्माणके निमित्त होगी।

कुछ देशोंमें कुछ लोगोंको ऐसी अनिवार्य और निःशुल्क सार्वजनिक सेवासे बरी कर दिया जाता है और अक्सर ऐसी सेवा करनेवालोंको कुछ एवजी लाभ भी दिये जाते हैं। इस देशमें भी हमें किसी ऐसे ही तरीकेसे काम लेना पड़ सकता है। हमारी राष्ट्रीय व्यवस्थामें यह नई चीज प्रभावकारी ढंगसे और सुचारु रूपसे काम कर सके, इसके लिए हमें इसको कई चरणोंमें हासिल करना पड़ सकता है। लेकिन इसकी नींव तो जल्द ही पड़ जानी चाहिए।

समाज-सेवकोंकी अनिवार्य भरतीका काम १८ से २५ सालके बीचकी उम्रके शिक्षित पुरुषोंसे शुरू करना चाहिए। भरती किये गये कार्यकर्त्ताओंके दलकी सहायताके लिए ब्रिटिश बालचरों या इतालवी बैलिला किस्मके बालक या बालिका स्वयंसेवकोंकी सहायक संस्थाएँ स्थापित की जा सकती हैं। भारतमें शिक्षित पुरुषोंका अनुपात ५ : १ और शिक्षित महिलाओंका अनुपात ५० : १ है। लेकिन जिस उम्रके लोगोंमें से भरती शुरू करनी चाहिए उस उम्रके लोगोंमें यह अनुपात शायद बेहतर हो — समझ लीजिए पुरुषोंमें ३ : १ और स्त्रियोंमें १० : १। "शिक्षित" शब्दका प्रयोग यहाँ किंचित् उदार, बल्कि कहिए, अति उदार अर्थोंमें किया गया है, क्योंकि इनमें वे लोग भी शामिल हैं जो केवल अपनी मातृभाषाकी दृष्टिसे साक्षर-मात्र हैं। . . . जो छात्र माध्यमिक स्तरकी पढ़ाई पूरी करने की अवस्थामें हैं, भरतीका काम उन्हींतक सीमित रखना शायद अधिक कार्य-साधक हो। बम्बई प्रान्तमें ऐसे १५ लाख छात्र

१. के० टी० शाहके इस प्रबन्धके कुछ अंश ही यहाँ दिये जा रहे हैं।

उपलब्ध हैं। इनमें से शायद २,५०,००० ही न्यूनतम शैक्षणिक कसौटी पर खरे उतरें और १,००,००० से भी कम ऊपर सुझाई उच्चतर कसौटी पर खरे उतरें।

हम अपना प्रयोग इन एक लाख लड़कोंसे शुरू कर सकते हैं। १८ साल या इससे कुछ अधिक उम्रके ये युवक जो सेवा करें उसे इन समर्थ लोगों द्वारा दिया जानेवाला एक प्रकारका दस प्रतिशतका व्यक्ति-कर मानना चाहिए, जो वे किस्मोंमें अदा कर रहे हैं। उनकी बेहतर शिक्षाको इस बातका प्रमाण मानना चाहिए कि उनमें यह कर चुकाने की योग्यता है।

उदाहरणके तौरपर बम्बई प्रान्तको लें। यहाँ हम जिन एक लाख शिक्षित युवकोंको लेकर अपना प्रयोग आरम्भ कर सकते हैं वे उस प्रान्तके २१,४८४ गाँवोंमें हमारे तात्कालिक उद्देश्यके लिए पर्याप्त होंगे। प्रत्येक गाँवके लिए प्रायः ५ सेवक उपलब्ध होंगे। इनके अलावा २५,००० स्त्रियाँ भी इनके काममें योग दे सकती हैं।

समाज-सेवाके सबसे जरूरी और तत्काल हाथमें लिये जानेवाले काम ये हैं: (क) अशिक्षा और अज्ञानको दूर करना; (ख) स्वास्थ्य और सफाईके बुनियादी ज्ञानका प्रचार; (ग) ग्रामीण लोगोंकी उत्पादक संस्थाओं और धन्धोंमें सुधार करना और उनमें सहायता देना।

अनिवार्य भरतीके लिए बनाये जानेवाले कानूनकी एक सबसे महत्त्वपूर्ण धारा सेवकोंको दिये जानेवाले कार्योंको सावधानीसे परिभाषित करने के सम्बन्धमें होगी। जबतक हरएक प्रान्तमें किये जानेवाले कामकी एक व्यापक योजना तैयार न कर ली जाये और उसपर स्वीकृति प्राप्त न हो जाये तबतक भरतीकी किसी भी योजनाको कार्यान्वित नहीं करना चाहिए। . . .

यहाँ जो योजना सुझाई गई है उसके अनुसार तैयार की जानेवाली सेवकोंकी सेनाको विशेष प्रशिक्षण — यूरोपके रंगरूटोंसे भी अधिक प्रशिक्षण — देना होगा, क्योंकि यूरोपके रंगरूट तो भरती होनेसे पूर्व अपने स्कूलोंमें भी कुछ सैनिक शिक्षा प्राप्त कर ही चुके होते हैं। भारतकी शिक्षा-प्रणालीमें औसत युवकोंके लिए ऐसी कोई सुविधा नहीं है।

हर प्रान्तमें मौजूदा स्कूलों और कालेजोंको ही प्रशिक्षण-संस्थाओंकी तरह विकसित करना चाहिए। इन संस्थाओंके शिक्षकोंके पास, विशेषकर ऊँची कक्षाओंके शिक्षकोंके पास तो जरूरतसे ज्यादा काम नहीं है और उन्हें वेतन भी कम नहीं मिलता है। शिक्षाके प्रत्येक विभागमें और शाखामें ऊपरसे लेकर नीचेतक हर किसीसे कमसे-कम एक घंटा सेवा अवश्य ली जानी चाहिए। सेवा-कालके एक वर्षमें से छः महीने इस तरहका गहन प्रशिक्षण दिया

जाना चाहिए। प्रत्येक सेवकको उसकी रुचि और पूर्व-प्रशिक्षणके अनुसार काम दिया जाना चाहिए।

इस तरह भरती किये जानेवाले लोगोंको प्रशिक्षण-काल और वास्तविक कार्य-कालमें वेतनके रूपमें कुछ नहीं दिया जायेगा। लेकिन उनका निर्वाह-खर्च सरकारको चलाना चाहिए और अपने घर जाने और वहाँसे कार्य-क्षेत्रतक आनेका व्यय भी सरकारको ही वहन करना चाहिए। लेकिन यह खर्च इतना नहीं होना चाहिए कि इसे चुकाना राज्यके लिए भारी हो जाये और न सेवकों द्वारा की जानेवाली सेवाके मूल्यसे ही उसे अधिक होना चाहिए।

जो लोग स्वेच्छासे और बिना किसी छूटके ऐसी सेवा करते हैं वे जब अपने निर्वाहके लिए रोजगारकी तलाश करने लगें तो सरकारी संस्थाओंको उन्हें प्राथमिकता देनी चाहिए। साथ ही सरकारको ऐसी व्यवस्था करनी चाहिए जिससे गैर-सरकारी संस्थाएँ भी उन्हें प्राथमिकता दें। सरकारके लिए यह करना आसान भी हो गया है, क्योंकि इन दिनों राज्यकी ओरसे उद्योगोंको आम तौरपर संरक्षण मिलता ही है और सरकार उद्योगपतियोंसे ऐसा कह सकती है कि अगर इन सेवकोंको प्राथमिकता नहीं दी गई तो वह अपना संरक्षण वापस ले लेगी। ऐसी भरतीके लिए बनाये जानेवाले बुनियादी कानूनमें इस प्रकारके पुरस्कारकी स्पष्ट व्यवस्था रहनी चाहिए।

अनिवार्य भरतीके लाभोंको विस्तारपूर्वक समझाने की जरूरत नहीं है। पहली बात तो यह कि इससे हमारे देशमें जिस अनिवार्य और तात्कालिक समाज-सेवाकी आवश्यकता है, उसपर होनेवाले खर्चका सवाल एक बड़ी हदतक हल हो जायेगा। साथ ही इससे लोगोंको नियमबद्ध ढंगसे और मिलजुल कर — तथाकथित समूह-भावनासे — काम करने की आदत पड़ेगी और भारत जिस अनुपात-दूरीके रोगसे ग्रस्त है, उसे दूर करनेके लिए कटिबद्ध समाजके लिए अपनेमें ऐसी आदत डालना अनिवार्य है। और ऐसे एक मार्गीकरण (रेजीमेंटेशन) — इस शब्दका प्रयोग इसका गलत अर्थ लगाये जानेकी आशंकाके बिना किया जा सकता है — के फलस्वरूप समाजके अधिकाधिक लोगोंको व्यक्तिगत सफाई और आरोग्यमय जीवनकी वे आदतें अपने-आप पड़ती चली जायेंगी जिन्हें अधिकांश लोग, यदि उन्हें अपनी मर्जीपर छोड़ दिया जाये तो, कोई महत्त्व नहीं देते और परिणामस्वरूप उनके स्वास्थ्य, स्वभाव और कार्यकुशलताको हानि पहुँचती है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ३०-१०-१९३७

३४१. एक कदम आगे

अभी जो शिक्षा-परिषद् हुई है उसका कार्य-विवरण इस अंकमें अन्यत्र दिया गया है।[1] जनता और कांग्रेसी मन्त्रियोंके आगे मेरी योजना पेश करने के काममें इस परिषद्से एक नया और महत्त्वपूर्ण प्रकरण प्रारम्भ होता है। इतने सारे मन्त्री परिषद्में उपस्थित थे, यह एक शुभ चिह्न था। परिषद्में जो आपत्तियाँ उठाई गईं और जो आलोचनाएँ हुईं, वे खासकर इस विचारके — मेरे किये हुए संकुचित अर्थमें भी — विरोधमें थीं कि शिक्षाको स्वावलम्बी होना चाहिए। इसलिए परिषद्ने जो प्रस्ताव पास किया है उसमें बहुत सावधानीसे काम लिया गया है। इसमें तो कोई सन्देह नहीं कि परिषद्को एक अज्ञात समुद्रमें नाव खेनी थी। उसके सामने एक भी सम्पूर्ण पूर्वोदाहरण नहीं था। मैंने जो विचार रखा है, अगर वह निर्दोष होगा, तो अमलमें लाने पर वह ठीक स्वरूप ग्रहण करके चल निकलेगा। अन्तमें तो जिनको स्वावलम्बनवाले भागपर श्रद्धा होगी उन्हींको इस विचारके अनुसार पाठशालाएँ चलाकर इसकी सचाईको साबित करके दिखाना है।

पूरी प्राथमिक शिक्षा, जिसमें अंग्रेजीको छोड़कर माध्यमिक अभ्यास-क्रमके भी सभी विषयोंको शामिल करने का इरादा है, किसी भी उद्योगके माध्यमसे देनी चाहिए, इस प्रश्नपर तो परिषद्में आश्चर्यजनक मतैक्य था। लड़कों और लड़कियोंके पूर्ण व्यक्तित्वका विकास उद्योग द्वारा करना है — यह तथ्य अपने-आपमें ऐसा है जो स्कूलोंको कारखाने बन जाने से बचाता है। क्योंकि लड़कों और लड़कियोंको जिस उद्योगकी शिक्षा मिलेगी उसमें अमुक हदतक निष्णात होने के अलावा उन्हें जो अन्य विषय सीखने होंगे उनमें भी उन्हें उतनी ही योग्यता दिखानी पड़ेगी।

इस योजनापर व्यावहारिक अमल किस तरह हो सकता है, और लड़के-लड़कियोंको एकके बाद दूसरे वर्षमें क्या-क्या सीखना होगा, यह तो हम डॉ० जाकिर हुसैनकी समितिके[2] परिश्रमपर से ही जान सकेंगे।

एक एतराज यह उठाया गया है कि परिषद्में क्या-क्या प्रस्ताव[3] पास करने हैं, यह तो पहलेसे ही निश्चित हो चुका था। इस एतराजमें जरा भी तथ्य नहीं

१. देखिए पृ० २९३-९९।

२. जाकिर हुसैन की अध्यक्षतामें नियुक्त इस समितिको परिषद्के प्रस्तावोंके आधारपर एक सुनियोजित पाठ्यक्रम निर्धारित करने और एक महीनेके अन्दर अपनी रिपोर्ट गांधीजी को देने के लिए कहा गया था। इस समितिके अन्य सदस्य थे: आर्यनायकम, ख्वाजा गुलाम सैयदैन, विनोबा भावे, द० बा० कालेलकर, श्री कृष्णदास जाजू, जे० सी० कुमारप्पा, आशादेवी, किशोरलाल मशरूवाला और के० टी० शाह।

३. प्रस्तावोंके लिए देखिए ३०५ पर पा० टि० १।

है। सारे देशमें से बिना सोचे-विचारे सारे शिक्षा-विशारदोंको भी बुलाना और उनसे एक ऐसी योजनापर, जो उनके लिए निःसन्देह क्रान्तिकारी योजना थी, अपना मत एका-एक व्यक्त करने के लिए कहना वस्तुतः असम्भव था। इसलिए ऐसे ही व्यक्तियोंको निमन्त्रण भेजा गया जिन्हें शिक्षकके रूपमें उद्योग-शिक्षणका कुछ अनुभव है। राष्ट्रीय शिक्षाका कार्य करनेवाले मेरे साथी इस नई कल्पनाको इस तरह सहानुभूतिपूर्वक ग्रहण कर लेंगे, यह तो खुद मैंने भी नहीं सोचा था। यह योजना जब जाकिर हुसैन समितिके सौजन्यसे ठोस और अधिक पूर्ण रूपमें जनताके आगे आयेगी, तब शिक्षा-विदोंके विशाल वर्गको इसपर विचार करने के लिए जरूर निमन्त्रण दिया जायेगा। जिन शिक्षाविदोंके पास सहायता दे सकनेवाले कुछ सुझाव हों उनसे मेरी प्रार्थना है कि वे कृपया वे सुझाव समितिके संयोजक और मन्त्री श्री आर्यनायकमके पास, वर्धाके पतेपर भेज दें।

परिषद्में एक वक्ताने जोर देकर यह कहा था कि छोटे-छोटे बच्चोंको शिक्षा देने का काम पुरुषोंकी अपेक्षा स्त्रियाँ अच्छी तरह कर सकती हैं; और कुमारियोंकी अपेक्षा माताएँ और भी अच्छी तरह कर सकती हैं। एक दूसरी दृष्टिसे भी प्रोफेसर शाहकी अनिवार्य सेवाकी योजनामें पुरुषोंकी अपेक्षा स्त्रियाँ ज्यादा उपयोगी बैठती हैं। जिन देशभक्त महिलाओंके पास फुरसतका समय हो उनके लिए इस बहुत बड़े सत्कार्यमें अपनी सेवा अर्पण करने का यह बड़ा सुन्दर अवसर है, इसमें सन्देह नहीं। लेकिन वे अगर तैयार हों तो उन्हें अच्छी तरह प्रारम्भिक प्रशिक्षण लेना पड़ेगा। आजीविकाकी तलाशमें पड़ी हुई गरजमन्द बहनें इस कामको एक धन्धा मानकर इसमें आने का विचार करती हों तो उससे कोई मतलब निकलनेका नहीं। वे अगर इस योजनामें आना चाहती हैं तो उन्हें शुद्ध सेवा-भावसे ही इसमें पड़ना चाहिए, और इसे अपना जीवन-कार्य बना लेना चाहिए। वे यदि स्वार्थी वृत्तिसे इसमें पड़ेंगी तो वे इस काममें सफल नहीं हो सकेंगी और उन्हें अत्यन्त निराशा होगी। अगर भारतकी संस्कारी महिलाएँ गाँवोंके लोगोंके साथ — और वह भी उनके बच्चोंके माध्यमसे — ऐक्य-साधन करें, तो वे भारतके गाँवोंके जीवनमें एक शान्त और भव्य क्रान्ति ला सकती हैं। क्या वे इसके लिए तत्पर होंगी?

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ३०-१०-१९३७

३४२. बातचीत: अण्डमानके कैदियोंसे[1]

[कलकत्ता
३० अक्तूबर, १९३७][2]

किसी भी कारणसे आपको अनशन नहीं करना है। यद्यपि ऐसी परिस्थितियोंकी कल्पना की जा सकती है जब अनशन करना उचित माना जा सकता है, लेकिन रिहाईके लिए या कोई शिकायत दूर करवाने के लिए अनशन करना गलत है। और इधर मैं बातचीत चला रहा हूँ और उधर आप अनशन करने लगें तो यह तो मेरे पंख तोड़ देने-जैसा होगा। लेकिन जब अनशनके लिए आपके पास मुझ-जैसा विकल्प है ही तब फिर उसके बारेमें आप सोचें ही क्यों? मैं तो अब चन्द दिनोंका मेहमान हूँ। अब ज्यादा दिन मेरे जीने की सम्भावना नहीं है, साल-दो साल खींच लूँ तो खींच लूँ, और आपको बता दूँ कि इस छोटी-सी अवधिका अधिकतर भाग मैं आपकी रिहाईके प्रयत्नोंमें ही लगाने जा रहा हूँ। मैं मरने से पहले आपको रिहा देखना चाहता हूँ। मैं आपको यह वचन देता हूँ और आपसे भी यह वचन चाहता हूँ कि जबतक मैं आपके लिए कार्य करते हुए जीवित हूँ, आप अनशन नहीं करेंगे। जबतक आपको रिहा नहीं करवा लेता मैं सुख-चैनसे नहीं बैठ सकता। आप मेरी बातका विश्वास कीजिए। मनुष्य विश्वासके सहारे ही जीता है। मेरा काम वकीलका नहीं, बल्कि मानव-सेवकका, अहिंसाके पुजारीका है। जबतक आप लोग कैदमें हैं, अहिंसा नहीं फैल सकती। इसीलिए मैंने इस कामके लिए अपने प्राणोंकी बाजी लगा दी है। इसलिए कृपया अनशनकी बात मत सोचिए।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २३-४-१९३८

१. महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत। लेखकके अनुसार जब गांधीजी शामके पाँच बजे अण्डमानसे कुछ ही दिन पूर्व आये कैदियोंसे अलीपुर जेलमें मिलने गये तब उन लोगों ने कहा कि यदि उन्हें रिहा नहीं किया जाता, दूसरे शब्दोंमें, यदि गांधीजी यह स्पष्ट कर देते हैं कि वे उनकी रिहाईके प्रयत्नमें असफल रहे तो वे फिर अनशन करेंगे। लेकिन उन्होंने गांधीजी को यह वचन अवश्य दिया कि जबतक वे स्पष्ट शब्दोंमें अपनी असफलता स्वीकार नहीं कर लेते तबतक वे कुछ नहीं करेंगे। उन्होंने पूछा कि अब स्थिति क्या होनी है और उन्हें कबतक प्रतीक्षा करनी है। इसपर गांधीजी ने उनसे उपर्युक्त बातें कहीं।

२. १-११-१९३७ के बॉम्बे क्रॉनिकलसे।

३४३. पत्र : अमृतकौरको

३१ अक्तूबर, १९३७

प्रिय अस्पृश्या,

आज मैंने १२-१० पर मौन धारण किया, ताकि कल कार्य-समितिकी बैठकके लिए अपनेको तैयार कर सकूँ। यह पत्र लिखते-लिखते मुझे तुम्हारा २९ तारीखका पत्र मिला है। मुझे तो मेरी ओरसे महादेवके लिए पत्रोंके अन्तमें अपनी ओरसे दो शब्द लिखने की भी फुरसत नहीं मिलती। उस समय मैं आम तौरपर कार्य-समितिकी बैठकमें होता हूँ।[1]

इन परिस्थितियोंमें मेरा स्वास्थ्य जितना ठीक रह सकता है, उतना रहा है। हाँ, मैं कैदियोंसे मिला। उनके साथ दो घंटे रहा। उनकी रिहाईका मामला सरलता या आसानीसे सुलझनेवाला नहीं है। उसके लिए मैं हर सम्भव प्रयत्न करूँगा। लेकिन अन्ततः सबकुछ भगवानके हाथ है।

मैं कल सेगाँवके लिए रवाना हो रहा हूँ[2] और गवर्नरसे[3] तथा जिन अन्य लोगोंसे मिलना जरूरी हो उनसे मिलने के लिए ११ नवम्बरको वापस लौटूँगा।

आज बस इतना ही।

स्नेह।

तानाशाह

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८२६) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ६९८२ से भी

१. साधन-सूत्रके अनुसार।

२. लेकिन रक्तचाप बढ़ जानेके कारण गांधीजी को यात्रा स्थगित करनी पड़ी; देखिए "तार : अब्दुल गफ्फार खाँ को", ४-११-१९३७ के पूर्व।

३. सर जॉन एंडर्सन।

३४४. पत्र : नन्दलाल बोसको

वुडबर्न रोड,
कलकत्ता
३१ अक्तूबर, १९३७

प्रिय नन्द बाबू,

क्या आप कृपया साथका[१] लेख तथा चित्रोंको देख जायेंगे, जिन्हें लेखिका पुस्तक-रूपमें प्रकाशित करवाना चाहती है? मुझे प्रस्तावना लिखने को कहा गया है, लेकिन मुझमें इसकी कोई योग्यता नहीं है। इसलिए आपकी राय जानने के लिए मैं यह लेख आपको भेज रहा हूँ। यदि आपके विचारमें लेखमें कुछ वास्तविक गुण हैं तो आप अपनी राय भेज दीजिएगा, जिसे यदि लेखिका चाहेगी तो प्रस्तावनाके रूपमें छपवाया जा सकता है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[पुनश्च :]

कृपया उत्तर सेगाँव भेजिएगा।

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९८३८) से।

३४५. पत्र : अमृतकौरको

१ नवम्बर, १९३७

प्रिय अस्पृश्या,

कल मैंने दो-चार पंक्तियाँ लिखी थीं। आज उसीको पूरा करने के लिए लिखा गया मानना। हाँ, शराब-विषयक घोषणापत्र और नामोंकी प्रतीक्षा किये बिना प्रकाशित किया जा सकता है। लेकिन मैं समझता हूँ, उसके सिलसिलेमें कुछ काम भी करना होगा और तुम इसे अकेले ही नहीं करोगी ! ! !

तुम्हारा भाषण[२] दो दिन हुए, भेज दिया था। जैसा कि तुमने देखा होगा, मैंने उसमें कुछ महत्त्वपूर्ण सुधार किये हैं। जबतक वे तुम्हें बिलकुल ठीक न लगें

१. यहाँ गांधीजी ने सन्दर्भ-चिह्न लगाकर लिखा है, "अलगसे, बुक पोस्ट द्वारा नहीं"।

२. यह भाषण अमृतकौरने अखिल भारतीय महिला सम्मेलन के अध्यक्ष-पदसे दिया था। यह ८-१-१९३८ के हरिजनमें "नोट्स" (टिप्पणियाँ) शीर्षक के अन्तर्गत "ए रिमार्केबल एड्रेस" (एक उल्लेखनीय भाषण) उपशीर्षक से छपा था।

तबतक तुम्हें उन्हें स्वीकार करने की जरूरत नहीं है। तुम्हारे सब सुझाव अच्छे हैं, किन्तु क्या वे स्वीकृत होंगे और यदि स्वीकृत हुए भी तो क्या वे अमलमें लाये जायेंगे? जहाँ तुम्हें बोलना है वहाँ अपने श्रोताओंको देख-समझ लेना और उसके मुताबिक जैसा उचित लगे उस तरह उन्हें कार्यक्रम समझाना।

अनसूया कालेने और बादमें सरोजिनीने मुझसे पूछा कि मैं सभामें किस दिन जा सकूँगा। सरोजिनीने अन्तिम दिनका सुझाव दिया। मैंने कोई एतराज नहीं किया। लेकिन तय तुम्हीं करना। सबकुछ मौसमपर निर्भर करेगा। मेरा कार्यक्रम अस्त-व्यस्त हो गया है। मुझे गवर्नरसे मिलने के लिए यहाँ ११ तारीखको वापस आना होगा। वे यहाँ नहीं हैं और इस समय मेरी जैसी तबीयत है उसे देखते हुए मैं दार्जिलिंग नहीं जा सकता। मुझे १७ को या २० तारीखसे पहले ही सीमा प्रान्त पहुँचना है। खान साहब चाहते हैं कि मैं बीस दिन वहाँ रहूँ। इसका तात्पर्य यह हुआ कि मैं १० दिसम्बरसे पहले सेगाँव नहीं पहुँच सकूँगा। मुझे खेद है। ऐसी हालतमें तुम क्या करोगी? यदि शिमलाकी आबोहवा तुम्हें माफिक आती है तो क्या तबतक तुम वहीं नहीं रह सकती? मैंने सुना है कि शिमलामें सर्दीका मौसम सबसे अच्छा मौसम है, लेकिन तुम्हारे शरीरको क्या माफिक आयेगा सो तो तुम्हीं जानो।

इतना लिखने पर विघ्न आ पड़ा और वह अभी भी चालू है।

स्नेह।

डाकू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८२७) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६९८३ से भी

३४६. पत्र: जवाहरलाल नेहरूको

१ वुडबर्न पार्क
कलकत्ता
१ नवम्बर, १९३७

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारे और मेरे साथ हुए पत्र-व्यवहारमें[1] श्री नरीमान द्वारा उठाये गये दो मुद्दोंके सम्बन्धमें जाँच समितिने जो निर्णय दिया वह साथमें भेज रहा हूँ। मैंने श्री नरीमानको सुझाया था कि इस निर्णयके प्रकाशनके बजाय वे अपनी भूल स्वीकार कर लें,[2] जिसपर वे राजी हो गये। मैंने सोचा था इस स्वीकारोक्तिसे उस जाँचका सुखद अन्त होगा जिसके सिलसिलेमें मुझे कई बार काफी परेशानी उठानी पड़ी। किन्तु श्री नरीमानने अपनी ही स्वीकारोक्तिका जो खण्डन किया है और जिसे मैंने

१. देखिए "टिप्पणी: सरदार-नरीमान-प्रकरण-पर" पृ० २५७-५९।
२. देखिए "वक्तव्य: समाचारपत्रों को", पृ० २७५-७६ और परिशिष्ट ६।